

और श्वेताम्बरियोंने उसे मोल ले लिया। इसी प्रकार अन्तरीक्ष पाश्चिमायका मुकदमा भी बहुत कुछ श्वेताम्बरोंके पक्षमें फैसल हुआ। जब हम यहांसे और आगे किसी हर्षकी आशामें बढ़ते हैं तो फिर निराश होना पड़ता है। लज्जा एवं दुःखकी बात है खंडगिरीसे ३ जैन मूर्तियोंको पटना अजायबघरवालोंका उठा ले जाना। जो अभी हालमें जैन समाजके घोर आन्दोलन और सत्याग्रहकी आवाजसे विहार सरकारने वापस लीटाई हैं। इसके बाद ही फिर जैन समाजकी धार्मिक आघात सहना पड़ा। वह है कलकत्तेके कोलहटोल मंदिरका लूटा जाना, शास्त्रोंको फाड़ा जाना और मूर्तिको तोड़ा जाना एवं सुरा ले जाना। यदि यहीं पर इन धार्मिक आघातोंकी इति हो जाती तो भी अच्छा था परन्तु नहीं उधर बटेश्वरमें त्रिनेन्द्र देवकी मूर्त्तिका निकालना रोका गया और इधर आबूके मंदिरमें साहब लोग जूते पहिने घुस गये। इस प्रकार आघातों पर आघात सहते हुये समान जन्मरित हो ही रही थी कि इतनेमें फिर शोलापुरसे समाचार आया कि दानवीर सेठ बालचंद रामचंद और सेठ फूलचंद रामचंदको विकराल कालने जैन समाजसे सदाके लिये छीन लिया। बिखते हुए दुःख होता है कि समानके ये घाव पूरे भी नहीं थे कि युद्धज्वर एन्फेल्सजाने भी समानके क्षत शरीरमें एक दमसे कई घाव कर दिये। ये घाव-जातिप्रबोधकके सम्पादक, सुलेखक और सुवक्ता बाबू दयाचंद्रजी गोयलीय, सेठ दासोदासजी मधुरा, पं० उमरावसिंहजी गुणपत, बाबू छेदीलालजी रईस बनारस उप

सभापति स्या० म० वि० कशी, बाबू छेदीलालजी अग्रवाला, कलकत्ता और पं० ब्रजलालजी के वियोगसे हुए हैं। इसी वर्ष जैन सिद्धांतों पर भी खूब हाथ साफ किये गये-अनेक जैन शास्त्रोंका खंडन हुआ है और कहा गया है कि ये सर्वत्र भाषित नहीं हैं। इस प्रकार जैन समाजको इस वर्ष अनेक दुःखप्रद घटनाओंका सामना करना पड़ा है। संतोष केवल यही हुआ है कि इस वर्ष इन्दौरके दानवीर रायबहादुर सेठ हुकमचंदजी सर की पदव से विभूषित किये गये हैं और दिहलीमें महिला आश्रम, कारंजामें महावीर कथम ब्रह्मचर्याश्रम, और शिमलेमें जैन मन्दिरकी स्थापना हुई है। श्रीयुक्त पं० अजुनलालजी सेठीकी नगरबन्दीका दुःख इस वर्ष भी ज्योंका त्यों बना रहा।

हमें इस बातका भी खेद है कि अनेक विन्न बाधाओंके कारण इस वर्ष दिगम्बरजैन नियमित प्रकार पाठकोंकी सेवामें नहीं पहुंच सका है। ग्राहकगण संतोष रखें इस वर्ष समय ही पर सेवामें पत्र भेजनेका पूर्ण ध्यान रखा जायगा।

ॐ ॐ ॐ
चार वर्षसे युरोपमें जो युद्ध चला रहा था-
जिसमें लाखों मनुष्योंकी
शिरस्त्र सम्मेलनका माणाहुति दी गई
मामला। और अरबों रूपया अग्नि
और पानीमें झोंक दिया
गया-वह भी शान्त हो गया। भारतवर्षमें जो
हिन्दू मुसलमानोंका वैमनस्य शताब्दियोंसे

चला आ रहा था वे भी आज कन्येसे कन्ये
मिलाकर देशकी उन्नतिमें लग गये; परन्तु शोकके
साथ लिखना पड़ता है कि दिगम्बरियों और श्वेता
म्बरियोंका युद्ध-पारस्परिक वैमनस्य जो बीस
वर्षसे भी अधिक समयसे चल रहा है अभी तक
शान्त न हुआ। दोनों पक्षोंके कई नेता इसी युद्ध-
में वीरगतिको प्राप्त हो गये और अब तक लाखों
रुपये सरकार और धकीलोंके जेबमें गये, पर परि-
णाम वही जो पहिले था। हम एक बार फिर
दोनों पक्षोंके नेताओंसे निवेदन करते हैं कि यदि
जैन धर्म और जैन समानकी उन्नति अभीष्ट है
तो किसी उपायसे इस धार्मिक युद्धको बन्द
करो। अदालतके फैसले पर ही भरोसा रखनेसे
यह युद्ध शान्त नहीं होनेका। इसके लिये सबसे
उत्तम उपाय यही है कि दोनों पक्षवाले आगे
बढ़कर हाथमें हाथ मिलायें और कहें कि हम
दोनों परमपिता महावीर स्वामीके पुत्र हैं—भाई
भाई हैं—हमारा और तुम्हारा लड़ाई झगड़ा कैसा।

ॐ ॐ ॐ

हम पहिले ही निवेदन कर चुके हैं कि
इस वर्ष विशेष अंक नि-
विशेष अंक— कालनेका पूर्ण विचार नहीं
था परन्तु पीछेसे हमारा

विचार हो गया। समय बहुत हो चुका था
इस कारण श्रीग्रन्थसे काम हुआ—इसीसे हम
इस अंकको सविग सुन्दर नहीं बना
सके हैं। तब भी इसमें विद्वानोंके लेख और
कविताएं मुपाद्य हैं। हिन्दी भाषाके लेखोंमें
पं० ज्योतिरासिहजी न्यायतीर्थ, बाबू गुरनभानुजी
महाराज, बाबू ज्योतिरासिहजी आदिके लेख ध्या-

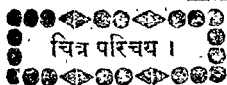
नसे पढ़ने योग्य हैं। मि० हरवटवारन लन्डन
और मि० चंपतराय जैन वैरिस्टर हरदोईके
अंग्रेजी भाषाके लेख भी पठनीय हैं।

गत वर्षोंमें हम पाठकोंकी सेवामें अनेक
तीर्थों, प्रसिद्ध स्थानों, संस्थाओं, धनवानों,
विद्वानों, त्यागियों और मुनियोंके चित्रोंके
सिवाय विदेशीय विद्वानोंके भी चित्र समर्पण
कर चुके हैं। इस वर्ष भी अजमेर,
रामटेक, सिंहपुरी, चन्द्रपुरीके भव्य
दर्शनीय दि० जैन मन्दिरोंके चित्रोंके
सिवाय स्वर्गवासी सेठ बालचन्द रामचन्द और
फूलचन्द रामचन्दजी शोलापुरके चित्र उनकी
कृतियोंके स्मरण करानेके लिये पुनः दिये
गये हैं। हमें विश्वास है कि इस वर्ष हम जो
कुछ लेकर पाठकोंकी सेवामें उपस्थित हो सकें
हैं उसे अवश्य स्वीकार करेंगे जिससे हम भी
अपने परिश्रमको सफल समझेंगे।

ॐ ॐ ॐ

दि० जैन समानमें यही एक मात्र ऐसा पत्र
है जो साल भर तक पत्र
इस वर्षका देनेके अतिरिक्त तीन चार
उपहार। रुपयेकी पुस्तकें भी ग्राहकोंको
भेट स्वरूप देता है। इस वर्ष

भी दि० जैनके ग्राहकोंको स्व० दानवीर
सेठ माणिकचन्दजीका ९०० पृष्ठका
जीवनचरित्र सुंदर पक्की मिल्दका १।)
उपहारी मुख्य और डाकद्वय १।) लेकर उपहा-
रमें दिया जायगा। जीवन चरित्र तैयार हो
गया है श्रीग्रन्थी मय पत्रके मुख्य ३।) की
पी० पी० से ग्राहकोंकी सेवामें भेजा जायगा।



चित्र परिचय।

स्वर्गवासी सेठ बालचन्द्रजी राम-चन्द्रजी और सेठ फूलचन्द्रजी राम-चन्द्रजी सोलापुरके चित्र हैं—इनके विषयमें विशेष वर्णन—‘दो सेठोंकी शोचनीय मृत्यु’ शीर्षक लेखसे ज्ञात होगा।

अजमेरका दि० जैन मन्दिर और नशिवां—यह दोनों मन्दिर और नशिवां (बाहरी मन्दिर) श्रीयुत रायबहादुर सेठ नेमीचन्द्रजी टीकमचन्द्रजीके निर्माण कराये हुये हैं। मन्दिरके भीतर काशी अयोध्या आदि तीर्थों और नगरोंकी रचना सोनें चांदीसे की गई है जिसमें लाखों रुपया व्यय हुआ है—सेठजी ऐसे प्रभावनाके कार्यको करके अपना नाम अजर अमर कर गये हैं। यह दोनों स्थान दर्शनीय हैं—अजमेर जानेवालोंको इन स्थानोंको देखना न भूलना चाहिये।

श्री अतिशय क्षेत्र सिंहपुरीका दि० जैन मन्दिर—यह श्री श्रेयांसनाथ महाराज ग्यारहवें तीर्थंकरका मन्दिर जन्मकल्याणके समयका है। मंदिरजीमें एक पद्मासनस्थ प्रतिविम्ब श्यामवर्ण श्रेयांसनाथ स्वामीकी ३ फुटके अनुमान ऊंची विराजमान है—प्रतिविम्ब पर स्थापनाका संवत् १९०० लिखा है। यह स्थान बनारससे छः मील दूर सारनाथ स्टेशनसे एक मीलपर सारनाथ ग्राममें है। यहां जैनी कोई नहीं है। १०—१० मनुष्योंके रहने लायक एक धर्मशाला है। यहांका ध्वज बनारसके जैनी भाइयोंकी ओरसे होता है।

श्री अतिशय क्षेत्र चन्द्रपुरी वा चन्द्रावतीका दि० जैन मन्दिर—यह मन्दिर बनारससे १४ मील और सारनाथ रेल्वे स्टेशनसे ९ मील गंगा नदीके किनारे है। चन्द्रपुरी—चन्द्रावती यह तीनों वर्ष पहिले रघुवंशी सरदार देवमनका देवस्थान था। उनका बनाया हुआ किला भी गंगाके किनारे है। यह मन्दिर श्री भगवान चन्द्रप्रभके जन्म कल्याणके समयका है। इसमें श्यामवर्ण पद्मासन दो फुटके अनुमान ऊंची प्रतिमा महाराज चन्द्रप्रभकी विराजमान है। छोटी बड़ी ६ प्रतिविम्ब और हैं। यह मन्दिर स्वर्गवासी बाबू देवकुमारजी आराके पितामह बाबू प्रभूदयालजीका बनवाया है। इसका प्रबन्ध भी उन्हींकी ओरसे होता है। मंदिरके पास एक धर्मशाला है।

श्री अतिशय क्षेत्र रामदेवके दि० जैन मन्दिर—यह स्थान मध्य प्रदेशमें नागपुरसे २४ मील दूर है—जी० आई० पी० रेल्वेका यहां स्टेशन भी है। यहां कुल आठ मंदिर हैं। कई मंदिर प्राचीन हैं—सबसे पुराना मंदिर लाल पत्थरका बना है। इसमें श्री शान्तिनाथ स्वामीकी प्रतिमा चतुर्थ कालकी जो अति मनोह और १९ फुट ऊंची है। इन्हींमेंसे कई मंदिरोंका यह दृश्य है।

श्री अतिशय क्षेत्र रामदेवके मंदिरके—समवशरणका यह प्रतिविम्ब है—यह ऐसी शिल्पकलाका उदाहरण है जो देखते ही बनता है।



चतुर्थ वार्षिक रिपोर्ट-जैन श्वेताम्बरी
तेरापंथी सभा कलकत्ता। यह रिपोर्ट माव शुक्ल
सं० १९७३ से चैत्र शुक्ल १९७५ तककी
है। निवरणके पश्चात् सभाश्रित पुस्तकालयका
परिचय है। इसके बाद उक्त समयके आय
व्ययका आंकड़ा है। आय ८४१२।=॥ है
और खर्च ५३४०।।।=॥ हुआ है। सभामें
पूनी ६०७७५।।=॥ है। सभा द्वारा कोई आ-
दर्श कार्य हो यह हमारी इच्छा है। रिपोर्ट
केशरीचंद कोठारी ११९ केनिगस्ट्रीट कल-
कत्ताको लिखनेसे मिल सकती है।

जैन समाचार-श्री जैन सिद्धान्त भुवन
वर्षईका यह मुख पत्र है। इसी वर्षसे निक-
लना प्रारम्भ हुआ है। आसोज मासका दूसरा
अंक हमारे पास समालोचनार्थ आया है।
इसमें ४ पेज हैं। पत्रके आधे भागमें भुवनके
उद्देश्य और मूनीपत्र है। शेषमें तीन लेख हैं।
जैन समाचार एक भी नहीं है। वार्षिक मूल्य
सर्व साधारणमें १ रुपया, भुवनके सभासदोंको
रुपयत्त दिया जाता है। इसके लिये मनेजर
श्री जैन सिद्धान्त भुवन वर्षई नं० ४ से
पत्रव्यवहार करना चाहिये।

द्वारिकादास ग्रन्थमालाका छठा और
दसवां पुण्य। दोनोंका नाम भजनामृत है।
इंटे पुष्पके रचयिता बाबू कृष्णचन्द्र जैन पिरो-
नाचंद हैं और 'प्रकाशक' श्रीमती वसुधादेवी

जैन हैं-मूल्य =॥ है। १० वें पुष्पकी 'संग्रह
कत्ता' स्व० विदुषीरत्न श्रीमती वसुधादेवी जैन
हैं और प्रकाशक इंटे पुष्पके रचयिता हैं-मूल्य
=॥ है। दोनों पुष्पोंमें गजल रसिया आदि
छन्दोंमें त्वी और पुरुषोंके गाने लायक उपदेशी
भजन हैं। छठा पुष्प बी. ए. सी. डी. जैन
एण्ड कम्पनी और १० वां पुष्प मनेजर
आनन्द पुस्तकालय शिकोहाबाद (यू० पी०)
से मिलता है।

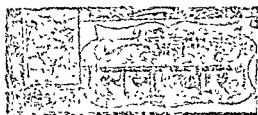
जैनधर्मके विषयमें सम्मतियों प्रथम
भाग-इस पुस्तकमें जैन धर्मके विषयमें अजैन
विद्वानोंकी सम्मतियोंका संग्रह है-जिसे श्रीधुत
मा'टर पं० विहारीलालवी वी० ए० अमरोहाने
संग्रह किया है। यह पुस्तक सर्व साधारणमें
प्रचार करने योग्य है जिससे जैन धर्मके विषयमें
जो सम्प्रन्त विचार फैल रहे हैं वह दूर हों।
पुस्तकका मूल्य ॥॥ सेंकड़ा ३) है। अजैन
विद्वानोंको दिना मूल्य। मंत्री जैन धर्म संरक्षणी
सभा अमरोहाको लिखनेसे प्राप्त कीजिये।

श्री सामायिक प्रतिक्रमण सूत्र-
४२ एउकी पुस्तक है। इसमें श्वेताम्बर शास्त्र-
नुसार सामायिक और प्रतिक्रमण सूत्रका विधि
सहित Mr L. C. Ranka ने वर्णन किया
है। मूल्य एक प्रतिका =) सेंकड़ा १५) श्री
आनुपूर्वी या नित्यमरण-इसमें नित्यम
रण किसका और किस प्रकार करना चाहिये इसका
वर्णन है। मूल्य एक प्रतिका ॥॥ १०० प्रति
४॥) इन दोनों पुस्तकोंके प्रकाशक नीरतनम
कोठरा और प्रचारक मंत्री श्री भ्रमगोपास
जैन पुस्तक मंडल अजमेर हैं।

कच्छी जैनमित्र—का विशेष अंक । इसके मुखपृष्ठ पर म० गांधीजी कई अवस्थाओंका चित्र बड़ा ही मनोहर और आकर्षक है जिससे महात्मा गांधीके सारे जीवनचरित्रका परिजान हो जाता है । इसमें अनेक लेख, कविता और गल्प हैं जो अच्छे लेखकोंकी लेखनी द्वारा लिखी गई हैं । हम सम्पादक और प्रकाशकके उत्साहकी सराहना करते हुए गुजराती जाननेवाले ग्राहकोंसे कहेंगे कि इसके ग्राहक अवश्य बनें । मैनेजर 'कच्छी जैनमित्र' काथावाचनार वर्षाईको लिखनेमें मिलता है । वार्षिक मूल्य ४) है ।

जैनलोकांचा इतिहास अथवा प्रथमानुयोग शास्त्र । यह पुस्तक मराठीमें श्री चन्द्रमार्गर ग्रन्थमालाका द्वितीय पुष्प है । लेखक हैं अनन्ततनय और प्रकाशक ग्रन्थमालाके सेक्रेटरी भैरवप्पा पद्मम्पा पाटील होमूर (वेलगांव) । पुस्तकमें, चौबीस तीर्थंकरों, १२ चक्रवर्ती आदि त्रेशालाका पुरुषोंका संश्लेषमें वर्णन है फिर वीर निवारणके ७०० वर्ष बाद तक केवली, श्रुत केवली और ग्यारह अंग, दश धूर्तके पाठी जो महात्मा हो गये उनके नाम निर्देश हैं, फिर वीर निर्माण सं. २०० से १८०० वर्ष तक जो आचार्य और कवि हो गये उनके जीवनकाल और नाम दिये हैं तथा उनका संश्लेषमें वर्णन भी दिया है । उनके बाद कर्णाटक जैन कवियोंका वर्णन देकर जैन राजाओंका वर्णन है फिर, जैन ग्रन्थों, तीर्थों, षवीं और अंजन विद्वानोंकी जैन धर्मके विषयमें सम्प्रतिष्ठा देकर पुस्तक समाप्त की गई है । पुस्तकका कागज, छपाई आदि उत्तम है । मूल्य १२ आने । प्रकाशकसे प्राप्य ।

श्री ओसवाल जैन संस्थाएं, अजमेरकी रिपोर्ट है । इसमें ता० २७ अप्रैल सन् १९से ३० जून १८ तकका हिसाब और दातारोंकी नामावली है । अजमेरमें ओसवाल जैन स्कूल, छात्रावास (जो आजकल बंद है) और कन्याशाला यह तीन संस्थाएं हैं परन्तु कागज और छपाईकी मंहगाईके कारण केवल स्कूलका ही ब्योरा दिया जा सका है । इतने समयमें करीब (०००) का खर्च हुआ और आमदनी भी २०००)से अधिक ही हुई है । ओसवाल भाइयोंको इन संस्थाओंकी सहायता करना और इनसे लाभ उठाना चाहिए ।

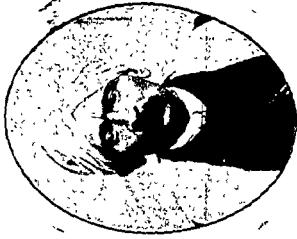


मन्दिर निर्माण—शिमले जैसे महत्वके स्थानमें श्री जिने देवके मंदिरकी स्थापना हो गई ।

अनाथाश्रम—देहलीके भारतवर्षीय जैन अनाथाश्रममें उन बालकोंके पालन पोषणका प्रबन्ध किया गया है जिनका कोई रक्षान्वेषण करनेवाला न हो । जैन विधवा स्त्रियों और अप्रतिष्ठित स्त्री पुरुषोंकी भी मासिक वृत्ति आश्रमकी ओर से दी जाती है । प्रत्येकवार वा० महावीरप्रसाद जैन मैनेजर आश्रमसे करना चाहिये ।

सेना—के लिये, कामीदान—श्रीयुत पं० अर्जुनलाल सेठी बी० ए० जो कई वर्षोंसे बेल्लोरके किलेमें नज़रबंद हैं उनके मुकदमेकी जांचके लिये भारत सरकारने एक कमीशन

भारतीय जैनसिद्धांत प्रकाशिनी संस्थाके परमसंस्थापक और संरक्षक-



दानवीर स्वर्गीय शोठ वालचंद रामचंदजी गांधी,
सोलापुर ।

जन्म संवत् १९२१.

फाल्गुन सुदी ८.

मृत्यु संवत् १९७४ ।

आश्विन वदी ८ रविवार.

दानवीर स्वर्गीय सेठ फूलचंद रामचंदजी गांधी,
सोलापुर ।

जन्म सं० १९२७.

चैत्र वदी ८ ।

मृत्यु सं० १९७४.

आश्विन वदी २ सोमवार ।

रखनेवाले थे । इन सब गुणोंके होने हुये बड़े ही पुण्यशाली धनाढ्य होने पर भी इनके घरवाले सब ही को गर्व क्या है सो नहीं जानते । सब ही अत्यंत निरभिमानी थे । गरीबसे लेकर धनाढ्य श्रीमंतों तक सर्वके साथ एकसा सरल बर्त्ताव था । इसी कारण सबकी इनके घरानेपर पूज्यबुद्धि थी । बाळचंद मेठकी मृत्यु होने ही सारे शोलापुर शहरमें बिजलीकी त्राह शोरगुल फैल गया । सबका सब बाजार एकदम बंद होगया और अंतर्मे समय हजारों मनु य इनके मकानपर आये और इनकी रथीके साथ हजारों लोग शोकसंतप्त चेहरा लिये, इनकी दम्ब क्रियामें सामिल हुये । शहरका ऐसा कोई भी घर वा शिक्षित अशिक्षित, धनाढ्य गरीब, हाकिम, वकील मुखत्यार नहीं था जो इनकी रथीके साथ न हो । जो लोग मिलके मालिक थे वे बीमार थे । उन्होंने अपना २ प्रतिनिधि भेजा था । जिनमें सुशिक्षित जनता ही बहुत थी । इन्ही सब बातों परमे देखनेमें आया कि इनके घरानेपर सब ही की पूज्य- बुद्धि थी । इनके लघु भ्राता फूलचंदजी मेठ भी बड़े आनंदी पुरुष और दयालु थे । इन दोनों सदगुणी भ्राताओंके वियोगसे इनके घराने पर दुःखका बड़ा भारी पहाड़ ही गिर गया परन्तु आयु नमके अंत होनेपर किसीका भी जोर नहीं चलता । लाचार इनके दोनों पुत्रों व इनके छोटे भ्राता (जो फूलचंदजीसे बड़े हैं) को इस दुःखी धैर्यके साथ सहन करना ही चाहिये । आज समस्त शोलापुर व समस्त जैन समाजकी इनके दुःखमें परम सहानुभूति है ।

इस घरानेके मूल पुरुष ईंदर जिलेके जादर नामक ग्रामके रहनेवाले थे । इनके मूल पुरुष सेठ हरिचंद मूलचंदजी विक्रम संवत् १८४९ में पंढरपुर तालुकके अंतर्गत तारापुर गांवमें आये थे और प्रथम ही पंढरपुर शहरमें कारबार किया । तत्पश्चात् थोड़ा सा द्रव्य उपार्जन किये बाद संवत् १८६० में शोलापुर नगरमें गांधी हरिमाई देवकरणके नामका फॉर्म खोला और वि० संवत् १८६४ में मूलचंद नानचंद नामका पूनामें फॉर्म खोला था जो अबतक विद्यमान है । संवत् १८७० में बहुतांसा द्रव्य लगाकर पूनेकी वेताल पैठमें चंद्रप्रभ भगवानका एक मंदिर बनवाया, तत्पश्चात् सं० १९०९ में हजारों रुपये खर्च करके शुक्रवार पैठ शोलापुर में आदिनाथ महात्मका एक सुंदर मंदिर बनवा कर प्रतिष्ठा कराई । इसके सिवाय इस घराने- वालोंने तथा सेठ हेमचंद दलजीने मांगीतुंगीजीपर १ उत्तम मंदिर बनवाकर प्रतिष्ठा कराई । तत्पश्चात् संवत् १९३२ में कुंथलगिरी तीर्थपर व संवत् १९३४ में सम्मेल गिखरजी तीर्थपर मंदिर बनवा कर प्रतिष्ठा कराई । तत्पश्चात् सं० १९९१ में सेठ मोतीचंद परमचंदजी व इस घरानेने काठियावाड़ पालीताना तीर्थपर एक सुंदर मंदिर बनवाकर प्रतिष्ठा कराई । इसी प्रकार अनेक नगहकी दानशाला व पाठशालाओंमें इनकी तरफसे सहायता मिलती है ।

कलकत्ते शहरमें जो भारतीय जैनसिद्धांत प्रकाशिनी संस्था अनेक प्राचीन ग्रंथोंका जीर्णोद्धार करके प्रचार कर रही है उसको (१०००) देकर हरीभाई देवकरण जैन ग्रंथमाला प्रारंभ

कराई और १० हजार देकर प्रसिद्ध महान ग्रंथ गोम्मटसारजीका संस्कृत भाषाटीका सहित जीर्णोद्धार करा रहे हैं इसके सिवाय एक और भी महान कार्यके लिये प्राइवेट इच्छा प्रगट की हुई है वह कालांतरमें सबके जाननेमें आवेगी। इसके पश्चात् स्वर्गीय न्यायवाचस्पति पंडित गोपालदासजी व प. धन्नालालजी वगैरह डेप्युटेशन लेकर शोलापुर गये थे तो २८०००) हजार रुपये मोरिनाके जैनसिद्धांत विद्यालयमें प्रदान करके अपनी दानवीरता प्रगट की। तथा पूनेके पास हिंगणे बुद्रकमें प्रोफेसर कर्वेका चलाया हुआ अनाथबालिकाश्रम है उसमें अपनी मातुश्री मेनाबाईके स्मरणार्थ 'मेनाबाई श्राविकाश्रम' नामक संस्थाकी विल्डिङके लिये ४०००) रुपये दिये और दश दश रुपयेकी १० स्कालरशिप जैन भगिनीयोंको देना स्वीकार किया था। इसके सिवाय शोलापुरके हाईस्कूलमें सर्व साधारण विद्यार्थियोंको पढ़नेका स्थान न मिलनेसे एक और भी हाईस्कूलकी आवश्यकता प्रतीत होनेपर २७०००) हजार रुपये प्रदान करके हाल ही में श्रीभाई देवारण हाईस्कूल स्थापित किया है। इसके सिवाय और भी अनेक संस्थाओंमें बराबर दायता देने रहे हैं। इनके दानव वीरतामें जैनसन्मान बहुत ही क्षणी है यह बात प्रसिद्ध है। इस परानेके स्त्री पुरुषोंने धर्म कार्योंमें बहुत द्रव्य लगाया है। ऐसे परानेके एक साथ दो दानी पुरषोंके पथक होनेमें जैन सन्मानकी बड़ी भारी हानि होनेके सिवाय गोला और गहरकी बड़ी भारी हानि हुई है।

उक्त स्वर्गीय सेठ बालचंदजीका जन्म संवत् १९११ में शोलापुरमें हुआ था। सुबई दिगंबर जैन प्रांतिक सभाके सभापतिका मान मिला था। तथा इनकी सर्व प्रकारसे योग्यता जानकर सरकारकी तरफसे आनरेरी मजिस्ट्रेटके अधिकार भी देनेमें आये थे परन्तु शरीरकी अस्वस्थताके कारणसे इस पदको त्याग दिया था। सेठ फूलचंद भाईका जन्म संवत् १९२७ में शोलापुरमें हुआ था। ये होशियार सात्विक प्रकृतिके आनंदी पुरुष थे। हमेशा नैतिक व धार्मिक व्यवसायमें मग्न रहते थे। इस कारण इन्हें अनेक महाशय राजा फूलचंद कहा करते थे। ये गायन विद्याके परम भक्त होकर बड़े मार्मिक थे। मृत्यु समयमें भी धर्मार्थ बड़े सेठने ११०००) हजार रुपये और छोटे सेठने ८०००) रुपये देना किये हैं सो किस धर्म कार्यमें किये हैं सो अभी खुलासा प्रगट नहीं हुआ है।

इस परानेके अनेक जगह कारबार चलते हैं। जिनमेंसे बालचंद उगरचंद नामके प्रसिद्ध फारमने ईस्वी सन् १९१२ में रुईकी खरीदका बड़ा भारी सट्टा किया था ऐसा दृष्टा हिंदुस्थानमें आज तक किसी व्यापारीने नहीं किया।

उपर्युक्त दोनों सेठोंके परलोकवाससे सबको बड़ा भारी दुःख हो रहा है। तथापि इस फारोधारके मालिक वर्तमान में सेठ टीगचंद रामचंदनी गांधी भी बड़े प्रसिद्ध व्यापारी हैं। इनकी प्रकृति भी दानव्यगुणमें सुविन है। गरीब लोगोंपर इनकी क्लिप्ता दया है सो बहुत वर्तमान मंदंगईमें दिनाई हुई मनकी उदात्ता व दान

धर्म परसे दिम्बती है । गरीबोंके कष्ट दूर करनेके लिये आपने स्वयं प्रत्येक घर पर जा जाकर कपड़े धान्य वगैरह दिये हैं । इसी कारण सबको अपने भ्राताओंकी स्मृति बराबर बनी रहेगी इसमें कोई शक नहीं । शेषमें हम उक्त श्रेष्ठिवर्य हीराचंदनी व उनके भ्रातृपुत्र वगैरहकी दीर्घायु व धर्म कार्यमें दान देनेकी वीरताकी वाञ्छा करते हुये इस शोकसंवादको पूरा करते हैं ।

संपादक ।



६६ नूतन वर्षाभिर्नन्दन ११

स्वागत नूतन वर्ष तुम्हें है स्वागत आओ,
आओ पावन हृदय शुभग अन्यागत आओ ।
गत-गौरव-स्मृति स्वाभिमानके केन्द्र अब्दवर !
उच्च गौरवादित्य-स्मृति ! सत् भारत ! आओ ॥१॥
गौरवास्पद घटनाएं तुम इस भारतकी,
अपने वक्षस्थलमें धरे हुए हो गतकी ।
तुम प्रातस्मरणीय ' वीर ' की याद दिलाते,
महिमा और दिनाते भारतीय-यौवतकी ॥२॥
कल्याणस्पद ! क्षेमद्वार ! शुभप्राप्त ! निहासो-
निन प्रिय भारत-दशा पतित जो हुई विचारो ।
जाति समानिक-दशा-पतन कितना गहरा है ?
नव जीवन-सञ्चार करो फिर हमे उचारो ॥३॥
निद्रा, साहस, सत्य, स्नेहकी झलक नहीं है,
जीवनका साफल्य नहीं अब प्राप्य कहीं है ।
ऐक्य-सलिल-क्षण जहां बरसते रहे साम्यसे,
द्वेषानल प्रज्वलित हुई चहुं ओर वहीं है ॥४॥
पहिले जैन-विकास आपने होगा देखा,
सत्य-तत्त्व सिद्धान्त-स्नेहकों होगा पेखा ।
फेर पतन भी डाँट आपके आया होगा,

और हमारी लखो भाग्यकी अब तुम रेखा ॥५॥
भिन्न भिन्न मत पन्थ और समुदाय चलाए,
बीज द्वेयका वो फल फूट बैर उपजाए ।
तिम पीछे यवनोसे मति गति भ्रष्ट हुए हम,
कर्म धर्म कुल लाज सो, न कुछ भी शरमाए ॥६॥
अहो ! कहें क्या ? सभी बात तुम स्वयं जानते,
किन्तु न तब भी दुःख रोए विन हृदय मानते ।
अतः मान्य ! कुछ हमें और भी कह लेने दो,
जमा करो ! हम निज दुःखड़ा रो तुम्हें सानते ॥७॥
दशा बिगड़ने लगी अब्दवर ! फेर हमारी,
चहुं दिशि छाने लगी अविद्याकी अधिगारी ।
धर्म चिह्न फिर भ्रष्ट वर दिए गए हमारे,
भारत भू-होगई यवनपति अधिष्ठत सारी ॥८॥
पहिले क्षत्रिय लड़े कीर्ति अति जिससे पाई,
पर पीछे सब त्याग मान मर्याद बड़ाई ।
अरुवर आदि यजन-सम्राटोंकी सेवा की,
कुल-महिमा, गरिमा, सुकीर्ति निज सभी गंवाई ॥९॥
तब भी पर सत् भारतीय महिमाके आकर,
क्षत्र-वंश-अवतंश, वीर, गुण-गण पति नागर ।
पीर वंश-मर्यादा-रक्षक थे ' प्रताप ' से,
जो थे क्षत्रिय-निशा हेतु उद्दीप्त क्षपाकर ॥१०॥
पीछेसे फिर देखा होगा पतन ही पतन,
जलते तुम भी रहे न होगे क्या मन ही मन ।
जब स्वातन्त्र्य-विचार हृदयमें जाता होगा,
विगत हुआ जब होगा भारत-मा-जीवन धना ॥११॥
भारतवासी दास बनें होंगें ह्रा ! फिर,
सब स्वातन्त्र्य विचार गया होगा नीचा गिर ।
तभी स्वावलम्बन, उत्साह गया सब होगा,
नहीं हृदय यह क्यों जाता है हाथ । आज चिरा ॥१२॥
फिर वीरावद् ! श्रवण-सम्पुटमें अब प्रिय तैरे,

आख्यायन्ते । यद्यपि लवणविद्रुमादिप्रभृतिषु विभक्तजीवचिह्नानि न उपलभ्यन्ते तदपि विशिष्टमदिरापानादिभिर्मूर्छितानां नराणां श्वासो-
श्वासादीनामव्यक्तजीवचिह्नानामपि च तत्र समानजात्यंकुरादीनामव्यक्तजीवचिह्नानां दर्श-
नेन सम्यग्जीवज्ञानं भवति, तथा पृथिव्यादयः कदापि चेतना सहिताः संघातत्वात् । इत्यादीनि सूक्ष्मविचारपरिपूर्णानि नैकानि प्रमाणानि पृथिव्यादीनां सचेतनाय । विशेषावश्यकादिग्रंथेषु महाप्रमाणकत्वमलंकुर्वीणेषु निर्दिष्टानि सन्ति, कृमिप्रभृतयो द्वीन्द्रियाः कथ्यन्ते, तेषां स्पर्श-
जिह्वास्वरूपेन्द्रियद्वयमात्रात् । पिपीलिकादीनि स्पर्शजिह्वाघ्राणसंज्ञकत्रीन्द्रियमात्रात्रोन्द्रियनाम, भ्रमरादयः चक्षुरिन्द्रियसहिताः चतुरिन्द्रियाः कथ्यन्ते । संपूर्णपंचेन्द्रियाणां पुन नारिकतिर्यग्म-
नुष्यदेवरूपाश्रत्वारो भेदा वर्णिताः । तत्र नार-
काणां निवासो रत्नप्रभादिषु सतस्वधोऽधोभू-
मिष्वस्ति । तिरश्चापि जलेषु चरमाणानां मकरा-
दीनां जलचरेति नाम, स्थले विहरतां गोमहिषा-
दीनां स्थलचरेति, आकाशभागे स्वेच्छापूर्वकं गमनागमनक्रियां कुर्वन्तं च खेचरेत्यर्थसमाना-
गतेर्नामभिराप्यानं भवति तृतीयभेदेनोच्यमाना मनुष्या जम्बु-धातुकी-पुष्कराद्वस्वरूपाद्वैदिक-
ज्ञाना जैनशास्त्रमुप्रसिद्धे पञ्चचत्वारिंशद्योनन-
मात्रे क्षेत्रे उत्पत्तिमाप्नुयन्ति, देवाश्च पुनर्भुवन-
पतिव्यन्तरज्योतिर्लोकैर्गामिनिप्रभेदेन चतुर्विधा-
स्सन्ति एतेषां सर्वेषामपि जीवानामायुस्त्वित्त-
रीतादीनां संवर्णनमनेकेषु ग्रन्थेषु निरूपितमस्ति, श्रीमत्तादयोपपटुभिरसाहचरैः । तादृश्यस्वरूप-
स्य जीवस्य मूलस्वभावे निर्मलः सच्चिदानन्द-

मयश्च विद्यते, परन्तु कर्मरूपपौद्गलिकावरणे-
तस्य मूलस्वरूपमाच्छादितमस्ति, यदा पौद्गलि-
कावरणं सम्यग्ज्ञानादिना दूरं भवति तदा जीवो-
मुक्तावस्थां प्राप्यानुपममक्षयमविनष्टमव्यात्राधं-
सुखमभवति, कर्मणा सह जीवस्य मृत्तिका-
सुवर्णवदनादिसम्बन्धोऽस्ति, अनादिकर्माणि-
जीवेन सह संबधितानि भवन्ति, परं शुभाशुभ-
कारणाधीनजीवप्रदेशेस्सार्धं तेषां परिवर्तनं-
भवति तानि कर्माणि जिनेज्ञानावरणीयदर्शना-
वरणीयवेदनीयमोहनीयायुर्नामगोत्रान्तरायभेदतो-
ऽप्यविधानि मुख्यतया निर्दिष्टानि, तत्र चक्षुषः-
वस्त्राद्यावः णवज्ज्ञानस्यावारकं यत्कर्म तज्ज्ञानाव-
रणीयमिति कथ्यते, तस्य पञ्चभेदास्सन्ति-
मतिश्रुतावधिमनःपर्यायकेवलावरणभेदात्, यथा-
यथावरणानि नष्टतां यान्ति तथा तथा तस्य-
तस्य ज्ञानस्य संपत्तिः प्रादुर्भवति दर्शनस्यावारकं-
कर्म दर्शनावरणीयमिति नाम्ना प्रसिद्धिमहति-
तस्यापि चक्षुरचक्षुरवधिकेवलनिर्द्रानिद्रानिद्राप्रच-
लाप्रचलाप्रचलास्त्यानगृह्णित्वैव नवभेदा उक्ताः ।
मदस्तेदवलम विनोदनार्थः स्वापो निद्रा, उपर्युप-
रितदवृत्तिर्निद्रानिद्रा, प्रचलयत्यात्मानमिति-
प्रचला, पौनः पुन्येन संवाहितवृत्तिः प्रचलाप्रचला,
स्वप्ने यया वीर्यविशेषाविर्भावः सा स्त्यानगृह्णि-
रुच्यते, यस्य कर्मण उदयेन जीवानां सुखस्य-
दुःखस्यचोपलब्धिर्भवति तद्वेदनीयं कर्मेति-
कथ्यते, तदसातासातारूपभेदतः द्विविधं-
प्रज्ञप्तमस्ति, जीवं कृत्याकृत्यविशेषादिति-
त्रियमाणं कर्म मोहनीयम् तस्य हास्यादिपटु-
पुरुषत्वीनपुंसद्वस्त्रादयो वेदा, अनन्तानुसन्ध्या-
दीनां प्रोपमानमापालोभरूपाः षोडशभेदा-

सम्यक्त्वमिष्यात्वतदुभयमोहनीयमिति सर्वे मिलित्वा विंशतिभेदा भवन्ति, यस्य कर्मण उदयेन जीवा पृथग्गतीनामनुभवं कुर्वन्ति तदायुःकर्मस्यभिधीयते, तस्य देवमनुष्यतिर्यग्नरकायुरूपाश्चत्वारो भेदा भवन्ति, जात्यादीनां पर्यायाणामनुभवं कुर्वाणस्य नामकर्मणः द्विचत्वारिंशदभेदा स्तन्ति, सप्तमस्य गोत्रकर्मणः नीचमुच्चमिति भेदद्वयं वर्तते, यस्योदयेन जीवानां नीचोच्चरूपा संपत्तिः प्रादुर्भवति । अष्टममन्तरायकर्मम्, यस्य बलेन जीवानां दानादिकर्मणि क्रियमाणेऽन्तरायो भवति तदन्तरायकर्ममिति गीयते, तस्यापि दानलाभभोगोपभोगवीथ्यरूपा पंचभेदास्सन्ति । एतेषां कर्मणां विस्तारयुक्तं संवर्णनं बहुषु शास्त्रेषु कृतमस्ति अत्रत्वन्तीवसंक्षिप्ततया दिग्मात्रं दर्शितमस्ति ।

द्वितीयमजीवतत्त्वम् उक्तं नीवस्वरूपं तद्विपरितोषणोऽनीयो भवति, तस्य धर्मास्तिकायाधर्मास्तिकायाक्राशास्तिकायपुद्गलास्तिकायकालाश्चेति पञ्चमकारास्सन्ति, अस्तिकायस्य प्रदेशसमुदायार्थत्वात् धर्माधर्माक्राशपुद्गलानां च प्रदेशसमूहरूपत्वादस्तिकायैष्युक्तार्थैर्नामभिः ते व्यवहियन्ते । तत्र धर्मास्तिकायो लोकव्यापी, स्वभावाचित्योऽवस्थितः, रूपरहितं चैतद्रव्यमस्ति जीवपुद्गलानां गतिकरणे साहाय्यको भवति, यथा मत्स्यः आत्मनि गमनशक्तिः सत्यपि जलसाहाय्यं विना गन्तुं न शक्नोति, तथैव जीवपुद्गलो गमनसाध्यविद्यमाने सत्यपि धर्मास्तिकायसाहाय्यरहितं पातुं नैव शक्नुतः, अधर्मास्तिकायस्यापि स्वरूपे धर्मास्तिकायसादृश्यमस्ति, विशेषेण पुनर्जीवादिनां स्थितिकरणे उपकारं कुरुते । आक्राशः लोकालो-

कव्यापी, नित्योऽवस्थितोऽरूपी, पदार्थोऽस्ति, योऽवक्राशदाने स्वकीयतामर्थं प्रगटयति । एतेषां त्रयाणां स्कन्धदेशप्रदेशा इति त्रयो विभागास्सन्ति, तत्र समूहरूपः एकपदार्थः स्कन्धः, समूहस्य लघुभागः देशः, पुनर्विभक्तुं नैव शक्यते यः स प्रदेशो विज्ञेयः । स्पर्शरसगन्धवर्णवन्ती सर्वाणि वस्तूनि पुद्गलेति नाम्ना संकीर्त्यते, तेषु पुद्गलेष्वेव चान्योन्यं श्लेषसूक्ष्मतास्थूलताकारशब्दान्धकारलायाछेदनभेदनादीनि च भवन्ति । ते पुद्गला परमाणुस्कन्धभेदतः द्विप्रकाराः कथितास्सन्ति, 'अणवः स्कन्धा'श्चेति तत्त्वार्थसूत्राधिगमपञ्चमाध्यायस्य पञ्चविंशत्तमसूत्रानुसारात्, तत्रातिसूक्ष्मो, नित्यः स 'तोऽणुरेकैकरसवर्णगन्धवान्, निरवयवोऽन्योन्यं विसंयुक्तः पदार्थः परमाणुः, तथा सावयवः परमाणुसंघातस्कन्ध उच्यते, बालत्वयुवत्ववृद्धत्वाद्यवस्थानं, परिणामस्य कारणं, वर्तमानादिक्रियानामनुयाहकं सार्धद्विकद्वीपसंवर्ती परमसूक्ष्मनिर्विभागः समथः कालोऽस्ति, जैनशास्त्रेषु कालस्य मुख्यौ द्वौ विभागौ कृता स्तः प्रथमोत्तमर्पिण्यभिधानोऽस्ति यस्मिन् रूपरसादीनामनुक्रमेण वृद्धिर्भवति, द्वितीयोऽवसर्पिण्यभिधः स पूर्वतो विपरीतोऽस्ति, अर्थाद्व्यादीनां तत्र प्रक्षीणता भवति एतादृश्योऽनेकोत्सर्पिण्यो व्यतिक्रान्ता आसन्, भविष्यन्ति च सर्वस्मिस्तस्मिन् चतुर्विंशश्चतुर्विंशः पृथक्नीवाः स्वकीयज्ञातिशुभकर्ममामर्थ्यबलेन तीर्थंकरा भवन्ति । तृतीयमाश्रयतत्त्वं—ज्ञानावरणीयादीनां पूर्वप्रतिपादितानां कर्मणां सम्बन्धे कारणभूता मिथ्यात्वाधिरतिप्रमादकपायवोगा आश्रयतत्त्व-

मिति संज्ञां लभन्ते तत्र सत्येऽसत्यमतिरसत्ये
सत्यमतिर्मिथ्यात्वेति, हिंसानृतस्तेयावहारापरि-
ग्रहेभ्योऽनिवृत्तिरविरत्याख्याता. विषयाणां सेव-
नमिन्द्रियाणामदमनं सुरापानादिकरणं प्रमादः,
क्रोधमात्रमायालोभाश्चेति चत्वारः कपाया उच्यन्ते
तथा भनवचन-ज्ञायानां शुभाशुभव्यापारः योग-
कथ्यते ।

चतुर्थसंवरतत्त्वम्—तद्भवति यत्तेषां पञ्चाना-
मप्याश्रवाणां सम्यग्दर्शनेन विरतिना प्रमादाक-
रणात् कपायरहितत्वाद्धर्मानुप्रेक्षणादिना निवारणं
कर्तव्यमर्थात् कर्मग्रहणहेतुभूतस्य परिणामस्याभावः
संवरतत्त्वं जैनशासने प्रतिपादितमस्ति ।

पञ्चमं बन्धतत्त्वम्—कर्मजीवानां क्षीरनीरवद-
ग्निलोहपिण्डवद्वा योऽन्योन्यसम्बन्धस्तद्वन्धा-
भिधानं तत्त्वं भाष्यते, तस्य प्रकृतिस्थित्यनुभा-
गप्रदेशाश्चेति चत्वारः प्रकारास्तन्ति कर्मस्वभवाः
प्रकृतिः कर्मपरिणामकृतकालविभागः स्थितिः,
तस्य रमोऽनुभागः कर्मवृत्तलसंचयः प्रदेश उक्तो
भयति ।

षष्ठं निर्जरातत्त्वम्—अनशनभावगौरव्यवृत्तिपरि-
संख्यानरसपरित्यागविविक्तशय्यासनकायबलेशा-
श्चेति षड्प्रकारे ब्रह्मसंपोभिः, प्रायश्चित्तविनय
वेत्यस्याध्यायानुरसर्गध्यानमित्येवं षड्प्रकार-
रैरभ्यस्यतसंपोभिः कृत्वा यः जीवसंघट्टानां कर्मणां
क्षयः तज्जिनिगम्यं तत्त्वं निर्दिष्टमस्ति, सा निर्जरा
द्विधा भवति, सत्तामात्राममेव, तत्र वास्तव्यन्त-
रसंपरिमर्शं त्यक्तां निर्वाणभिलाषिणां जीवानां
सत्तामनिर्जरा भवति, अन्यजीवानां च संप्रगमा-
नेकदृष्टदुःखसहनेन नायमाना निर्जराऽकाम-
निर्जरा ज्ञेया ।

सप्तमं मोक्षतत्त्वम्—शरीरिन्द्रियाणुपुण्यपापवर्ग-
गन्धरसस्पर्शगृहजन्मग्रहणवेदत्रिकारागद्वेषमोहावि-
द्यादीनां समूलक्षयो मोक्षतत्त्वमित्युच्यते, अजरा
मरस्थानममृतपदं, निर्वाणं, मुक्तिरपुनर्भवः,
सिद्धिपदं इत्यादयः तस्यैव मोक्षपदस्य पर्यायास्त-
न्ति, ऊर्ध्वगमनस्वभावस्य जीवस्य सकलकर्मम-
लनाशाग्जलतुम्बिकान्यायैर्नोर्द्धा गतिर्भवति. स
जीवः ऊर्ध्वं गच्छमानो लोकांतं यावद्याति; तत्रैव
च तस्य स्थितिर्भवति, उच्चगमनशीलस्य तस्य
जीवस्य ततोऽप्युच्चगमनं कथं न भवतीति चेद-
जीवप्रकरणे निरूपितस्य धर्मास्तिकायस्य गतिस-
हायकस्य लोकव्यापित्वात्, तत्र च लोकभावेन
तस्याभावादिति । प्राप्य निर्वाणमपि जीवशब्देनैव
व्यवह्रियते, तेषामिन्द्रियादिबाह्यप्राणाभावेऽप्य-
नन्तज्ञानदर्शनवीर्यमुखरूपानां भावप्राणानां वि-
धमानत्वात्, 'जीव प्राणधारणे' इति धातुना
जीवति प्राणान् धारयतीति जीवः, तस्यैवं व्युत्पत्तिः
श्रित्येन, निर्वाणगतानां सुखं चाविनश्वरं केनचि-
द्वस्तुनानुपमेयं संसारसुखाद्विलक्षणं परमानन्दमयं
भवति, यस्य सुखस्यानन्तभागेऽपि सुरासुरनरे-
न्द्राणां सर्वमपि सुखं भवितुं न प्रभवति ।

निरूपितं चेवं जैनदर्शनाभिमतानां सत्ताना-
मपि तत्त्वानां संक्षिप्तं स्वरूपं विन्तारणाद-
ज्ञानमिन्द्रादिभ्रमज्जनैः तेषु तेषु ग्रन्थेषु द्रष्टव्य-
मिति प्राप्यते ।

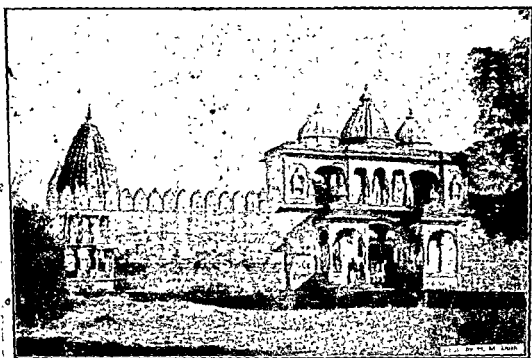
मिहान्तरा अत्रैव संध्य

पञ्चाध्यायी

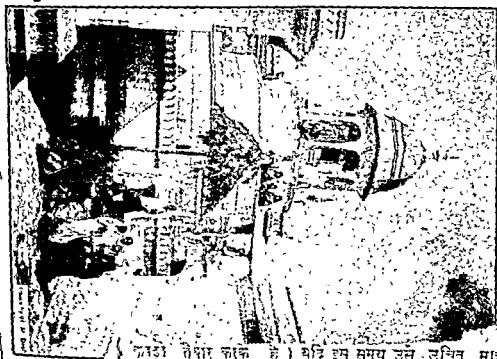
मूत्र और पात टीका सहित

मुद्रर पदवी नीलद मृ० ॥॥)

पता-दि० जैन पुस्तकालय-मुद्ररत ।



श्री दिगम्बर जैन मन्दिर श्री अलिशयक्षेत्र रामटेकरी दृश्य.



जहाँ तैयार करके है । यदि इस समय उत्त-उत्तिन मात्रा देका

जातीय जीवनका ह्रास और हमारा कर्तव्य ।

(लेखक—मास्टर छोटेलाल जैन, सुपुर् ।

मनुष्य समाजके उस विभागकी जाति कहते हैं जो निवासस्थान, वंश परम्परा व धर्मके विचारसे दिया जाता है जैसे आर्यजाति, पारसीजाति, मुगलजाति, जैनजाति आदि । इसी जातिके जीवित रहनेकी अवस्थाकी जातीय जीवन कहते हैं । प्रत्येक जातिके जीवनका ह्रास या विकास उस जातिके लोगोंकी संख्या व शिक्षाका क्रमशः उन्नत या अवन्न होना इन दो कारणोंसे जाना जाता है । मनुष्यका कर्तव्य है कि अपनी व जातिकी शारीरिक, मानसिक, व आध्यात्मिक शक्तियोंके विकास करनेका जी जानसे प्रयत्न करे ।

अब जब हम उपर्युक्त सिद्धान्तोंकी ओर एतद्धार विचारपूर्वक, लक्ष्य देते हैं तो निश्चित होता है कि जो जाति लौकिक व आध्यात्मिक अभ्युदयके ऊँचेसे ऊँचे क्षितिपर विराजमान थी; मनुष्यसंख्या, शिक्षामें सारे संसारकी आदर्श थी वही आज संसारकी सभी जातियोंमें गणना करानेके प्रदंष्ट्रा योग्य नहीं है । उनमें अपने जीवनकी अनेक उपयोगी बातोंका ऐसी सोचनीय अभाव है, जो कदाचित ही मनुष्य जाति कहलानेवाली पाउपा किसी जातिवा न होगा । जैन जाति कि नहीं किन्तु सारे भारतवर्षकी आर्यजाति जिनमें कि संगठनीय समष्टि जगदी जातियोंकी धन दान औसत्य और परिधायक द्वारा कमाससे कमाई पैदा करके

उनको उसके पहिगना प्रतयया था । वही आज अपना शरीर दानके लिये फटे पुराने बिगड़ोंके लिये लाटायित हो रही है । खेतकी जोतने, बखाने और उन्नत होने काटनेवाले किसानों ही को अब घेतगद बालके गाछमें कबलित होना पड़ता है । सारे व्यापार और उदरपोषणकी दारमदार जिन पर है वही इतने कण्ठी हैं कि कदाचित ही उनको कड़ पीटी तक उससे छुटकाग मिल सके । मारा भारतवर्ष मन्त्राग्निसे भक्षण किया जा रहा है । नागरिक नहीं किन्तु एक ग्रामीण दैनिक सूर्योदयसे सायंकाल तक पीठ पर थैला रख सर्दी गर्मीमें दो चार गांव चक्कर लगाता है; परन्तु शोक ! इतने पर भी उनकी सन्तानोंको घर पेट अन्न नहीं मिलता है । नरकी भांति कुटुम्बीगन भाई भाई, पिता, पुत्र आदिमें द्वेषता साम्राज्य स्थापित होता जाता है । जिससे कि बरके बर नष्ट हो गये और होते जा रहे हैं । बाल्यविवाह चारम सीपां तक पहुँच चुका—नर जाति बाल्य-विशवाओंकी संख्या अधिकाधिक बढ़ रही है—तिस पर भी युवा प्रहर्षोंको दाम्पत्य प्रेमसे बध्तिन रहना पड़ना है । सन्तान दुर्बल, निस्तेज और निश्चयोगी हो रही है । उद्योग और साहस समाजसे निवृत्त चुका । कुछ लोग धर्मता देता लेकर उप पर अपना प्रभुत्व प्रसार रहे हैं ।

गुरुत्वांक रोमने प्रप्ति मनुष्यकी गतिगह जैन जाति भी अब अत्यन्त कृष, अशक्त निरी हड्डियों की चोता मात्र बच गई है । स्वयं-कारण सम प्रकृति है, उन्ने धर्म, बर रही है । यदि हम समय उसे उचित मात्रा देकर

धर्म भी साधारणतया पालती रहनी है। कभी कभी एकाध व्याख्यान देकर भी बहुत बड़ा परोपकारका कार्य कर दिया करती है। जैसे घर भलाई करके रुपये भर दिखाना और निम्नपर भलाई की है उसपर अपना रौब जमाना, आज कलका फैशन हो रहा है, यह भी इस फैशनसे अलग नहीं है। सामान सुधारकी भी यह बहुत बड़ी बड़ी बातें किया करती है। जाति-भेद मिटा देना; एक धर्मके सब अनुयायियोंका रोटी बेड़ी व्यवहार करना; स्त्री शिक्षाका प्रचार करना; विधवाओंको दुःखसे निकालना आदि सुधारोंकी बहुत पक्षपातिनी है; परन्तु केवल जनानो पक्षपातिनी है, आचरणके लिए तो वस 'पापड़का नाम गोल गप्पे' ही है, और यही कारण है कि विमला अवतक कुमारी है।

वह विमलाके लिए उसके मन माफिक सुन्दर धनी व विद्याप्रिय घर चाहती है, और साथ ही यह भी चाहती है कि वह अच्छा विद्वान भी हो।

इनकी जातिमें विद्याप्रचार जैसे ही बहुत कम है; शिक्षित और धनी गोड़े बहुत हैं, वे मत्तपनमें ही ग्राहे जा चुके हैं। शिक्षित और धनी ही क्यों इस समय कोई अशिक्षित या गरीब भी तो ऐसा नजर नहीं आता है कि निम्नके साथ विमलाका ब्याह कर दिया जाय।

गुणचन्द्र एक सुन्दर सुवर्ण है। आयु बीस बर्ष का लगभग होगी। बी० ए० पास कर चुका है। धनी भी है और सुशील भी है। विमलाकी माता उसको बहुत स्नेहनी दृष्टिसे

देखती है। वह प्रायः विमलाके यहां आया जाता करता है। उसे भी गायनका बहुत शौक है। विमलाकी और उसकी तालमेल अच्छी जुड़ती है। घंटे घंटेपर प्रायः विमला उसे दिल-त्वा पर गायन सुनाती है; गुणचन्द्र भी हार्मोनियमके साथ कोई चीज़ सुनाता है। विमलाकी माता इनके इस आनन्दको देखकर प्रसन्न होती है और मन ही मन न जाने क्या क्या घोट घड़ा करती है।

एक दिन गुणचन्द्र अपने घर वापिस जा रहा था। वह फाटके पास पहुँचा होगा कि विमला चिल्लाई—“देखना, देखना तुम्हारी धोतीमें कोई जानवर गुप्त गया है।” गुणचन्द्रने इधर उधर देखा परन्तु कोई जानवर नजर नहीं आया उसने फिरकर विमलाकी ओर देखा—वह मुँह पर हाथ देकर हँस रही है; उसकी आँखोंसे एक दिव्य तेज निकल कर वासना उत्पन्न कर रहा है। उस समयकी उसकी मुखश्रीको देखकर गुणचन्द्रका शरीर रोमांचित हो आया। यह पहिला ही समय था कि उसने विमलाकी इस प्रकारकी मुखश्रीको देखा। गुणचन्द्र देड़ी निगाहसे देखता हुआ वहाँसे चला गया। विमला भी गुणचन्द्रको दृष्टिपथसे अलोप होने तक देखती रही और फिर कुछ अतमनी होकर कमरेमें चली गई।

विमला बहुत दिनोंसे उदास रहती है। उसकी उदासीका मुख्य विषय है—गुणचन्द्र। वह एक वर्षका माननेवाला होकर भी दूसरी नातिवा है। घर, घर सब अच्छे हैं तो भी वह सदा

तिका नहीं है। वह सोचती है दूसरी जाति-
का होनेसे क्या हो गया ? है तो अपने ही
धर्मका माननेवाला। दोनोंकी जोड़ी भी अच्छी
है, दोनोंको परस्पर प्रेम भी है। तब व्यर्थ दूसरी
जातिका विचारकर अपनी स्वर्णकी प्रतिमाको
क्यों न उस भक्के हाथ सौंप दूं; जो आशा
भरी दृष्टिसे उसकी और टकटकी लगाकर देखता
रहता है, जो पूजा करनेके लिए बहुत उत्सुक
है और जिसकी पूजा ग्रहण करनेके लिए मेरी
प्रतिमा भी लाञ्छित हो रही है। कभी
सोचती है—जाति—बंधन कैसे तोड़ें ? अपने
बड़ोंकी रीतिकों कैसे छोड़ें ? यदि मैं छोड़ना
भी चाहूं तो जातिके लोग कब राजी होंगे ?
वे इस संबंधको कैसे पसंद करेंगे ?

मगर करेंगे क्यों नहीं ? इधमें हानि क्या है ?
धर्म-इपके लिए मना नहीं करता। वास्तवमें
तो धर्मके साथ इसका कुछ विशेष संबंध भी
रही है। भगवान् ऋषभदेवने जो कि धर्मके
अथ संस्थानक और कर्मभूमिके आद्य रचयिता
हैं—तो केवल क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र ऐसे
तीन वर्ण ही स्थापन किये थे। फिर भरतचक्र-
वर्तिने ब्राह्मणगर्भ स्थापन किया था। आगे
उच्चवर्णवाले नीचे वर्णकी लड़कियां लेते थे;
ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रकी;
क्षत्रिय, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रकी; वैश्य वैश्य
और शूद्रकी; और शूद्र शूद्रकी। क्या उप-
समय धर्म कोई दूसरा था ? नहीं। तब ?

इसी समय एक व्यक्तिने आकर मंगलासे
नया जन्मद किया। उसकी विचार परम्परा टूट
गई। आगन्तुकने इधर उधरकी बातें कर कहा:-

“ विमलाका ब्याह यदि आप मानचंद्रसे कर
देंगी तो अच्छा है। यद्यपि वह दूजवर है
तथापि उसकी आयु विशेष नहीं है। आदमी
बड़ा परिश्रमी है। पत्नी भी पन्द्रह बीस हजार
की है। रंगरूपका भी अच्छा है। लोग लड़-
कीकी आयु बढ़ी हो जानेसे दुलखते हैं।
जातिमें इस समय कोई लड़का खाली नहीं है
अतः आपकी और उसकी दोनोंकी मलाई
सोचकर मैं आपको इस मम चेताने आया हूं।
मंगलाने इत बृत्ते ही कहा:- “ क्या मैं
अपनी सोने जैसी लड़कीको उस मवालीके हाथ
सौंप दूं ? सालामें अनकल तो कौड़ी भरकी
रही है।

आगन्तुक मंगलाकी बातसे कुछ चमका।
उसने मंगलाकी ओर जरा म्लान होकर देखा
और कहा:- आप क्या कह रही हैं ? वह मवाली
है तो फिर इसे कौनसे राजाके पुत्रको दोगी ? ”
मं.-क्यों ? जैनियोंमें क्या कोई घर नहीं है ?
आ.-हाँ, अपनी जातिमें तो कोई नहीं है।
मं.-मैं अन्य जातिमें करूंगी। जैनियोंमें
बहुतसे अच्छे २ लड़के हैं।

आगन्तुक आश्चर्यान्विन होकर बोला:- “ तो
क्या आप किसी गैर जातिके लड़केके साथ
व्याह करोगी ? ”

मं.-हाँ, इसमें क्या कोई हानि है ?
आ.-हानि नहीं होती तो हमारे बापदादे ही
क्यों नहीं आपसमें शादी व्याह करने लग जाते ?
मं.-मगर उस कालमें और वर्तमान कालमें
तो अन्तर है ?
आ.-हाँ, इतना अन्तर है कि उप समय

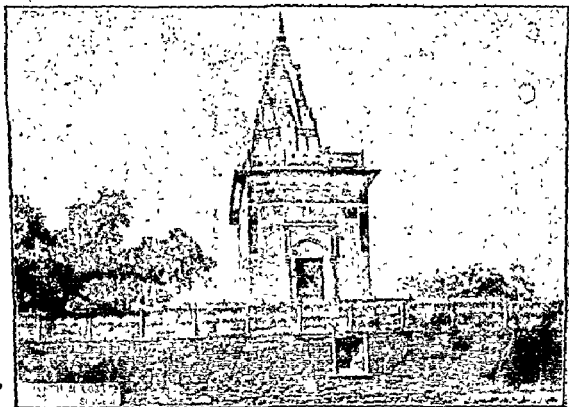
लोग धर्मात्मा थे; महात्मानकी आज्ञानुसार चले
थे और आज सब झूठापंथी होना चाहते हैं।
सिवा इसके तुम और पढ़े लिखें करोगे ही क्या ?
भगर याद रखना यदि आप ऐसे विचार करेंगी
तो आपको जातिसे च्युत होना पड़ेगा।

‘जातिसे च्युत होना पड़ेगा’ वाक्य मंगलाके
निर्वृत्त हृदयमें तीर सा लगा। वह निस्तब्ध हो
रही। आगन्तुक मंगलाकी ऐसी स्थिति देख यह
कहता हुआ चला गया कि-मेरी बात पर पूरा
विचार करना नहीं तो पछताना होगा।

* * *

गुणचन्द्र न जाने क्यों आजकल मंगलाके
घर नहीं आता। विमला बड़ी उदास रहती
है। उसका दिखता भी उसके दिलसे नहीं
लुभा सता। लंबी लंबी साँसें लेनेके बिना उसे
कुछ नहीं सुगता।

अन्त हाय ! दिग्गज गये ध्यारे वहाँ जायेंगे ॥ सु. ॥
उम दिन-पिसी कार्याश गुणचन्द्र भी उधर
आ निकला। मंगला कहीं नहिर गई हुई थी।
इसलिए गावन सुनकर वह भी बागमें चला गया,
और एक लताके पीछे खड़ा होकर उन्मत्त
चनानेवाले विमलाके गोपनको सुनने लगा।
“तलगत हूँ रैन दिना, चन नहीं तुम बिना।”
इस वाक्यको ही विमला बार बार गा रही
थी। उजाला स्वर बहुत कण्ठोत्पादक हो रहा
था। गुणचन्द्रकी आँखोंमें पानी भर आया
वह सोचने लगा-क्या वरुं ? कुछ कम नहीं
है। जैनगाथमें कितनी आग लग चुकी है।
कौन जानता था कि हमारा खेल तमाशा ऐसी
रंग लायगा। मेरे बिना अब यह कैसे दिन
नितानेगी ? हम लोगोंके भक्त बिना हमारा
व्याह कर देगको रागी नहीं हैं। परमात्मा,



चन्द्रपुरी (काशी) के श्री चन्द्रप्रमुका दि० जैन मन्दिर.



सिंहपुरी (काशी) के श्री अयांसनायका दिगम्बर जैन मन्दिर.

हैं। मैंने बहुत प्रयत्न करके देखा। तुम्हारा और विमलाका व्याह होना किसी तरह स्थिर नहीं हो सका। इनमें प्रचान विघ्न जाति बाहिर होनेका भय है। धर्मके धूतारे मोले लोगोंको नभालम क्यों, यह कहकह कर परस्पर जातियोंको नहीं मिलने देते हैं कि यदि तुम अपना रोटी बेटी व्यवहार एक कर लोगे तो धर्म हूब जायगा। मोले लोग धर्म हूबनेके भयसे अपना सर्व नाश होना नहीं देख सकते। मगर क्या किया जाय? जातिमें रहना होगा और मान मर्यादा बचाना होगा तो जातिके अनुसार ही चलना पड़ेगा। अतः अब तुम विमलासे इस तरह न मिला करो; क्योंकि यह अब कभी तुम्हारी नहीं हो सकेगी।

गर्भित गुणचंद्र विशेष कुछ न सुन सका। वह "बहुत अच्छा" कह कर हृत्तनके साथ चला गया।

विमला उस दिन—"प्रभु, ऐसे जीवनसे मौन अच्छी है" आदि बातें बहुत देर तक बड़बड़ाती रही। एक दासोने सब सुनी और उसने मंगलाको अकर सुना दी। मंगलाको कुछ चिन्ता हुई; परन्तु जति बाहिर होजानेके भयसे वह अपनी प्रतीके मुख दुःखी और न देन सकी।

कुई दिन बीत गये। संध्या समय मंगला और विमला कमरमें बैठी हुई बातें कर रही थीं। इतने हीमें मंगलाकी बहिन शिवगोरी आगई। उसने कुछ देरके बाद विमलाके व्याहकी बात छेड़ी। विमला वहांसे उठकर चली गई।

शि०—बहिन आजकल लोग बहुत निंदा करते हैं; जो जो हो उसकी ओर अंगुली उठाता है

और कहता है—घोड़ा नैसी बेटी हो रही है तो भी अभी तक व्याह करना नहीं मूझता।

मं०—जीजी, मुझे भी चिन्ता है; परन्तु क्या करूं? किसी कागतके पुतलेके साथ व्याह कर दूं? कोई वर भी तो मिले।

शि०—क्यों मानचंद्र क्या अच्छा नहीं है?

मं०—जीजी, तुमसे छिपानेकी क्या बात है? पहिले तो वह मुझे ही पसंद नहीं, मैं जैसे तैसे पसंद भी करूं तो विमला उसे बिस्कुल नहीं पसंद करती। एक दिन उसकी सहेली प्रमाने उससे पूछा तो उसने उत्तर दिया मैं उसके साथ कभी व्याह नहीं करूंगी और मां अगर जव-देस्ती करेंगी तो मैं जहर खाकर मर जाऊंगी।

शि०—अरी, बावली-तू तो भोली हुई है।

कोई मरा करता है क्या? सच्ची बात तो यह है, कि उपन्यास पढ़ पढ़ कर उसके भी नीमें उपन्यासकी नायका बननेकी धुन समाई है; मुझे मादूस होगया है, कि वह गुणचन्द्रके साथ यह प्रेम करती है। बहिन, लड़का तो बड़ा अच्छा है; परन्तु क्या करें अपनी जातिका नहीं है। सोनेकी फटार पेटमें धोड़े ही खाई जाती है? तुम तो मानचंद्रके साथ व्याह ठीक कर लो। व्याह करके पतिके घरमें जाने ही मरना चाहते सब भूल जायगी।

मंगला ने एक अन्तर-वेदना प्रकाशित निश्वास छोड़कर कहा:—"जीजी, तुम कहोगी वैसा ही करूंगी, परन्तु मुझे डर लगता है।"

विमलाने बाहिर लड़े होकर इनकी सब बातें सुन लीं।



नीचे आकर विमलाने देखा कि बाँक्समें उसके नामका एक लिफाफा पड़ा हुआ है। उसने शीघ्रताके साथ उसे खोला, और पढ़ा, लिखा था:-

“ शुष्क हृदयको लहलहानेवाले अमृत तूने बरम कर हृदयको हरा किया; हृदयवीणाके तार तूने हृदयको बजनेवाला बनाया ।

मेरी हरी हुई, मगर कैसी ? जिसमें कभी फल नहीं आयगा, जो कभी पकना नहीं जानती, जो दाने देकर किसीकी भूख नहीं मिटाती। फूल खिले हैं, बड़े ही सुन्दर हैं ? परन्तु उनमें हृदयको गंधामोदित करनेवाली सुगंधी नहीं है। आँखें सौन्दर्य देखकर प्रसन्न होती हैं; परन्तु सुगंधके बिना मन कैसे प्रसुदित हो सकता है ? पाँच पक्वान्नेसे भरा हुआ थाल सामने होनेपर भी खाए बिना क्षुधा कैसे मिट सकती है ?

विमला ! दुनिया सब आशा पर जीती है। मरणामृतको भी फिरसे जी उठनेकी आशा रहती है; परन्तु हमारे लिए अब कोई आशा अवशेष न रही। हमारे बीच माता पिताकी नातिच्युतिका अनन्त समुद्र गर्जना कर रहा है; भोक्त-लक्षा रूपी अतन्त्र विकट झाड़ झाड़ प्रति ईश्वरी बीजमें पड़ी है। आया विनष्ट मनुष्य के लिए दुनियामें क्या है ? कुछ भी नहीं। चैतन्य आशा में रहना है, परन्तु जहाँ आन नहीं वहाँ चैतन्य कैसा ?

.....को मैं तुम्हारे यहाँ आया था। तुम बगमें बैठी गी रही थीं। गायन बहुत हृदय मेदक था, माथ ही वामनोत्तादक भी

था; हृदय विह्वल हुआ, परन्तु तृप्ति नहीं हुई। वह नन्दवनकी सी सुगंध लाया था; परन्तु निराशाकी निश्वास उसे वापिस उड़ा ले गई।

थोड़ी देरमें मैंने सुना कि तुम्हारे हाथसे दिल्पुष्पा गिर पड़ा, और तुम बड़बड़ाने लगीं:- “ भगवान, जीनेसे तो मरना लाख दर्जे अच्छा है। ” मुझे बहुत दुःख हुआ। मैं तुम्हारे पास आना चाहता था; परन्तु उमी समय तुम्हारी माताने मुझे बुला लिया और कहा-तुम्हारा और विमलाका व्याह होना असंभव है इस लिए अब तुम उससे न मिला करना, लोग निंदा करते हैं। प्राण, मैं उसी समय मन मारकर चला आया। वस अब फिर मिलेंगे जब परमात्मा मिलायगा। हृदय-दशा लिखना व्यर्थ है। न मादृम ये जातिके बंधन हमारे जैसे कितनोंका रात दिन गला घोटते रहते होंगे।

तुम्हारा-सुगंधचंद्र”

पत्र पढ़कर विमलाकी कैसी दशा हुई सो लिखना व्यर्थ है।

* * *

गुणचंद्र को कुछ दिन बाद एक पत्र मिला। लिखा था:-

“ उपास्य देवता,

गला घुटता है, इसीलिये निर्वेश होकर लिख रही हूँ। तुम्हारा पत्र मिल गया है। मां और मामीने मेरा व्याह मानचन्द्रके साथ करना ठीक किया है। रमणी पञ्चवारमें ही सब कुछ अपने देवताके चरणोंमें चढ़ा देती हूँ। मैंने सब कुछ तुम्हारे अर्पण कर दिया। अब मेरे पास क्या है निमको मेकर मैं दूरीमें के पास नाउंगी।

तुम ही मेरे इस जीवनके स्वामी हो । मरना जीना सब तुम्हें सौंप चुकी हूँ । अस्तु । ता० को पांच वजे में चौपाटी अपनी मासीके यहां मिलने जाऊंगी । मुझे तुम मिलना । कई-आवश्यकिय बातें करना है । अगर मेरा जीवन न चाहते हो तो मत आना ।

तुम्हारी-विमला—

* * *

नियत समयपर गुणचन्द्र, अपेक्षित स्थान-पर जाकर मिला । विमलाकी विचित्र मूर्ति देखकर गुणचन्द्रको भय लगा । विमलाने कठोर स्वरमें कहा:—“बोलो मुझे चाहते हो, या अपनी काल्पनिक मान-मर्यादाको और जातिको?”

न मान्दम इन शब्दोंमें क्या विनली थी ? सुनकर गुणचन्द्रका हृदय कांप उठा । आज तबके उसके सब विचार हवा हो गये । अब तक वह सोचता रहा था कि सब कुछ खो देने पर भी धर्मना मान सुरक्षित रखना चाहिए । ये विचार तत्काल ही उड़ गये । उसने टफ-टकी लगाकर विमलाके मुखकी ओर देखते हुए भर्राई हुई आवाजमें कहा:—“तुझे ।”

उसी तरहके स्वरमें विमलाने कहा “तो सुनो, एक काम करना होगा । आजके पन्द्रहवें दिन मेरा व्याह निश्चित हुआ है । तुम तेरे-हमें-दिन यहांसे चलनेके लिए तैयार रहना ।”

विमलाकी बात सुनकर गुणचन्द्र चमका । उसने जरा घबराहटके साथ कहा “कहाँ ?”

वि०—क्यों, इतने घबरा क्यों गये ? क्या डरते हो ? हम लाहौर चलेंगे और वहीं जाकर व्याह कर लेंगे ।

गु०—वहाँ कैसे व्याह कर लेंगे ?

वि०—मैं माताके साथ दो मास पहिले सांता-कुंग आर्यासमाजियोंके गुरुकुलके उत्सवमें गई थी । उसी दिन यह बात प्रकट की गई थी कि-एक द्वाक्षणके लड़केके साथ कोलीकी लड़कीका कल व्याह होनेवाला है । जातिथी सब गुण व कर्मसे होती हैं; जन्मसे नहीं होती । उनके व्याहमें कोई भी बाधा नहीं डाल सकेगा । जातिवालोंका इन्हें कुछ भी भय नहीं है । पांच करोड़ आर्यासमाजी भाई इनके साथ हैं । उसी समय मुझे भी अपना खयाल आया । मैंने सोचा हम भी आर्यासमाजियोंमें जाकर व्याह कर लें तो कैसा अच्छा हो ? ”

जल्सा खतम हो गया । आर्यासमाजकी एक बाई जो सामाजिक कार्योंमें बहुत भाग लेती है, विद्वान है, मेरी मातासे बहुत स्नेह रखती है; और मुझे भी पहिचानती है, वहां अकेली टहलने लग रही थी । मैं धड़कते सीनेसे अपनी हार्दिक इच्छा उनको सुनानेके लिए उनके मार्गमें जा खड़ी हुई । उन्होंने मुझे आवाज दी । मेरी हृदय और ज्यादा धड़कने लगा । मेरी आंखोंमें पानी भर आया । मैं कुछ उत्तर न दे सकी । अगर अगर उनके मुंहकी ओर देखने लगी । दयालु अन्तर्करण बाईने मेरी ऐसी दशा देखकर मुझे वगलमें दबा ली, और पूछा:—“क्यों बेटी, बताओ क्या बात है ? रोती क्यों हो ? ” मेरी आंखोंसे पानी गिरने लगा । वं बार बार आंम पोंछती थीं और पूछती थीं । आखिर मैंने धैर्य धरके कहा—“ तन्नि मासे न फहो सो कहूँ ।”

उन्होंने नहीं कहनेका विश्वास दिलाया। तब मैंने अपनी सब बातें उनको सुना दीं और पूछा:—“क्या आप हमारा व्याह भी इसी तरहसे नहीं करवा देंगी?”

उन्होंने कुछ देर सोचनेके बाद कहा:—“हां हो सकता है। मगर यहां नहीं। यहां तो तुम लोगोंके माता पिता तुम्हारा व्याह नहीं होने देंगे। और खास इसलिए कि तुम सरकारी नियमानुसार नाबालिग समझी जाती हो। तुम दोनों लाहोर चले जाओ। मैं वहां चिट्ठी लिख दूंगी। तुम्हारा सब प्रबंध हो जायगा।” सुनकर मेरा हृदय खिल गया। उन्होंने मुझे फिर मिलनेको कहा। मैं भी उस समय दूरसे मांको आती देखकर उनके पास चली गई।

कुछ दिन बाद उनसे मैं फिर मिली। उन्होंने लाहोरसे भी पत्र मंगवा लिया था। अब उन्होंने लाहोरवालोंके नामका एक खत मुझे दे दिया है। यह तुम अपने पास रखो। नियत समय पर तैयार हो रहना। वम नती है। ज्यादा बात करनेका समय नहीं है....”

गुणचंद्रको पत्र देकर विमला तत्काल ही वहांसे चली गई। गुणचंद्र भेंट-सुग्धकी तरह खड़ाफा रहा ही रह गया।

विमलाके और गुणचंद्रके परीमें टाहाकार मच गया, आठ रोजमे दोनोंके परीमें जुल्हा नहीं गया। पारों ओर मान पहिचानकायेन वहां तार दिये गये। मगर कहींमे कुछ मंतीवमद सनाकर नहीं जाये। रिना अरनी मंती

इकलौती लड़की थी और गुणचंद्र भी अपने घरका अकेला उजेला था। गुणचंद्रके पिताने और विमलाकी माताने तो आठ रोजसे अब भी मुंहमें नहीं डाला है। दोनों चारपाइयों पर पड़े हुए अपने जीवनकी बड़ियां गिनते हुए सन्तान विधोगसे दुखी हो उत्सुकताके साथ यमराजको पुकार रहे हैं। शिव-गौरी मंगलासे कुछ खानेकी आग्रह कर रही हैं और बीचबीचमें गुणचंद्रको भी गालियां देती जा रही है। इसी समयमें दासीने लाकर मंगलाको एक लिफाफा दिया। अशक्त पड़ी हुई मंगलाके शरीरमें लिफाफेके अक्षर देख कर विनली दौड़ गई। वह तत्काल ही उठ बैठी और लिफाफा खोलकर पढ़ने लगी। शिव-गौरी बड़े ध्यानसे सुनने लगी। लिखा था:—

“जननी प्रणाम,

घरसे मैं बिना कुछ कह सुने अचानक चली आई। इससे आपको अवश्य बहुत दुःख हुआ होगा; परन्तु इसके सिवा कोई दूसरा उपाय नहीं था। इसलिये विद्वत् होकर मुझे य मागे ग्रहण करना पड़ा। क्षमा करें।

स्वतंत्रता मनुष्य मात्रका जन्म-सिद्ध हक है अपना जीवन किम तरह और कैसे संगतिसे रहकर पिताना चाहिए। इसका फैसला करना भी मनुष्यके मनुष्यके स्वाधीन है और होगा ही चाहिए, यह आप सदैव ही कहती रहती थीं। आप यह भी कहती थीं कि क्या रही और क्या पुरा दोनोंका यह प्रवृत्ति-प्रद हक स्पष्ट है कि वे अपना जन्मभरका साथी अपनी इच्छानुसार चुनें। यथास्वी अपनी इच्छा

मुख्य पति पसंद करे और पति अपनी इच्छा-
नुसार पति । इसमें हस्तक्षेप करनेका किसीको
अधिकार नहीं है और जो करता है वह
अन्यायी है, अत्याचारी है, पापी है ।

मगर माँ, मुझे आपने मेरा जन्मसिद्ध हक
देना पसंद नहीं किया । जन्म-सिद्ध हक ही
क्यों आपने मेरा प्राण लेना भी एक तरहसे
निश्चित कर लिया । मैंने स्पष्ट यह कह दिया
था, कि मैं मानचंद्रके साथ मुझे व्याह करनेके
लिए विवश करूंगी तो मैं प्राण दे दूंगी । यह
आप भली प्रकारसे जानती थीं; तो भी आपने
कुछ परवाह नहीं की और मनचंद्रके
साथ ही मेरा व्याह स्थिर कर दिया । तब मैं
क्या करती ?

एकवार मैंने प्राण देना ही निश्चित किया
था । परन्तु आप कहा करती थीं कि आत्मह-
त्या करनेवाले घोर नरकमें जाते हैं, इसीसे मैं
'डर गई' । एक ओर मानचंद्रके साथ व्याह
करके इसी जन्ममें नरकवास करना था और
दूसरी ओर आत्महत्या करके परभवमें नरक
भागना था । मुझे नहीं सुझता था कि मैं
कौनसा नरक पसंद करूँ; परन्तु देवने मुझे दोनों
नरकोंसे बचनेका मार्ग बताया । आप कईवार
कहा करती थीं कि सारे जैनी मिलकर परस्पर
रोटी बेटी व्यवहार एक कर लें तो इसमें धर्म
बाधक नहीं है । और इसीलिए आपने मेरा
व्याह गुणचंद्रके साथ करा देनेके लिए प्रयत्न
किया था; परन्तु आप उस प्रयत्नमें हत-सफल
हुई । नातिच्छुतिके भयसे ही आप अधर्म-
दत्त करनेको उतावले हुई; मेरा जन्मसिद्ध
हक छीन लेनेसे तैयार हुई ।

मगर माता, धर्म जब बाधक नहीं, तब मैं
क्यों जान बूझकर नरकमें पड़ती ? क्यों आपकी
कल्पनिक, क्षणिक, जातिकी मान-मर्यादाके
लिए अपना यह लोक और परलोक बिगाड़ती ?

एक बात और भी, है रमणी एकवार ही,
हृदयसे अपना पति पसंद करती है और फिर
उसीके चरणोंमें अपना तन, मन, मान-मर्यादा
माता, पिता, भाई, कुटुंब कबीला आदि अर्पण
कर देती है । मैंने भी अपना पति पसंद कर
लिया था और उस पसंदगीमें अपना भी
अपरोक्ष ही नहीं वरन प्रत्यक्ष हाथ था । मैंने
जिसको अन्तरंगसे पति माना, जिसके चरणोंमें
मैंने अपना सर्वस्व समर्पण किया उसको छोड़-
कर आपकी कल्पनाके अनुसार क्या मैं दूसरेको
पति बनाती ?

अब मैंने यहां गुणचंद्रके साथ व्याह कर
लिया है । अब जिस देवताकी पूजा करनेके
लिए मैं लालायित रहती थी उसीकी पूजाका
मैंने पूरा अधिकार पा लिया है । अब संसारकी
कोई भी शक्ति मुझे अपने देवताकी पूजा
करनेसे नहीं रोक सकती ।

माँ, व्यर्थकी कल्पना करके मुझे दोषी मत
बताना । संसार अपनी इच्छानुसार दूसरेको
कार्य न करने देखकर उसे खराब बताती है;
परन्तु वह दूसरेके सुख दुःखकी पर्याह नहीं
करता । सुख दुःख क्यों दूसरेके जीवनको नष्ट
करनेके और दूसरेका प्राण तक ले लेनेमें भी
आगा पीछा नहीं करता । मगर दूसरे सिर
झुका कर क्यों चुपचाप अत्याचार सहें ?
जिस प्रकार समाजकी स्वतंत्रताके साथ विचार

करनेका हक है उसी प्रकार क्या प्रत्येक व्यक्तिको स्वतंत्रताके साथ विचार करनेका हक नहीं है?

माता, आपकी और आपके समाजकी कल्प-
नानुसार यदि मुझे नरकमें जाना पड़ेगा तो वह
नरकवास भी—जो अपने जन्म—सिद्ध हककी
रक्षा करनेके अपराधमें पाउँगी—आपके अत्याचारी
समाजके अंदर रहनेसे ज्यादा अच्छा लगेगा।
अपने जन्म—सिद्ध हककी रक्षा न कर स्वर्गवास
प्राप्तिकी लालसा करना, मैं नरकसे भी ज्यादा
समझती हूँ। समझती क्यों हूँ? ऐसा है ही।
समानने स्त्रियोंके इस हकको छीन लिया इसी
लिए समाजमें कैसी नारकीय लीला हो रही है?
जिसका स्मरण करनेसे भी कलेजा कांप जाता है।

माता, अपनी पुत्रीके इस कृत्यको यदि
अच्छा समझती हो तो उसे क्षमा करना।
यदि नहीं समझती हो तो उसे मरी समझकर
विस्मृतिके अनन्त सागरमें डुबो देना।

अन्तमें एक बात और कह देना चाहती हूँ।
यहां आकर मुझे विदित हुआ है, कि सैकड़ों
ही जैनी हमारी ही भांति समाजके अत्याचारोंसे
पीड़ित होकर आत्ममानी और ईसाई बन रहे
हैं और समाजके हेतु 'नैनधर्म'को भी नमस्कार
कर रहे हैं। जान पड़ता है धीरे धीरे सारे
जैनी समाजके अत्याचारोंसे पीड़ित होकर इन
महात्मयुद्धोंमें डूब जायेंगे और साथ ही नैनध-
र्मको भी डूबो जायेंगे। वस्तु।

आपकी पुत्री—

विमला,,

मंगलाकी आंखें फटीकी फटी हो रह गईं। शिव-
गौरी कठपुतली की तरह खड़ी रह गई और....।



(लेखक:—पण्डित लोकमणि, जैन गोटेगांव. C. P.)
मंत्रीप्रमोदकारुण्यमाध्यस्थानि च सत्वगुणाधिक-
क्षिद्यमानाविनयेषु। 'तत्त्वार्थसूत्र'

सत्त्वेषु मंत्री गुणेषु प्रमोद
दृष्टेषु जीवेषु कृपापरत्वं।
माध्यस्थ भावं विपरीतगुणौ
सदा मगात्मा विदध्यात् देव।

हे प्रभु ! मुझे इस भावनाका अविर्भाव तब
दीजिए, जिससे प्राणीमात्रमें मित्रता, गुणाधिकोंमें
प्रमोद, दुःखी जीवोंपर परम कृपा और विपरीत
वृत्तिवालोंमें मेरे सदा मध्यस्थ भाव बने रहें।

समस्त जीवोंके जीवात्मा
सत्त्वेषु—मंत्री मेरे मित्र हैं, अ. ह. ह.
इस दिव्य मंत्रका भी क्या कोई मूल्य कर सकता
है क्या ? इस मंत्रके प्रभावसे भी भेद बुद्धि
नष्ट नहीं हो सकती !!! 'सत्त्वेषु मंत्री' यह
शब्द क्या ? अधिक शक्तियोंका भंडार है।
इस शब्दके कार्यकुशलमें प्रवेश करते ही क्या
ही अग्रे आनन्दका श्रोत निकलना चाहता है।
वित्त शान्त हो जाता है, विश्वनेत्रोंके सामने
आ जाता है। मृत्युसे भी मृत्यु जीवात्मा कितने
बड़े और मुदावने दृष्टगत होने लगने हैं,
इन्द्रियां कैसी दगापराहित हो जाती हैं,
नेत्र कैसे स्वच्छ प्रभुको निमोचन करने लगते

हैं, मन कैसा आनन्दामृतमें 'पलडुब्बी' सा धारंवार गोते लगाने लगता है,—रोमावली कैसी एकदमसे खड़ी हो जाती है । अन्धकारका परदा कैसा एकाएक आगेसे खिसक जाता है तथा एकदमसे इस शब्द-श्रवणसे, कैसी २ अपूर्व पुण्य भावनाओंके हृदयमें संचार होने लगता है ।

प्राणी मात्रमें मैत्रीभावना—क्या ही उत्तम भावना है । इस भावनाका आविर्भाव जिस प्राण्यत्माके हो गया भला वह व्यक्ति क्या प्राप्तपूजा नहीं है ? क्या, उसका पराजय भी जिन लोकमें किसीके द्वारा होना संभव है ? नहीं—नहीं कदापि नहीं । प्राणी मात्रमें मित्रत्वकी भावनाका जन्म साधारण शक्तियोंको लेकर नहीं होता उसका जन्म अनन्त, अचिन्त शक्तियोंको साथमें लेकर होता है । इस भावनाके उदयसे प्राणी अपने क्षमिने शान्ति समुद्र देखता है—अतुलनीय आनन्दके अनेकों प्रवाह अपने सारे शरीरमेंसे निकलते हुए देखता है । उस महा-भाग्यके चारों ओर शुभ भावनाएं तो किन्नरियों जैसी गान करती फिरती हैं ।

सत्त्वेषु मैत्रीकी भावनामें जाति आदि भेद नहीं है—कहीं संकोच विचार नहीं है—इस भावनामें राजा रंक समान भासते हैं—सबको स्थान दान देनेमें हृदय जानाकानी नहीं करता । इस भावनाके साम्राज्यमें मूलोंकी अनज्ञा नहीं—नीचोंका सिम्कार नहीं—विजातियोंसे घृणा नहीं—विदेशियोंसे द्वेष नहीं—चाण्डालसे प्रेमाभाव नहीं । क्या कहें इस भावनामें जिन अगणित सत्त्वोंका समावेश है—उनका मूल्य, उनकी सुन्दरता

वही जान सकता है—जो कभी अपने हृदय मंदिरमें इस पूज्य भावनाका स्वागत कर चुका है ।

भगवान् ! सत्त्वेषु मैत्री इस दिव्य भावनाका संचार मेरे हृदयमें कर दीजिए, जिससे मैं अपने हृदयमें सबका आह्वान कर सकूँ । मैं जाति-न्त, कुलगत, आदि मंत्रियोंको लांघता हुआ विश्वगत मैत्रीको मित्रता समझने लगूँ । जिस समय मुझे इस भावनाका उदय होगा उस समय चींटोसे ले हाथी, मगर मच्छादि पर्यन्त मेरी समदृष्टि रहेगी । मैं चींटोको तकलीफ न दे सकूंगा । हाथीका बध न करूंगा—किसी पर कुदृष्टि न डालूंगा—इस समय जो हम नीचोंकी घृणाकी दृष्टिसे देखते हैं—हम अपनेसे नीचे दारजेवाले प्राणियोंमें वातर्चात करना पाप समझते हैं—हम विजातियोंमें प्रेम नहीं करते—ये सब हमारी नीच वासनाएं फिर शीघ्र ही नष्ट हो जावेंगी । आजकल जितने अनर्थ हो रहे हैं या आगामी होंगे, उन सबका कारण एक प्रेमाभाव ही है—सच्चे प्रेमके न होनेसे ही संसारमें नाना अनर्थ हुआ करते हैं । यदि हमारा सबसे प्रेम हो जावे—हम सबको अपना मित्र समझने लें तो फिर संसारमें अनर्थोंका नाश एकदम हो जाय । विश्वगत मैत्री ही सच्ची मित्रता कहला सकती है । यों तो सब ही प्रेमके उपासक हैं । थोड़ा बहुत प्रेम थोड़े बहुत प्राणियों पर सब ही किया करते हैं पर प्रेमका ध्येय विश्वगत प्रेम ही होना चाहिए ।

प्रेमीका हृदय एक सुन्दर सरोवर है जिसमें सद्गुण रूपी बहुतसे कमलोंका विकास हो रहा है ।

प्रेमीका चित्त शान्तिनिकेतन ही समझिए। प्रेमीका ध्यान एक विचित्र समाधि है जो सबको सुखी देख लग जाया करती है। और दुःखित देख ग़ुल जाती है। प्रेमीकी समाधिमें विश्वके सब ही प्राणी शान्त दिखाई देते हैं। प्रेमीका बरी दुनियामें कोई हो ही नहीं सकता। प्रेमीका हृदय एक सुन्दर कानन गढ़ापर छोटे छोटे अनेक प्रेमके खेत बहा करते हैं—जहां पर प्रेमामृतकी छोटी २ अनेक नदियां बहा करती हैं—जहां पर प्रेमामृतके पिपासी चातक अपनी तृष्णाको शान्त किया करते हैं, जिस काननमें प्रेमामृतसे वृक्ष सींचे जाते हैं। जिन वृक्षोंमें प्रेमगयी ही पत्ते हिलते हैं और जिनमें प्रेमगयी ही फल फलते हैं। और जिन फलोंको प्रेमी ही खाया करते हैं उस वनकी शोभा क्या ही विचित्र शोभा है। जिन प्रेमवनमें प्रेमके ही शब्द पशु, पक्षी बोला करते हैं नदों पर शेर बहरीसे प्रेम करता है—गायका बच्चा मिहनीका और मिहनीका बच्चा गायका दुग्धामृत पान करता है—जिस वनमें प्रेमामृतकी मुगंधिते मुरझित समीरगुंधोंसे अट्टहेलियां करती रहती है। कभी वृक्षोंको हिलाती, कभी उनके नीचे गिर झुका देती और कभी २ उनके प्रेमपुष्पोंका गम लेकर जंगलमें भाग जाती है कभी कभी सब मुरझ पतोंमें सब बह समीर प्रेमका सबक मुनने बैठ जाती है। तब वे पत्ते—गगनरा फर हंग पड़ने हैं—उई वृक्ष पर तो मोरे हमीकि वृक्षोंमें नीचे कूद कूद कर लसाला देनेले खगने हैं। तब यह—सुन्दर समीर तलमें झीड़ा करने

लगती है। प्रेममयी लहरें पवनका स्वागत करती और विलीन होती जाती हैं। अ—ह—ह कैसे पुनीत प्रेमीका हृदय है जहां पर यह सब पुण्यमयी लीला होती रहती है। कहिए ऐसे परम पवित्र प्रेमीके प्रेमवनमें निवास करनेको किस सहृदयका मन उल्लसित न होता होगा ?

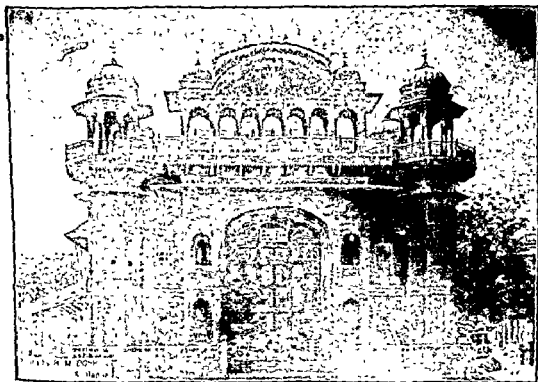
तब आइए प्रेमीगण, हम सब मिलकर सत्वेपु मैत्रीको लक्ष्य बनाकर एक प्रेम मंदिरकी स्थापना करें। उसमें हम प्रेमकी ही मूर्ति स्थापित करें, और हम सब मिलकर प्रेमदेवकी पूजा कर प्रेमगुजारी वनों और प्रेमामृतका पान करें।

ॐ गुणिपु—प्रसोद भगवन ! आप हमें गुणग्राही बना दीजिए। गुणवानोंको देख हम परम हर्षित हों—यही हमारी भावना है।

जिम जाति या देशमें गुणवानोंका सम्मान नहीं है—उन्हें देख लोग प्रसुद्ध नहीं होते—उस देश और उस जातिको प्रलय अवश्यभावी है। जिम तरह लुम्बकमें लोहेको रींचनेकी शक्ति है उसी तरह—मोदमें—आनन्दमें—हर्षमें भी दूसरेके गुण आकर्षण करनेकी शक्ति भी अवश्य है—योगीश्वर परमात्मा का नाम बड़े मोदसे लेते हैं उनके स्वागत बड़े आमोदसे करते हैं—उसके गुणोंका आदर करते हैं इमीलिए योगी परमात्मरूप ही हो जाते हैं—परमात्माय समस्त गुणोंका ये आकर्षण कर लेते हैं—गन्ध है तो जिनमें मयी लगन रहता है—वह उसे प्राप्त कर ही लेता है। गुणवानोंको देख हर्षित होना, उद्यामन देना, सेवा मुश्रुता करना यह सब उनके गुणोंको आकर्षण करनेका पट्ट दिव्य मंत्र है।



अजमेरके सुप्रसिद्ध श्री दिगम्बर जैन मन्दिरका दृश्य.



अजमेरके दिगम्बर जैन मन्दिर (नशियां) के समग्रदृश्यका दृश्य.

जिन्हें उच्च बननेकी अभिरक्षा है—जिन्हें गुणी बननेकी भावना बड़े गौर शौरसे उठ रही है— जिन्हें लोकोत्तम बनना सुहावना लगता है—जिनको सरस्वतीके पदपंकजोंमें अमर बनकर गुंजाग करना है वे सब ही सज्जन इस भावनाको हृदयगत करें । गुणियोंमें प्रमोद करनेसे अवश्य ही सफलताकी संभावना है अभ्यया नहीं ।

क्रिष्टु जीवेषु कृपापरत्वं—संसारके

प्राणी दो भागोंमें विभक्त किए जा सकते हैं । १ दयालु, २ दयापात्र । ऐसा कोई भी दयालु नहीं है जो दया करनेमें अनुसार हो । प्रत्येक सद्दयका वर्तव्य यही होना चाहिए कि दयाभावों पर दया करे । आज इस भूमण्डलमें—देशमें इतने दुखारी प्राणी हैं कि निनकी गगना नहीं हो सकती । यदि अनाज कम हो और खानेवाड़े अधिक हों तो उनमें ही प्राणी जीवित रह सकते हैं कि नितनोंके दिलिय खद्यस्तु है । इसी तरह संसारमें दयापात्र क्रिष्ट जीव अधिक हैं और दयालु थोड़े हैं ।

मालिखे उनमें ही क्रिष्ट जीव-दुखी प्राणी जीवित रह सकते हैं जिनमें रक्षणमें दयालु लगे हुए हैं । इसलिए यह दुःखी संसार अवश्यम चाहता है ।

परमात्मन् मम हृदयमें अवतरण कर मुझे इस भावनाका अविर्भाव कर दीजिए—जिससे कि मैं दुःखी प्राणियोंपर करुणा बरूँ—सेवामें दत्तचित्त रहूँ । वे निर्मलचेद देखिए कैसे पीड़ित हैं, घरमें पन नहीं है, शरीरमें चर नहीं है, सदा रोगी रहा करते हैं । उन्हें देख दया चाहता है—इनका दुःख विमोचन करूँ—इन्को औषधि दूँ—इनकी संशयों नित न मोड़ूँ । वे यल दयाका पात्र भवन्त्येको ही नहीं मनुष्य पर पशु पक्षियोंके भी दयादानमें इसी न करूँ; बस प्रभु यही मम भावना है ।

माध्यम्य भावं—विपरीतवृत्तौ—जो दिन रात हमारी खगवी चाहते हैं—जो हमें पद पद पर मारें—प्राणिय वस्तुमें, दत्तचित्त रहा करते हैं, जो हमसे सदा छु रहकर हमको पददलित करना चाहते हैं, जो हमारे उत्कर्षको सहन नहीं कर सकते—ऐसे प्राणियोंपर भी क्षमा करनेकी वीरोंने उपदेश दिया है । यों तो साधारण अपराधीको तो प्रत्येक व्यक्ति क्षमा कर दिया करते हैं, पर जो हमारे नाश करनेपर भी उतारू हैं—उनपर क्षमा करना वीर पुरुषोंका लक्षण है—क्षमा वीरस्य मृगणं—यह नीति भी है ।

विपरीतवृत्ति—वाड़े प्राणियोंसे मैं द्वेष न करूँ, उनका अनपेक्षित न चाहूँ, साथ २ उनसे मैं अत्यन्त मित्रता भी न जोड़ूँ । कारण कि ऐसे प्राणियोंसे न वैराग्य न हेत ही अच्छा—कहा भी है—
हित हू भलो न नीचको नहि न भलो अद्वैत ।
घाट अपावन बन करे काट स्थान दुःख देत ॥
इस लिए ऐसे प्राणियोंपर माध्यम्य ही रखना उत्तम है, बस प्रभो यही मैं चाहता हूँ ।

यदि इन समस्त भावनाओंका आदा हमारे देशशान्तियोंमें हो जाय, यदि हमारा अमृतमंडल इन शुभ भावनाओंको हृदयमें स्थान देनेमें अपनी भलाई समझे, तो यही भारत स्वर्गपूरीसे भी बड़कर हो जावे—किर हमें मुकुट, आदिसे विभूषित सर्वगुण सम्पन्न भारतपिताके सुखद दर्शन प्राप्त हों इसमें संदेह नहीं ।

परमात्मन्, इन भावनाओंका उदय प्रत्येक सद्दय प्राणीके हृदयमें हो—मनही परस्पर प्रेम-प्रसीद-दया और क्षमासे सुसज्जित हों यही मम भावना है ।

शुभं भूयात्—

जातीयता कैसे उत्पन्न होगी ?

(नेत्रक-जुगमन्दिरलाल जेवरिया, सूरन।)

आज समाजके सामने उक्त प्रश्न उपस्थित हो रहा है, क्योंकि इस समय जैन समाजमें जातीयता नहीं, प्रेम नहीं उसके खंड २ हो रहे हैं, कोई किर पर लुप्त रहा है कोई विधवा । कुछ लोग तो जैन शास्त्रोंको खंडन करके जैन धर्मको एक नया नामा पहिनाकर जातीयताके उत्पन्न होनेका स्वप्न देख रहे हैं, कोई समाजमें विधवा विवाह आदि जैसे सुधारोंको करके जातीयता उत्पन्न करना चाहते हैं—तथा इन्होंने लैंगीने कार्यमिद्विके लिये समाजके नवयुवकोंको एक नवीन-समान बनानेका उद्देश भी दे डाला है, परन्तु हम कहते हैं कि उनके इन कार्योंमें जैन समाजकी उन्नति कदापि न होगी उल्टे वह अवनति—नास्तिकता भ्रष्टाचारके गर्तमें गिर जायगी ।

जिस समाजमें अपनी उन्नति की है अपने शिक्षावृत्तों ही की है। जिस प्रकारकी शिक्षा समाजमें प्रचार किया जाता वह जाति भी वैसी ही बन जाती है । परन्तु हम देखते हैं कि समाज सुधारका दम मग्नेवालोंका ध्यान इस ओर निरलुप्त नहीं है । वर्तमान समयमें पूर्वकी अपेक्षा समाजमें शिक्षाका प्रचार अधिक है । किन्तु जिस शिक्षाका प्रचार जिस प्रकार समाजमें होना चाहिये वैसा नहीं होना । समाजको इन समय पोगीस और पधरदर दोनों ही शिक्षाओंके विद्वानोंकी आवश्यकता है निराली वर्तमान शिक्षा प्रणालीसे पूर्ति नहीं होती । संयुक्त विश्व जयमें इनकी सामाजिकता है कि उनमें अपेक्षा शिक्षाका

गौणतासे उत्तम प्रवृत्ति हो । उक्त विद्यालयके छात्रोंको हम जातिकी आवश्यकता नहीं कि वे अंग्रेजीके भूगोल, इतिहास, गणित आदिकी भी शिक्षा प्राप्त करें, वे बहुत आचार्य तथा तीर्थ-कक्षा प्राप्त करनेवाले छात्रको अंग्रेजीके साहित्यका इतना ज्ञान हो जाय कि वह वर्तमान अंग्रेजीके पत्रोंकी मर्यादा मलीभार समझ सके ।

अब हम उपेक्षित के विषयमें कहेंगे जिसको प्राप्त करना बालक तथा उनके माता पिता आवश्यक समझते हैं । वह है अंग्रेजी स्कूलों और कालिजोंकी शिक्षा । समाजमें जिनने छात्र इस शिक्षाको प्राप्त करनेवाले होंगे उतने संस्कृतके न होंगे इस कारण समाजका ध्यान हम इस विशेष आकर्षित करने हैं । हम देखते हैं कि प्रायः कालिजोंसे निकले हुए छात्र अपने धर्मसे अज्ञान और श्रद्धाविहीन होते हैं । इसी कारण सिद्धनायकोंका धर्मका प्रचार, समाजका उत्थान आदि करना वर्तमान या वही आज ऐसा कार्य कर रहे हैं । जिससे धर्म और समाजके उत्थान होनेकी आशा नहीं । यदि इसका कारण देना जाय तो यही कहना होगा कि समाज इन नवयुवकोंको धर्मिक शिक्षा देनेवाले कोई उद्यम नहीं करती । वे विचारों और क्रांतिकर्मोंमें शिक्षा प्राप्त करने हैं, जैसे आदर्श उनके सामने रखे जाते हैं उसीका वे समाजमें भी प्रचार करना चाहते हैं ।

साथ एक अच्छा ज्ञानालय हो । इसमें पढ़नेवाले छात्रोंको नियमसे धार्मिक शिक्षा दी जाय ।
१२॥ लाल भैरवियोंमें—अनेक बरोड़ातियों—
लसाधितियोंके मौजूद होते हुए—एक कालिनका
होना कोई मुश्किल बात नहीं । केवल आवश्यकता
है कर्मवीरोंकी और सार्वभौमिकियोंकी । जिस
दिन वे इनका बीड़ा उठा ले उसीके जन्मस
बाद जैन कालिन भी स्थापित हो जाय ।

जैनकालिनके स्थापित होनानेपर निम्न प्रकार
एंग्लो दयानन्द कालिन, बियोसोफिकल कालिन
और सनातनधर्म कालिनसे निकले हुए
प्रेजुएटोंमें अपने धर्म पर दृढ़ आस्था
होती है, देशसेवा और सनातनसेवाकी लगन
होती है, उसी प्रकार जैन कालिनसे भी
वैसे ही प्रेजुएट निकलेंगे जिसका धर्मप्रचार
समाजसेवा, देशसेवा करना मूल मंत्र होगा और
उसी समय जैनसमाजमें जातीयता उत्पन्न होगी ।

वर्तमान अकाल ।

(छेवरू-मास्टर छोदेलात जैन, सुरदा)

मैं दिशि अति भारी आरंभ है दिखाती ।
प्रभुवर । सहसा जो धैर्यको भी रुकती ॥१॥
अह ! प्रथम हमारे पास पैसा नहीं है ।
तिसपर दुखझड़ काठ भी तो यहीं है ॥२॥
इत समय हमारा आज दुर्भाग्यसे है ।
प्रियवर अरुणको "कोइमें खान" ये है ॥३॥
अतिश्रम करते हैं जीविकाके लिये ही ।
पर बहुत जन सोते पेट भूखा लिये ही ॥४॥
निशिदिन करते जो देशरा राम मरी ।
अति गम उवसारी दीनवाड़े पिहारी ॥५॥
वेन कृपक दिवारीकी दशा देखते ही ।

जल निकल पड़ेगा हाथ पापाणसे भी ॥६॥
वह अब शिशु जो है सर्वथा भ्रष्टारों ।
विप्लव विजय रोगा भूख ही की व्यथामें ॥७॥
यह लग्न उसको भा प्रेमसे गोद लाती ।
पर विप्लव निराशा बारि बारि बहाती ॥८॥
यदि कुछ दिनमें ही दुःखका अन्त होता ।
तब फिर मन ऐसा धैर्य क्यों आज लाता ॥९॥
हर समय हमें तो व्यग्र होना चढ़ा है ।
यह तन रखनेका हेतु क्या आपदा है ॥१०॥
प्रिय कृपक हमारे देशके रोजगारी ।
अब सब जनको है पेटका प्रश्न भारी ॥११॥
पद पद पर काँट हा ! बिछे देखते हैं ।
प्रति पल हम पूरा वर्ष सा लेखते हैं ॥१२॥
नर तन यह पाक सौख्य थोड़ा न पाता ।
अतिशय दुःखमें ही काल सारा गमवा ॥१३॥
मनुज हम हुए क्यों हा ! यही खेद होता ।
जनम समयमें ही ठीक प्रागान्त होता ॥१४॥
फिर यह दुखझड़ ठोकरों तो न लाते ।
इत दिना हमारे देखनेमें न आते ॥१५॥
अति पतित कहाती भूमिकी छूछि सारी ।
पर वह चढ़ती है शत्रुक शीत न्यारी ॥१६॥
लज्जुर उनसे भी नीचता है हमारी ।
सब गति मति प्यारी भीरु में विसारी ॥१७॥
घन अभित कहां—वे विशङ्कणी कटाएं !
अब हम सब तो हैं देखते आपदाएं ॥१८॥
इत समय हमें जो पूर्वकी याद आती ।
वह चक्कर ज्वाला है बलेना जलती ॥१९॥
तन सब नष्टके हा ! शेष रह्यो रही है ।
अहह ! दुःख विघ्नो तो नास भी तो नहीं है ॥२०॥
अब विनम्र हमारी हं प्रभो ! दो सहारा ।
तब फिर बह जावे देशमें दानि पार ॥२१॥

GOALS.

(The following is a lecture given to the Buddhist Society of Great Britain and Ireland in October, 1918, in London).

The last time I had the pleasure of being here, when I spoke about the Jain view of dharma—of duty, something in the subsequent discussion led your secretary, Mr. Ball, to remark that although Buddhism did not teach that there is such a thing as soul, yet Buddhism taught the doctrine of illumination. I did not at the time make any further reference to this idea, but on the way home thoughts about it occurred to me, and I eventually took the liberty of writing your Secretary a letter expressing my reflection on the subject. He acknowledged the letter, and asked me if I would give a lecture on "The Goal of Illumination". I consented, but of course in doing so it is the Jain doctrine that I shall chiefly be dealing with; and although the phrase is a Buddhist one, still it is sufficiently similar to the Jain idea as far as I understand it, to enable me to use it.

When a lecturer gives a lecture it is natural for the audience to expect him to lecture on something he knows about, but the nature of this subject is such that to have a knowledge of it is for the ordinary person impossible. We can not speak about the goal of illumination with knowledge unless we have ourselves reached that goal. So in asking me to speak on the subject, what is it that is expected? What shall I be

expected to say? Probably what is expected is a description of the goal as far as I am acquainted with it from hearing about it or reading about it; and this is what I will try to give you. I will try to tell you what I know about the Jain idea of the goal of life as far as I have heard and read about it.

There is, however, another way of dealing with the subject. We certainly can not describe the goal of life from experience, but it may perhaps be reasonably expected of any one that he has in mind a goal of some sort or other which he is trying to reach; and as far as this goal is concerned any man is in a position to speak about it with knowledge, in so far as a man knows what he is aiming at, to that extent he is able to tell you. If he knows what he wants, he can tell you, and he will be speaking about what he knows. If we know what we want we can describe it to other people. Do we know what we want? And if knowing what we want, but not knowing how to get it; we come across somebody else who has got it, by his own efforts, deliberately, we can ask him to tell us how he did it, and if he is a kind-hearted person he may perhaps be willing to tell us.

But supposing we are not satisfied with our present condition, and yet do not know what we want, or what is most worth having, we can enquire of others and find out if there is anybody who can tell us what is most worth having.

The Jain goal is emancipation. It is a goal which is acknowledged, and knowledge is its essential nature. Knowledge

illuminates, and full illumination would be the same as omniscience. It is simply different language for the same thing, and omniscience or illumination implies or proves the existence of an omniscient or illuminated being, in other words a soul.

Now as both faiths, Buddhism and Jainism, put forward practically the same idea as the goal, the question is, is it worth having? It must be worth having, because, granting that there is something worth having, then if we are omniscient we shall know what that something is, and we shall know how to get it.

Now as regards description of the goal. Illumination or enlightenment means, of course, spiritual enlightenment. What does a spiritually enlightened person do? This introduces ethics, and in dealing with ethics we are apt to become preachy, which I wish to avoid. But obviously a spiritually enlightened person would do no harm, and he would do good to his fellow beings. But what the nature of the good that he would do when he has attained his goal would be, is difficult to conceive. Granting that the illumined ones who have been and gone are still in existence in the universe somewhere, what is the nature of the good that they are now doing? One answer would be to say that their teaching is still doing good to mankind; but that is not what they themselves are now doing. It seems to me, however, that it is impossible to conceive what is the nature of the life that is led when once we have attained our ideal condition. And yet we must have some

idea of the goal, for we could not strive for something of which we have no idea. As far as I have heard about the Buddhist goal, its description is chiefly negative; it is a condition of no pain, no misery, no disease, old age, or death, no grief, no quarrels, etc. And yet there seems to be the one positive condition of illumination. Illumination means enlightenment, and enlightenment means knowing. But as far as I know this is the only positive condition that is mentioned. In the Jain teachings there are one or two other positive conditions mentioned besides knowing. As well as being omniscient or fully enlightened, there is the positive condition of blissfulness; and there is also infinite capacity of activity. But what the nature of the activity is I do not quite know, I do not quite understand this point myself; I do not understand how there can be any activity when there is nothing to accomplish. But even with regard to this point there may be some possibility of getting an idea about it from the fact that time is always the future to come, no matter what condition we are in, and the activity may be whatever activity is necessary to cause the future when it comes, to be satisfactory, and right. But this is only my own idea, and I have no authority from any books for making the statement. At any rate there are those three positive conditions mentioned which are descriptive of the goal, infinite capacity of activity, which is not quite the same as omnipotence; there is blissfulness, and there is omniscience. Then further is continued existence, there is no ceasing to be; it is



life everlasting and the condition in that life is always ideal. And another positive fact about it is that there is individuality, there is no losing of one's individuality by any merging into a universal ocean of life. But of course one is not the only one, there is an infinity of others, of other individuals in a like condition who have reached it by their own deliberate efforts. And then the description of the goal is positive with regard to another point, namely, belief; there is right belief, all the time. This is a positive condition. And another one, namely right action. Whatever the activity, it is always right and never wrong. But I understand that all worldly activity is stopped in the ideal condition. There is no movement of body, no walking, running, jumping, no eating or drinking, no sleeping, no money-making, no wars, no pleasure seeking, no ship-building, no building of houses, or temples, no making of parks or gardens, no digging of mines, no buying or selling, no speech, no murders, lying, or stealing, no law-courts, prisons, asylums, schools, hospitals, no fishing or hunting, or picnics, no boating parties, no theatres or dancing, or concerts. All these things are stopped. But of course although there is no participation in such things, still

plenty of entertainment. And there is another interesting point here, namely, in view of the fact of omniscience, it would mean that the future as well as the past and the present, we know. But although the future is known, when it becomes present knowledge instead of future, there is a difference in the quality of the knowledge. Yesterday I knew I was going to be here; that was knowledge of the future. Now I am here and I know it, the present knowledge is different in quality. So that although the future is known in advance, still when it arrives it is not stale. And another point too comes in here, namely the question of predestination. If the future is knowable, we might at first sight think that it is already all predestined and that there is no freedom. But this is not the case directly we remember, that our own choice is part-cause of the events that take place. For instance, the omniscient beings knew a thousand years ago that I was going to give a lecture here to night; but then I give the lecture of my own free choice, and the fact that they knew that I should make the choice and that therefore the lecture would take place does not in any way deny the freedom of my action. My own choice, although fore-known by others, was part-cause of

from all combination with other substance than its own. When we speak of water, we generally mean water in its pure condition. But at present we are not souls in the sense of being pure souls. A quantity of soap-suds, another quantity of seawater, a quantity of milky water could all be called water, but they are not pure water, or water in its natural condition; and in the same sense the living beings around us are souls, but they are not pure souls in their natural condition, and just as the natural condition of water is what we know it to be so the final goal is the soul in its pure natural condition. That is another way of describing the goal of life. And it is perfectly real and concrete, and not in any way imaginary or fanciful. In knowing anything we know at least four things about it, namely, the substance that it is, the place where it is, at the time, and the condition it is in. We know these four things, place, time, and condition; and if we knew a pure soul we should know these four things about it; we should know the substance of it, we should know where it was at the time, and the condition it was in. The Jain teaching is that there is one part of the universe and only one where those who have reached their final goal exist; they are of a real living substance, and their condition is as I have already described, omniscient, etc.

to be omniscient in order to be omniscient.

Well, so much for the goal of illumination or omniscience as the Jains call it; as far as a description of it is concerned, both negative and positive, what it is and what it is not. Also the theory upon which the possibility of omniscience is based, namely, that there is such a thing as a soul and that its nature is to know and to have full knowledge or omniscience. The next question is how to reach the goal, or how to be in this condition, for we know that at present we are neither omniscient nor blissful. And yet it is only from one point of view that this is true namely, from the same point of view that soap-suds are not water. From another point of view we are now truly omniscient and blissful, in the same sense that soap-suds are water, that is to say all the qualities of water are there in the soap-suds, but they are obscured by the presence of soap. And so with us souls, all the qualities of the soul, omniscience, etc., are in us, but they are obscured by the presence of what is called 'Karma', and the way to reach the goal of life is by removing this Karma, just as the way to get the water in the soap-suds to its natural condition is by removing the soap. Or a better example would be to take seawater, because in this case we start with something (seawater) which has never been in the past water in its natural condition; seawater has always been salt, but this is no reason why it should always remain so. And in the same way the soul in embodied living beings

has always been in an impure unnatural condition, combined with karma; but that is no reason why it should always continue to be so.

So the why to get into the desired condition, that is to say reach the goal of life, is by removing the causes of the present embodied condition in which we find ourselves. We must remove the causes one by one. There are four chief causes, namely, delusion, carelessness, passions, and other activities of mind, speech, and body technically called *tyoga*. The goal of illumination is not generally attained in a minute, although theoretically it might be if only we could remove all the karmas in a minute. But partial illumination is possible, and we may get this here and now in this life by suppressing gross anger, pride, deceitfulness, and greed, which passions disturb the mind and prevent us from relishing the truth when we hear it, or prevent it from rising in us spontaneously. One of the greatest delusions is the notion that we are our body. "He who says 'let me say this', he is the self, the tongue is but the instrument of saying". This is I believe quoted from the Upanishads. The knower is the self; the body does not know, it is the self that knows. Delusion is much the same as wrong belief, especially when it is put in to action. We get right belief by keeping the worst degree of anger etc. from rising when it is felt to be rising.

Life is something like a journey, we are travelling. There is a tale about an ordinary plain man who once when travelling met another traveller, and

the plain man enquired of the traveller "Where are you going to?" The traveller replied; "Well, now I come to think of it, I do not know". The plain man was annoyed and expostulated etc. etc. Now, if we think of eternity, I may safely say that most of us do not know where we are going; we are simply travelling, but, we do not really know where we are going in any precise manner. Most of the faiths of world offer some sort of a goal or destination, and it is for each of us to choose, if we are so inclined, after examination, from among the various ones that are offered; and see what we think of them, and whether they are worth trying for. As far as the future is concerned, of course, we want to be safe; we want to be safe in the future and we want to be in a condition of enjoyment. But although religions generally deal with the future, and especially the future beyond the grave, they also deal with the present. Not only do we want to be safe in the future, but we want a fairly decent life here and now, and the rules of life as given by Jainism will, if followed, as I believe, cause us to enjoy the present; will make our present lives at least more tolerable and more enjoyable. We all want peace and happiness, and peace and happiness are in ourselves, and according to the Jain teaching the more we lead a life of doing good to and not injuring other living beings the more will our life be peaceful, happy and enjoyable here and now.

H. warren



(એ કેશવજીનાં ચુનીલાલ શાહ.)

શારીરિક અને માનસિક ઉત્તતિ એજ સર્વ ઉત્તતિનું મૂળ છે. આવા પ્રકારની ઉત્તતિ મેળવવા “અક્ષયર્થ” ની આવશ્યક જરૂર છે. પણ અક્ષયર્થ એટલે શું એ ઘણા યોગ્ય લોકો સમજે છે, અને જેઓ સમજે છે તેઓ પણ અક્ષયર્થના પાલનના સર્વ નિયમોથી અને તેના બાંધ કરનારાં વર્તનોથી સારી રીતે જાણીતા હોય એમ જણાતું નથી.

રિચ્છતું જ્ઞાન એજ શાસ્ત્ર અક્ષયર્થ છે, અને વીર્યનો મિથ્યા ઉપયોગ કરવાથી અક્ષયર્થનો બાંધ થાય છે. પણ કેનાં કેનાં જ્ઞાનપાત્રો, આચાર્યશ્રેણી, વિગતો અને ગ્યારાદો વીર્યનો હાથ કરે છે અને ઈર્ષ્યા રક્ષણ માટે આપણે શું શું સંમતનું અને કરવું જોઈએ તે આપણે જાણવું જોઈએ.

આ જગતમાં સર્વ મનુષ્યો મુખ્યત્વે અનિલાયા રાખે છે પણ ખરું મુખ ક્યારે પ્રત્યક્ થાય છે તે તેઓને વિદિત હોતું નથી. હાલમાં હિંદુસ્તાનમાં શરીરે અક્ષયર્થ એવા કેટલા યુવાનો નજરે પડે છે ? શું આવા સેન્ટે પાંચ મળી શકે ? આનું કારણ શું ? કે તેઓના અધારણના નાનપણથી કામોં હોય છે અને ફરીથી કામી વયમાં કામી બંધારણ બાંધે છે, પણ ચાલ રાખો કે જેઓ આવા યુવાનો જોવાને વલસી રહ્યા છે તેઓએ “Do unto others as you would be done by.” ના અર્થિત્વ હિતમ વાક્યને અનુભવમાં લાવવું જોઈએ, આ વાક્યનો અર્થ એવો થાય છે કે જોજો તરેથી તમારા પ્રત્યે જેવા વર્તનની તમે ઇચ્છા રાખો, તેવીજ વર્તણૂક

તમે તેમના પ્રત્યે રાખો, અથવા જેવા યુવાનો તમે શોધો છે તેવાજ યુવાનો. બનવા તમે પોતેજ પ્રયત્ન કરો. આપણા પ્રાચિન વિદ્વાનો પણ આવો ઉપદેશ કરતા આવ્યા છે, આના પુરેવા મેળવવા અક્ષયર્થનો મહાબંધ આવશ્યક જણાયો જોઈએ. કામ્ય કે અક્ષયર્થનો બાંધ કરવાથી શારીરિક સ્થિતિને મોટા ધોરે પહેાંચે છે. અને માનસિક સ્થિતિનો આધાર શારીરિક સ્થિતિ ઉપર છે, અને જેની માનસિક સ્થિતિ નહ થાય છે તે માણસ આ દુનિયામાં કંઈ પણ કરી શકતોજ નથી. અહા ! અક્ષયર્થનો આવો પ્રભાવ છે તો તેના મહામંત્રનો અર્થ કેમ ન જાણવો જોઈએ.

આપણા ભારત વર્ષમાં છઠ્ઠીતા ચાર ભાગ ઉરવામાં આવ્યા છે. અને તેમાં પહેલો ભાગ વિદ્યાભ્યાસ માટે મળવોમાં આવ્યો છે અને તે પચીસ વર્ષમાં વિદ્યાર્થીઓને અક્ષયર્થ તરફ પાળવાનું હોય છે. કારણ કે અક્ષયર્થની માનસિક શક્તિઓ પ્રજાગ્રહ હોય છે અને તે શક્તિઓનો આધાર શારીરિક સ્થિતિ ઉપર છે અને શારીરિક સ્થિતિનો આધાર અક્ષયર્થ ઉપર છે, અને તેથીજ તેને પ્રધાન પદ આપેલું છે.

પ્રાચિન કાળમાં આઠ વર્ષની વયે વિદ્યાનો આરંભ કરવામાં આવતો હતો. આઠમે વર્ષ બાળકને ઉપવીનનો સંસ્કાર કરાવી તેમને સુરને ઘેર મોકલવામાં આવતા હતા. અને પચીસમે વર્ષ પોતાનો વિદ્યાભ્યાસ પુરો થયે ઘેર આવતા. અને ત્યાર પછીથી સંસારનો સુરો દેરવાતા હતા. જ્યારે હાલમાં સંસાર વરદ કંટી નાખીશું તો આઠ દશ વર્ષની વયમાંજ જાગ્રક બાંધીઓને દીગંતી દીગંતીની માદક સંસારમાં ધુસડી દેવામાં આવે છે.

પણ આના કુચાલ લેવે ધોમે ધોમે દુર થવા આવ્યા છે. પચીસ વર્ષના પુરે સોળ વર્ષની સુધી પ્રભા ઉત્પન્ન કરવાનો ચત્ત કરવો જોઈએ. આવેજ નિયમ પ્રાચિન આર્ય લોકોનો હતો. તેઓ વધારમાં વધારે ૪૮ વય સુધી અક્ષયર્થ પાળતા અને સ્ત્રીઓ ૧૬થી ૨૪ વર્ષ સુધી પાળતી. જ્યારે હાલમાં ૨૪ વર્ષમાંજ આયુષ્ય દુર

થાય છે. હવે મુદ્દસ્ત અભ્યર્ચન એટલે શું ? આત્મી સ્તીતે યોગ્ય ઉત્તરના પુરો યોગ્ય ઉત્તરની પોતાની વિવાહીત સ્ત્રી ઋતુમતી થયા પછી ઋતુજ્ઞાન જપ્ત પડ્યા પછીના દિવસોમાં તેને ઋતુજ્ઞાન દેવું, તે સામાન્ય અભ્યર્ચન મતઃ કહેવાય. ગર્ભધાન કરવાના હેતુથી પોતાની પરણેલી સ્ત્રીના મહીનામાં એક વાર અને તે પછી ઋતુજ્ઞાતી થયા પછીના એક અનુક્રમ દિવસે સમારમ કરનારા પુરો સામાન્ય અભ્યર્ચારી ગણાય છે.

ત્યારે અભ્યર્ચારી કોણ ? જેઓ પરમી સેવન કરે તેઓજ કહત વ્યભિચારી કહેવાવાને લાયક છે ? શું જેઓ પોતાની સ્ત્રી સાથે અતિ વિકાર કરે તે વ્યભિચારી નહિ ? કેમ નહિ જેઓ અભ્યર્ચના નિયમથી ઉલટી રીતે અતિ ચે ગયા વર્ષે તે પશુ વ્યભિચારી કહી શકાય.

ભારત વર્ષની પાચમાલીનું કારણ અથવા જૈન જાતિની એક દશકામાં એક લાખ કરતાં પશુ વધારે વસ્તી મટી ગઇ છે તેનું કારણ આ એક પ્રકારનું વ્યભિચારપણું છે, અને હજી પણ બાળલગ્ન રૂપી યુગમાંથી બચવાનો પ્રયત્ન નહીં કરે તો બીજા દશકામાં જૈનોની વસ્તી કેટલી સહેશે તે કહી શકાય નહિ.

જે આર્થો સરાસરી સો વર્ષનું આયુષ્ય ભોજના હતા, તેમની વાળ્યહીન પ્રજાના આયુષ્ય તો સરાસરીનો આઠો ત્રીસમી ત્રાસતાપક સંખ્યાની ઉપર આવીને ઉઠે છે ! છતાં પ્રાચીન આર્થોના પગલાં આ અભ્યર્ચના નિયમો પુનઃપિ રચાવન થાય અને એ નિયમાનુસાર વિદ્યા પ્રાપ્ત થાય તો પુનઃપિ આપણે અને આપણો ભવિષ્ય તો પ્રજા કેમે કેને શારીરિક અને અતિશય ઉદ્વિગ્ન પ્રાપ્ત કરવાને શક્તિવાન થઈ શકે; અને તેને માટે આપણે પ્રયત્ન કરવો જોઈએ.

તે અભ્યર્ચન એટલે શું ? અભ્યર્ચન એ વર્ષ રક્ષણને માટે પાળવાને પવિત્ર કાર્ય છે, જે કાર્યને કુદરત પાળે છે અને કુદરતને કરનારાઓને દિક્ષા કરે છે, અભ્યર્ચનમાં જાત ધર્મિક કે સામાજિક નીતિને જ નહિ પણ

શારીરિક નીતિશાસ્ત્રના અગત્યના અંગનો સમાવેશ થાય છે; અભ્યર્ચન એ શારીરિક અને માનસિક ઉન્નતિનું પહેલું પગથીયું છે; ઇન્દ્રિયોને નિયમમાં રાખતી એટલેજ અભ્યર્ચનો તત્વાર્થ છે. જો તેને ધર્મ કર્તવ્ય કહેા તો તે ભરતખંડના આર્થોનું નહિ પણ પૃથ્વીપર વસનારા પ્રત્યેક માણસનું, પુરુષ તેમજ સ્ત્રીનું, એક પવિત્ર કર્તવ્ય છે. પ્રત્યેક મનુષ્યે અભ્યર્ચન પાળી અભ્યર્ચનું વન ધારણ કરવાની જરૂર છે.

શરીરમાં ધાતુઓની જલ્દિ ૧૬ થી ૨૫ વર્ષની વય સુધીમાં થાય છે. ૨૫ વર્ષે યૌવન પ્રાપ્ત થાય છે અને ૨૫ થી ૪૦ વર્ષની વય સુધીમાં યૌવનનું પોષણ થઈ સર્વ ધાતુઓ પુષ્ટ થાય છે. આત્મીય વર્ષે સર્વ ધાતુઓ સંપૂર્ણતાને પામ્યા પછી તે ધાતુઓ સ્વપ્ન, પ્રસવ, આદિ કારણથી નીકળવા માટે છે અને એજ સમય વિવાહને માટે ઉત્તમ છે અને તેથીજ ધણા જાતિઓએ ૪૦ વર્ષે લગ્ન કરવાની ભલામણ કરી છે. પણ આપણા દેશમાં તો આત્મીય વર્ષે જલ્દાસ્થાની કસ્યતીઓ પડવા માટે છે, અને વગર સંન્યાસે જી સેવનના ત્યાગની અવસ્થામાં આવી પડાય છે. આ-સ્થિપત્રમાં આપણા દેશોની રથીતિ ધણીજ શોકજનક થઈ પડી છે અને તેનાં અનેક કારણોમાં અભ્યર્ચનો અભાવ અને બાળ લગ્ન રૂપી વિનાશકારક રહી એ બે મુખ્ય કારણોને હું મોખરે મુકું છું. સ્ત્રી પુરુષના લગ્ન ધર્મના નિયમોથી કેવળ અગાંન એવો ૧૬ વર્ષની કાચી વયનો હોઈને “પિતા” અને “જા.પા.” ની પદવીને પ્રાપ્ત થાય છે ! તથા માતા તરફે પવિત્રમાં પવિત્ર અને અત્યંત મહત્વની તથા જોખમદારી કરતી બળજબાનું કામ ૧૨-૧૩ વર્ષની બાળકી (એક કાચી કળી જેવી કનારિકા) ના હાથમાં આવી પડે છે ! આરોગ્ય ! મનોરો વખત આરોગ્ય ! માણસ જાતની અધમ અસ્વધાનું આથી વિરેષ અધમ, વિરેષ નિર્જન અને વિરેષ નામોથી ભરેલું બીજું ચિત્ત હું તમેને આપી શકતો નથી.

આનાં નાનાં બાળકો સંસાર માટે, એ શું

માનસ ભલતી અધમ અવસ્થાની નિશાની નથી ? શું તેઓને આવી નાની વયમાં યોગના પરશ્વા પ્રાપ્ત થાય છે ? હું કહું છું કે તેમાંનું કશું નથી.

અર્ધનિઃક વિવાદોનીના ઉપાસકો પણ હવે આ બલમાંથી મુક્ત થઇ શક્યા નથી. પ્રાચીન કાળના આર્યોએ લગનના હેતુમાં “સારી પ્રજા ઉત્પન્ન કરેલી” એજ મુખ્ય મતેનું હતું પણ હાલની સ્થિતિ તો પાયા વિનાના ઘર જેવી થઇ રહી છે.

અલ્પવયસ્કો સારો અર્થ “વીર્ય રક્ષયુ” એવો થાય છે, વીર્ય એજ શરીરનો રાગ-આત્મા છે. શરીરના આ પ્રાણુ તથા આત્માનું રક્ષયુ કરવું એ કેવા મોટા મહત્વની વાત છે, એ કહેવાની કાંઇ જરૂર નથી. નાની વયમાં જીવતા રીના નિકારો અને વિષયની ઇચ્છા વડે કી-અકાએ પ્રાપ્ત થાય છે. અને જેથી રીતે ઉત્પન્ન થયેલા પુરુષોના પુત્ર કેવા થાય તે સંભવ જણાય તેમ છે.

ત્યારે અલ્પવયસ્ક કયાં સુધી પાળવું ? આને માટે પુરુષને માટે ઓછામાં ઓછો પચીસ વર્ષની વય અને વધારેમાં વધારે ૪૮ વર્ષની વય નિર્માણ કરવામાં આવી હતી તેજ પ્રમાણે સ્ત્રીઓને માટે ૧૬ થી ૨૫ વર્ષની વય નિર્માણ થઇ હતી. પણ હાલમાં બંધા આઠ વર્ષની વયનાં દીગલી દીંગલી જેવડાં અગામ આપકોની પાસે અગ્નિ દેવની સાક્ષીઓ પતિ પત્નીના પવિત્ર પૂર્વની પ્રવિશાએતું કારસ ભજનવામાં આવે ત્યાં અલ્પવયસ્કો પ્રવેશ કર્યા રહેશે ?

તેમ છતાં ગામડાંના શોકો સહેરી હોતા કરતાં વધારે આરોગ્ય અને વધારે મજબુત હોવાથી નિરંતર ઉલોમમંગ લાગેલા હોવાથી, અને તેમની આમણસ નિકારોને ઉત્પન્ન કરે એવી લાલચો થોડી હોવાથી તેઓમાં જીવતાની મોટી વય આવે છે, તેઓ વધારે આરોગ્ય અને તંદુરસ્ત રહી શકે છે અને હીર્ય આયુષ્યભોગની શકે છે.

અરે જોતાં, વીર્ય રક્ષયુને મોટો આપાર માનવેલી સમજણ ઉપર આવીને રહેશે છે. પણ

અસ્તોસની વાત એ છે કે, માયાઓ ખોટા ધર્મ અને ખોટી રીતોએ આધીન થયાં છે. વધારે કુઃખદાયક-રિતિવિ રીતે થઇ પડી છે. કે, એક તરફથી આપણે આપણાં ધર્મશાસ્ત્રમાં શ્રદ્ધા રાખવાના આરિતકપણુનો ઉપજ અને દાવો કરીએ છીએ, ત્યારે બીજી તરફથી એજ આપણાં સાત્ત્વ ધર્મશાસ્ત્રની આજ્ઞાઓની આપણે અગામ બીએ અથવા ખરે ખોટું બહુવાને ભેદરહિત થયેલા છીએ. શું, પવિત્ર શાસ્ત્રો આઠ આઠ વર્ષના આજ્ઞા કેના વિવાદ કરવાનું કરાવે છે ? શું આજ્ઞા લગનના પક્ષમાં ફસે છે ? નહીં પણ તેઓ તો યોગ્ય ઉમરે સંસારમાં પડવાની કપ્પા બતાવે છે.

ખરી રીતે કન્યાએ ઋતુમતી થયાં પછી નવું વર્ષ સુધી પોતાથી અધીક યુગ્વત્તાગા વરની વાટ જોરી, તેટલામાં તેજો વર ન મળે તો પછી પોતાના જેમ યુગ્વત્તાગા વરને પરચું. બીજામુખામહે મહારાજ યુધિષ્ઠિરને પણ એવોજ અભિપ્રાય આપેલો છે

પછી જો અલ્પવયસ્કો કાયદાનું ઉલ્લંઘન કરે અથવા “સોળ વર્ષ પુરાં ન થયાં હોય એવી (નહાની વયની) સ્ત્રીમાં પચીસ વર્ષ પુરાં થયાં વિનાનો પુરુષ જો મર્માધાન કરે તો તે મર્મ માતાની કુખમાંજ નાશ પામે; અને કહી જન્મે તો જીવે નહિ, ને કહી જીવે તો દુર્ભાગ રહે; વારતે અવિ આજ વયની સ્ત્રીમાં મર્માધાન કરવું નહિ.”

આ બધી ખરબીએતો અટકાવ થતાં માટે અલ્પવયસ્ક પાળવાની એટલે વીર્ય રક્ષયુ કરવાના જરૂર છે અને તોજ આરતવર્ષમાં વીર્ય રત્નો પેદા થશે.

પણ એક એમ માને છે કે શ્રદ્ધિસિદ્ધ એકાદ વાર તૃપ્ત કર્યા પછી તે વરસુની કે વિચારની અનિશ્ચય રહેતી નથી પણ આ અભિપ્રાય ભૂલ ભરેલો છે, ઇન્દ્રિયોના વિષયની તૃપ્તિ નથીજ થતી. વિષયની જેમ-જેમ વધારે પ્રવૃત્તિ તેમ તેમ વધારે ને વધારે ઇચ્છા થાય છે. રિષભભોગવત્યા વિષયની કહી શાંતિ થતી નથી, પણ અગ્નિમાં ધી નાખ

વાથી જેમ અગ્નિની વૃદ્ધિ થાય છે, તેમ કામની પણ વૃદ્ધિ થાય છે.

આની રીતે વિપત્તી ઇચ્છા સહેજ થઇ ગયા છે પણ તેને કષ્ટમમાં રાખવી જાણુ મુશ્કેલીની વાત છે. અહીં એક આને મોટે સરમ દેવાં આપું છું.

એકીન નામના એક અંગ્રેજ ડાક્ટર પાસે એક દરદીએ પોતાના વિષે બોલતાં એવું જણાવ્યું કે, “એકેન સહેજ દુઃ તમારી પાસે જો વાત કરવાનો છું” ને સાંભળી તમને આશ્ચર્ય થશે કે પરંપરા પહેલાં મેં ‘સખત બલચર્ય’ રૂત પાળ્યું હતું, કોલેજમાં હું વિદ્યાર્થી હતો ત્યારે મને વખતે વખત રામ ચિત્તર ઉત્પત્ત થતો હતો, ને વખતે તે એટલો જાણી થતો હતો કે, તેને સાંત ન પાડી શકાય; પણ આજ તુને હું વશ રાખી શક્યો એ વાતનું મને રમરમ થાય છે ત્યારે મને પરમ આત્મદ થાય છે. તેને વશ કરવામાં મને જાણુ પહેલવ પડી હતી, હું સંપૂર્ણ જુવાનીની આવડામાં હતો અને ત્યારે “કામ” મને વ્યકુલ રતો ત્યારે હું તરત બહાર નીકળી પડતો. આમ રવાની હું કામને વશ કરી શકતો. મેં કદી પણ પશિચાર કર્યો નહિ. તમે જુઓ છો કે હું કેવો મનજુત છું. કમરવંચીન હું બની શક્યો છું.” ડાક્ટર આ દરદીની હકીકત આપતાં જણાવે છે કે તે મજાસુ એવી રીતે બલચર્ય રત પાળીને તથા શિલ્પકામને અને ઉત્તમ પદી પ્રાપ્ત કરી પોતાના ધર્માની સફળી ચદના પદવીએ પહેર્યો છે.

ચાર અથવા વિષયાંધપણુ એનાં નામો આપી શકાય.

હવે આપણે પરંપરા પદી આ સંબંધમાં શું શું જાણતો છીએ તેનાં રાખવી તથા કયા કયા નિયમો પાળવા તેનો યોગ્ય વિચાર કરીએ. આને માટે આપણે નીચે પ્રમાણે બે વિભાગ પાડીએ. (૧) આહાર સંબંધી નિયમો. (૨) વિહાર સંબંધી નિયમો.

અહાર સંબંધી નિયમો—સાદું શુભકારી નિર્વિકારી ભોજન વિષય વિહારને શાંત રાખે છે. અને ભ્રમકાર ભોજન અને ખાનપાન એ વિહારને ઉત્તેજન આપે છે. મોટે ખાવામાં પીવામાં, પહેરવામાં અને રહેવામાં દરેક વર્તનમાં સાદાઈ રાખવાથી બલચર્યનો હેતુ પાર પડે છે.

વિહાર સંબંધી નિયમો—વિહારમાં અત્રે સ્ત્રી પુરુષના ખાનગી વ્યવહારો સુખ્ય કરીએ સમાવેશ થાય છે. વિહારની જોડણી પણ ધર્મી બાજતો છે. પણ અને એજ વિષયનો સંબંધ છે, માટે એ વિષે કેંઈ ચીરંતરથી વીચેચન કરીને સ્ત્રી વિહારમાં નીચે લખી વાગોનો વિચાર કરવાની નજર છે:—

(૧) વયનો વિચાર. (૨) કુલનો વિચાર (૩) કાળ વિચાર (૪) શારીરિક સ્થિતિ (૫) માનસિક સ્થિતિ, (૬) પવિત્રતા (૭) એક પત્ની વત્ત.

વયનો વિચાર—

લગભગ પુષીના ઉમર પતિ કરતાં કમમાં કમ પાંચ વર્ષ નાની અને પત્નીમાં જાણુ દસ વર્ષ નાની હોવી જોઈએ. વિચારાતંત્ર માગાને માત્રથી સોગ વધી નાની પુષીને સાસરે મોકલવી બેઠકએ નહિ.

જાળુ લગન અગિ હાનીકારક છે. સરકારે પુષી માટે જાર ર્ષ અને પુષી માટે ૧૬ વર્ષ રાખ્યાં છે તે જાણીને અનુક્રમે સોગને પત્નીત વર્ષ સુધી લગ વતે જોઈએ.

૨૫ શુભ વિચાર—૧૧, ૨૫ તમા સુખની માગન અને સમનવતને વિહાર કરા વિન જા

આપો એટલાં લાકડે માકડાં વળખાડે છે, તેમાંથી કાઢને કાંઈ પ્રકારે સારીરિક પર્યાની હાનિ થાય છે. અને બ્રહ્મચર્યનો ભંગ એટલે વ્યભિચાર એ તેનું પરિણામ છે.

કાળ વિચાર—જ્ઞાતિભાગ્યુપેયતા “ઋતુ કાળમાં સોંપાં પાસે નવું.” અર્થાત્ સ્વસ્થતા સ્ત્રીને ઋતુશ્રાવ બંધ થયા પછી અગીયાર રાત્રી સુષીના સમયેજ સંયોગ કરવાનો કાળ અનુકૂળ ગણ્યો છે. વરંવાર નહિ. પહેલા પાંચ દિવસ અને પછીના અગીયાર દિવસ એટલે સોળ દિવસ પછીથી જન્મ કમળ સંક્રાંતિ બંધ પડે છે તેમ સ્ત્રીનું ગર્ભાધાનના હેતુથી સંયોગ કરવો એ નિર્થક છે, કેમકે વીર્ય નિષ્ફળ જાય છે.

જેઓ મનને કાષ્ઠમાં ન રાખે અને રજસ્વલતા સ્ત્રી પાસે જાય તેને દષ્ટિ, આયુષ્ય, તથા તેજની હાનિ થાય છે, અને અધર્મની પ્રાપ્તિ થાય છે. વળી પહેલાં એ દિવસમાં જે ગર્ભ રહે તે આત્મા-કુષ્પવાળો તથા નિકૃત અંગવાળો દુઃસ્વાસ્થી થાય છે.

ગર્ભાંતી સ્ત્રીના પુરૂષે કદિ પણ સંબંધ કરવો નહિ; કેમકે ગર્ભાંતર્યામાં જેવી ચેટા કે રિપત વ્યાપાર કરવામાં આવે છે તેવીજ ચેટા કે રિપતવાળો આગક અવતરે છે ને મોટપણે તે આગક વિપત્રી અને વ્યભિચારી થાય છે.

સારીરિક સ્થિતિ—સારીરે કાંઈ પણ વ્યાધિ, કષ્ઠર, કે બેચેની હોય, તેવા સમયમાં વિહારનો ત્યાગ કરવો. સ્ત્રીના મદ્વાદમાં પુરૂષે અને પુરૂષના મદ્વાદમાં સ્ત્રીએ મનને વશ રાખી બ્રહ્મચર્ય પાળવું. કારણ કે જો આના સમયમાં ગર્ભ રહી જાય તો બન્નેનો જીવ જોખમમાં આવી પડે. બહુએક રોગમાં વિવશની મુન્ડા ઉલટી વધે છે ત્યાંત વરીકે ક્ષય રોગીને વારંવાર વિકાસની ઇચ્છા થાય છે. આ ઇચ્છા સ્વાભાવિક નથી પણ રોગ એ મુન્ડાને જન્મ આપે છે માટે ક્ષયરોગીએ સારવેલી રાખવી.

માનસિક સ્થિતિ—ઇચ્છા વિના અજાતકારથી ચોરેલું કામ સંતોષ આપતું નથી અને આસંતોષ એ પણ સારીરિક તેમજ માનસિક વિહારનું કારણ

થાય છે. ઇચ્છા વગરનો વિહાર નિષ્ફળ જાય છે અને સારીર ઉલટું બગડે છે. આ વાત બન્ને પક્ષે સમજવા જેવી છે. સ્ત્રીનો ઇચ્છા વિના સ્ત્રી ગર્ભનું કરવું તેમાં અને લાંબનીતી વીર્યપાત કરવો તેમાં બીજાકલ વશવન નથી, અને આથી કાચું ગર્ભ બંધાય છે.

પતિવ્રતા—વિહારના વિષયમાં ઐશ્વર્ય સારીરિક શુદ્ધિ એ લાડી મોટી અને અગત્યની વાત છે. સ્ત્રી પુરૂષોના ગુપ્ત અંગોના સ્થાનિક વ્યાધિ મેટે ભાગે અપવિત્રતા અને મંદિનતામાંથી જન્મ પામે છે, પતિવ્રતા એ સારીરિક ઉન્નતિનો એક માર્ગ છે.

એક પત્નીવૃત્ત-પતિવૃત્ત—બહુઓ જન્મ પોતાની પત્નીને પતિવૃત્તપણાને ઉપદેશ આપી નીચમ લેતાવે છે તેમ પોતે એક પત્નીવૃત્તનો નિયમ ભાગ્યેજ લેતા હશે. આ જગ્યાએ સ્વાર્થ છે કે કેમ તે સમાજશે. અને જ્યારે પોતે એક પત્નીવૃત્ત નથી લેતા ત્યારે તેમનો વિશુદ્ધ પ્રેમ કાના તરફ કેટલા પ્રમાણમાં હોઈ શકે તે વાંચક વિચાર કરી લેશે.

વરત પરણેલાં જોડા ક્ષણિક સુખ વિલાસનો વિશેષ લાભ લેવાને લક્ષ્યાય છે; પણ તેઓ જાણતા નથી કે તેઓ એ કુટુંબથી પોતાના અવિચ્છેના સુખને જોખમમાં નાંખે છે.

વિલાસ વિચાર—ઋતુશ્રાવ બંધ થાય તે દિવસથીજ સ્ત્રીને પુરૂષની ઇચ્છા પ્રાપ્ત થાય છે અને એ વખતે જન્મ્યું-ઉપજ કરનાર તત્ત્વ પરિપૂર્ણ થયેલું હોય છે. જો આ સમયમાં સ્ત્રી પુરૂષ આગક ઉત્પન્ન કરવાના પવિત્ર હેતુથી ભેગાં થાય તો ગર્ભ રહી જાય છે. ગર્ભ રહેવા પછી તે શરીર સ્ત્રીને ઋતુપાતિ થાય ત્યાં સુધી બ્રહ્મચર્ય પાળવું જોઈએ. આગક અવતર્યા પછી જ્યારે તે આગક ધાવળને છોડે છે ને ખોરાક ખાવાની શરૂઆત કરે છે, ત્યારે પાકો ઋતુશ્રાવ શરૂ થાય છે. ગર્ભ રહે તે દિવસથી લગભગ અઠાર માસે કે તેથી પણ વધારે સુદને શરીર ઋતુશ્રાવ થાય છે, માટે એટલી લાંબી મુન્ડ સુધી સ્ત્રીની અંકુશ

રહેવું નોંધ્યે અને જોનુંજ નામ ખરું “બ્રહ્મચર્ય” છે.

કેટલાક વિદ્વાન ડોક્ટરોનેા અભિપ્રાય આથી પણ વધારે લાંબી મુદતનો છે. સ્ત્રીએ જાગરને ધન-રાવનાથી નજાળી થયેલી હોવાથી સશક્ત અને વંદુરસ્વ થતા મુંઝી બ્રહ્મચર્ય પાળવું નોંધ્યે એટલે લગભગ પોણા ત્રણ વર્ષ મુંઝી પાળવું નોંધ્યે.

“માટે બ્રહ્મચર્ય વૃત્તવારી તેજ કહેવાય કે જેનામાં જાગક ઉત્પન્ન કરવાની શક્તિ હોય તથા જે જીવિ જીવંતી સુખરસ, માટે અને દંદ મન સંકલ્પની ખાતર યોગ્ય ક્રમે અને જાગક ઉત્પન્ન કરવાના પવિત્ર હેતુથીજ સંગ કરે.”

ઘણાએને ઉપરનો અભિપ્રાય પ્રસંદ નહિ પડે પણ તે અક્ષરેમ સત્યજ છે.

જેઓએ સદા આખી જીવંતી બ્રહ્મચર્ય પાળવું છે તેવા સમગ્ર રણુનીર લીધ્મ પિતૃમહત્વ દ્રષ્ટાંત મિચારી જીવે.

મિથ્યા વિહાર—લોકો વ્યભીચારનો અર્થ ત્ર પરસ્તી મનનજ કરે છે પણ તેની અંદર વિયોગ અને મિથ્યાયોગ તથા હરત દોષનો પણ સમાવેશ થાય છે.

અતિયોગ—અસ્થોસ! વિપવના અતિયોગથી કેટલાં બંધા પરજીલા નેડાની જીવંતી નેખમમાં આવી પડે છે. તેઓ આ શું કરે છે તેનો સંદેહ પણ વિચારે ત્યાં સિવાય કામરૂપી યોગાની લગામ વદન કદી મૂની રે છે. પણ શાણા પુરોએ તથા શાણી સ્ત્રીઓએ સાવધ રહેવું નોંધ્યે. અતિ વિહારથી હૃદયીરના સોંધા નરમ પડી જાય છે લીચણ રડી જાય છે શક્તિ ઓછી થાય છે. મુત્તી મંદતથા લચરતી થતી ગાસે છે, મગજ ખરાજ થાય છે રમતનું શક્તિ ઓછી થાય છે આંખની કદી મંદ પડે છે અને એથી અનેક વ્યવિચારને આવવું સંદેહ થઈ પડે છે.

શુભ અનાચાર—આ દુરાચારથી જે ખરાબી થાય છે તેવું વર્જન કરવાને મારી પાતે

પુરવા સમ્યકે નથી. મિચારો ગરીબ અજ્ઞાન વંદણુ! જેના પર આ પાપી રિનાશકારક કૃત્રેવ પડે છે તે પાપમાત્ર થાય છે. આનો અનાચારથી નોંધાન છોકરાંએને બચાવવા એ માયાપોની મુખ્ય ફરજ છે વંદણુ જાગકોનું એ એક શુદ્ધ દુરાચારજ છે. માયાપો આનો જામતો ભાગ્યેજ ભણે છે. અંતે છોકરાંએ અશક્તિપણની ફરીયાદ ઉકારો પાસે કરે છે.

આવી રીતે બ્રહ્મચર્યનો ભંગ કરનાથી પેશા જનું હાર રક્ત વર્ણનું થાય છે. સદાજ ઉશ્કેરણી થવાથી લીચનો પાત્ર થઈ જાય છે અથવા પાંચી સરખું વીર્ય કરવા માટે છે; વીર્યપાનની સથે સજીકા ઉત્પન્ન થાય છે. ધંતુચારનો ભંગ કર વ્યાધી ઉત્પન્ન થાય છે. આવી કૃત્રેથી વંદણુ સ્ત્રી પુરો પોતાના સંસારની પાપપાલી કરે છે. એનાં યુગલોને જે સંવતો થાય છે તે વીર્યહીન, બુદ્ધિહીન, અને વિલક્ષ્ય સ્વચાવના ગાંડા જેવા નીવડે છે. માયાપોએ પણ પોતાના કાચી વવના છોકરાંએ ઉપર પાછી દેખરેખ રાખવી નોંધ્યે, કે જેથી તેજી નાદાનીને લીધે બ્રહ્મચર્યનો, આવી દુઃખદાયક રીતે ભંગ કરવાનો લવમાં ન પડે.

“બ્રહ્મચર્યનો આ મહામંત્ર દરેક ધ્યાનમાં રાખવા જેવો છે. તેના અમાવંથી હિંદુસ્તાનની કેવી દુર્દશા આવી ગઈ છે તેનો તાત્પર્ય દાખલો આપ વાચકો અમશૂન આવી ઉભો છે, માટે હજી પણ ચેતો, ઉંઘમાંથી આગસ મરડી ઉઠા થાવ અને આ મહામંત્રના જાપ જીવો અને નોજા હિંદુસ્તાન-દેશ વિર રતોળી શોભાપમાન થશે. કામ વિશામ મનમાંથી ઉત્પન્ન થાય છે માટે મનને કમળમાં રાખો. મન કમળમાં રાખવા માટે તેનો વિચાર સરખો પણ અયોગ્ય કાલે નહિ કરો; તેજ વડે ફારી શકશો. ફરેથી શાપેવના વપાસકો ચેતીને આજ્ઞા અને આ મહામંત્ર જાપા જગતમાં પ્રસારો.



(સખનાર:-સ્નેહચોગી ધુલીઆ આનદેશ.)

સંધ્યા સમયે આ સ્નેહ યુક્ત પ્રધાન વ્ય. પાર-
કળા-કુચંગતામય-વાણિજ્ય-શુભાસકૃત વચ્ચ-
સ્વાય-પરાયણતાનાંજ હુબ્બ નાગરિકોથી ઉમરાવા
નગરથી હતાશ બની, કુદરતી રીતે સ્વાભાવિક
પ્રસરેલી અરુણ્યની સુખમય શાન્તિનો આસ્વાદ
સેવાયે મનનો પ્રેરાયો. શરીરથી ધસારાયો. પથે
સાલતાં અનેકાનેક ચિત્ર વિચિત્ર સેનાના દર્શન
થવા સાગમાં, કોષ દર્પાનદમાં, તો કોષક છવા-
ત્માઓ શોકાસિના મહાસાગરમાં ઉચે-નોચે હુંબ-
હોખાહરતા હતા. ક્યાંક પ્રેમ મુદ્રેલાથી ઉદ્ભવતાં
સુખપ્રદ પ્રમંગો આનંદ અર્પતા હતા, તો ક્યાંક
દર્પાદિનીનાં રૂપમય ઝરણો બહેવડાવ્યાથી વિવિધ
હુબોધક રચિતિનાં દર્શન થતાં હતાં. સંસાર
મરનાનાં આવા અનેકાનેક વિચિત્ર રીતો વિશેષકો
વિશેષતો અને તે અદૃશ્ય થતાં તેઓનાથી ઉદ્ભવતા
વિચારોથી હૃદયમાં અવેશ, દયા, મમતા, ક્રોધ, શા-
ન્તવાદિ સદાનુભવો. અનુભવતો અનુભવનો હું
મંગાનદિના કિનારે કિનારે થયે દૂર આવી પહોંચ્યો.

આ વેળાએ સૂર્ય બગવાન કોવથી રૂંકતવણું
ધારણ કરી રહેલા હતા. સાલવાના ઝગેફરીને,
તેમજ શરીરના વંચને ફરીને આ પામ અગાત્યો
પણ ઉપદ્રમાં ના પાટવાં લાગ્યા તેથી એક કુદરતી
હોલકામતનાં શિષ્ટાચેલી હોલા રંગી નામમ ઉપર
આ બધ રૂપી શરીર અનંદુરજાએ પડ્યું. સમય
પરતે અને સરિતાનો કિનારો હોવાથી પવનની
દબે હલેલો તેમજ નિઃશ્વસ્ય જગા કુદરતી રીતેજ
અસ્ફાલક સાગતું. હવું. સરિતાનો પ્રવાહ અરુણ-
ચિત્ર રીતે અગમખંડ શુદ્ધ કરતો વહેતો હતો.

નગરથી દૂર હોવાને લીધે જન-સમાજનો અવાજ
તત્તન કમી હોવાથી, સરિતાનું જળ નિર્ભળ, સ્વ-
ચ્છ, શિતળ અને પવિત્ર હતું. અને તેમાંથી
પારદર્શક વસ્તુની માફક સરિતાના તળીયપરના
ઝીણા મોટા અનેક વિવિધ રંગ યુક્ત રેતીના
દણો સ્પષ્ટ દેખાઈ આવતા હતા. સરિતાનો પ્રવાહ
પોતાના ઉદરમાં અનેક તરેડની ચીલેને તાણી
જતો હતો. જુદી જુદી રંગ બે રંગો પુષ્પમાળાઓ
પણ તે સરિતાના જળ પ્રવાહ ઉપર તણાવી
તણાવી આવતી હતી, અને તે પુષ્પમાળાઓ સ-
રિતા દેવીના શ્રદ્ધાળુપણે મકંતોએ ફરેલી સેવા-પૂજનની
શાશ્વત પુરી આપતી હતી. વળી સરિતાના નિર્ભળ
નીરમાં વિવિધ રંગના ગચ્છ ત્રયા બીજા અસંખ્ય
જળ પ્રાણીઓ સ્વેચ્છાથી વિહાર કરી રહ્યાં હતાં;
જળચર પ્રાણીઓના આવા પ્રકારનો સ્વેચ્છાએ
થતા સ્વતંત્ર વિહાર જોવાથી મૂળે મ્હારી રચિતિનું
કંઈક ભાત થઈ આવતાં અંતઃકરણમાં ગ્લાની
પેદા થતી હતી. આ અસ્ફાલજનક દેખાવ પરથી
નયનને ખસેડવાની યત્નિચિંત મારી મરજ થતી
નહોતી, પરંતુ પદ્મિયોના કલરવોમાં પ્રજ્ઞ મરિતાના
ધ્રુપ મરોએ અંતઃકરણને આકર્ષ્યું અને મનના
રાગજો નયનને ઉચે નિંદાગવાની આજ્ઞા કરી.
મહન, મટ નિશાળ ડાંગીથી તથા પત્રોથી
આગ્ગાદિત વટજી ઉપર સંખ્યાબંધ પક્ષિઓ,
નિશ્ચથી રાત્રિ મેળવવા પોત પોતાનાં સ્થન
ચોધી સહેલર સ.યે એકજ ધવાની પ્રવૃત્તિમાં
ધોધાર મચવતા હતાં અને સુષ્ટિમાં જ્યાં જોમુએ
ત્યાં વિવક્ષના અમથી વિશ્રાન્તિ મેળવવા અનેક
જોએ ઉત્કુક થઈ રહ્યા હતા. અદ્ય સમયમાં
સૂર્ય બગવાન ક્ષિતિજમાં અસ્ત થયા; અને
સૂર્ય દેવતા અસ્ત થવાની સાથેજ પદ્મિઓ જળો
ધાડો સમયક ધરાવતાં હોય તેવી રીતે તેઓ પણ
એકાંકી યાત્રન થઈ ગયા અને ક્ષિત્તિવિ મેળવવામાં
ઉદ્ભવેલો ધોધાટ એક પ્રગરની અવનની શાન્તિમાં
લાન થયો.

ચોડીવારમાં સરિતાના વહનથી થતા અનાજ
સિવાય કોઈપણ અન્ય અનાજ અવશે અધકાતો

નદતો. દક્ષિણ વચ્ચે વચ્ચે જુલ આંતરે શીવાળી-
 યાંતો બાળકોને ભય ઉત્પન્ન કરનારો કંઈક અચાનક
 સંભળાતો હતો, સાયંકાળને બદલે રત્નવિનો સંચાર
 થયો, અને નિર્ભય આકાશમાં ચક્ર ચક્રિત તારાઓ
 એક પછી એક ડોહયાં કરી દેખાવા લાગ્યા, અને
 તેમની મંદમમાં અનેક નાબોધનો એક સૂચનાર
 ચંદ્ર પોતાનું શીરુળ, ધવળ પ્રકાશ પ્રસરાવવા
 લાગ્યો. સરિસૃજના જળપટ પર રૂપેરી રંગનું વસ્ત્ર
 પ્રસરી રહ્યું અને તેનું પ્રતિબિંબ જળમાં એક
 પ્રકારનું ઉજવળ સ્વેત મૂલ અગમ્ય રહ્યું. અનેક
 વ્યક્તિઓ ચંદ્ર મુખ હોય, ફૂલ-ફળમાં દ્વિમુખ
 બરનારો અત્યારે મારા પવન પળ શાન્તિકારક
 થયો. કુદરતનું સૌન્દર્ય નિહાળવામાં હું નિશ્ચય
 અન્યમાન બૂલી ગયો, અને જે રંગસી પ્રતિષ્ઠિ
 દંટણી શાન્તિ શોધવા એકાન્ત અરણ્યમાં આવી
 ચઢ્યો હતો. તે સ્વાત્તિક શાન્તિનો આસ્વાદ હું
 અનુભવવા લાગ્યો. અને તેથી, અને જેના પ્રતાપે
 સનીર - ટોળાયું, લંબાયું દૃષ્ટિ ચંદ્રમાં સ્થિત
 થઈ અને આખો મોંઘાઈ શરીરની અવસ્થા
 પલટાઈ અનમાયી નિદ્રામાં ? અને નિદ્રામાંથી
 મુદ્દમ સનીર અગમ્ય થઈ સ્વપ્ન અવસ્થાને

(તે વેળાએ) “હથે છે” એમ [વોઈસ] કહે છે.
 પ્રશ્નોપનિષત.

અહીં આ દેવ સ્વપ્નમાં મદિમાને અનુભવે છે.
 જે જોયું હોય તે જુવે છે સાંભળ્યું હોય તે
 સાંભળે છે, અને દેશાન્તરને દિશાન્તર વડે વારંવાર
 અનુભવેલાને પુનઃપુનઃ અનુભવે છે, દટ્ટ તથા
 ચદટ્ટ, સાંભળેલાને ને નહિ સાંભળેલાને અનુભવ
 કરેલાને ને અનુભવ ન કરેલાને. તથા સત્તા ને
 અસત્તાને સર્વને દેખે છે, સર્વ દેખે છે.

વળી પવિત્ર રાજ્યોમાંથી અસંખ્ય પવિત્ર, નિર્મળ, સ્વચ્છ ઝરણા નીકળતાં હતાં જે મહાન સુશોભિત સરોવરો તથા નદાની ગહન વેગવાન સરિતાઓમાં બહેનાં હતાં. આ સરિતાઓ અને આ સરોવરોનો દેખાવ શૃંગા ઉપરથી અતિ આકર્ષક લાગતો હતો. આ સરોવરમાં અનેક રંગી કમલો આવી રહેલાં હતાં. કેટલાક સાત પાંખડીવાળાં હતાં. કેટલાક શત પાંખડીવાળાં હતાં. અને કેટલાંક સદૃશ પાંખડીવાળાં શોભતાં હતાં; અને તેમના ઉપર મધ્યેનો જમરો મંદુર ઝુંબરવ ફરી રહ્યા હતાં. અને જળ ઉપર જળનાં પશ્ચિમો ઘેત તથા રંગીત પાંખોથી શોભી રહ્યાં હતાં. આજુબાજુ કિનારા ઉપર વૃક્ષની ઘટાઓ આવી રહેલી હતી; અને ટૂંકો ઉપર મધુર કોકીલ, પોપટ, મેના, યુલયુલ, ફૂલ, ચાંદક, ચંપા, બિંબા અને અન્ય અસંખ્ય વિવિધ રંગ યુક્ત પક્ષિઓ કહોલ કરી રહ્યાં હતાં. વળી આ વનમાં વનરાજ, મફટ, વ્યાઘ્ર, રિંછ આદિ માપદ અને મોટા મગરાજ, હંપ, ઝાઝાદિ બીજાં પશુઓ પણ સ્વચ્છ દેવિદાર કરતાં હતાં. વળી અસંખ્ય સર્પ, પતંગ, આદિ પણ જણાતાં હતાં, અને નિર્નિર-સ્થાનમાં સર્પ પ્રાણીમાં પ્રેમ પ્રભરેલો જાણતો હતો જેથી તેજા બલિ વેર-વિસરી અન્યોન્ય સ્વચ્છે વિકરતા હતા.

ઉપરોક્ત આધ્યાત્મિક દિશાને જોઈ હું ચકિત થઈ ગયો. મહેં જાણ્યું કે શું હું આ તે સ્વર્ગમાં આગો છું કે કોઈ આપણા પીરોણિક, ગંધર્વ, કિનારે યજ્ઞ કે અપ્સરાઓના પ્રદેશમાં આવ્યો છું? વળી વિચાર આવ્યો કે ગમે તે લોકોનો આ ક્ષેત્ર હોય પરંતુ જ્યારે પ્રારબ્ધ યોગે હું અદિ આવ્યો છું ત્યારે તેનો પૂર્ણ લાભ કેમ ન લઉં? આવા વિચારથી આ દેશમાં હું નિરમયતાથી રહી રહ્યાં હતાં, પરંતુ થોડે અગાડી ગયો ત્યાં વળી એક અતિ ગમકારક દેખાવ નજરે પડ્યો. આકાશ માર્ગેથી એક વિમાન આ પ્રદેશની એક દિશા તરફ જઈ હતું અને આ વિમાનમાં એક દેવી બેઠી હતી. હું પણ આ વિમાન જઈ

હતું તે દિશા તરફ વળ્યો અને ત્યાં પહોંચતાં એક દિવ્ય વિપત્ર દક્ષિણે તરફ થયું. આ ત્યાં પહોંચતાં પોતા આ ઉપવનમાં અનેક અપ્સરાઓ કોઈ વિમાનદ્વારા આકાશમાર્ગે, કોઈ નોકાદ્વારા સમુદ્રમાર્ગે અને કોઈ વળી અગિરથી દ્વારા જમીન માર્ગે અને એવાં વિવિધ સાધનોથી વિવિધમાર્ગે આવી પહોંચી હતી. અને પોત પોતાના નિયત (કાયમ) કરેલા સ્થાનકે એસી પોતાલાપ કરવા લાગી હતી, આ સર્વ અપ્સરાઓના સ્થાનની મધ્યમાં એક ઉચ્ચ ઝગઝગતું સ્થાન હતું ત્યાં એક અતિ સુંદર દિવ્ય આસન મુકવામાં આવ્યું હતું.

આ ઉપવન શશ્યમારવામાં કુદરતે પોતાની પૂર્ણ શક્તિ ખર્ચી હોય એમ જણાઈ હતું, અને તેમાં સર્વ પ્રકારનું સાન્દર્ભ પુરવામાં આવ્યું હતું. સૃષ્ટિની ઉત્પત્તિથી હાલના સમય સુધીમાં મનુષ્યે બગીચા પ્રયત્નથી કુદરતની જે મહાન અગ્નિ, વિદ્યુત, સૂર્યક વાયુ જલાદિ શક્તિઓના નિયમે જાણી તેમને પોતાના સુખ માટે અનેક નાના પ્રકારના ઉપયોગમાં લઈ પોતાનું સુખ વધાર્યું છે. તે સર્વ મનુષ્ય પ્રયત્નો અર્થ લાગે, અને મનુષ્યની શક્તિ જ ન્યુન જણાય એવી સામગ્રીથી આ ઉપવન અલંકૃત કરવામાં આવ્યું હતું.

આ અપ્સરાઓમાં કેટલીક મુખપત્રવાળી હતી; ત્યારે કેટલીક હતી મુનાનીના મલકામાં હતી, કેટલીક મદમાં મસ્ત થયેલી તથા અભિમાનના પાસમાં પડેલી હતી અને કેટલીક દુઃખના બારે ધો અનેક સમયથી અનુભવેલા હોવાથી સક્રાંત શાન્ત અને પ્રતુ જણાતી હતી, કેટલીક રહા-મરહામિ ઠરાશથી જોતી હતી; ત્યારે કેટલીક અન્યની પ્રત્યે આશા ભરી દૃષ્ટિથી નિહાળી રહી હતી. યોગાક સમયમાં ત્યાં એક દિવ્ય અવર્ણ નીચ પુરવતું આગમન થયું, અને તેમણે નિર્ણયત થયેલું આસન લીધું. એક આધ્યાત્મિક શાન્તિ પ્રસરી રહી અને વરણ્ય ઝંઝ. અગ્નિ, સૂર્ય-ચંદ્ર આદિ દેવો આપના પધારવાથી પોત પોતાના કર્તવ્યમાં આરંભ થયા. આ પુરવતું પ્રભામય સ્વરૂપ જોઈ સ્વપ્ન થઈ ગયો અને ત્યાંથી જાણે ખાંડ

નદિ એવી હજી યમ. એક ક્ષણમાં કણમાં મધુર અવાજે અમૃત પેટે રેડાવા લાગ્યો. અને દેવીયો (અપ્સરાઓ) પેલા દિવ્ય પુરુષની સ્તુતિનું ગાન કરવા લાગી. તરતજ એક દિવ્ય શાન્તિ પ્રસરી અને યોદી ક્ષણ પછી તે મહાન પુરુષ સુધારણ વચનોથી ત્રીયે પ્રમાણે એક અપ્સરા પ્રત્યે કહેવા લાગ્યા:—

“હે આલે ! તું કશાનો છે ? તારાં જાતકાં આનંદમાં તો છે ? તેમની પ્રવૃત્તિ જાણવાની મ્હારી હજી છે.”

પિતાનાં આવાં સ્નેહયુક્ત વચનો સામ્રાજી તે અપ્સરાએ પ્રત્યુત્તર આપ્યો.

“હે મહાન પિતા ! હું આપની કૃપાને પાત્ર છું એ જાણી મને આનંદ થાય છે. મારા સંતાનો આપના આશિર્વાદથી નિરંતર નિશ્ચિંત રહે છે અને પોતાની પ્રજાના પૂરંપરના યથેચ્છ મહાન પુરુષોનાં સ્મરણ પૂજન અને શુભાનુચ્છના દીર્ઘનિદ્રાઓ પોતાનાં મહત્તાની બાવના પેરે છે, અને વર્ણિત કરે છે. અને નવી પ્રજા પણ આ બાવનાથી પોષાય છે. પરંતુ હે પિતા ! આપના તરફથી આપની કૃપાથી સીંચાયેલી એક પુરાણ મહાન પ્રજાને કૃત્ય સ્થિતિએ લાવવાનું મહાન કાર્ય તેઓને સોંપવામાં આવ્યું છે. તેમાં તેઓ કેવી રીતે શક્તિમાન થાય છે, તે જાણવું છે. મને બધું રહે છે કે, રખે ! તેઓ તે કાર્ય માટે ચોક્કસ ન જમ્યાય.”

ઉપરોક્ત સંજો પુત્ર થયા એટલે તે પિતાએ પોતાનું વદન અન્ય જાણુ તરફ ફેરવ્યું. એટલે બીજી પુત્રીએ કબા થઈ નિમગ્ન મુઠા ખેલવામાં આવી:—

“હે પિતા ! કમ્પાન્ય દે ! મ્હારાં આર્થ સંતાનોએ, અનાર્થ સંતાનોએ વિનાશ કરી દીધો છે, અને તેઓ હવે તેમને નિર્મળ કરી રહ્યા છે. આનંદ ભોગ્યે છે. તેઓનામાં રાજસિન્ધુ રાગિ કૃત્ય પ્રકારની છે, અને મને અને તેઓ ઉદ્યાગ માં કારતવની રાગિઓએ પોતાની સંમારિહ નિશ્ચિત ફેળવવાના સાધન તરીકે સતત મને વાપરે છે. પરંતુ આની પાછળ તેઓ એટલાં જ્યાં મંડપાં

રહે છે કે બીજી બધું તેઓ વિસ્મરી જાય છે. અને મને બધું લાગે છે, કે તેમની આ પ્રવૃત્તિ તેમની વિનાશ આણવાનું સાધન થઈ પડે.”

આ પછી તે પિતાએ બીજી દેવી પ્રત્યે જોયું, એટલે તેણે પણ તેજ પ્રમાણે કહેવા માંડ્યું:—“હે પિતા ! તારા અનુગ્રહથી મ્હારા કેટલાક પુત્રોએ યોદા સમય પહેલાં એક જુદાજ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ પ્રવર્તાયો; અને આથી મ્હારા સંતાનોમાં મહત્તાની બાવના જન્મ પામી, અને તેથી એક એવો મહાન પુત્ર ઉત્પન્ન થયો કે જેણે પોતાના પરાક્રમથી પોતાનું તથા મ્હાર નામ સદિમાં અમર કરી દીધું; પરંતુ આ લોભ વૃત્તિના પરિણામથી એટલે બધો ભોગ આપવો પડ્યો કે હાલ મ્હારા સંતાનો પોતાની પ્રવૃત્તિપદ્ધિ પ્રજાઓ સાથે પોતાની મહત્તા ખોઈ ખેડાં છે. હે મહાન પિતા ! પાછી જગતે તારા કૃપા થશે—અતુક પા છુટશે ત્યારે મ્હારાં સંતાનો તેમની પૂર્વની મહત્તા પ્રાપ્ત કરી શકશે.”

આ પછી એક બીજી દેવી કબી થઈ કહેવા લાગી:—“હે મહાન પિતા ! મ્હારાં સંતાનોએ દમચાંજ યોદા સમયથી મહત્તા પ્રાપ્ત કરી છે; અને તે મહત્તા જાગ્રવત તથા તેરે વધારવાના પ્રયત્નમાં તેઓ મંડપા રહે છે; તેથી આપ તેમને વારતે નિશિત રહો.”

આ સંજો પૂર્વ થતાં તે મહાન પુરુષે પોતાની નવીન યુવાનીમાં આવતી પુત્રી તરફ દૃષ્ટિ ફેરવી અને પૂછ્યું:—“હે બાલિકા ! તારા સ્થિતિ, દેવી છે ? તારાં જાતકાં શી બાવનાઓમાં મરતાન રહે છે ?”

આનંદથી ઉત્તરાતી તથા ઉમળિતા સિખરે વિગળરતે કબી આ તવપોદના, કમતા અર્ચવ ગિદ્દન મુખમાં પારખ કરેલું છે એવી આનંદથી પ્રજામ કરી કહેવા લાગી:—“હે પિતા ! મ્હારા વિપર લભાઈ અતુક મદા દે ! તમારી કૃપાથી મ્હારા પુત્રો દમચાંજ મહાન વિજય પામ્યાં છે; અને તેથી મ્હારા સંતાનોમાં મહત્તાકાંક્ષા જન્મ પામી છે. તેમની પ્રવૃત્તિ આ મહાનપદ નિશિત કરી તેને પ્રદિપ્ત કરવા તરફ વળી છે; અને મને

જાણ્ય છે કે ત્હમોરી દષ્ટિ તેમના ઉપર પડનાથી તેઓ પ્રાપ્ત કરેલી મહત્તા વધારી શકશે. પરંતુ આ પ્રવૃત્તિ લોભ વૃત્તિનું રૂપ ધારણ કરતી બેઠક કોષ્ઠક વખતે મહને ત્હમોના ભવિષ્ય સંબંધે ભય ઉપજે છે. ”

આ સમ્પદો પુરા થયા એટલે તે તેઓમય પુરુષે પોતાનું વદન પોતાની શ્રેષ્ઠ જ્યોષ્ઠ પુત્રી તરફ ફેરવ્યું, અને કહેવા માંડ્યું:—

“ હે પુત્રી ! ત્હારી સુખ સુદા કેમ નિસ્તેજ જાણ્ય છે ! નિરાશ અને અશ્રદ્ધાથી ત્હારું વદન કષાય રહેલું છે, ત્હારું શરીર શોકાસિથી કૃશ થઈ ગયું છે. અને ત્હારું મન પણ નિર્લસાદ તથા ઉદ્વેગથી પૂર્ણ જાણ્ય છે. ”

પિતાના એવાં પ્રેમ યુક્ત વચનો સાંભળી આ સંન્યાસિનીના જેવી વૈષમ્યયુક્ત દેવી ઉભી થઈ, અને તેણે તે મહાંત પિતાને સાષ્ટાંગ દંડવત પ્રણામ કર્યા, અને ગદ્ગદિત કહેવા લાગી:—

“ હે મહાન કલ્યાણકારી પિતા ! હે જગવના નિયામક ! હે જગતની ઉત્પત્તિ, સ્થિતિ અને લયના કારણ ભૂત ! હે સમસ્ત દેવતાઓથી સ્તુતિ કરવા યોગ્ય ! હે સમસ્ત પ્રજાઓના નેતા ! ત્હને હજારવાર પ્રણામ હો ! ત્હને હજારવાર પ્રણામ હો ! હે પિતા ! ત્હારાથી કશું અગમ્ય નથી ત્હારી ધૃતિ વગર એક વસ્તુ પણ હાલી શકતું નથી હું ત્રણે કાળનો અને ત્રણે અવસ્થાનો તાતા છે ? હું ત્રણે સ્થિતિમાં સ્વયં પ્રકાશ છે ? ત્હારાથી શું અતાવ છે, કે હશે કે હું ત્હને કહું ? હું ત્રણે ઉછર કે સંપિના ઉદય અને અસ્ત એવા બે કાળ છે, અને કોષ્ઠપણ પ્રજાને કે, કોષ્ઠપણ અસિતને ત્હારા પ્રસાદ વિના કોષ્ઠપણ પ્રકારે ઉત્પન્ન થતો નથી. ‘ હે પિતા ! જ્યારે ત્હારો અનુગ્રહ હતો ત્યારે ત્હારાં સંતાનો આખા વિશ્વમાં શ્રેષ્ઠ હતાં. તેઓ કમીયારી હતાં, ત્યારે સમગ્ર વિશ્વની પ્રજાઓ તેમના ચરણમાં નમતી હતી. કોણમને તેઓ પોતાના મહાંત ઋષિ મુનિ, આચાર્યોના પયથી મજા. હે પિતા ! ત્હારા પોતાના

ઉપદેશથી પણ તેઓ અગ્રા. તેઓ પોતાના પય પર ચાલ્યા નહીં; વિચાર અને આચાર એક સરખી રીતે રાખી શક્યા નહિ અને તેથી પંડ્યા અને પડતાં પડતાં પોતાની અધમમાં અધમ દાસત્વની અવનવિએ પહોંચ્યા. સર્વ વસ્તુઓમાં તેઓએ દાસત્વ સ્વીકાર્યું, આત્મ શ્રદ્ધા અને સ્વાશ્રયનો તેમણે ત્યાગ કર્યો, પોતાના પૂર્વજોની મહાન ભાવના તેમણે છોડી દીધી અને, પરાધ મહત્તામાં તેમને ઉત્તમતા જાણ્ય અને તે પ્રત્યે ઝંઝનાના નીર પેડે વળ્યાં. પોતાના પૂર્વજોની મહત્તાની ભાવનાથીજ પ્રગળ્યા મહત્તા મેળવે છે, અને જાગવી શકે છે. તે ભાવના તેમણે ખોઈ અને તેથી હે પિતા ! ત્હમની આ અવસ્થાથી તેમના પૂર્વજો જેવી તેમનામાં માત્ર વત્સલતા ન રહેવાથી તેમનાં કર્મોથી હું દુઃખિત થઈ, અને અત્યરે તેમની હરેક પ્રકારની સ્થિતિ એવી પરિસ્થિતિ થઈ ગઈ છે કે કોષ્ઠ કોષ્ઠ પુત્રો તેમનાં મહત્તાની ભાવનાઓ સહ્યવન કરતા મરે છે, પણ તેમાં તેઓ શવતા નથી. ત્હારાં સંતાનો પાસે તેમના પૂર્વના મહાંત ઋષિ મુનિઓના જ્ઞાનના અપૂર્વ ભંડાર પડ્યા છે, પણ આચાર્ય આ ભંડારમાંથી ઉપયોગી તત્ત્વો વારવી કાઢી તે પ્રમાણે પોતાનો ભવિષ્યનો માર્ગ બાંધી તે પ્રમાણે કર્તવ્ય પરાયણ થવાની શક્તિ ત્હમનામાં ક્યાં રહી છે ? જ્ઞાન, કસિત કર્મ સર્વમાર્ગના દ્રષ્ટા તેમનામાં થયા છે, પણ હાલ તેમને શોધવા કોણ પ્રયાસ કરે છે ? તેમનું સર્વ પ્રકારનું જીવન નિર્લિપ્ત થઈ ગયું છે, અને તેથી ત્હારા ભવિષ્ય મારે મહને તેમનામાં શ્રદ્ધા રહી નથી. આથી હું નિરાશાના ઉદ્વેગમાં હુમ્મી ગઈ છું. પણ આ સ્થિતિ આણવામાં કારણ ભૂત હે પિતા ! કૌરવ પાંડવનું યુદ્ધ તથા યોદ્ધા સ્વજા કરાવનાર તુંજ છે, તેથી આમાં સંકેત હશે એવું લાગે છે. ”

આટલું બોલી તે ગદ્ગદિત થઈ જવા લાગી.

વધારે બોલો શકો નહિ, અને તે કૃપાણુ પિતા* પ્રરક્ત વદનથી કહેલા લાગ્યા:—

હે કલ્યાણિ શાન્ત થા, કાર્પણ્ય દૂર કર, બીજા મૂંઝી દે; અને સાવધ થા. તારા ઉપર મારા પ્રેમ અસ્પષ્ટિત છે, અને તારાં સંતાન એ મારાં પરમ ભક્ત છે. જે મારી કૃપા તારા ઉપર ન હોત તો બીજા અન્ય પ્રાચીન પ્રવ્રજ્યા પેઠે તારાં સંતાનો પણ આ ઝડિમાંથી ક્યારનાંએ નિર્મલ યદ્ ગયાં હોત; પરંતુ હે ભારતિ ! હું તારે ત્યાં સ્વયં આવી તારી પ્રગતે ઉત્તવ દશમાં મુકે છું માટે તું નિશાન્તક તથા નિશ્ચિન્ત થા. તારાં સંતાનો પણ તું ધારે છે એવા કપૂન નથી. હેમનામાં મારા વાસ્તે તેમજ તારા માટે અપ્રતિમ લાગણી-સ્નેહથી, અને દીધી તે પૂર્ણ નેસથી પ્રકટી છે. દેવ મહાગથી નિર્ણયિત પ્રજામાં તેમની શ્રદ્ધા હતી, તે શ્રદ્ધામાં તેઓ ભૂલ્યા અને મૂળથીજ સાત્ત્વિક આનંદ છત્વતા હોવાથી રાજસ મૂંઝી તેઓ વામવશા શ્રદ્ધાથી કપ્યા. આ શ્રદ્ધાને પ્રતિધ્વનિ ન મળવાથી તે હવે બોલો થતી જાય છે; અને આ સર્વ દેવીઓના કંતાનોનાં કલ્યાણ માટે આવશ્યક છે; તેથી મારા અનુગ્રહથી તારાં સંતાનો યોગ સમયમા તેમની પૂર્વના મહત્તા પ્રાપ્ત કરશે. આ દર્શન્ય મહે કેટલાક મારા વીર ભક્તોને તારે ત્યાં મોકલ્યા છે, જેઓ તારા કલ્યાણ માટે તારાં સંતાનોને ઉત્તમ માર્ગે દોરી તારાં આંશુ છુજાને સ્વાર્પણ કરી અનેક દુઃસહ દુઃખો ભોગવવા તૈયાર થયાં છે; અને આ પ્રેમાસમાં તેઓ નિર્જાજ બહારી તો હું સ્વયં આવી તારી પૂર્વના સિધિએ તારા સંતાનોને લાવી મૂંઝીશ માટે હે કલ્યાણિ ! યોગિથી તું મારા પાનમાં રહી શ્રદ્ધાથી તારાં સંતાનોનું ઉત્તમ રીતે પાલન કર!!!

ઉપરોક્ત સ્નેહ પૂના થતાં મારી આંખો ઉપડી ગઈ, અને જેકે છું તો પશિઓ કહોશ

* "પ્રદગણિત માત" — મ. ગી. ૨ અ.

વસા યત દિ પર્વતર મહાનિર્ભરિત માત ।

મનુષ્યવશ પર્વતર હામવર્તન મહાદદ્દમ ॥

વિશ્વાસ્ય લાપ્તો, વિનાશાય ચ દુઃસ્વામ્ ।

હવે દુઃસ્વામ્યાર્થિ સમરવિ કુળે કુળે મ. ગી.

કરી રહ્યાં છે, અને પ્રભાવના મહુર પ્રજા મંત્રોના મંત્રોનું ગાન મારા કણ્ઠમાં રેડા રહેલાં હતાં. આખી રાત્રી આનાં દિવ્ય દર્શનમાં વ્યતીત થયેલી નેષ, આનંદ પામતો તેમથી ગદાન ઉપરેડો મુલક કરતો, બદિધ્યની મહત્તામાં શ્રદ્ધા ધરતો અને પેતાના કર્તવ્યના વિચાર કરતો હું પાછો વિશ્વને રાગી બન્યો—સાધુ બન્યો—અગર આત્મા નો સંશોધક અનુયાયી બન્યો. જે કહેો તે બન્યો. ઓ જ્ઞાન્તિ ! જ્ઞાન્તિ ! ! જ્ઞાન્તિ ! ! ! *

સ્નેહયોગી સદન

ધુલીઆ-પાનદેશ.

સ્નેહયોગી.

ઉત્તમ બોધ

(ગઝલ)

ગગતના વૃલમી લોકો, શું સંતાને સંતાનો છે. અધર્મોને નચાવીને, શું ધર્મોને ફસાવો છે. કરો છો કર્મ છત્વલના, મહા જનને ભ્રમવો છે. નીતિનું બાન બૂલાવી, હલક પાંચે ચલાવો છે. વધારી દેપ છપાને, વધારી સ્વાર્થ ધાતકતા. બૂલાવી સત્યને નીતિ, કરો છો દુર પાતકતા. પીડાતા સેંકડો દરદી, દુઃખી જનને વિસારો છો. ઉદયને અસ્તનો નિમગ, કરે એવું શું ધારો છો. પરામાં કાળજી બાળી, સફળ દેશ અફળ કરવો. હવેને વિપમય કરતા, પ્રજાનો દર નથી ધરવો. પુરવનાં સદ્ કર્મોથી, મનુષ્યનો યોગ પામ્યા છે. પ્રજા આગ વિસારીને, શું દેખીને વિસમ્યા છે.

ભલા જનને ન સંતાવો, આનંતિને વછ દોને. મુનોતિ પંચ પકડીને, પ્રજામાં ગિત મરી દોને. પ્રજાના સત્ માણેને, હવેમાં ધારી રાખેને. પરાયને રૂબ આપીને, સત્ કળ સાચું માણેને. તમારું શુભ ઇન્દો નો, પરાયું શુભ વાદેને. કહું તેવું બેમવનું એ, પ્રજાના મંત્ર સ્વાકારોને. ખોરેલાં પુષ્પની આશક, જે આશુ તે જગતું છે. કહું દારોજ તે મયે, બીજું સો અદિ સ્વેચનું છે. સાધુજનની રિતય પાળી, સદા દુરમાંથી ધારોને. પ્રજા સ્મરણ મત કરીને, લખારો ભવ સુધારોને.

* અંગાનોડા આપારો

JAINISM AND IDOLATRY.

It would undoubtedly be a great surprise to many of our non-Jaina friends to be told that Jainism is not an idolatrous creed and is betterly opposed to idol-worship as the most iconoclastic religion in the world, yet the fact is as stated. The attitude of Jainism towards idolatry is evident from the following quotation from the *Ratna Karanda Sravakachara*, a work of paramount authority, composed by Sri Samantabhadra-acharya, who flourished about the commencement of the second century A. D.

" Bathing in [the so called sacred] rivers and oceans, setting up heaps of sand and stones [as objects of worship], immolating one-self by falling from a precipice or by being burnt up in fire [as in sati], are some of the common *murkhas* (follies). The worshipping, with desire, to obtain favour of deities whose minds are full of personal likes and dislikes is called the folly of devotion to false divinity. Know that to be *guru murkha* which consists in the worshipping of false ascetics revolving in the wheel of *samsara* (births and deaths, i. e. transmigration), who have neither renounced worldly goods, nor occupations, nor *himsa* (causing injury to others)."

This is sufficient authority for the view that Jainism strongly condemns fetish worship—rivers, stones and the like as well as devotion to human or super-human beings who have not eradicated their lower nature, that is to say who are liable to be swayed by passion, or by personal likes and

dislikes. What, then, is the significance of the image-worship which takes place daily in our temples, and which is, undoubtedly, the cause of the false impression that has been formed by the non-Jainas concerning our faith?

To explain the nature of the worship that is performed in our temples, it is necessary first of all to summarise the Jaina creed, which fully accounts for it. The Jainas believe that every soul is godly by nature and endowed with all those attributes of perfection which are associated with our truest and best conceptions of divinity. These divine attributes, omniscience, bliss and the like—are, however, not actually manifest in the case of the soul that is involved in transmigration, but will become so when it attains to *nirvana*.

Nirvana implies complete freedom from all those impurities of sin which limit and curtail the natural attributes and properties of the soul. Accordingly, the Jainas aspire to become Gods by crossing the sea of *samsara* (births and deaths), and the creed they follow to obtain that devoutly-wished-for consummation is the method which was followed by those who have already reached the goal in view—*nirvana*. It is this method which is known as Jainism, and the images that are installed in our temples are the statues or 'photos' of the greatest amongst those who have al-



ready reached nirvana and taught others the way to get there. They are called *Tirthankaras*, literally, the makers or founders of a *tirtha*, a formidable channel or passage (across the ocean of births and deaths).

How did they cross the sea of *samsara* themselves? By curbing their fleshly lusts and by purifying and perfecting their souls. We, too, have got to tread the path they trod, if we would attain to the heights they have attained. In a word, the *Tirthankaras* are as models of perfection for our souls to copy and to walk in the footsteps of. Their images are kept in the temples to constantly remind us of our high ideal, and to inspire us with faith and confidence in our own souls. As for their worship, they have no desire to be worshipped by us; their perfection is immeasurably greater than we can praise; they are full and perfect in their *wholeness*. We offer them the devotion of our hearts, because in the initial stages of the 'journey' it is the most potent if not the only means of making steady progress.

It is not mere hero-worship, though worship of a hero is transcendental admiration. As Carlyle put it, it is something more; we admire what we ourselves aspire

this of admiration for one higher than himself dwells in the breast of man. It is to this hour, and at all hour, and at all hours, the vivifying influence in man's life. ... Hero-worship endures for ever while man endures. Boswell venerates his Johnson, right truly even in the Eighteenth century. The unbelieving French believe in their Voltaire; and burst out round him into very curious Hero-worship, in that last act of his life when they stifle him under roses At Paris his carriage is the nucleus of a comet, whose train fills whole streets. The ladies pluck a hair, or two from his fur, to keep it as a sacred relic. There was nothing highest, beautiful-st, noblest in all France, that did not feel this man to be higher, beautifuler, nobler. ... It will ever be so. We all love great men; love, venerate and bow down submissive before great men: may can we honestly bow down to anything else? Ah, does not every true man feel that he is himself made higher by doing reverence to what is really above him? No nobler or more blessed feeling dwells in man's heart. And to me it is very cheering to consider that no sceptical logic, or general unbelief, in-in-cirity and aridity of any. Time and its influence can not destroy this noble inborn loyalty and worship that is in men It is an eternal corner-stone, from which they can begin to build themselves up. That man in some sense of other, worship hero; that we all of us reverence and must ever reverence Great Men; this is, to me, the living rock amid all rushings-down what is better."

they illuminate the whole neighbourhood; they place garlands of flowers on the object of their adoration. Is it idolatry they practise? Are they idolators? No, no, such a thing is simply impossible; no one can accuse the English of idolatry! It is not worshipping the block of stone; they ask nothing from it; they offer it no food, nor do they pray to it. If you look more closely into their 'statue-worship', you will find it to be the adoration of a something which the figure is a symbol of. It is not statue of Nelson they assemble to worship, but the spirit of the brave man, the fearless sailor, who made England what she is today—the acknowledged Queen of the Seas. The English are a nation of sailors; take away their seapower, and they are gone. But for the glorious achievements of the British navy, England would have been overrun by Germany today. The English know it, and pour forth, spontaneously, almost unconsciously, the warmest devotion of their free hearts on the one being who saved them from utter ruin in the past. But if Nelson himself was able to save England from destruction only once, his inspiration has been her salvation not once, nor twice, but

repeatedly. The great sailor is now dead; he may no longer command the fleet of England in the hour of danger; he may win no more laurels for himself or victories for his country; but his spirit and influence survive. For there is not a sailor lad in the whole of the United Kingdom who does not brighten up at the mention of Nelson's name, who does not reverently recognise him as a model of greatness for himself, who does not draw powerful inspiration from his life. The nation that placed the statue of this great man in a conspicuous part of the capital of their country knew that they were not merely erecting a statue to the memory of a dead man, but *laying the foundation stone of their own greatness* for generations to come.

Such is the true significance of 'Nelson-worship' which takes place on the Trafalgar Day annually. It is not idolatry that we can charge against the English, but *idealatry*, which, if a fault, is one that has been the source of unparalleled greatness to the cult!

The Jaina form of worship is, similarly, an instance of *idealatry*, for devotion to God in Jainism only means devotion to the attributes of divinity which the devotee

wishes to develope in his own soul, and consists in the blending of the fullest measure of love and respect for those Great Ones who have evolved out those very attributes to perfection in their own case. The Jains ask for nothing from their Tirthankaras; no prayers are ever offered to them, nor are they supposed to be granting boons to their devotees. They are not worshipped because worship is pleasing to them, but because it is the source of the greatest good—the attainment of godly perfection—to our own souls. As said in the "Key of Knowledge", the causal connection between the ideal of the soul and the worshipping of those who have already realized it is to be found in the fact that the realization of an ideal demands one's whole-hearted attention, and is only possible by following in the footsteps of those who have actually reached the goal. How well does the poet chant :-

"Lives of great men all remind us,

We can make our lives sublime,

And, departing, leave behind us

Footprints on the sands of time;

Footprints that perhaps another,

Stilling his life's solemn march—

A forlorn and shipwrecked brother,

Seeing, shall take heart again."

Sri Jain Dharma Ki Jai.

C. Rai Jain.

सदाचरण ।

१. अपना आयुष्य सदाचरणमें व्यतीत करना यह मनुष्यका मुख्य धर्म है ।

२. जो मनुष्य प्रामाणिक है, वह सर्वलोकमें मान प्राप्त करता है ।

३. तुम अपने साथ अन्य मनुष्यका जिस प्रकार व्यवहार चाहते हो, उसी प्रकार तुम उसके साथ करो ।

४. दुराचरणी मनुष्यका कमी भी भला होनेवाला नहीं ।

५. दुष्ट कर्म करनेवाले मनुष्योंका बहुप्पन बहुत दिन तक नहीं रहता ।

६. दुराचरणसे पृथक् रहना, यह बुद्धिमान मनुष्यका धर्म है ।

७. बुरे कामोंसे अनेक प्रकारका नुकसान होता है ।

८. पूर्व-पहिलेकी चाल-व्यवहार छोड़ना नहीं, लेकिन पीछेकी सराव चाल-व्यवहार अवश्य छोड़ना ।

९. जलमें शरीर डाला जाता है, परन्तु सदबुद्धिके बिना आत्मा पवित्र नहीं होती ।

१०. जिसको सराव कर्म एकान्तमें नहीं लगाने वह मनुष्य मंदली-समादिमें बहुत लज्जित होगा ।

११. दुश्मनकी अपेक्षा अपना थोड़ा पाप होना भी पाप करनेका संतोष कदापि मानना नहीं ।

१२. जैसे शरीरके ऊपर फोड़ा हो तब तक निगेमिता नहीं तैसे, तब तक अपनेमें दुश्मन हो तब तक गुप्ती नहीं ।

सतीशचन्द्र गुप्त ।



(लेखक:-बाबू सुरजभानु बकौल, देवपदर ।)

पेट भरनेके लिये रोटी बनाना एक बहुत ही जरूरी काम है, परन्तु यदि कोई आटा दाल मोल लाकर, कुण्डसे पानी भरकर, चूल्हेमें आग जलाकर और धुणमें बैठकर खूब जी लगाकर रोटी बनावे और ३६ प्रकारके भोजन तय्यार करे परन्तु भोजन तय्यार करना ही काफी समझ बैठे और खावे नहीं तो वह गरूर भूखा ही रहेगा और भोजन बनानेके लिये उसका दो पहर तक मिहनत करना कुछ भी कार्यकारी न होगा । इस ही प्रकार विद्या प्राप्तिके वास्ते छः घंटे स्कूलमें जाकर बैठना जरूरी है परन्तु यदि कोई स्कूलमें जाकर बैठ जाना ही काफी समझे और एक भी अक्षर न पढ़े तो चाहे वह सारी उमर पाठशालामें जाता रहे परन्तु वह जगपढ़ ही रहेगा और उसका नित्य स्कूल जाना बिल्कुल ही निरर्थक बल्कि उलटा समयको बर्बाद करना ही होगा । इस ही प्रकार बनियेके घेदके रुपया कमानेके लिये बानरमें दूकान सोलकर बैठना जरूरी है; परन्तु यदि कोई दूकान सोलकर तो बैठ जाय और दूकानमें सौदा एक पैसेका भी न रखे वा सौदा चाहे लाखों रुपयेका दूकानमें भर ले पर बेंचे नहीं तो उसको इस दूकानेके खोलनेसे एक कौड़ीका भी नफा न होगा बल्कि कुछ नुकसान ही रहेगा ।

इस ही प्रकार अपनी आत्माकी उन्नति और धर्मका लाभ प्राप्त करनेके वास्ते देव गुरु शास्त्रकी भक्ति करना बड़ा जरूरी है क्योंकि इनसे ही हमको अपने कल्याणका सच्चा मार्ग मालूम होगा और उस मार्ग पर चलकर हम अपने पापोंका नाश और पुण्यकी प्राप्ति कर सकेंगे, परन्तु यदि हम केवल भक्ति ही भक्ति करते रहें और उस मार्गकी तलाश न करें जिसपर हमको चलना चाहिये अर्थात् अपने आचरणोंको ठीक करने और अपने परिणामोंको दुरुस्त बनानेकी कुछ भी कोशिश न करें तो हमारी यह भक्ति बिल्कुल व्यर्थ और निरर्थक ही रहेगी, यदि हम अहमारी वा संदूकोंमें बन्द जैन शास्त्रोंको दूरसेही नमस्कार कर लिया करें वा सुंदर घेठनमें बांधकर और सोने चांदीकी ऊंची वेदीपर रखकर नित्य अष्ट द्रव्यसे उनकी पूजा कर लिया करें परन्तु उनको सोलकर पढ़ने और समझनेका कष्ट उठाना पसन्द न करें वा यदि पढ़ें भी तो उनका अर्थ समझे विद्वान ही प्राकृत वा संस्कृतके श्लोक वा सूत्र कंठ याद कर लिया करें वा यदि स्वयम् पढ़े हुए न हों तो दूसरोंसे पढ़वाकर सुन लिया करें जैसा कि आजकल बहुत जगहोंमें स्त्रियां नित्य सुबहको श्रीमंदिरजीमें दसाध्याय सूत्र वा भक्तामर आदि स्तोत्रका पाठ सुननेको बैठ जाया करती हैं, तो इस प्रकारकी शास्त्रभक्तिसे तो हमारी आत्माका कुछभी भाल न होगा, हमारी आत्मा तो ज्योंकी त्यो वैसी ही बनी रहेगी जैसी कि पहले थी ।

इस ही प्रकार यदि हम श्रीगुरु अर्थात् श्री दिगम्बर मुनि वा ऐहिक बुद्धक वल्लभचारी व्रती

सम्यक्ती वा पांडे भट्टारक आदिकी अनेक प्रकार की सेवा ठहल किया करें और रात दिन उनके पैर दवाया करें परन्तु उनके उत्तम आचरणों-वो देखकर अपने आचरणोंको ठीक करने और पाप क्रियाओं छोड़कर शुभ परिणाम बना नेकी तरफ नुरा भी ध्यान न दें वलिक यह ही श्रद्धा रखें कि गुरु महारानकी सेवा करनेसे ही हम अनेक पाप करते हुए भी पार उतर जावेंगे तो हमारी यह श्रद्धा भ्रम मात्र ही होगी और उनकी सेवासे हमारा कुछभी कार्य सिद्ध न होगा । इस ही प्रकार यदि हम नित्य श्रीतीर्थकर भगवानकी पूजा उत्तम २ पदार्थोंसे किया करें उनके लिये नित्य ताजे २ घेवर और लाड़ बनाया करें, मीठे २ सेव नारंगी केला अमरुद्ध तोड़कर लाया करें, तुरतके खिले २ चमेडीके सुगंधित फूल चढ़ाया करें और इस अपने चंदावेकी सौ २ गुनी तारीफ गाया करें परन्तु यदि हम इस पूजासे श्री भगवानके कुछ भी गुण अपनेमें पैदा करनेकी कोशिश नहीं करते हैं वलिक केवल उनकी पूजासे ही पार हो जाना चाहते हैं तो हमारी बिल्कुल ही भूल और गल्ती है, ऐसी श्रद्धासे सिवाय नुकसानके और कुछ भी नहीं होता है क्योंकि ऐसी दशामें हम पूजन करके ही संतुष्ट हो जाते हैं और अपने आचरणोंको सुधारनेके लिये बिल्कुल बेफिकर हो जाते हैं ।

ऐन धर्ममें नमस्कार मंत्रका पढ़ा माहात्म्य जाना गया है और जाना ही जाना चाहिये क्योंकि इस मंत्रमें अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और माधु इन पांच परमेष्टीको नम-

स्कार किया गया है जो आत्माकी उस उन्नत अवस्थाके सच्चे उदाहरण हैं जिसको कि धर्मात्मा पुरुष प्राप्त करना चाहते हैं अर्थात् जीवके कल्याणके वास्ते यही ही पांचों परमेष्टी सर्वोत्कृष्ट आदर्श हैं और यह ही पांचों आत्मीक अति उत्तम गुणोंके भण्डार हैं; इस कारण अपनी आत्माके असली गुण प्राप्त करनेकी इच्छा रखनेवालोंको परमावश्यक है कि वह इन पांचों प्रकारके महान आत्माओंका चिन्तन और प्रतिष्ठा सदा अपने हृदयमें बनाये रखें और उनके गुणोंको याद कर करके स्वयम् भी वैसे ही गुण प्राप्त करनेकी प्रेरणा अपने आपको करते रहें जैसा कि तत्त्वार्थ सूत्रकी आदिमें ग्रन्थकर्ताने श्री भगवानको नमस्कार करते हुए कहा है :

मोक्षमार्गेत्य नेताराम् भेत्ताराम् कर्मभूतान् ।

जाताराम् विश्वतत्त्वानाम् चन्दे तद्गुणलब्धये ॥

अर्थात् मोक्षमार्गके बतानेवाले, कर्मोंके भारी पहाड़को तोड़नेवाले और संसार भरके पदार्थोंको जाननेवाले श्री भगवानकी बन्दनामें उन गुणोंकी प्राप्तिके वास्ते करता हूं । यदि हम पंच नमस्कार मंत्रका जाप करते समय इस बातका कुछ भी खयाल न रखें कि इन पांचों महान आत्माओंके क्या गुण हैं और न उन गुणोंको स्वयम् प्राप्त करनेकी कुछ कोशिश करें, केवल उनको नमस्कार ही कर लिया करें अर्थात् नमस्कार मंत्रकी माला ही जप लिया करें तो हमको कुछ भी फायदा न होगा, जैसा कि यदि एक विद्यार्थी प्रतिदिन अपने अध्यापकोंके घर ना जाकर सुपर शाम उनको दत्ताम फर आया कर और

अपने घर बैठा २ भी उनका नाम रटता रहा करे और उनके नामकी पूजा भी किया करे और दुनिया भरमें उनकी बड़ाई भी गाता फिरा करे परन्तु स्वयम् एक अक्षर भी पढ़नेकी कोशिश न करे बल्कि अपने अध्यापकोंको प्रणाम करने, उनका नाम जपने, उनकी पूजा प्रतिष्ठा करने और उनकी बड़ाई गाते फिरनेको ही विद्या प्राप्ति का कारण जानकर यह समझता रहे कि मैं तो विद्या प्राप्तिमें बहुत कुछ कोशिश कर रहा हूँ और बहुत कुछ कर चुका हूँ तो उसका ऐसा समझना उसको कुछ भी फायदा नहीं पहुंचावेगा, इस ही प्रकार यदि कोई विद्यार्थी सारे दिन बड़ी २ पुस्तकें बगलमें दबाये फिरा करे परन्तु उनको खोल कर कभी एक अक्षर भी न पढ़े तो उसको कुछ भी पढ़ना न आवेगा, वह तो व्यर्थ ही पुस्तकोंका बोझा उठाये फिरता है।

भक्तिके इस प्रश्नकी यदि हम अन्य मतियोंके सिद्धांतके अनुसार भी जांचे जो ईश्वरको जगत्का पैदा करनेवाला, प्रबन्ध कर्ता और शासक मानते हैं तो भी यह ही परिणाम निकलता है क्योंकि यदि कोई ब्रह्माश आदमी जो चोरी डाका व्यभिचार आदि सब ही अपराध करता हो और नित्य प्रजाको दुख ही देता हो और इस प्रकार मनुष्य जातिकी शांति भंग करता हो यह यदि अपने सुनैके हाकिमके पास जाने लगे और नाना प्रकारकी बहु मूल्य डाली और तुहफे देकर और सब प्रकारकी खुशामद और स्तुति द्वारा उस हाकिमको प्रसन्न करनेकी कोशिश करने लगे और सुबह शाम उस हाकिमकी हाजरी देकर और सब प्रकारकी उसकी दहलू सेवा करके

यह आशा रखने लगे कि मेरे इन कृत्योंसे हाकिमकी आंखोंपर चर्बी फिर जावेगी और वह मेरी तरफसे बिल्कुल ही धंधा होकर मेरे दोषों और मेरे किये हुए महान उपद्रवोंकी तरफ कुछ भी ध्यान न देगा बल्कि अति प्रसन्न होकर मुझसे बहुत ही ज्यादा प्यार करने लगेगा और अपने मातहत छोटे हाकिमों अर्थात् तहसील्दारों और थानेदारोंको भी यह आशा लिख भेजेगा कि यह पुरुष हमारा पसमन्न प्यार है इस कारण यह चाहे कैसा भी महान अपराध करे चाहे जैसा भी उपद्रव मचावे और अशान्ति फैलावे तो भी इसको बिल्कुल नहीं टोकना चाहिये और सब कुछ अपराध करने देना चाहिये बल्कि यदि वह इन छोटे कामोंमें तुमसे सहायता चाहे तो यथासम्भव उसको सहायता भी देते रहना चाहिये इत्यादिक अन्य भी अनेक प्रकारकी आशा यदि वह दोषी पुरुष अपने सुनैके हाकिमकी तरफसे अपने मनमें बांध ले तो क्या उसकी यह सब आशायें झूठी नहीं हैं ? क्या वह इस प्रकारकी अपनी व्यर्थकी आशाओंके धोखेमें आकर और निश्चिन्तताके साथ दोषोंमें लगकर शीघ्र ही नहीं पकड़ा जावेगा और बहुत कड़ा दंड नहीं उठावेगा ? अवश्य उठावेगा और यदि हाकिमको यह भी मालूम हो जावेगा कि हमसे अपनी सेवा भक्तिका नाता जोड़कर और हम पर निश्चिन्त होकर ही इसने यह सब अपराध निर्भय होकर किये हैं तब तो उसको सर्व साधारणसे भी अधिक दंड दिया जावेगा और वह जेलखानेमें ही पड़ा २ सड़कर मर जावेगा ।

इस उपरोक्त दृष्टान्तमें यदि कोई हाकिम ऐसा हो जो अपनी सेवा भक्ती करनेवाले चोर वदमाशका पक्ष करने लगे अर्थात् उसको दंड न दिया करे तो क्या वह हाकिम महाअन्यायी और महान् उपद्रव और अशान्ति फैलानेवाला और प्रजाको महान् दुखोंमें डालनेवाला नहीं है? अवश्य वह ऐसा ही है और अति आवश्यक और जरूरी है कि प्रजाउसके विरुद्ध उठे और उसके उच्चाधिकारी बड़े अफसरसे उसकी शिकायत करके उसको हाकिमीसे अलग करादे और यदि वह हाकिम कोई स्वतन्त्र राजा हो तो उसको अपना राजा न मान कर किसी दूसरेको ही अपना राजा बनानेकी कोशिश करे, ऐसे हाकिम व ऐसे अन्यायी राजाके वास्ते प्रजाने सदा ऐसा ही किया है और प्रजाको लाचार होकर ऐसा ही करना पड़ता है ।

अब असली बातका विचार कीजिये कि यदि हम इस ही प्रकार अपने आचरणोंके सुधारनेकी कोशिश न करें बल्कि परम पिता परमेश्वरको सर्वे शक्तिमान मानकर उसकी ही गुशाबद्ध और गुणगानमें लगे रहें और बड़ी भक्तिके साथ उसको फूल पत्ते वा जल चढ़ते रहें वा उसके नाम पर किसी प्रकारकी बलि देते रहें वा उसको गुप्त बढ़िया २ नैवेद्यका भोग कराते रहें अर्थात् ताजा २ मिष्ठान चढ़ाते रहें और सोते नागने उठने बैठने आठ पहर नीसठ पड़ी उग ही वा नाम रटते रहें तो क्या वह परमेश्वर हममें हजार अवगुण होते हुए भी केवल हमारी भक्ति ही से हम पर प्रसन्न हो जायगा और हमको अपना

प्यारा मानकर हमारे सब अपराध क्षमा कर देगा और अग्नि वायु जल पृथिवी और सूरज चांद आदि सब ही देवताओंके नाम आज्ञा कर देगा कि यह पुरुष हमारा परमभक्त है इस कारण यह चाहे कुछ भी दोष करे, हमारी आज्ञाओंको गंग करके संसारमें चाहे कितना भी उपद्रव मचावे जैसी चाहे अशान्ति फैलावे और संसारके जीवोंको चाहे जितना भी कष्ट पहुंचावे परन्तु इस हमारे प्यारेको कोई भी कष्ट न होना चाहिये अर्थात् इसके सब अवगुणोंको गुण ही समझना चाहिये और इसके सब कार्य सफल ही होते रहने चाहिये ।

हमारी समझमें तो दुनिया भरमें कोई भी ऐसा मत वा धर्म वा सम्प्रदाय वा आम्नाय नहीं है जो अपने परमेश्वरका ऐसा स्वरूप मानती हो अर्थात् जो ऐसे परमेश्वरको मानते हों जो सेवा भक्ति पूजा पाठ और गुशानन्द आदिसे खुश होकर अपराधीको दंड न देता हो और उसको स्वतन्त्रताके साथ अपराध करने देता हो और अपराध करते हुए भी केवल उसकी सेवा भक्तिके कारण ही उसकी सहायता करता हो । हाकिमके दृष्टान्तमें तो यह सम्भव भी है कि कोई अयोग्य पुरुष हाकिम बन जावे और वह अपनी सेवा भक्ति वा गुशानन्दके कारण किसी वदमाशकी रियायत करने लगे परन्तु परमेश्वरके विषयमें तो यह

कमी करें उसके शुभ कर्मों और अच्छे चारित्र्योंको भी तुच्छ मानकर उससे अप्रसन्न ही रहे, ऐसा मानना तो परमेश्वरमें दोष लगाना है और महान अपराध करना ही है, उस परमेश्वरको तो सब ही लोग पूरा पूरा न्यायकारी और और सदाचारी मानते हैं, उसमें तो कोई भी किसी प्रकारका दोष नहीं लगाता है ।

इससे स्पष्ट सिद्ध है कि परमेश्वरको संसारका प्रबन्धकर्ता माननेकी दशमें भी लोगोंको अपने आचरणोंका ठीक रखना ही जरूरी है अर्थात् सदाचारी बनकर ही परमेश्वरकी प्रसन्नता प्राप्त करनेकी कोशिश करनी चाहिये और बहकाये फुसलाये वा खुशामदमें आकर सेवा भक्ति करनेवालोंकी तरफदारी करने जैसे महान दोषोंको उस परम पवित्र परमात्माके मध्ये न शोषकर बल्कि उसको सर्वोत्तम गुणोंका धारी ही मानकर और उसके ऐसे ही गुणोंका गीत गाकर स्वयम् भी वह ही गुण प्राप्त करनेकी अर्थात् शुद्धाचरणी और गुणवान बनने और अब गुणोंको छोड़नेकी ही कोशिश करते रहना चाहिये ।

परन्तु इस समय देखनेमें यह आ रहा है कि रागद्वेषसे रहित परम वीतरागी परमात्माको माननेवाले जैनी और दुनियाको बनाने और उसके प्रबन्धमें लगा रहनेवाले कर्ता परमेश्वरको माननेवाले अन्यमती भी अर्थात् सारी दुनिया ही और विशेष कर हिन्दुस्तानके लोग तो अवश्यही अपने आचरणोंको सुधारने और योग्य बनानेकी तरफ कुछ भी ध्यान नहीं देते हैं बल्कि अपने इष्ट देवकी भक्ति करने अर्थात्

चढ़ावे और खुशामदसे ही उसको राजी करके अपने कार्योंकी सिद्धिकी कोशिश करते रहते हैं और “ प्रभु मेरे औगुण मत न चितारो गुझे अपना जानकर तारो ” इत्यादिक भावना भाते रहते हैं । फल इस प्रकारकी भावनाओंका यह हो रहा है कि चारों तरफ पाप ही पाप फैल रहा है, और दो सगे भाइयोंमें भी आपसमें एक दूसरेका विश्वास नहीं किया जाता है और सबको हरबक्त सचही मनुष्योंसे अपनी सचही चीजोंकी रखवाली करनी पड़ रही है और सचहीसे पापकी शंका बनी रहती है । भावाये-संसारमें घोर अंधकार फैला हुआ है और अनेक धर्म प्रचलित होते हुये भी और सचही मनुष्योंका अपने २ धर्मको अधिक कल्याणकारी बताते हुए भी और अपने २ धर्मपर पूरी श्रद्धा रखते हुए भी और कुछ धर्म सेवा और पूजा भक्ति होते हुए भी, सचही धर्मोंके लोग आचरणके विषयमें एक ही प्रकारके दिखाई देते हैं और सचही अविद्वत्तासे योग्य बने हुए हैं । किसीभी कल्याणकारी धर्मके लोग ऐसे नहीं हैं जो अपने आचरणोंमें अन्य धर्मवालोंकी अपेक्षा अच्छे माने जाते हों और संसारमें विश्वासके पात्र बन गये हों, बल्कि छल कपट धोका फरेव आदि सचही प्रकारके पाप कार्य सर्वही मतेकि लोगोंमें देखनेमें आ रहे हैं और सचहीमें पाप कार्योंका प्रचार हो रहा है । कारण इसका सिवाय इसके और कुछ भी नहीं है कि सचही मतोंके लोगोंने अपने २ परमेश्वर वा परमात्माका भेद वा खुशामद आदिस उस ही प्रकार प्रसन्न हो जाना मान लिया है जिस प्रकार कि ध्यान

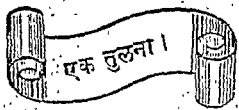
कलके मामूली आदमी प्रसन्न हो जाता है और उस परमेश्वरके द्वारा ही सर्व कार्योंकी सिद्धि समझकर एक मात्र भेंट देने चढ़ावा चढ़ाने और स्तुति गाने अर्थात् खुशामद करने पर ही भरोसा कर बैठे हैं और अपने आचरणोंका ठीक करना बिल्कुलही छोड़ दिया है । अन्य मतोंकी वास्तव तो हम विशेष नहीं कह सकते परन्तु जैनधर्म तो स्पष्ट शब्दोंमें साफ २ यह ही कहता है और यह ही इस धर्मका मूल और महत्व है कि परम परमात्मा अर्थात् श्री अरिहंत सिद्ध तो रागद्वेषसे रहित परम वैरागी, हैं उनको तो न किसीकी बुराईसे मतलब है न भलाईसे, वह तो कृतकृत्य हो गये हैं अर्थात् उनको तो अब कुछ भी करना बाकी नहीं है, वह तो अब न किसीका बिगाड़ करते हैं और न सुधार, इस कारण उनकी सेवा भक्ति और पूजा पाठ तो उनको प्रमत्त करने और उनसे किसी कार्यके सिद्ध करानेके वास्ते नहीं है बल्कि अपने परिणामोंको सुधारने और अपने आचरणोंको ठीक करनेके वास्ते ही है अर्थात् मुख्य कर्तव्य तो हमारा अपने आपको ठीक करना है और परमात्माकी भक्ति भी अपने आपको ठीक करनेका एक कारण है । इस वास्ते हमको भक्ति ऐसी ही विधिसे करनी चाहिये जिससे हमारा आपा सुधरे अर्थात् हम सदाचारणी बनें । इस ही कारण गप तप पूजा पाठ और सेवा भक्ति करनेसे बिकार हमारा आरा सुधरता जाना हो अर्थात् हम सदाचारणी बनने जानें हैं उतना ही अपने गप तप पूजा पाठ और सेवा भक्तिको ठीक रीतिसे होना समझने रहना

चाहिये और जिस रीतिसे जप तप पूजा पाठ आदि करनेमें अपने आचरण कुछ भी ठीक न होते हों बल्कि ज्योंके त्यों बने रहते हों भक्ति की उस रीतिको व्यर्थ बल्कि धर्मके विरुद्ध निरादोंग ही समझना चाहिये ।

सच तो यह है कि जब तक हमारा भक्ति मार्ग ठीक नहीं होगा अर्थात् जब तक सब लोग भक्तिके असली अभिप्राय और भक्तिके द्वारा उस अभिप्रायके प्राप्त करनेकी विधिको नहीं समझेंगे और उस हीके अनुसार चलनेकी कोशिश नहीं करने लेंगे तब तक तो मानो सच्चा धर्म ही संसारमें फैला हुआ नहीं है बल्कि धर्मका आभास है जिसके धोखेमें आकर लोग हानि उठा रहे हैं और लोगोंका आचरण पतित हो रहा है, इस कारण विद्वानों परोपकारियों और सच्चे धर्मात्माओंको उचित है कि वह भक्तिमार्गके अभिप्राय और उसकी विधिको सर्व साधारण पर प्रकट कर देने और उनको अच्छी तरह समझाकर उस सच्चे और असली मार्ग पर लक्ष्य देनेकी पूरी २ कोशिश करें जिससे संसारमें सदाचार और सद्गुण फैलकर इस जगतमें भी सुख, शांतिकी वृद्धि हो और आगेकी भी लोगोंका कल्याण हो ।

नमोस्तु केशर

मथ्यार छे. फल जने नमूना मफत मोक-
लवामां आवे छे. असल फन्गुरी, गुना
ममीरा, शुद्ध शिलाजीत, अंगुरीदिया, शाह-
मोरा, मुनपित धूप देशी करनीग, लोह,
पट्टे ई० विद्यापते मोकलवानां आवे छे.
करनाम सुनि, पं. १८ श्रीनगर.



महात्मा गांधी और लोकमान्य तिलक

(लेखक जुगमन्दरलाल जैन, सुत)

अकबर और औरंगजेब दोनोंकी परस्पर तुलनाके निबन्ध लिखवाना प्रारम्भिक शालाओंमें साधारण बात है । मरणके पश्चात् शताब्दियों बीत जाने पर भय, स्वार्थ, पक्षपात, राग और द्वेष दूर हो जाते हैं । भूतकालके महान पुरुषोंकी सत्य तुलना करना निष्पक्ष, निस्वार्थ और निभयता कालान्तरमें प्राप्त होनेसे सरल हो जाता है; परन्तु इसके विपरीत समकालीन महापुरुषोंकी सत्य तुलना करना कठिन है । उनकी अतिशय समीपता होनेसे उनके कार्यका समदर्शन तथा पूर्ण दर्शन जैसा होना चाहिये नहीं होता । अतएव परीक्षा (एनेदोगी) तो यथायोग्य भूतपूर्वोंकी ही हो सकती है । तुलना भी अंतरगात्र परीक्षाके सदृश ही होती है । इस कारण लोकमान्य तिलक और महात्मा गांधीकी तुलना करना एक प्रकारसे दुःसाहस ही है । चाहे जो हो ऐसा करनेका कारण यही है कि उन्होंने अब तक जो पराक्रम प्रगट किया है वह वर्तमानकालसे सम्बन्ध रखते हुए भी उस पर भूतकालका भी स्वामित्व है और उससे ही उनका सुंदर जीवन चरित्र और उनसे पुष्कल एवं प्रचंड कार्य हो सके हैं । वे भारतखंडकी रंगभूमिमें इतने विस्तृत कालमें परिचित हैं कि

अब उनके गुण एवं दोषोंपर किसी प्रकारका आवरण नहीं है । जीवनके कसौट्य तो वे अभीसे कर रहे हैं । वानप्रस्थके योग्य, वानप्रस्थ होनेके लिये एवं उसके पूर्व जो कार्य करना चाहिये थे उससे भी अधिक वह कभीके कर चुके हैं । उनके ऊपर अब देशका कोई ऋण नहीं है । गांधीजी कालकी अपेक्षा अभी युवा हैं परन्तु अन्तिम २० वर्षोंसे उन्होंने शतायुवालेके सदृश कार्य किया है, उनके वर्तमान जीवनने एक नवीन रंग एवं नवीन रूपही प्राप्त कर लिया है । दोनों जो कार्य कर रहे हैं वह मात्र मुनाफेका है, देशको पुरस्कार रूप है और भूतकालका अनुसन्धान है । तात्पर्य यह है कि उनके जीवनमें कार्य करनेकी इतनी भरमार रही है जिससे उनके तुलनात्मक गुण दोषोंका विचार करनेके लिये पूर्ण सामग्री मिल चुकी है इस विषयमें तो कोई सन्देह ही नहीं ।

दोनों भारतखंडके अनमोल हीरो हैं, एक गुर्जरराष्ट्रकी खानिसे दूसरा महाराष्ट्रकी खानिसे निकला है । यह कोई अत्युक्ति नहीं है कि भारतवर्षके नेताओंमें उनके आगे शिर झुकाने और चरणस्पर्श करनेवाले विद्वान एवं अविद्वानोंकी जितनी संख्या है उतनी किसी अन्य नेताके अनुयायियोंकी नहीं है । यही क्यों यदि आवश्यकता पड़े तो उनके पीछे प्राणतक देनेवाले तैयार हैं । तथा आत्मभोग देनेवाले उत्साहकी शरीरमें फूटनेवाली शक्ति पर भी इन्हींका आधिपत्य है । इन दोनों महापुरुषोंसे अधिक प्रखर विद्वान, प्रभावशाली वक्ता बड़े २ फुट एकत्र करनेवाले, दान देनेवाले,



दान देनेवाले, सुंदर लेख एवं पुस्तक लिखने वाले एकसे एक होंगे; परन्तु वास्तविक नेता होनेकी कसौटी यही है कि प्रजा उनके विचारोंको माने या न माने परन्तु उनकी सूचना-आज्ञारूप मानकर जहां-पहाड़ या घाटी जैसे दुर्गम स्थानको वे जानेको कहें, जिस दिशामें वे अंगुली मात्र उठा दें उस दिशामें उत्साह पूर्वक जानेको तैयार हो जाय। यह शक्ति दोनोंमेंही है। उतनी या उससे आधी भी भारतके किसी दूसरे नेतामें कहना अशक्य है। यह शक्ति उनमें जन्मके साथ ही आई है। वह आजकी नहीं है। उन दोनोंमें परस्पर विलक्षणता होते हुए भी उनका प्रजापर किस कारणसे अद्भुत प्रभाव पड़ता है इसीकी खोज करना है—उनमें कौनसी विलक्षणता है यही देखना है।

प्रथम दून दोनों महापुरुषोंमें कितने गुण समान हैं और पुनः कितने भिन्न एवं विरोधी हैं उसीका हम अन्वेषण करेंगे।

देशके प्रति दोनोंमें समान भाव है। देशके लिये तो महात्मा गांधीने सर्वस्व ही अर्पण कर दिया है। परन्तु लो० तिलकनेभी कुछ कम नहीं किया। उनकी आयका माधन 'केसरी' पत्र है जिसमें अच्छी आय होती है, परन्तु वह सर्व साधारणकी अपेक्षा ही अधिक है। उसमें लोकमान्य तिलकका आर्थिक व्यवहार मर्यादित रीतिमें चलता है परन्तु श्रीमंत बनना उनकी स्वप्नमें भी अच्छा नहीं मानस होता।

दोनों ही विनयमान्यकी धारण करनेके समय तक उनकी अम्मीदार करनेवाले हैं—विनयमान्य प्रारम्भ कर मानव शक्तिके अंत तक विनय प्राप्त

करते हैं, अपने उद्देश्यको पूर्ण करने पर ही विश्राम और निद्रा लेते हैं। यह दोनोंमें समान लक्षण है।

दोनोंमें ही एक दूसरा लक्षण सादेपनसे रहनेका है। वास्तवमें म० गांधी व्यवहारिक रीतिमें सन्यासी होनेसे चढ़ जाते हैं। उसमें भी शारीरिक कष्ट सहनेकी शक्ति मान्यवर तिलककी अपेक्षा अधिक है। विशेष कर म० गांधीके शरीरमें मांसकी अधिकता न होनेसे, हलका और लम्बा शरीर एवं आयु उनकी युवा प्रगट करनेमें सहायता देती है। तृतीय अवस्थाका हाड़ मांस-तिलक महाराजका स्थूल और मूत्र रोगसे पीड़ित शरीर शारीरिक कष्ट शायद ही सहन कर सके। यात्रा करनेमें वे प्रथमावस्थाके समान ही हैं। भोजन वस्त्रकी आवश्यकता दोनोंको ही कम है। यदि म० गांधीको तौला जाय तो लो० तिलक ही क्या मत्र ही उनसे वजनमें अधिक निकलेंगे। सादेपन और आवश्यकताओंकी कमीने म० गांधीको एक प्रधान प्रश्न, एक कला, एक अस्त्र विग्रहका एक दास्य ही बना दिया है। लो० तिलकने मात्र सुभीता एवं कदाचन राजनीतिक एक अंगके समान समझ कर उसको ग्रहण किया है। दोनों ही अपने-अपने देशके स्वदेशी वस्त्र पहनने हैं और विदेशी वस्त्रकी तो बात ही क्या विदेशी हांड छांदका स्पर्श भी उसमें नहीं होने देते हैं।

निर्ममदेह शिवा मयवर्धी प्रहरजमें लो० तिलक मरुतहीमें महात्मा गांधीमे बह जाने हैं। म० गांधी तो बिना नियम और श्रम शिके जम्माही हैं और सर्व धर्मोंके मिश्रण

समान पर विचारपूर्वक निरीक्षण किये हैं। परन्तु लो० तिलकको संस्कृत साहित्यका विशेष कर आर्यधर्मका ज्ञान अधिक है। इसका 'गीता भाष्य' स्मारक है, 'ओरायन' आदि अंग्रेजी पुस्तकें इसकी उदाहरण स्वरूप हैं। गांधीजी विद्वान नहीं हैं यह बात नहीं, उनकी गुजराती भाषाकी परिमार्जिता अच्छे २ विद्वानोंके हृदयको शीतल कर देती है। म० गांधीमें अभ्यासके शुभक पांडित्यकी अपेक्षा विचार और मनन विशेष है। यही गुण उन को अन्य विद्वानोंसे पृथक् करता है।

दोनों ही देशोन्नतिके समान और पूर्ण भक्त हैं—परन्तु देशोन्नतिकी पद्धतिमें दोनोंके बीच बहुत अन्तर है। शायद उस विरोधका नामनिक्षेप किया जा सके। इन दोनों सुखे और चन्द्रकी विलक्षणताका यहीं पृथ्वीपर अवतारण होता है। म० गांधी जगतकी उन्नतिके एक भागकी तरह भारतकी उन्नतिके इच्छुक हैं उन्नतिमें दूसरेका भाग आना उन्हें त्याग्य है। यही उनके सिद्धान्तका मूल है। केवल राज्योन्नति पर लो० तिलककी अपेक्षा उनकी पट्टांश भी भ्रष्टा नहीं है—राज्योन्नतिको वे आत्मोन्नतिसे गौण मानते हैं और आत्मके विकासमें वे राजनैतिक स्वतंत्रताको एक साधन समझते हैं। राज्य, साध्य और प्राप्ति के पात्र वे मन और आत्माकी उन्नति एवं आत्म-पवित्रताको ही मानते हैं। राजनैतिक उन्नतिको वे सन्पूर्ण सुखके अनेक भागस्वरूप समझते हैं। अन्य प्रकारकी उन्नतिमें उनकी केवल जश्रद्धा ही है ऐसा नहीं, किन्तु वे उनको गौण मानते हैं। और उस प्रकारकी उन्नतियोंके लिये शीघ्रता

करनेकी आवश्यकता नहीं है—उनकी तात्कालिक आवश्यकता नहीं है और जो अन्य प्रकारकी उन्नति कम मात्स्य होती है वे राजनैतिक उन्नति प्राप्त किये बिना कदापि नहीं मिल सकती और राजनैतिक उन्नति ही उसकी प्राप्तिमें सरल साधन और कारण हो पड़ेगी ऐसा उनका मानना है। इन बातोंसे प्रकट होता है कि महात्मा गांधीके विचार व्यापक और सार्वदेशिक हैं। इसके विपरीत लो० तिलकके विचार एक प्रकारके और एक दिशागामी हैं। इसीसे उनकी कार्यपद्धतिमें भेद प्रकट होता है। म० गांधी जिस समय कोई राजनैतिक प्रश्न उठाते हैं तो उसे धर्मका जामा पहिना देते हैं, लो० तिलक जब किसी धार्मिक विषय पर विवेचन करते हैं तब उसको यत्किंचित् राजनैतिक रंगमें रंग देते हैं। म० गांधी राज्यको नीतिका एक अंग गिनते हैं, लो० तिलक धर्मको राज्यके किसी अंशमें समाविष्ट करते हैं। इसीसे लो० तिलककी जो राजनीति है वही म० गांधीकी शुद्ध धर्मनीति है। लो० तिलक केवल साध्य पर एकचित्तसे लक्ष्य रखते हैं और आवश्यकतानुसार छोटे-बड़े सभी साधनोंका उपयोग करते हैं। म० गांधी साधन भी देवपूजाकी सामग्रीके सामन साध्य जैसा ही शुद्ध होना चाहिये और अमुक गुणवाला एवं दोषरहित होना चाहिये यह खोज कर ही उसमें हाथ लगाते हैं। साध्य उत्तम हो तो उसको प्राप्त कानेवाले शक्तों—साधनोंकी शुद्धिके विषयमें बहुत खींचातानी करना लो० तिलक आवश्यक नहीं समझते हैं।

इस दृष्टिसे लोकमान्य तिलक जो करते हैं वह उचित ठहराया जा सकता है परन्तु जिस प्रकार होम करनेवालेको यज्ञमें हल्की गीली, सड़ी लकड़ी होम करनेसे जो खराब धुआं एवं दुर्गन्ध दूसरोंपर पड़ती है उसकी खबर न हो उसी प्रकार लोकमान्य तिलकको उसके प्रकाश करनेमें उसका क्या प्रभाव होगा इसका ख्याल नहीं और न वे इसे महत्व ही देते हैं। इनकी पद्धतिका जो कोई विरोधी हो केवल उसकी ही नहीं विरोधीके पक्षपातीकी भी खबर नहीं। रानाडे और गोखले जैसे महापुरुषोंने लो० तिलककी कार्य पद्धतिको नहीं स्वीकार किया। म० गांधीको उत्तम पुरुषोंको तो क्या दुर्जन मनुष्यको भी बुरा कहना आता नहीं। अहमन्यतासे म० गांधी मुक्त हैं। इसके विपरीत वह लोकमान्य तिलककी रंग रंगमें मौजूद हैं। इसीसे म० गांधीका कोई विरोधी नहीं है जबकि लोकमान्य तिलकके विरोधियोंकी संख्या अधिक है।

कीर्ति, पूज्यभाव, तथा आदरके बिना प्रजापर प्रभाव नहीं पड़ेगा और प्रभाव नहीं पड़े तो हम राजनैतिकोंमें अग्रगण्य न गिने जायेंगे और राजनैतिक उन्नति नहीं कर सकेंगे ऐसी कुछ लो० तिलककी तर्क शृङ्खला है। इसी कारणसे वे प्रजापूजक और प्रजा अनाकारण मानको सदा स्वीकार कर लेते हैं। न्याय करनेकी दृष्टिमें हमको लगना पड़ेगा कि अहंभावसे नहीं किन्तु गरी मायात्मक प्रजा जीव मनुष्य पर आप डालनेके बिना प्रजा-पद्धतिमें वे हम मानको स्वीकार करने हैं। उनकी गाड़ीके घोड़ोंको अलग करके लोग अपने हाथोंसे उसे

खींचे इसमें लोकमान्य तिलकको कोई आग्रह नहीं इसके विरुद्ध; कोई ऐसा करेगा तो हम गाड़ीसे कूद पड़ेंगे ऐसी म० गांधी धमकी देते हैं। तात्पर्य यह है कि लो० तिलकने जब अहंभावको एक राजनैतिक आवश्यकता मानकर उसे स्वीकार किया है। तब म० गांधीने राजसी वस्तु क्षणभरके लिये भी सात्विक नहीं मानी जा सकती इस न्यायसे उसको अस्वीकार किया है। लो० तिलक कृष्ण, चाणक्य और डिमरायलीके शिष्यकी अपेक्षा अधिक हैं और म० गांधी विदुर, युधिष्ठिर, और मेडनी या ग्लेडस्टनके शिष्यकी अपेक्षा अधिक हैं। इनमें चढ़ता कौन और उतरता कौन इसका निर्णय करना इस लेखका विषय नहीं—शायद उसको देखते तो हैं। हमको मात्र तुलना करके भेद ही दर्शानेका संकुचित कार्य करना है जिसे हमने यथाशक्ति किया है।

(गुजराती विचित्र जगतमें प्रसूत)



पड़ेगा मान ।

१. अपने माता पिताका मान रखने रहना ही मानो ईश्वरका आशीर्वाद है।
२. माता पिता, गुरु और मानिक जो काम करें वह शीघ्र करना बाधना करना नहीं।
३. माता पिता जो कहें कि तोहानी बाध-कोही भीयतमें फिरना नहीं यह माननेमें अपना कल्याण है।
४. पिता पढ़ानेवाला, अन्न देनेवाला और भद्रसे बचानेवाला ये तीनों मातापिताके समान गिने जाते हैं क्योंकि ये अन्ना भद्र कल्याण देते हैं।
५. यदि हम पढ़ाई की मर्यादा रखेंगे तो अंग्रेज बलवर्धनी मर्यादा रखेगा।

નૂતન વર્ષના દે વાલ

ઘાલી વ્હેનો ! અને સુજ વંધુઓ ? ગત વર્ષની આસરમાં ફળપુષ્પના નામના નવોન તાવે લોકોને હેરાન હેરાન કરી નાંખ્યા છે. એ રોગ યમદૂત રૂપે આ ભીને કેટલાનાં પ્રાણ હરણ કર્યા છે, કેટલાકને વ્રજહિન બનાવી દીધા છે અને કેટલાકને ગાંડા બનાવી દીધા છે. એ સિવય કેટલેક ઠેકાણે કોરેરા વિગેરેથી પણ લોકોનો સંહાર થયો છે, કેટલાક પોત પોતાના દેશના વચાવ સ્વતંત્ર પ્રચંદ યુદ્ધમાં ક્ષપલાવીને સદાને માટે આ અસર સંસાર છોડીને ચાલ્યા ગયા છે. અને કેટલાકે મોઘશરીને લીધે અન્ન ન મળવાથી પોતાના અમૂલ્ય પ્રાણનો ત્યાગ કરી છે. અને કેટલાક ક્ષુધાથી તરફડે છે.

ઉપર જણાવ્યા પ્રમાણે અનેક વિત્તોને ઝોઝો-ગીને આપણે આવાદ રચ્યા છિંપે પણ એક આપણું અહોભાગ્ય સમનું જોઈએ. અને એ પુણ્ય ચીર-કાઠ ટકી રહે તેને માટે આ નૂતન વર્ષમાં એવાં પરોપકારનાં કામો કરવાં જોઈએ કે જેથી વિચારાં રોકડાં નિર્ધન, રોગી અને નિરાશ્રિતોને આપણા તનથી, મનથી, વચનથી, અને ધનથી સહાયતા મળે.

ઘાલી વ્હેનો ? અને સુજ વંધુઓ ? જો તમે સત્યાગ્રહી કર્મવીર ગાંધીજીના વચનને માન આપતા હો અને દેશને ઉન્નત કરવાને ચ્હાતા હોય, દેશની દીનતા દૂર કરવા માંગતા હોય, દેશના પેસા દેશમાં જ રહે એવી શુભ ઇચ્છા તમારા હૃદયમાં હોય, ઉપર ઉપરથી જ ફક્ત બ્યાલ્યાન કરીને તમો વાહ ! વાહ ! ફરેવડાવા

નહિ માગતા હોય, પરંતુ સરી અંતરની દાક્ષથી દેશનું મ્હલ કરવાને ચ્હાતાં હોય તો તમે વર્તમાનમાં દિનપર દિન વૃદ્ધિ પામતી ફેશનની ફીસીયારીને ઓછી કરો. એક રૂપિયાના કપડા પર પાંચ રૂપિયાની સીલાઈ અરે ! એથી પણ વધારે લોકો દરજીને સીલાઈ આપે છે તેનો અટકાવ કરાવો. મુંકે ફાટી જાય, તથા શીલને દૂષણ લગાડે એવાં વારીક કપડાં નહિ પહેરવાનો નિયમ કરો, દેશી મઝ્યા પોતના અને ટકાઉ કપડાં પહેરવાનો ટઢ નિયમ લો, આમ કરવાથી, જરૂર દેશની આઘાવી થશે.

સીવળ ભરતના વલાસો જ્યાં ત્યાં ચાલે છે પરંતુ એનો ક્રમ ડલ્ટો જોવામાં આવે છે. સીવળ ભરતના વલાસ એમ બોલાય છે ભરત સીવળ કોઈ બોલતું નથી. સીવળ શબ્દ પહેલો લેવામાં એક મહત્ત્વ રહેલું છે એટલે કે પહેલા સીવળ શીખવવું તે એટલે સુધી કે તે પોતે પોતાના, વાઠ્ઠ વચ્ચાંનાં તથા પતિના કપડાં જેવાં કે પોલકા, ચોઝીઓ, ક્ષમલાં ફરાક, ટોપીઓ, લેંછીઓ, કોટ, બદન બંદી ફરાક જાકીટ વિગેરે સફાઈથી સીવી શકે અને સીવતાં આવડે. ત્યાર બાદ પોતે વેતરી પણ શકે. આટલું થયા બાદ રેશમનું ભરત, કસ-વનું ભરત, ડનનું ભરત તથા તથા દોરાના કુમાલ ગુંથવા, મોતીના તોરણ બનાવવાં વિગેરે શીખવવું જોઈએ. પણ આજ તો જેને એક લુગડું ફાટેલું હોય તેનો શડકો ભરતાં, ન આવડતું હોય તેઓ પણ હાથમાં સોયો લઈને ગુંથવાનું કામ કરીને પોતાને હોશીયાર માને છે. આથી કાંઈ ધરના પેસા વચ્ચતા નથી પણ ડલ્ટો સર્વ વધે છે માટે પેસા સમજ પ્રમાણે સીવળ ભરતનો સારો અર્થ

સમગ્રી જેમ શબ્દનો ક્રમ છે તેમજ શીક્ષણનો હોવો જોઈએ અને જો દરેક ઠેકાણે આવો સુલટો ક્રમ ચાલુ થાય અને પૈસાની કરકસર થાય તો પછી જટ દેશ ઉન્નત અવસ્થાને પ્રાપ્ત કરે એમાં જરા પણ વાંધો લાગતો નથી. વઝી અલંકારોની વાચતમાં પણ વારંવાર એક ચીજ કરાવવી અને તે કાંઈ પણ ટૂટી ન હોય તો પણ બીજાંની કાંઈ નવી ચીજ જોઈ કે તરતજ પોતે કરાવેલી ચીજને ભંગાવી તોડાવીને બીજી નવી ચીજો કરાવવામાં આવે છે. આથી વારંવાર સોનું સોનીના હાથમાં જવાથી રેષણ વિગેરેનું મિશ્રણ થવાથી રાસી થઈ જાય છે. અને સોના સાથે ઉપજે એટલી કિંમત રહે છે. ગ. સિંચાય મજુરીના પૈસા વારંવાર ચરચવાથી એક દાખીનો બીજો થાય એટલું અને કોઈ કોઈ વસ્તે ઈથી પણ વપારે નુકસાન થાય છે. માટે મારી વ્હેનોને તથા વંધુઓને મારી મલામણ છે કે તમે જે વાંઈ અલંકાર કરાવો તે મનવૃત્ત કરાવો અને કોઈની નવી બીજ જોઈને જટ તેમ કરાવતાં બટકો ।

ઘેરનો ! અને બંધુઓ ! વિચાર કરો કે પહેલાનાં લોકો પાસે પૈસા ઘણા હતા અને જ્ઞાન આજ કરતાં ઓછું હતું, કમાણી પણ લગભગ યંમમાન મન્ય કરતાં નેઓ ઓછી કરતા હતાં પણ તેઓ મુર્ખા હતા તેનું કારણ શું !

મારા મારવા પ્રમાણે તેનું કારણ એજ કે તેઓ દરેક વાતમાં સાદા હતા. નેઓ કપડાં સાદાં અને ટકાડ પહેરતાં હતાં, અલંકાર પણ તદ્દત્તેદી નહોં પહેરતા, પરન્તુ મનવૃત્ત અને માનસાડ વાચતા હતા, મટાં બીની પ. વાતને કાચમી

માફક દરેક વાતમાં પરાધીનતાને તેઓ પ્રમુખ નહોં કરતા હતા પણ જાત મહેનતે જેટલું બને તેટલું કરી લેતાં હતાં, બનતા સુધી પોતાના કપડાં પોતાના હાથેજ વણતા, ઘર કામ પણ વાસણ માંજવાં, ણાળી ભરકું દબકું વિગેરે હાથેજ કરતા હતા. પોતાને ત્યાં કામ બહોલું હોય તો નોકર પણ રાખતા પરન્તુ સાથે પોતે આઠસુ નહોં બનતાં. આથી તેઓનાં શરીરને કસરત મઠ્ઠી હતી અને તેઓ શરીરે રુદ્ધ પુદ્ધ રહેતા હતા અને તેથી પ્રજા પણ તેવી રુદ્ધ પુદ્ધ ઉત્પન્ન થતી હતી. તેઓનો અહાર પણ સાદો હલકો અને પુષ્ટિ કારક હતો આજની માફક દિવસમાં પાંચ પાંચ સાત સાત વસ્ત્ર તથા પીને જઠરાગ્નિને મંદ કરી નાંચવાનો કટંગો રિવાજ ત્યારે નહોતો. આથી તેઓ દરેક વાતમાં સુખી હતા. સોઢાબોટર, લીમલેટ, ચાકલેટ, અને બીસ્કુટને તો કોઈ ઓઠાલતા પણ નહોતા, પણ એને વડલે ધંડની બનાવેલી ચીજો જેવી કે પુરી મગીઆં મગજ વિગેરે પવિત્ર વસ્તુઓનો વ્યવહાર ચાલતો હતો, આજ તો મડમને જોઈને તેની નફલ કરાઃ વટ મોમાં પહેરી હાથમાં છત્રી લઈ રોક મારવો, અને એમાં જાણે વધો મુખારો આવો ગયો હોય તેમ મનાય છે પણ આ મુખારો નથી પણ કુખારો છે. આથી દેવની ઉન્નતિ થતી નથી પણ બવનતિ થાય છે. હા કેટલીક પુરાણી વાચતાં પણ ફેરફાર કરવા જોયો છે, ને કરવો જોઈએ જેમકે કપડાં સ્વચ્છ રાખવાં, મકાનો દવા નહોં ઓળે થવાં હોય તો તેનો ફેરફાર કરાવી દવાદાર બનાવતાં.

ફેશનને ઓછી કરીને સાદાઈ અંગીકાર કરવાથી દરેક જણ અનેક તરેહના દેશહિતના કામો કરી શકે, ધનવાન સાદાઈથી ચાલી કુમારો જતા પેસાને અટકાવી શકે, દેશ બંધુ-ઓના અજ્ઞાનને દૂર કરવાને બોર્ડિંગો, હાઈસ્કૂલો પાઠશાળાઓ, વાંચનાલય ચોલાવી શકે, અજ્ઞાન અંધકારમાં પડેલી બ્લેનોને પ્રકાશમાં લાવવાને આશ્રમો, કન્યા મહાવિદ્યાલય વિગેરે જ્ઞાનના સ્ત્રોતો ખોલી શકે, દેશને પૈસે ટકે સુસ્તી કરવા માટે વિવિધ પ્રકારની હુજારશાળાઓ, ચોલાવીને ગરીબોના આશિર્વાદ લઈ શકે, રોગીઓનાં દુઃખ દૂર કરવાને દવાખાના ચોલાવી શકે, ક્ષુધાતુરની ક્ષુધાને દૂર કરવાને સદાવ્રત આપી શકે, તથા મયામિત નિરાધારોને મયથી મુક્ત કરાવી નિર્મય અવસ્થાને પ્રાપ્ત કરાવી શકે, અને પૂર્વે કમાવેલુ પુણ્ય અત્રે ચલાસ નહિ કરતાં પરમવર્મા પળ પુણ્યના પોટલાં બાંધી જવાય. તેમજ લક્ષ્મી નાશવંત છે તેથી કદાચ અવસ્થામાં ફેરફાર થાય તો તેવે સમયે પણ આવરુ સચવાઈ રહે વિગેરે અનેક ફાયદા ધન-વાનની સાદાઈમાં સમાયેલાં છે.

તેમજ મધ્યમ સ્થિતિના મનુષ્ય સાદાઈથી ચાલીને ગૃહસ્થાશ્રમ મુલે નિર્વાહ કરી શકે, અને પોતાનાં સારાં માઠાં સર્વં પળ સુખેથી કરીને આકરુમેર દિવસો નિર્ગમન કરી શકે, ત્યારે ફેશનના પ્રવાહમાં તળાતા લોકો દેવાદાર બની પોતાની આવરુને સાચવી શક્તા નથી અને જ્યાં ત્યાં તિરસ્કારને પાત્ર નહેતાં અને તેઓના હાલ બેહાલ થઈ ગુસ્સાકારક છે, (ફર આલો-

તેઓનું દુઃખ તે પોતે જાણે કે સર્વે જાણે, મારામાં વર્ણન કરવાની શક્તિ નથી.

વઢી સાદાઈથી રહેવામાં ગરીબોને આપણે કાંઈ નહીં આપીએ છતાં દીર્ઘદષ્ટિથી જોતાં ગુહરીતે લાભ થાય છે; ફેશન જેમ જેમ ઓછી થાય તેમ તે દેશના પૈસા દેશમાં રહે અને મોંઘવારી ઓછી થાય તેથી વિચારાં ગરીબ રાંકડાને અનાજ પ્રાપ્તિ ઓછે માથે મળે અને તેનાં ગુપ્ત આશિર્વાદથી આપણું કલ્યાણ થાય. અને પૈસે ટકે દુનિયાં સુસ્તી હોય તો તેઓના પરિણામ સારાં રહે અને શુભગતિને પ્રાપ્ત કરે, પ્રમુખનન, પ્રમુખજન શાસ્ત્ર સ્વાધ્યાય આદિમાં મન લાગે વિગેરે અનેક ફાયદાઓ સાદાઈમાં રહેલા છે કે જે હું મારા નાન-કડા લેખમાં વર્ણવી શક્તિ નથી.

અંતમાં મારુ એન કહેવું છે કે આપણે અનેક વિગતોથી વચીને જીવિત રહ્યાં છીએ તે એક પૂર્વક્ત પુણ્યનો ઉદયન સમયનો જોડા. એ પુણ્ય બીજા રૂપ રહે તેને માટે દેશનું હિત કરનાર સાદાઈ છે તેનું અવલેખન કરવું, ફેશનને દેશવટો દેવો, દેશમાલ વાપરવાં, વ્યાખ્યાન દાતા-ઓએ ફક્ત વ્યાખ્યાન રૂપે ચોલીને વેસી રહેવું નહીં પણ જે ચોલે તે વર્તનમાં મિત્રામાં મુકવું. આમ થશે તો હું ધારું કે દેશનો જલદી ઉદ્ધાર થશે. અને પૂર્વ સ્થિતિને પ્રાપ્ત કરશે.

લાલિતાવંદન મુલચંદ

શ્રાવિકાશ્રમ મુંબઈ.

—ૐ—

ચૂલેલે લાભ? મળ્યા આ કામ? અ



(लेखक-श्रीयुत जैन कवि ला० ज्योतिप्रसादजी
सम्पादक जैन प्रदीप, प्रेममवन देशपन्द)

नित्य प्रति किये हुये कार्योंपर विचार करके उनके बुरा होनेकी हालतमें उनकी निन्दा करना और पश्चात्ताप करना और अच्छा होनेकी हालतमें अनुमोदना करना और हर्ष मनाना इसका नाम “आलोचना” है। खोटे कामोंसे बचने और अच्छे कामोंमें लगनेका मार्ग यदि कोई है तो वह आलोचना ही है। इस ही कारणको लेकर जैनाचार्योंने आलोचना करनेकी सभ्यति संसारके प्रत्येक प्राणीको दी है। यदि साधुओंसे भी किसी समय दैवयोगसे किसी कषायके वश कोई ऐसी क्रिया बन जाय कि जिससे किसी आत्माको दुःख पहुंच जाय तो वे भी उसकी आलोचना करते हैं और निन्दा करते हुये स्वयं पश्चात्ताप करते हैं जिससे आगामीको ऐसे कार्योंकर करनेमें छुटकारा मिल जाता है। जैसे एक मनुष्यने लोभके वशीभूत होकर किसी भोले आदमीकी गांठ कतर ली जिसमें उसको बड़ा दुःख हुआ। उसके वशकी

दिया। मैं आगामी ऐसा नहीं करूंगा। इस ही अंति एक पुरुषने क्रोधके वश होकर किसी अन्य पुरुषके सरमें लट्ट मार दिया जिसकी चोटसे मार खानेवाला अचेत होकर गिर गया। अब मारनेवाला दुःख मान रहा है और कह रहा है कि बुरा हो इस क्रोधका कि जिसने मुझे ऐसा अन्यायना दिया कि मैंने उस दीनके सर में लट्ट मार दिया, फिर कभी भूल कर भी ऐसा न करूंगा। अतएव इस ही प्रकारसे प्रत्येक बुरे कर्मकी आलोचना की जाती है जिससे परिणाम कोमल होते हैं और आगामीको बुरे कामोंसे छुट्टी मिल जाती है ऐसे ही आलोचना अच्छे कामोंकी भी होती है उससे आत्माको शांति और आनन्द मिलता है और आगामी अच्छे कामोंके करनेको प्रेरणा होती है। अतः आलोचना सांसारिक जीवोंको अच्छे मार्गपर लगानेका एक बहुत ही उत्तम साधन है।

संसारी जीव क्रोध, मान माया और लोभ इन चारों कषाय और पांचो इन्द्रियोंके विषयोंमें ऐसे लिप्त हैं कि प्रतिदिन नये-नये पापोंकी सृष्टि रची हैं और विविध प्रकारके बुरे-बुरे कर्म किये जाते हैं जिससे अपनी आत्माका पात होकर दूसरोंकी आत्माओंको घटेय पहुंचता है और अशुभ कर्मोंका वंशन होता है। अशुभ कर्मोंका वंशन होना दीन्य करने और आगामीको उसमें और गांठ न लगानेके लिये ही आलोचना की जाती

यह प्रज स्वयं ही करना पड़ता है कि जो हुआ सो हुआ परन्तु फिर ऐसा कार्य कदापि न करूँगा । यदि कोई चोरी करनेवाला मनुष्य कारागारके अन्दर बैठकर कुछ देर यह विचार करे कि तुझे जो यहां आकर एक नियत समय तक रहना पड़ रहा है और भांति २ की सुसीधों भोगनी पड़ रही हैं यह सब चोरी करनेका ही फल है, यदि तू चोरी न करता तो यह दिन काटको देखने पड़ते खैर, जो हुआ सो हुआ अब इन दुखोंके दिनोंको काटकर और यहांमे बाहर निकलकर फिर कभी भी चोरी न करूँगा-बल्कि परिश्रम करके द्रव्य कमाऊँगा और खाऊँगा तो कहना पड़ेगा कि यह आदमी आलोचना जैसे उच्च साधनसे लाभ उठाता है और आगामीके लिये अपने जीवनको ठीक करता है । अतएव सच बात तो यह है कि आलोचना परणामोंको क्रान्त करने शान्ति और आनन्द उपाने, अशुभ कर्मोंके बंधनको ढीला करने और आगामीको बुरे कामोंसे बचनेके लिये रामबाण औषधीके समान है—इस ही वास्ते जैन धर्ममें आत्मीय कल्याणके लिये इसका आसन बहुत ही ऊँचा रखवा गया है और यह गृहस्थी या साधु सबके ही लिये है और इस ही अभिप्रायको लेकर जैनियोंमें हमका प्रचार भी पाया जाता है, यह दूसरी बात है कि जैनियोंमें आलोचना—आलोचनाकी भांति न की जाय परन्तु फिर भी आलोचना “आलोचना पाठ” के द्वारा कर ही ली जाती है। आलोचना पाठ एक हिन्दी कविताकी छोटीसी पुस्तक है, आलोचना करनेवाले उस ही को पढ़कर आलो-

चना कर लेते हैं और अपने कर्तव्यको पूरा कर देते हैं । परन्तु यह ठीक नहीं है; क्योंकि संसारो जीवोंके कर्म सदैव एकते नहीं होते । प्रतिदिन कुछ न कुछ परिवर्तन होता ही रहता है । यदि आज रामलालने क्रोधके वश होकर रामकुमारके साथ मारपीट की है तो कल मान कपायके वशीभूत होकर श्यामचन्द्रको नीचा दिखलानेकी चेष्टामें लगा हुआ है और यदि आज चन्द्रभानुने मायाचारी करके मुनि देवको धोखा दिया है तो कल लोभ कपायके कारण कर्मचन्द्रकी गांठ काटी है। इस प्रकार नित्य प्रति नये नये कर्म किये जाते हैं अतएव इन कर्मोंकी नवीर आलोचना भी होनी चाहिये । जो कर्म किया जाय उसकी ही आलोचना की जाय । आज मैंने झूठ बोलकर कालीचरणको कष्ट क्यों पहुंचाया या मंने ऐसी हंसीसे काम क्यों लिया कि जिससे धनकुमारके चित्तको चोट पहुंची, मेरी जरासी बेईमानीसे शिवश्याल किसानका सर्व नाश हो गया । मेरे अत्याचारके कारण दौलत धीवर गांव छोड़कर चला गया ।

अतः इन बातोंको सन्मुख रखकर इन सब पर जुदा १ आलोचना की जाय तब लाभदायक और हितकारी हो सकती है और आवश्यकता भी यही है कि जो काम किया जाय उस पर ही पश्चात्ताप किया जाय । यदि चोरी करते हुए चढ़ीके चलानेकी या छल छिद्र करते हुए चूल्हेके जलानेकी आलोचना की जाय तो इससे लाभ ? यह तो केवल एक रूढ़िकी पूर्ति हो गई। भला आलोचना जैसे महान कार्यमें इसका क्या काम ? आलोचना करना कोई लोग दिखलावेका



नुमाइशी ठाठ थोड़ा ही है। इसका करना तो अपनी आत्मासे सम्बन्ध रखता है इससे तो नीच आत्मा ऊंच बनती है और बुरे कर्मोंसे दूर होकर अच्छे और भले कर्मोंमें लगती है। जो कोई मनुष्य आलोचना जैसे महान धार्मिक कार्यको भी लोग दिखावेके लिये करता है तो कहना पड़ेगा कि उसको तो इस आलोचनाकी भी आलोचना करनी चाहिये अन्यथा उसका कदापि भी कल्याण नहीं होगा। जरा सोचनेकी बात है कि एक दूकानदार अपनी दूकानपर बैठा हुआ ठगी करता है तो उससे कुछ अधिक हानि पहुंचनेकी सम्भावना नहीं हो सकती क्योंकि ब्राह्म भी जानता है कि दूकानदार बहुधा करके ऐसा किया ही करते हैं परन्तु एक दूसरा मनुष्य देवमंदिरमें या किसी दूसरे धर्मस्थानमें बैठा हुआ पूजा पाठ कर रहा है और बड़ी ऊंची आवाजसे "सुनिये जिन अर्ज हमारी, हम दौप किये अति भारी, तिनकी अथ निर्वृत्ति काजे तुम शरण लई महाराजे" आदिके स्तोत्र पढ़ते हुये चूल्हा, ओखल, मूसल, आग पानी, हवा, मिट्टी आदिके नाम ले ले कर दुहाई मचा रहा है और दूसरे मनुष्यों पर प्रकट कर रहा है कि कटो क्या गुप्त जैसा धर्मात्मा भी कोई और होगा परन्तु ऐसा करते हुये सामाजिक कार्योंमें उस ही संकल्पी हिसासे काम लेता है कि जिसको उसके सब भाई मनुष्य करने हैं परन्तु इसका न फर्दी नाम है और न पश्चाताप। अतः प्य कहना पड़ेगा कि उमदा पूजा पाठ करना और आलोचनापाठ पढ़ना सब मायाचारीको लिये हुये हैं अतः उसको तो इस पूजा पाठ

और आलोचनापाठकी भी आलोचना करनी चाहिये अथवा उसकी आत्मामें यह मायाचारी अपना ऐसा घर बनायेगी कि जो न मालूम कब पुराना होगा और कब गिरेगा।

भाई आलोचना करनेवालो, आलोचनाके वारते किसी पाठके पढ़ने या नियत लेखको दुहरानेकी आवश्यकता नहीं है और न इसके लिये शोर मचानेकी और दूसरोंको सुनानेकी आवश्यकता है यह तो उन कर्मोंके लिये करनी चाहिये कि जो प्रतिदिन किये जाते हैं जो बुरा या भला काम जिस दिन किया जाय उसकी उस ही दिन आलोचना की जाय और आलोचना एकान्तमें बैठ कर अपने विचारोंद्वारा की जाय उसके लिये खुले मंदिरमंदिरमें बैठ कर शोर मचाने या किसी राग गानेकी आवश्यकता नहीं है और न उससे कोई लाभ ही होता है जो कोई ऐसा करता है वह केवल रियानको पूरा करता है और वह भी लोग दिखावेके वास्ते।

जैन धर्म जो कि जीवको स्वात्मनका पाठ पढ़ाता है और प्रत्येकको अपने परोंके बल रखा होनेका उपदेम देता है और स्पष्टतया करता है कि जैसा बुरा या भला काम तुम फरोगे उसका वैसा ही फल भी भोगोगे। कोई ईश्वर परमात्मा-बुद्ध-या गौड तुम्हारे किये हुये कर्मोंमें फलती बढ़ती नहीं कर सकेगा और न उन कर्मोंके परिणाममें कुछ उन्नत फेर कर सकेगा इसलिये अपने परमात्माको कोमल बनाकर बुरे कर्मोंमें किनारा करो और अच्छे कर्मोंमें करने लगे प्रत्येक कर्म परोंके निमित्त तुम्हारा नाना हो और सामाजिक

मुतां जो, लो जो । यदि तुम बुरेमे बुरे
 कर्म करो तो मेरे ईश्वर-गमना-
 सुख या सिद्धि मेरी प्राप्ति करो कि
 हे ईश्वर, मेरी बुराई पर दृष्टि मत डालना-मैं
 चाहे लाख बुराई परन्तु फिर भी तेरा हूँ-मुझे
 तू अपना समझ कर सुख ही सुख देन ।
 क्योंकि मुझमें दुःखोंको सहारनेकी शक्ति नहीं
 है यद्यपि मैं हजारों बुराईयां प्रतिदिन करता हूँ
 पर क्या करूँ, करना ही पड़ती हैं । परन्तु मैं
 उनको तेरे ही भरोसे पर करता हूँ । तू मेरा
 है, मैं तेरा हूँ, अपनोंकी रक्षा सब किया ही
 करते हैं । जब मैंने तेरी भक्ति धारण कर ली है
 तो फिर कहना सुनना ही क्या है । वस मैं
 करनेवाला और तू हरनेवाला इत्यादि । तो ऐसी
 प्रार्थना करनेसे कोई लाभ नहीं है । यहां लोक
 व्यवहारमें देखा जाता है कि कुआचरणी घेठेको
 बाप भी घरसे निकाल देता है । कुकर्म आद-
 मीको अपने शहरका न्यायाधीश भी कड़ीसे
 कड़ी सजा (दण्ड) दे डालता है । जब बाप
 और न्यायाधीश भी बुरे आदमीको क्षमा नहीं
 करते तो ईश्वरको क्यों इतना सलूक करना
 है ? क्या ईश्वर कोई खुशामदी टहूँ है जो
 इन निज्जी चुपड़ी बातोंमें आकर तुम्हारे
 कुकर्मोंको क्षमा कर देगा ? यदि वह ऐसा ही
 खुशामद पसन्द है तो उसको ईश्वर कहना भी
 एक प्रकारका पाप है । ऐसे कर्म तो न्यायसे
 भग्न रहनेवाला मनुष्य भी नहीं कर सकता
 और यदि कोई करता है तो वह भी उसका
 फल भोगता है । अभी गत वर्ष पंजाब
 देशमें कितने ही धूस खानेवाले मनुष्योंको

दण्ड मिला चुका है । फिर ईश्वरके वि-
 पयमें पैसा ख्याल करना कि वह हमारे
 बुरे कर्मोंपर दृष्टि नहीं डालेगा और वह
 भी कुछ खुशामदी बातोंको सुनकर; तो यह
 कितना बड़ा दोष है कि जो ईश्वरके मत्वे मड़ा
 जाता है । क्या इस दोषके लिये भी कोई
 आलोचना है । हम देखते हैं आलोचना
 पाठोंमें भी ईश्वरसे ही प्रार्थना की गई ।
 है कि हे भगवान, हमारी अज्ञ सुनो, हमने बड़े
 भारी दोष किये हैं, अब उनको दूर करनेके
 वास्ते तुम्हारी शरणमें आये हैं इत्यादि ।

हम नहीं समझते कि हमारे जैनी भाईयोंमें
 जो यह खुशामदीपनेका विचार कहाँसे आ गया
 जब कि जैन धर्म हमतो यह सिखला रहा है
 कि किसी दूसरी शक्तिका सहारा मत लो
 तुम्हारे बुरे भले कर्मोंमें दूसरी कोई भी शक्ति
 कुछ भी नहीं कर सकती । जो कुछ भी सुख
 दुःख या हानिलाभ होता है वह तुम्हारे ही
 किये हुये कर्मोंका फल है । तुम्हारे किये हुये
 कर्मोंमें किसी दूसरी शक्तिका दखल नहीं है ।
 अपने किये हुये कर्मोंको भोगनेके तुम स्वयं ही
 भागी हो । फिर नहीं मालूम कि क्यों इस प्रकार
 प्रार्थनायें करके गिड़गिड़ाया जाता है ।

भाई जैनी लोगो या संसारके अन्य धर्मात्मा
 लोगो, यदि तुम अपनी आत्माका कल्याण
 चाहते हो तो किसी दूसरी शक्तिका सहारा
 छोड़कर अपने पैरोंके बल खड़े हो जाओ,
 अपनी अपार शक्तिके कामलो, अपने कर्मोंकी
 गतिपर विचार करो, बुरे कर्मोंपर पश्चात्ताप
 और भले कर्मोंपर उत्साह मनाओ,

घुरे कर्मोंकी निन्दा और भले कर्मोंकी प्रशंसा करो घुरे कर्मोंको छोड़ो और अच्छे कर्मोंको ग्रहण करो अर्थात् ऐसा करने परही तुम्हारी आलोचना एक सच्ची आलोचना कही जायगी और इससे बहुत ही लाभ होगा तुम्हारी वर्तमान आलोचनाका ढंग ठीक है या नहीं इस पर स्वयं ही विचार करलो अर्थात् इसकी भी आलोचना करलो हमतो इतना ही कहेंगे कि आलोचनाको आलोचनाके ढंगपर करो आलोचना करनेमें लोग दिखावा या रिवाजकी पूर्ति करना ठीक नहीं है ।



मनकी तरंग ।

(१)

जो भीष्मसे ऋतुगजकी प्रभुता प्रगट दुर्लभिकी ।
लगकर महाधीमति हुये अन्याय पुन अज्ञातिकी ॥
होकर द्रवित कदना तथा औदार्यपूर्वक प्रेम्मे ।
रहे रहे हे स्नेह जल जो हेतु जीवन प्रेम्मे ॥१॥

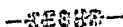
(२)

जिनके मनु अतिषोष युत गम्भीर भाषणका सर ।
पटता असर मृतक गगन पातालमे भी गर्वरा ॥
जो यक्षमे पिण्डी जनेहिन दधदूत ललाम हो ।
हे मृत वर्षा मेघ भाओ सब रक्षाका काम हो ॥२॥

(३)

हे पुत्र " अर्जुन " जैन कायणामे पश्ये गदे ।
हा ! हा ! ! विना कष्टन करो तो गर्भमे जकड़े गये ॥
सोचो विचारो तो समिक वरा जैनिकीकी पट दशा ।
जिम्मे स्त्रीगी मेघ दिन घर देखो भी कर्त्तना ॥३॥

दयाराम जैन,
दिवाणी जैन महाविद्यालय-इन्दौर ।



समय समयका राग
वा
आवश्यकानुसार कार्य ।

(लेखक-बाबू सुरजभाउ वकील, देवघर)

गति स्थिति अर्थात् हिलना चलना और ठहरना आदि कार्य जिस प्रकार चेतना शक्ति-धारी मनुष्यों और पशु पक्षियोंमें हैं उस ही प्रकार चेतना शक्ति रहित पुद्गलमें भी हैं, इस ही कारण जिस प्रकार कि मनुष्य और पशु पक्षी संसारके अनेक कार्य बनाते और बिगाड़ते हैं इस ही प्रकार पुद्गल पदार्थ भी बहुत कुछ कर दिखते हैं-वस्तुि सच पूछो तो जो महान् कार्य इस संसारमें निर्जीवि पुद्गलपदार्थोंद्वारा हो रहे हैं उनका पासंग भी मनुष्यों और पशु पक्षियों द्वारा नहीं होता है, जैसा कि समुद्र और पृथ्वी पर सूरमकी धूपके पड़नेसे पानीका भाप बनता और उस भापका वायुसे दलका होनेके कारण अपने ऊर्ध्व गमन स्वभावके द्वारा ऊपरको जाना और जाते जाते हवा लगकर कुछ गर्मी कम हो जानेसे उस भापका बादल रूप बन जाना और फिर उस बादलका हवाके वेगमे आकाशमें इधर उधर घूमने फिरना और घूमने २ और भी ज्यादा हवा लगने और गरमी कम हो जानेसे उस बादलका पानी रूप होकर परतना और पृथिवी पर पड़कर अनन्तानन्त कार्य बनाना बिगाड़ना और नीशानीय सब ही वस्तुओंमें अनेकानेक परिवर्तन कर देना और पक्षियोंकी चन्द्रराजोंमें घुमकर फिर साहज न

तक आहिस्ता २ उनमेंसे निकलते रहना और छोटी बड़ी नदियोंके रूपमें बहकर संसारके अनेकानेक कार्य साधना, यह सब कार्य निर्जीव और अज्ञानी पुद्गलके ही हैं जिनको वह अपने स्वभावानुसार बराबर करता ही रहता है ज्ञानवान मनुष्यों और पशु पक्षियोंको तो ऐसे महान कार्य न कभी हुये और न हो सकते हैं ।

परन्तु ज्ञान न होनेके कारण पुद्गलके जो भी कार्य हैं वह सब कार्य हानि लाभ-नफा नुकसान और जरूरत बेजरूरतका विचार किये विदूषित विद्वुल अट्टकल पंचू और अभाधुष ही होते हैं यह ही कारण है कि धूपकी गरमी समुद्रके पानीसे भी भाप बनाती है और उन खेतों और वृक्षोंको सुखाकर भी भाप बनाती है जिन्हें स्वयम् ही पानीकी बहुत जरूरत है, इस ही प्रकार जब पानी बरसता है तब वह समुद्र पर भी उस ही प्रकार बरसता है जिस प्रकार कि खेतों और वृक्षोंपर और जब यह पानी पर्वतोंसे निकटकर नदीके रूपमें बहता है तब भी इस बातका विचार नहीं करता है कि जहां २ पानीकी जरूरत है वहां वहां पहुंचूं और जहां पानीसे हानि हो रही है वहां न जाऊं, बल्कि उसको तो जिधर ढाल मिलता है उधरको ही वह निकटता है और जिधर २ को ढाल मिलता चला जाता है उधर उधरको ही बहता चला जाता है ।

परन्तु चेतनाशक्तिधारी मनुष्य और पशु पक्षियोंके कार्य ऐसे अभाधुष नहीं हैं, उनमें जितना २ अधिक ज्ञान होता है उतना २ ही उनका कार्य विचार पूर्वक और आवश्यकतानुसार

ही होता है । दृष्टान्त रूप यदि एक मनुष्य दौड़ा जा रहा है और सामनेसे कोई गाड़ी वा हाथी घोड़ा आदि पशु वा मनुष्योंका समूह आ रहा हो तो वह मनुष्य तुरन्त अपना दौड़ना बन्द करके वहां ही ठहर जावेगा और उनसे बचकर निकल जाने पर ही फिर दौड़ना शुरू करेगा, परन्तु यदि एक रेलगाड़ी अपने वेगमें भागी जा रही हो और सामनेसे दूसरी रेलगाड़ी भी आ रही हो और ऐंजिनइराइवर (रेल चलानेवाले) इन दोनों गाड़ियोंके सोये पड़े हों तो यह रेल गाड़ियां स्वयम् इस बातका विचार न करेंगी कि यहीं ठहर जाना चाहिये वा पीछे हट जाना चाहिये नहीं तो आपसमें लड़ कर हमारा भोर हो जावेगा बल्कि वह रेल गाड़ियां तो बिना किसी भी प्रकारका विचार किये दौड़ी ही चली जावेंगी और आपसमें लड़कर अपना और अपने भुसाफिरोंका चकनाचूर करके ही रहेंगी ।

इस ही प्रकार गाना जाननेवाला मनुष्य हर्षके समय हर्षके और सोगके समय सोगके ही गीत गावेगा, हर्षके समय सोगके और सोगके समय हर्षके गीत वह कभी नहीं गावेगा, यहांतक कि यदि उसको सोगका एक भी गीत याद न हो और हर्षके ऐसे बढ़िया २ गीत याद हों जिनसे सुनकर मनुष्य लड़ू हो जाते हों और जिनके ऊपर उसको सब जगह बहुत २ हनाम मिलता रहा हो तो भी वह सोगके समय हर्षके गीत नहीं गावेगा बल्कि झुप रहना ही ठीक समझेगा, परन्तु फोनोग्राफका प्लेट वा रिकार्ड इस बातका कुछ भी विचार न करेगा कि मेरा राग समयके अनुकूल है वा नहीं बल्कि चाहे वन

जान बालक भी उसको फोनोग्राफ पर चड़ा दे तो वह रिकार्ड अपना वह ही राग गाना शुरू कर देगा जो उसमें भरा हुआ है, चाहे वह राग हर्षका हो और सुननेवालोंको महासोग हो रहा हो और चाहे वह राग सोगका हो और सुननेवालोंको उस समय महाहर्ष हो रहा हो फोनोग्राफका वह रिकार्ड तो इन बातोंका कुछ भी ख्याल न करेगा और सब जगह अपनी एक ही टेर लगाता चला जावेगा।

गरज जीव हो वा निर्जीव क्रिया तो इन दोनोंमें ही है परन्तु जीवकी क्रिया समय और आवश्यकताओंको विचारकर होनी है और निर्जीवकी बिना विचारे जीवोंमें भी मनुष्य ही सबसे अधिक विचारवान है इस वास्ते इसकी क्रिया तो अवश्य ही विचारपूर्वक और समयानुकूल होना चाहिये, मनुष्यका मनुष्यपन बड़े २ कार्योंके करनेसे नहीं है बल्कि विचार पूर्वक और समयानुकूल कार्य करनेसे ही है। जो मनुष्य बिना विचार कार्य करता है वह चाहे कितना ही बड़ा कार्य कर डाले तो भी वह मनुष्य नहीं है बल्कि निर्जीव पुद्गल है और पुद्गलोंमें भी बहुत घटिया पुद्गल क्योंकि पुद्गलोंके कार्य तो ऐसे २ महान होते हैं जो मनुष्यसे किसी प्रकार हो ही नहीं सकते हैं।

जो मनुष्य समयकी आवश्यकताओंका विचार किये बिना ही कार्य करते हैं उनमें बहुतो क्षमिकी ही सम्पादना होती है और वह ऐसे विचाररहित पुल कोई बड़ा काम कर बैठते हैं तब तो उनका वह कार्य ऐसा ही भयानक हो जाता है जैसा कि यमोद्वानमें नदीका महा

प्रवाह वा गरमीकी मौसममें आंधीका महा-वेग वा जंगलकी दावानल अग्नि। इस कारण समयके अनुकूल न प्रवर्तनेवाले विचारहीन पुरुषों और उनके कार्योंसे इसही प्रकार बचने और दूर रहनेकी जरूरत है जिस प्रकार कि हवा पानी वा अग्नि आदि पुद्गल पदार्थोंके वेगसे बचनेकी जरूरत है ऐसे पुल्योंकी दया, लुपा और परलपकार भी अन्य मनुष्योंके प्यारके घूमेके ही समान है जो जाल नाक पर पड़कर वा कोल आदि गर्मस्थानमें ठगकर महान कष्टका ही देनेवाला हो जाता है।

समयके अनुकूल न चलनेवाला विचारहीन मनुष्य केवल दूसरोंके वास्तेही भयंकर नहीं होता है बल्कि वह अपना भी सत्यागारा कर डालता है क्योंकि संसार परिवर्तनशील है सदा एक अवस्थामें रह नहीं। कता इस कारण यहां कभी ज्वार है और कभी भाटा अर्थात् कभी उतराव है और कभी चढ़ाव, कभी जाड़ा है और कभी गरमी, कभी मघपन है और कभी बुझापा, कभी जन्म है और कभी मरण, परन्तु यदि कोई मनुष्य गरमी की मौसममें भी पद

गुलान केवड़ेका शस्त्रन घोल घोल कर पीता रहे तो वह अवश्य ही ठिठर कर मर जावेगा, इस ही प्रकार यदि कोई व्यापारी इस रेल और तारवर्किक जमानेमें भी अपना माल बेलगाड़ी डेट, गधे और खच्चरोंपर लाद कर ही एक देशसे दूसरे देशको ले जावे तो वह अवश्य ही नुकसान उठावेगा महामूर्ख सप्रज्ञा जावेगा और अपनी सारी जमा पूंजी खोकर दिवाला ही निकालेगा । गरज जो समयानुकूल नहीं चलेगा और विचारसे काम नहीं लेगा वह अश्व ही हानि उठावेगा और नाशको ही प्राप्त हो जावेगा ।

मनुष्योंके समूह ही का नाम जाति वा समाज है, इस कारण वह जाति वा समाज भी अवश्य नीचे ही को गिरेगी और विनाशको ही प्राप्त होगी जिसके मनुष्य विचारशून्य और समयकी हवाको न परखनेवाले और न उसके अनुसार चलनेवाले होंगे और हानि हो वा लाभ, आगे गढ़ा हो वा साईं आंख मीचकर अधाधुन उस ही मार्गपर चलते रहेंगे जिसपर कि चलते आ रहे हैं । जातिकी उन्नति और अवनति विशेषकर उसके विद्वानों, लीडरों, मुखियाओं और धनाढ्यों पर ही अवलम्बित होती है, यदि यह लोग विचारवान और समयके अनुकूल चलनेवाले हूवे तो जाति जीवित रहती है और उन्नति कर जाती है और यदि यह लोग जड़बुद्धि अर्थात् पट्टल पदार्थोंकी तरह समय और अवसरका कुछ भी त्याग न करके सदा एक ही प्रकारका कार्य करनेवाले हों तो वह लोग स्वयं भी दूसरों और जाति से

भी अपने साथ डुबा ले जावेंगे, इस कारण इन लोगोंका विचारशील होना और समयकी आवश्यकताओंको जानना बहुत ही ज्यादा जरूरी और आवश्यक है और यह तब ही हो सक्ता है जब कि जातिके साधारण लोग भी अपनी आंख खुली रखें और उस ही को अपना लीडर और पथ प्रदर्शक समझें जिसमें समया-नुकूल कार्य करनेका साहस और जातिके हानि लाभको समझनेकी बुद्धि हो ।

जैन जातिके स्त्री पुरुषों, तुम्हारी और तुम्हारे मुखियाओंकी विचारशून्यताके कारण तुम्हारा बहुत ही ज्यादा पतन हो चुका है और बड़ी शीघ्रताके साथ पतन होता चला जा रहा है, इस वास्ते जल्दी करो और अपने आपको संभालो नहीं तो कुछ दिनोंमें इस जातिका पता भी न पाओगे । प्यारे भाइयो, तुम और कुछ नहीं तो इतनी मोटीसी बात तो जांच लो कि पृथ्वीके अन्य मनुष्योंके मुकाबिलेमें तुम्हारी क्या गिनती है और वह तुम्हारी गिनती बढ़ती जा रही है वा घट रही है और यदि घट रही है तो क्यों ? इस एक ही बात पर विचार करनेसे तुमको मादम हो जावेगा कि जिस पृथिवी पर इस समय ५५ करोड़ बौद्ध, ३२ करोड़ ईसाई, २५ करोड़ हिन्दू और १६ करोड़ मुसलमान हैं वहां जैनोंकेवल १२ लाख ही रह गये हैं और वह १२ लाख भी तब ही हैं जब कि सब श्वेताम्बर, दिगम्बर और स्थावज्जाभिनियोंको एक समझकर इकट्ठा गिन लिया जावे, परन्तु वर्तमान अवस्थाके अनुसार इन धीनोंको एक जगह गिनकर अपनेको १२

लाख बताना तो वास्तवमें झूठमूठकी बात बनाना ही है क्योंकि जैसी पृथक्ता और अलह-दगीका व्यवहार इस समय इन तीनों सम्प्रदायोंके बीचमें हो रहा है और जो लड़ाई झगड़े इनमें चल रहे हैं उनके कारण तो यह तीनों किसी प्रकार भी एक नहीं माने जा सकते हैं, परन्तु यदि इन तीनोंको एक भी मान लें तो अन्य लोगोंकी फरोड़ाकी गिनतीके सामने क्या तुम्हारी १२ लाखकी गिनती कुछ गिनतीमें आनेके योग्य हो सकती है ।

प्यारे भाइयो, इस विषयमें सबसे ज्यादा रोना तो यह हो रहा है कि यह १२ लाखकी गिनती भी तो कायम रहने वाली नहीं है बल्कि दिन दिन घटती ही चली जा रही है, क्योंकि अभी थोड़ेही दिन हुए कि तुम्हारी गिनती १५ लाख थी, फिर १२ लाख और अन्तको अब १२ लाख ही रह गई है जिससे स्पष्ट सिद्ध है कि तुम बड़े वेगके साथ कम होते चले जा रहे हो परन्तु इसके विपरीत हिन्दुस्तानकी अन्य जातियां बहुत ज्यादा बढ़ती चली जा रही हैं; क्योंकि जब तुम १५ लाख में तो उस समय हिन्दुस्तानके सब लोग केवल २८ करोड़ ही थे परन्तु तुम घटते गये और बढ़ बढ़ने रहे अर्थात् यह २८ करोड़से ३० करोड़ हुए फिर ३२ करोड़ हुए और अब ३५ करोड़ हैं । इस कारण जो तुम केवल तुम्हारी ही जातिको गना हुआ है और सुपके ही सुपके तुमको कमनी कर रहा है क्या उमरो हूँद निकालना और उसकी दूरकर देनेकी कोशिश करना तुम्हारे बल्ले जरूरी नहीं है

यदि नहीं है तो मानो तुम जैनजातिका अस्तित्व भी जरूरी नहीं समझते हो, परन्तु बुद्धिमानोंके यह भी सिद्धान्त है कि धर्मवालोंके विना धर्म भी नहीं रह सकता है अर्थात् जैनियोंके विना जैनधर्म भी नहीं रह सकता है । भावार्थ-जैनजातिके समाप्त होजानेसे जैनधर्म भी जरूर समाप्त हो जाता है इस कारण क्या तुम जैनधर्मका भी इस पृथिवीपर कायम रहना जरूर नहीं समझते हो, यदि समझते हो अर्थात् यदि जैनधर्मका तुमको कुछ भी प्यार है तो उठो और आँखें खोलकर अपने पतनका कारण ढूँढो और अपने चालको बदल कर अपनी जातिके जीवित रहनेका उपाय करो, ऐसे महान संकटकी अवस्थामें भी यदि तुम अपनी चाल नहीं बदल सकते हो और अपनी रीति नीति आवश्यकताके अनुसार नहीं बना सकते हो तो फिर तुम आपको चेतनाशक्तिधारी जीव भी मत समझो और सुख दुःख भी मत मानो बल्कि निर्जीव पुद्गलके समान ही चुपचाप गल सड़कर पर्यायान्तरको प्राप्त होनाओ ।

प्यारे पाठको, अब सोने और गफलतमें पड़े रहनेका समय नहीं है बल्कि उठने और फरफटकर हिम्मत बांधकर कुछ पुरुषार्थ दिखाने और अपनी नातिकी किस्तीको दूबनेमें बचा लेनेका समय है । देखो तुम्हारे समानार पत्रोंमें आज-कल ऐसे समाचार जा रहे हैं और इन ही बातोंकी दाय २ मनाई जा रही है कि आज

जैन मंदिरमें घुस गये, परसों कलकत्ताका जैन मंदिर लुट गया, अतरसों अमुक राज्यमें जैनियोंका रथ नहीं निकलने दिया, वहां यह अत्याचार हुआ और यहां यह दुर्घटना होगई; परन्तु मेरे प्यारे भाइयो, जबतक तुम धर्मके नाम पर आपसमें लड़ झगड़ कर और तीर्थोंकी रक्षाके नाम पर मुकदमे बानीमें लाखों रुपया लुटाकर अपनी संघ शक्तिको तोड़ फोड़ कर उसको टुकड़े २ कर डालनेमें ही अपनी पूरी बहादुरी और तीर्थकी महत्ता दिखाते रहोगे तब तक तो अवश्य-मेव तुम्हारी पेसी ही बेइज्जती होती रहेगी और तुम किसी भी गिनतीमें नहीं गिने जाओगे। तुम्हें शर्म आनी चाहिये इस बात पर कि मुट्ठी भर तो तुम आदमी अर्थात् हिन्दुस्तानकी ३५ करोड़की आबादीमें केवल १२ लाख तो तुम्हारी गिनती इस पर भी तुम आपसमें लड़ो और द्वेषकी अंगिको ही हर वक्त प्रज्वलित रखो और फिर भी इस बातकी आशा करो कि लोग तुम्हें कुछ समझें और तुम्हारी परवाह करें। भाइयो, निर्मममत बनो, आँखें खोलो और अपनी चालको बदलो अर्थात् सब लड़ाई झगड़े दूरकरके और अपनी २ मूँह नीचे उतारकर आपसमें गले मिलो, अपने भाइयोंसे क्षमा माँगे और १२ लाखकी एक जाति बनाकर आगेको बढ़ो अर्थात् जैन धर्मकी सच्ची प्रभावना दिखाकर दूसरोंसे जैनी बनाओ और अपनी गिनती बढ़ाओ तब ही तुम्हारा अस्तित्व रह सकता है और तुम्हारी कदर हो सकती है नहीं तो कोई नकोड़े और घास पात तो परोके तले कुचले ही जाया करते हैं।

अब जैन धर्मकी प्रभावना सोने चान्दीका बहुमूल्य रथ निकालने और मंदिरकी दीवारोंको सोने चांदीसे लीपने और एक एक गलीमें चार चार मंदिर बनाने और बार बार प्रतिष्ठा कराकर एक एक मंदिरमें पचासों प्रतिमाओंका समूह इकट्ठा कर देने और पूजा प्रतिष्ठाओंमें लाखों-रुपया लगानेसे नहीं होगी। अब जमाना बहुत कुछ बदल गया है, लोगोंकी दृष्टिमें अब इन बातोंकी कुछ भी कदर नहीं रही है। अब तुम्हारे इन आडम्बरोंको देखकर लोगोंपर जैनियोंका और जैन धर्मका महत्त्व नहीं पड़ता है बल्कि उलटी प्रभावना होती है, इन बातोंमें रुपया लुटाते देखकर अब लोग तुमको जड़बुद्धि समझते हैं और अप्सोस करते हैं कि अब तो गरीबसे गरीब छोटी छोटी जातियों भी अपने अपने कालिज बना लिये हैं परन्तु धर्मके नामपर इतना धन लुटानेवाले जैनियोंका तो एक भी कालिज दिखाई नहीं देता है जिससे वह लोग यह ही समझते हैं कि जैनधर्ममें ज्ञानशून्य रह कर मिथ्या द्वाकोसलोंको मानते रहना ही ज़रूरी समझा जाता होगा, इस प्रकार समयकी गति बदलनेसे आजकल जैनियोंके प्रभावनाके कार्योंसे उलटी प्रभावना होने लगी है। इस कारण प्यारे भाइयो, अब आप भी समयानुकूल अपनी गतिको बदल कर और सबके कालिजोंसे बढ़िया कालिज बनाकर, जिले २ में हाईस्कूल खोल कर और ग्राम २ में बालक बालिकाओंकी पाठशाला जारी करके अपना पठनक्रम बनाकर और उसके अनुसार पुस्तकें तय्यार कराकर दुनियाके लोगोंको दिखाना दो कि जैनी ही सबसे ज्यादा विद्याकी कदर

करनेवाले और ज्ञान परही भरोसा रखने वाले हैं । अब तो प्यारे माइयो, ऐसा ही कर दितो ने मे तुम्हारी प्रभावना हो सकी है और तुम किसी गिनती में आने लायक हो सके हो । याद रखो कि जिस प्रकार पिछले समय में तुमने लाखों और करोड़ों रुपये की लागत के बड़े विशाल मंदिर बना कर और बड़े भारी धर्म उत्सव करा कर जगत के लोगों को भीत लिया था और चक्रावधि करके उनके दिलों पर अपना भारी सिक्का जमा दिया था, इस ही प्रकार आजकल जब तक तुम लाखों और करोड़ों की लागत के विशाल कालिज बना कर और घर-घर विद्या का प्रचार करके न दिसा दोगे तब तक तुम्हारी प्रभावना कदाचित भी न हो सकेगी और न तुम किसी गिनती में आ सकोगे ।

इस ही प्रकार अब जैन धर्म का प्रचार भी अनेक प्रकार की भाषा और अनेक प्रकार की विद्याओं के ज्ञान कर और समय की आवश्यकताओं को मानने वाले पण्डित तय्यार करके उनके द्वारा बहुत ही सरल भाषा में सर्व साधारणों को जैन सिद्धान्तों को बताने और जैन तत्त्वों का महत्व समझाने और आजकल की लेखन प्रणाली के अनुसार अनेक प्रभावशाली पुस्तकों के तय्यार किये जाने और उनको सर्व माधुर्य तक पहुंचाने और योग्य विद्वानों द्वारा दैनिक और साप्ताहिक पत्रों के निबन्धों से ही होगा ।

विकास कर बीच बाजार गंदी गालियां मझौ हने फिराने को बहुत ही बड़ा नीच काम समझते हैं, इस ही प्रकार आज कल के लोग दस दस बारह बारह बरस के बालक बालिकाओं का विवाह कर देना भी महा मूर्खता ही बताते हैं और जिंदे माता पिता की कुछ भी सेवा न करके मरने पर उनके नुकते में हजारों रुपया लगा कर सारे नगर को तर माल खिलाने को भी आजकल के लोग दानशून्यता और बुद्धिहीनता का ही कार्य मानते हैं और नुकता करनेवालों को घटिया मनुष्यों में ही गिनते हैं, इस ही प्रकार आजकल के लोग बेटा बेटा के विवाह में बड़ी भारी धूम मचाने और हजारों रुपया खर्च कर डालने को भी अच्छा नहीं जानते हैं बल्कि यह सब रुपया बेटा बेटा के नाम से व्यापार में लगाकर उनकी जीवन यात्रा आमान बना देने को ही ज्यादा जरूरी समझते हैं और घर की स्त्रियों को सोने चांदी के जेवरों से लदकर उनका अद्भुत स्थापन बनाने की जगह अब इस रुपये के द्वारा मृद कमकर उन मृदों द्वारा उनके स्वास्थ्य और ज्ञान की वृद्धि करते रहने को ही उनकी सच्ची सलाह मानते हैं निम्नो असल रत्न भी बनी रहे और यह स्त्रियां भी ज्ञानवान और वक्तवान संतान उत्पन्न करने के योग्य हो पायें ।

और लाभदायक रहे हों परन्तु यदि वह आज कलके समयमें हानिकारक हैं तो उनको छोड़ देनेमें और जो चाल और जो व्यवहार आज कलके समयके अनुकूल हों उनको ग्रहण करनेमें तुमको जरा भी विलम्ब नहीं करना चाहिये क्योंकि श्री जिनवाणी भी तुमको देशकालके ही अनुसार प्रवर्तनकी आज्ञा देती है और तुम्हारा मनुष्यपना और जीवधारी होना भी तुमको यह ही बताता है, और यदि तुम अपनी चाल नहीं बदलने हो तो यह भी समझ लो कि तुम श्री तीर्थंकर भगवानकी आज्ञाको लोप करते हो। श्री जिनदेवके बताये हुये उपदेशसे पुराईमुख होते हो और ज्ञानधारी जीवकी श्रेणीसे नीचे गिरकर ज्ञानशून्य निर्जीव पुद्गलकी श्रेणीमें आते हो, क्योंकि अनेक प्रकारकी अद्भुत २ क्रिया जीव भी करता है और पुद्गल भी; परन्तु जीवकी क्रिया समयानुकूल और विचारपूर्वक होती है और निर्जीव पुद्गलकी अशुद्ध और संघर्ष ही कालमें एक समान ।

विशेष नया लिखा जावे, आप ही अपने हानि लाभ और भले, बुरेका विचार कर लें और जो लाभदायक हो उस ही चालको ग्रहण कर लें ।

नई फसल का ताजा माल

आ गया ।

पवित्र काश्मीरी केशर

मूल्य १॥ १॥ तोला

पता—मैनेजर दि. जैन पुस्तकालय मुरत

जैन धर्मके विषयमें अजेन

विद्वानोंकी सम्मतियां १

(संप्रहर्कर्ता-पं० विहारीलालजी वी० ए० जे०, सी० टी०, अमरोहा ।)

(१)

श्रीयुत वरदाकान्त मुख्योपाध्याय एम० ए० के बंगला लेखके श्रीयुत नाथूरामजी प्रेसी द्वारा अनुवादित हिन्दी लेखसे उद्धृत कुछ वाक्य ।—

(१) हमारे देशमें जैन धर्मकी आदि, उत्पत्ति, शिक्षा, नेता और उद्देश्य सम्बन्धी कितने ही भ्रान्तमत प्रचलित हैं इसलिए हम लोग जैनियोंसे धृष्ट करने रहते हैं....। इसलिए मैं इस लेखमें भ्रमसमूह दूर करनेकी चेष्टा करूँगा ।

(२) जैन निरामिषभोजी (मांसत्यागी) क्षत्रियोंका धर्म है । “ अहिंसा परमो धर्मः ” इसकी सार शिक्षा और जड़ है । इस मतमें “ जीव हिंसा नहीं करना, किसी जीवको कष्ट नहीं देना ” यही श्रेष्ठ धर्म है ।

(३) शंकराचार्य महाराज स्वयं स्वीकार करते हैं कि जैनधर्म अति प्राचीन कालसे है । वे वाद-

१ नोट—इस विषयका पूर्व भाग ‘इसी मासिक पत्र’ दिगम्बर जैन, वर्ष ९, धीर सं० २४४२ के खाम अंकमें प्रकाशित हो चुका है ।

* यह लेख गुजराती भाषाके प्रथम वर्षके “जैन” नामक समाचार पत्रके अंक ३९, ४०में सन् १९१० गुजराती भाषामें प्रकाशित हो चुका है ।

रायण व्यासके वेदान्त सूत्रके भाष्यमें कहते हैं कि दूसरे अध्यायके द्वितीय पादके सूत्र ३२-३६ जैनधर्म ही के सम्बन्धमें हैं। शारीरिक मीमांसाके भाष्यकार रामानुजजीका भी यही मत है।

(४) योगवाशिष्ठ रामायण वैराग्य प्रकरण, अध्याय १५ श्लोक ८में श्री रामचन्द्रजी जिन-द्रके सदृश शान्त प्रकृति होनेकी इच्छा प्रकाश करते हैं, यथा:—

नाहं रामो न मे वाञ्छा भावेषु च न मे मनः।

शान्तिमाधितुमिच्छामि स्वात्मर्षीय जिनो यथा ॥

(५) रामायण, बालकांड, सर्ग १४, श्लोक २२में राजा दशरथने श्रमणगणों (अर्थात् दिगम्बर जैनमुनियों)का अतिथिसत्कार किया, ... लिखा है:—

तापसा भुञ्जते चापि श्रमणा भुञ्जते तथा ।

भूषण टीकामें श्रमण शब्दका अर्थ दिगम्बर (अर्थात् सर्व वस्त्रादि रहित जैनमुनि) किया है यथा:—

श्रमणा दिगम्बराः श्रमणा शान्तमनसा इति निघण्टुः ।

(६) शाकटायनके उणादि सूत्रमें जिन शब्द व्यवहृत हुआ है:—

इतिगजित्तिनीरुप्यविभ्योनक, सूत्र २५५, पद १

सिद्धान्त कौमुदीके कर्त्तव्ये इस सूत्रकी व्याख्यामें "जिनोऽर्हेन्द्र" कहा है।

भेदनीक्षोपमें भी 'जिन' शब्दका अर्थ 'अर्हेन्द्र' जैन धर्मके आदि प्रचारक है।

वृत्तिकारणप भी 'जिन'के अर्थमें अर्हेन्द्र कहते हैं, यथा उणादि सूत्र, सिद्धान्त कौमुदी।

शाकटायनने किस समय उणादि सूत्रकी रचना की थी! बादरकी निरुक्तमें शाकटायनके नामका

उल्लेख है। और पाणिनिके बहुत समय पहिले निरुक्त बना है इसे सभी स्वीकार करते हैं। और महामाष्य प्रणेता पतञ्जलिके कई सौ वर्ष पहिले पाणिनिने जन्म ग्रहण किया था। अतएव अब निश्चय है कि शाकटायनका उणादि सूत्र अत्यन्त प्राचीन ग्रन्थ है।

(७) बौद्ध शास्त्रमें जैनधर्मको निर्ग्रन्थोंका धर्म बतलाया है। और यही निर्ग्रन्थ धर्म बौद्धधर्मके बहुत पहिले प्रचलित था।

(८) डाक्टर राजेन्द्रलाल मित्र योग सूत्रकी प्रस्तावनामें कहते हैं कि सामवेदमें एक बलिदानविरोधी यति (जैनमुनि)का उल्लेख है। उसका समस्त ऐश्वर्य भृशुको दान कर दिया गया था, क्योंकि पेतैरय ब्राह्मणके मतमें बलिदानविरोधी यतिको श्रमालके सन्मुख प्रक्षिप्त करना चाहिये। मगध वाकीकटमें यज्ञ-दानादिका विरोधी एक सम्प्रदाय था, (देखो ऋग्वेद अष्टक ३, अध्याय ३, वर्ग २१ ऋचा १४। तथा ऋग्वेद, म० ८, अ० १०, सूक्त ८९, ऋचा ३, ४। तथा ऋग्वेद, म० २, अ० २, सू० १२, ऋचा ५। ऋग्वेद अष्टक १, अध्याय ४, वर्ग ३२, ऋचा १०, इत्यादि)।

(९) मांढर्य दर्शन सूत्र ६ "अविशेषश्रो-भयोः" अर्थात् दुःख और संशय दूर करनेवाले उद्दयमान और वैदिक उपायोंमें कोई भेद नहीं है। क्योंकि वैदिक बलिदान एक निष्ठुर प्रथा मान्य है। यज्ञमें पशु हनन करनेमें धर्म बन्य होता है, पशुको तदन्वय काय कुछ नहीं होता ॥

“ना हिंसास्तर्कभूतानि ।

“अविनयोनीयं पशुमालभेत् ।

“दृष्टिदानुश्रविकास्त्वानिशुद्ध क्षयातिशययुक्तः ।

सांख्यकारिका ॥

गौड़पाद सांख्यकारिकाके भाष्यमें निम्न लिखित श्लोक उद्धृत करके कपिल ऋषिके मतका समर्थन करते हैं—

ताते तद्बहुशोभ्यस्तं जन्मजन्मान्तरेष्वपि ।

त्रयी धर्ममधमादयं न सम्यक्प्रतिभाते मे ॥

अर्थात्—हे पिता ! वर्तमान और गत जन्ममें मैंने वैदिक धर्मका अभ्यास किया है; परन्तु मैं इस धर्मका पक्षपाती नहीं हूँ क्योंकि यह अधर्म-पूर्ण है ।

(१०) कपिल सूत्रका भाष्यकार विज्ञान भिक्षु “माकण्डेय पुराणसे” निम्नलिखित श्लोक उद्धृत करके कपिलमतका समर्थन करता है—

तस्मादास्यान्यदं तात दृष्ट्वैतं दुःखवन्निधिम् ।

त्रयी धर्ममधमादयं किंपाकफलसन्निभम् ॥

अर्थात्—“हे तात ! वैदिक धर्मको सब प्रकार अधर्म और निष्ठुरता पूर्ण देखकर मैं किस प्रकार इसका अनुकरण करूँ ? वैदिक धर्म किंपाक फलके समान बाह्यमें सौन्दर्य किन्तु भीतर हलाहल (विष) पूर्ण है” ।

(११) “महाभारत” का मत इस विषयमें जाननेके लिये अधमेध पर्व, अनुगीत ४६, अध्याय ३, श्लोक १२ की नीलकंठ वृत्त टीका पढ़िये ।

(१२) प्राचीन कालमें दिगम्बर ऋषि ऋषभदेव “अहिंसा परमो धर्मः” यह शिक्षा देते थे । उनकी शिक्षाने देव मनुष्य और इतर प्राणियों अनेक उपकार साधन किये हैं ।

उस समयमें ३६३ पुरुष पाण्ड धर्मप्रचारक भी थे । चार्वाकके नेता “बृहस्पति” उन्हींमेंसे एक थे । मैक्समूलर आदि युरोपीय पण्डितोंकी भी यही धारणा है जो उनके सन १८९० के लेखसे प्रकट है जिसे ७६ वर्षकी उमरमें उन्होंने लिखा है ।

(१३) अतएव प्राचीन भारतमें नाना धर्म और नाना दर्शन प्रचलित थे इसमें कोई संदेह नहीं है ।

(१४) जैनधर्म हिन्दूधर्मसे सर्वथा स्वतंत्र है । उसकी शाखा वा रूपान्तर नहीं है । विशेषतः प्राचीन भारतमें किसी धर्मान्तरसे कुछ ग्रहण करके एक नूतन धर्म प्रचार करनेकी प्रथा ही नहीं थी । मैक्समूलर का भी यही मत है ।

(१५) लोगोंका यह भ्रमपूर्ण विश्वास है कि पार्श्वनाथ जैनधर्मके स्थापक थे । किन्तु इसका प्रथम प्रचार ऋषभदेवोंने किया था इसकी पुष्टिके प्रमाणोंका अभाव नहीं है ।

(१) बौद्ध लोग महावीरको निर्ग्रन्थों अर्थात् जैनियोंका नायक मात्र कहते हैं स्थापक नहीं कहते ।

(२) जर्मन डाक्टर जैकोबी भी इसी मतके समर्थक हैं ।

१ इनके निर्वाणको वाजसे २६९३ वर्ष हो चुके । यह जैनियोंके तैत्तिरीय तीर्थंकर थे जो चौबीसवें अंतिम तीर्थंकर महावीर स्वामीसे २५० वर्ष पूर्व हुए ।

२ यह प्रथम तीर्थंकर अर्थात् संसार समुद्रसे तिर-नेका मार्ग यत्नानेवाले थे जो अन्तिम तीर्थंकर महावीर स्वामीसे ४२ सदस्र वर्ष कम दश नील सागर वर्ष पूर्व हुए । इनका समय इनके सम्प्रदाय से प्रगट है ।

३ हिन्दूशास्त्रों और जैनशास्त्रोंका भी इस विषयमें एक मत है । भागवतके पांचवें स्कन्धके अध्याय २-९ में ऋषभदेवका कथन है । जिसका भावार्थ यह है:-

चौदह मनुओंमेंसे पहले मनु स्वयंभूके प्रपौत्र नाभिका पुत्र ऋषभदेव हुआ जो दिगम्बर जैन सम्प्रदायका आदिप्रचारक था । इनके जन्मकालमें जगतकी चाल्यअवस्था थी इत्यादि ।

भागवतके अध्याय ६ श्लोक ९-११में लिखा है कि “कोंक, बेंक और कुटकराना अर्हत, ऋषभके चरित्र श्रवण करके कल्युगमें ब्राह्मण-विरोधी एक नवीन धर्मके प्रचारका मानस करेगा” किंतु हमने अन्य किसी भी ग्रन्थमें ऐसे किसी रानाका नाम नहीं पाया । अर्हतको अन्य कोई भी ग्रन्थकार कोंक, बेंक और कुटकराना नहीं कहता ।

अर्हतका अर्थ (अर्ह धातुसे) प्रशंसाई तथा पूज्य है । शिवपुराणमें अर्हत शब्दका व्यवहार हुआ है किंतु अर्हत नामसे कोई रानाका नाम नहीं है । ऋषभ ही को अर्हत कहते हैं । अर्हत राना कल्युगमें जैन-धर्मका प्रचारक होता तो वाच-स्पर्श (लोपकार)ने ऋषभको जिनदेव वा शब्दार्थ चित्तामणिने उन्हें आदि जिनदेव कभी नहीं कहा होता । किन्तु किसी उपनिषद्में भी ऋषभको अर्हत कहा है ।

भागवतके रचियताने क्यों यह बात कही तो कहा नहीं जा सकता ।

४. महाभारतके मुषिस्त्यात टीकाकार शान्ति-पर्व, मोक्षपर्व, अध्याय १६२ श्लोक २० की टीकामें कहते हैं:-

अर्हत अर्थात् जैन ऋषभके चरित्रमें सुगुह हो गये थे-यथा:-

“ऋषभादीनां महायोगितामाचार
दृष्टव अर्हताद्यो मोहिताः”

इस प्रकार जाना जाता है कि हिन्दू शास्त्रोंके मतसे भी ऋषभ ही जैन धर्मके प्रथम प्रचारक थे ।

५ डा० फुहरे (Dr. Fuhrer) ने जो मथुराके शिलालेखोंसे सगस्त इति वृत्तका रोज किया है उसके पढ़नेसे जाना जाता है कि पूर्वकालमें जैनी ऋषभदेवकी मूर्तियां बनाते थे । इस विषयका एपिग्राफिया इंडिका (Epigraphia Indica Vols. I & II) नामक ग्रन्थ अनुवाद सहित मुद्रित हुआ है । यह शिलालेख दो हजार वर्ष पूर्व कनिष्क, हुयन्क, वासुदेवादि राजाओंके राजत्वकालमें खोदे गये हैं ।

(देखो उपरोक्त ग्रन्थका भाग १, पृष्ठ ३८९, नं० ८४१ और भाग दो पृष्ठ १०६, २०७, नं० १८ इत्यादि) । अतएव देखा जाता है कि दो हजार वर्ष पूर्व ऋषभदेव प्रथम जैन तीर्थंकर बहकर स्वीकार किये गए हैं । महावीरका मोक्षकाल ईसवी सन्में ६२६ वर्ष पहिले और पार्श्वनाथका ७७६ वर्ष पहिले निश्चित है । यदि ये जैनधर्मके प्रथम प्रचारक होंगे तो दो हजार वर्ष पहिलेके योग ऋषभ देवकी मूर्तिकी पूजा नहीं करनी ।

(१९) जैनधर्मकी सार शिक्षा यह है:-

१. इस जगत्का सुख, शान्ति, और ऐश्वर्य मनुष्यके चरम उद्देश्य नहीं है । संसारमें निरुपेक्षा वन सके निहित रहना चाहिये ।

२. आत्माकी मंगल कामना करो ।

(२)

३. तुम जब कभी किसी सत्कार्यके करनेमें तत्पर होओ तब तुम कौन हो और क्या हो यह बात स्मरण रखो ।

४. यह धर्म परलोक मोक्ष विद्वांसजरी योगियोंका है ।

५. सांसारिक भोगविलासकी इच्छाओं जैनधर्मकी विरोधी हैं ।

६. अभिमानत्याग, स्वार्थत्याग और चिन्मग्नतात्याग हम धर्मकी भित्तियाँ हैं ।

(१७) जैनधर्म मलिन आचरणकी समाप्ति है, यह बात सत्य नहीं है । दिगम्बर और श्वेताम्बर दोनों श्रेष्ठियोंके जैन शुद्धाचरणी हैं ।

(१८) जैनधर्म ज्ञान और भावको लिये हुए है और मोक्ष भी इसी पर निर्भर है ।

(१९) जैन मुनियोंकी नगनावस्था और नग्न-भूति पूजा उनकी प्राचीनत्व सम्प्राप्त सिद्ध करती है, क्योंकि मनुष्य आदि अवस्थामें नग्न थे ।

(२०) ईसाइयोंके आदि पिता "आदिम" और आदिगाता 'इम' (होआ) निष्पाप अवस्थामें नग्न ही थे ।

(२१) हिन्दू शास्त्रोंमें भी शिव दिगम्बर (वस्त्रादि त्यागी,) वस्त्रात्रय दिगम्बर और

अवभृत् दिगम्बर सम्प्रदाय वर्णित हैं इत्यादि । *

नोट— यह पूर्ण लेख बहुत बड़ा है । जिन महाप्रयोगी ईसाइयों पुण्य लेखकों के मनमें हो कि यह जैनधर्म अपमान्य, धर्महीन दास प्रभावित "अधर्म" का महाभूत पुस्तक अनाधर पड़े जिसका मूल भाग है और जिसमें इस लेख कहित भाग लेख प्रकाशित हुये हैं ।

१० रा० वासुदेव गोविन्द आपटे
२० ए० इन्दौर निवासीके

व्याख्यानका सारांश *

जिसमें ये सबसे पहले एक सुप्रसिद्ध जैनान्तर्य श्री मद्गडाकलंक देवके निम्नलिखित श्लोकको पढ़कर और उसका अर्थ समझकर उसके महत्व और निष्पक्षतापूर्ण भावको दर्शाते हैं—

(१) ये विश्वे चरैवेदे जगज्जलनियेमहिन्ः शारदयाः ।
पौर्णमासि च वचनमनुमं त्रिषल्लोकं यदीयम् ॥
तं नद मायुष्यं सल्लगुणनिधिं चरुदोषद्विपन्तम् ।
बुद्ध दा इदमनं शतरत्निलयं केवलं वा तानं वा ॥

अर्थात् जानने योग्य ऐसे सम्पूर्ण विश्वको जिसने जाना, संसाररूपी महासागरकी तरंगे दूसरी तरफ तक जिसने देखीं, जिसके वचन परस्पर अविरोध, अनुपम और निर्दोष हैं, जो सम्पूर्ण गुणोंका निधि, साधुओं करके भी बन्दनीय है जिसने राग द्वेषादि बन्धनहीन शत्रुओंको नष्ट कर दिये हैं और जिसका शरणमें सबड़ों लोग आते हैं, ऐसा जो कोई पुरुष विशेष है उसको मेरा नमस्कार हो; फिर चाहे वह शिव हो, ब्रह्मा हो, विष्णु हो, बुद्ध हो अथवा बद्धमान (महावीर) हो । पूर्वोक्त श्लोकमें श्रीमद्गडाकलंक देवने ऐसी स्तुति की है ।

* यह व्याख्यान उपरोक्त महाप्रयोगी बन्धुके हिन्दू मुनिदल-द्वारा दिगम्बर १९०३ ई० में दिया था ।

१० शेष—
क्षुद्रिषासात्रातकजन्मान्तकभयस्मयः ।
न रागद्वेषमोदध भवताः स प्रतीत्यते ॥
अर्थ—भूख, प्यास, बुढ़ापा, रोग, जन्म,

(२) हिमालयसे लेकर कन्याकुमारी तक किंव-
हुना उससे भी आगे सीलोन द्वीप तक व
करांचीसे लेकर कलकत्ता तक अथवा उससे भी
आगे श्याम ब्रह्मदेश, जावा आदि देशमें जैन-
धर्मी लोग फैले हुए मिलते हैं ।

(३) हिन्दुस्तानके सम्पूर्ण व्यापारका एक
तिहाई भाग जैनियोंके हाथमें है ।

(४) बड़े ९ जैन कार्यालय, मन्व जैनमंदिर,
अनेक लोकोपयोगी संस्थाएँ हिन्दुस्तानके बहुतसे
बड़े २ नगरोंमें हैं ।

(५) प्राचीनकालसे जैनियोंका नाम इतिहास
प्रसिद्ध है और जैनधर्मके अनेक राजा हो
गए हैं ।

(६) स्वतः अशोक ही बौद्धधर्म स्वीकार कर-
नेसे पहले जैनधर्मानुयायी था ।

(७) कर्नेल टाड साहबके राजस्थानीय इति-
हासमें उदयपुरके घरानेके विषयमें ऐसा लिखा
है कि "कोई भी जैनयति उक्त स्थानमें जब
शुभागमन करता है तो रानी साहिब उसे आदर
पूर्वक लाकर योग्य सत्कारका प्रबन्ध करती हैं ।
इस विनय प्रबन्धकी प्रथा वहां अब तक
जारी है ।

(८) प्राचीन कालमें जैनियोंने उत्कट पराक्रम
वा राज्यकार्यभारका परिचायन किया है आज

कलके समयमें इनकी राजकीय अवनति मात्र
दृष्टिगोचर होती है ।

(९) प्राचीन जैन बाङ्गमय संस्कृत बाङ्गमयके
प्रायः चरावर था । धर्माभ्युदय महाकाव्य, हर्षोद्-
याग, पार्श्वभ्युदय काव्य, यशस्तिलक चम्पू
आदि काव्य ग्रन्थ, जैनेन्द्र व्याकरण, -
काशिका वृत्ति व पंजिका, रम्भामंजरी नाटिका
प्रमेयकमलमार्तंड सरीखे न्याय शास्त्र
विषयक ग्रन्थ, हेमचन्द्र सरीखे कोष, वः इनके
सिवाय जैन पुराण, धर्मग्रन्थ, इतिहास ग्रन्थ
आदि असंख्य शास्त्र थे । इनमेंसे बहुत थोड़े
प्रकाशित हुए हैं और सैकड़ों ग्रन्थ अभी अज्ञात
हो रहे हैं ॥

(१०) इन संस्कृत ग्रन्थोंके अतिरिक्त अन्य
प्रकारसे भी जैनियोंने बाङ्गमयकी बड़ी भारी
सेवा की है ।

(११) दक्षिणमें तामिल व कन्नड़ी (कर्ना

कन्नडशाही आदि क्षेत्रों कुल्लोत्तम बदेर राज्यधिया
हुए जिसकी साक्षी अनेक जैन इतिहास ग्रन्थों
तथा किसी २ अज्ञेय साक्षी व इतिहास ग्रन्थों
में मिलती है ।

॥ बाङ्गमय व्याकरण विज्ञान मत कई शास्त्रों
पाणिनीय व्याकरणमें भी ग्रहण किया है जैनाचार्य
दत्त ही हैं । तथा और भी अनेक जैन व्याकरण
ग्रन्थ हैं ।

दकी) इन दोनों भाषाओंके जो व्याकरण प्रथम प्रस्तुत हुए हैं वे जैनियोंने ही किये थे १ ।

(१२) प्राचीन कालके भारतवर्षीय इतिहासमें जैनियोंने अपना नाम अजर अमर रखा है २ ।

(१३) वर्तमान शांतिके समय व्यापार वृद्धिके कार्योंमें अग्रेसर होकर इन्होंने (जैनियोंने) अपना प्रताप पूर्ण रीतिसे स्थापित किया है ।

(१४) हमारे जैन बांधवोंके पूर्वज प्राचीन-कालमें ऐसे २ स्मरणीय कृत्य कर चुके हैं तो ती जैनी कौन हैं, उनके धर्मके मुख्यतत्त्व कौन २ से हैं इसका परिचय बहुत ही कम लोगोंको होना बड़े आश्चर्यकी बात है ।

(१५) "न गच्छेज्जैनमंदिरम्" अर्थात् जैन-मंदिरमें प्रवेश करने मात्रमें भी महापाप है; ऐसा निषेध उस समय कठोरताके साथ पाले जानेसे जैन मंदिरकी भीतकी आड़में क्या है इसकी खोज करे कौन ? ऐसी स्थिति होनेसे ही जैन धर्मके विषयमें झूठे गपोंड़े उड़ने लगे । कोई कहता है जैन धर्म नास्तिक है, कोई कहता है बौद्ध धर्मका अनुकरण है, कोई

कहता है जब शंकराचार्यने बौद्धोंका पराभाव किया तब बहुतसे बौद्ध पुनः ब्राह्मण धर्ममें आ गये परन्तु उस समय जो थोड़े बहुत बौद्धधर्मको ही पकड़े रहे उन्होंने वंशज यह जैन हैं, कोई कहता है कि जैन धर्म बौद्ध धर्मका शेष भाग तो नहीं किन्तु हिन्दू धर्मका ही एक पंथ है । और कोई कहते हैं कि नग्न देवको पूजनेवाले जैनी लोग ये मूलमें आर्य ही नहीं हैं किन्तु अना-र्योंमेंसे कोई हैं । अपने हिन्दुस्तानमें ही आज चौबीस सौ वर्ष पूर्वसे पड़ोसमें रहनेवाले धर्मके विषयमें जब इतनी अज्ञानता है तब हजारों कोससे परिचय पानेवाले व उससे मनोऽनुकूल अनुमान गढ़नेवाले पाश्चिमात्योंकी अज्ञानता पर तो हंसना ही क्या है ।

(१६) ऋषभदेव जैन धर्मके संस्थापक थे यह सिद्धांत अपनी भागवतसे भी सिद्ध होता है । पार्श्वनाथ जैन धर्मके संस्थापक थे ऐसी कथा जो प्रसिद्ध है वह सर्वथा भूल है । ऐसे ही बर्द्ध-मान अर्थात् महावीर भी जैनधर्मके संस्थापक नहीं हैं । वे २४ तीर्थोंमेंसे एक प्रचारक थे ।

(१७) जैनधर्ममें अहिंसा तत्त्व अत्यन्त श्रेष्ठ माना गया है । बौद्ध धर्म व अपने ब्राह्मण धर्ममें भी यह तत्त्व है तथापि जैनियोंने इसे जित सीमा तक पहुंचा दिया है वहां तक ज्ञाति कोई नहीं गया है ।

(१८) अपने धर्ममें जिस प्रकार १६ संस्कारोंका वर्णन है उसी प्रकार जैनियोंमें ६३ क्रिया हैं, उनमें बालकके केशदाय अर्थात् शिला रखना, पांचवें वर्षमें उपाध्यायके पास विद्यारंभ

(१) कर्णाटक भाषाका बहुत बड़ा व्याकरण श्रीमद्भक्तकृतदेव रचित रस साहचर्ये छत्रा भी दिया है । परन्तु यह सब विलायतके विद्याविद्याधि-पाने मंगा लिया है । इस देशमें मिलना अब दुर्लभ है ।

(२) इसी टुकड़ेके न० १ में महामहोपाध्याय का० गतिसाधन पृष्ठ ० ए० पी० एच० डी० एफ० का० भा० भा० ए० विद्याभूषणकी सम्मति देते ।

(३) न पड़ेबावनी भाषा प्राणः कथ्यतेऽपि ।
रहितमहीत्य मानोपि न गच्छेज्जैनमंदिरम् ॥

करना, आठवें वर्ष गलेमें यज्ञोपवीत (जनेऊ) पहिरना, ब्रह्मचर्य पूर्वक विद्याभ्यास करते रहना इत्यादि विषय जैसे अपने धर्मशास्त्रमें हैं वैसे ही जैन शास्त्रोंमें भी हैं^१। परन्तु हम लोगोंमें जैसे सम्पूर्ण संस्कार नहीं किये जाते हैं वैसे ही जैनियोंको भी दशा है, संकड़ों जेनी तो यज्ञोपवीत संस्कार तक नहीं करने ।

(१८) जैन शास्त्रोंमें जो यति छंद कहा गया है वह अत्यन्त उत्कृष्ट है हममें उछ भी शंका नहीं ।

(१९) जैनियोंमें स्त्रियोंको भी यति वीसा लेकर परोपकारी कृत्योंमें जन्म व्यतीत करनेकी आज्ञा है। यह सर्वोन्मुख है। हिंदू समाज तो इस विषयमें जैनियोंका अनुकरण अवश्य करना चाहिये ।

वह ईश्वरका अस्तित्व नहीं मानते ऐसा नहीं है। किंतु ईश्वरकी छति सम्बन्धि विषयमें उनकी और हमारी समझमें कुछ भेद है। इस कारण जेनी नास्तिक हैं ऐसा निश्चित व्यर्थ अपनाद उन विचारों पर लगाया गया है ।

अतः यदि उन्हें नास्तिक कहोगे तो;

न कर्तव्यं न कर्माणि लोकस्य सृजति प्रभुः ।

न कामैरलंग्येषु स्वाभावस्तु प्रयत्नते ॥

नास्तोऽस्त्यचित्वायं न करणं गृह्यते विभुः ।

श्रमानो नापुत्रं जानं तेन मुच्यन्ति जन्तवः ॥ *

ऐसा कहनेवाले श्री कृष्णजीको भी नास्तिकोंमें गणना करना पड़ेगी ।

(२२) सृष्टिका कर्ता कोई ईश्वर है कि नहीं, यह विषय प्रथमसे ही वादग्रस्त है। शास्त्रज्ञोंका इस विषयमें आज तक एक मत नहीं हुआ।

(२३) मूर्त्तिका-पूजन श्रावक अर्थात् गृहस्थाश्रमी करते हैं मुनि नहीं करते। श्रावकोंकी पूजनविधि प्रायः हम ही लोगों सरीखी है।

(२४) हमारे हाथसे जीव हिंसा न होने पावे इसके लिये जैनी जितने डरते हैं इतने बौद्ध नहीं डरते। बौद्ध सभी देशोंमें मांसाहार अधिकताके साथ बारी है। आप स्वतः हिंसा न करके दूसरेके द्वारा मारे हुए वस्त्र आदिका मांस खानेमें कुछ हर्ज नहीं ऐसे सुमीतेका अहिंसा तत्व जो बौद्धोंने निकाला था वह जैनियोंको सर्वथा स्वीकार नहीं।

(२५) बौद्धधर्मके सम्बन्धमें अनेक ग्रन्थ उपलब्ध हुए हैं। इस धर्मका परिचय सबको हो गया है। परन्तु जैन धर्मके विषयमें वैसा अभी तक कुछ भी नहीं हुआ है। बौद्धधर्म चीन, तिब्बत, जापानादि देशोंमें प्रचलित होनेसे और विशेष कर उन देशोंमें उसे राज्याश्रय मिलनेसे उस धर्मके शास्त्रोंका प्रचार अति शीघ्र हुआ, परन्तु जैन धर्म निज लोगोंमें है वे प्रायः व्यापार व्यवहारमें लगे रहनेसे धर्म ग्रन्थ प्रकाशन संशील कृत्यकी ताक लक्ष देनेके लिये अवकाश नहीं पते इस कारण अगणित जैन ग्रन्थ अप्रकाशित पड़े हुए हैं ॥

(२६) युरोपियन ग्रन्थकारोंका लक्ष भी अद्यापि इस धर्मकी ओर इतना खिंचा हुआ नहीं दियाई गया था भी इस धर्मके विषयमें हम लोगोंका ज्ञान एक झरगा है।

(२७) जैन धर्मके काल निर्णय सम्बन्धमें दूसरी ओरके प्रमाण भी आने लगे हैं, कोल ब्रुक साहिब सरीखे पंडितोंने भी जैन धर्मका प्राचीनत्व स्वीकार किया है। इतना ही नहीं किन्तु बौद्धधर्म जैनधर्मसे निकला हुआ होना चाहिये ऐसा विधान किया है। मिस्टर एडवर्ड यॉमसका भी ऐसा ही मत है। उसरोक्त पंडितने Jainism or early faith of Asoka (जैनधर्म या “अशोक” की पूर्व श्रद्धा) नामक ग्रंथमें इस विषयके जितने प्रमाण दिये हैं वे सब यदि यहांपर दिये जाय तो बहुत विस्तार हो जायगा।

(२८) चंद्रगुप्त (अशोक जिसका पोता था) स्वतः जैन था इस बातको वंशावलीका दृढ़ आधार है। राजा चंद्रगुप्त श्रमण अर्थात् जैन गुरुसे उपदेश लेता था ऐसी मेगस्थिनीन Megasthenes ग्रीक इतिहासकारकी भी साक्षी है।

अबुलफजल नामक फारसी ग्रन्थकारने “अशोकने काश्मीरमें जैनधर्मका प्रचार किया” ऐसा कहा है।

रामतरंगिणी नामक काश्मीरके संस्कृत इतिहासका भी इस विधानको आधार है।

(२९) उपरोक्त विवेचनसे ऐसा मालूम पड़ता है कि इस धर्ममें सुज्ञोंको आदरणीय जंचने योग्य अनेक बातें हैं। सामान्य लोगोंको भी जैनियोंसे अविक शिक्षा लेना योग्य है। जैनी लोगोंका भविकपन, श्रद्धा, व. औदार्य प्रशंसनीय है।

१ देखो ‘दधी ट्रेडके नं० १ में पुरुषचिरोमणि पं० बालगंगाधर तिलक आदि महाशयोंकी सम्मति।

(३०) जैनियोंकी एक समय हिन्दुस्थानमें मैं दीन अति यतिहीन पूजूं हरन अथ संतापके । बहुत उन्नतावस्था थी । धर्मनीति, राजकार्य कीजे मनोरथ पूर्ण स्वामी यांचता तुमसे यही, धुरन्वरता बाइमय (शास्त्रज्ञान व शास्त्रमंडार) बलबुद्धि विद्या विभव संश्रुत हो सदा भारत मही ॥२॥ समाजोन्नति आदि बातोंमें उनका समाज इतना स्थिर रहे सुसंज्ञातिमय नृपजार्जका शासन यहां, जनोंसे बहुत आगे था । कपटी कुचाली क्रूर नृपका फिर न हो आसन यहां ।

संसारमें अब क्या हो रहा है इस ओर हमारे स्तरों सदा सत्कार्यमें धनवान धन हिय खोलके, जैनबन्धु लक्ष देकर चलेगें तो वह महत्पद पुनः हों कार्य करता कार्यतत्परसम्भित जिय खोलके ॥३॥ प्राप्त कर लेनेमें उन्हें अधिक श्रम नहीं पड़ेगा । संस्था भनेकों हैं खुलीं आगे खुलेगीं जो तथा, उज्ज्वल करें मुख देशता में मुख फलोंसे सर्वथा ।

(३१) जै व अमेरिकन लोगोंसे संघटन कर आनेके लिये बम्बईके प्रसिद्ध जै गृहस्थ पारलोक-वासी मि० वी० चन्द्र गांधी अमेरिकाको गये थे । धरना वहाँ जैन धर्म विपक्षक परिचय करानेका काम भी स्थित किया था । विद्वानगण तन स्वार्थ निन डंठा बनावें धर्मका, शरना वहाँ अति विमल विज्ञान तात्विक मर्मका ॥४॥ बन नवयुवकगण स्वयंसेवक फूटका सिर फोड़ दें, बंध एकताके सूत्रसे संबन्ध सुसदा मोड़ दें ।

आरीहमों 'गांधी फिलॉसोफिकल सोसायटी (Gandhi Philosophical Society.)' अपना जैन तत्त्वज्ञानका अध्ययन व प्रसार करनेके लिये जो समान स्थापित हुई वह उन्हींके परिश्रमका फल है । पुर्वसे मि० वी० चन्द्र गांधीकी अगाध मृत्यु होनेसे उक्त आरंभ किया हुआ कार्य अनर्गल रह गया है इत्यादि । व्यसनी बनें विद्याव्यसनके और कुव्यसन छोड़ दें, आलस अविद्या ईर्ष्या मदमोहसे मुक्त मोड़ दें ॥५॥ सीताह काव्यारंभ कर सीताह पूरा कर सकें, अलदेशात्म धन विभवयुत निज देश फिर भी कर सकें । नष्ट वायु विद्युच्छक्तिपर अधिकार अपना कर सकें, जन भोज विक्रय भीमसे निज देशका दलहर सकें ॥६॥



(लेखक पं० उमठानसिंहजी न्यायतीर्थ
दिगम्बर जैन महाविद्यालय मथुरा।)

प्रिय अनुभवी बन्धुओ ! जब आप इतिहासादि द्वारा अनेक देशोंके अनेक कालों परस्पर विरुद्ध सामाजिक व धार्मिक परिवर्तनोंके कारणों पर गहरी दृष्टिसे विचार करोगे, अर्थात् जब आप यह जाननेकी कोशिश करोगे कि किसी विविध देशमें किसी जमानेमें कोई धर्म व कुछ रीति-रिवाज और दूसरे जमानेमें कोई अन्य धर्म व दूसरे ही रीति-रिवाज क्यों हो गये ? जिस धर्मसे और जिस रीति रिवाजोंसे किसी देशवाले किसी समय अत्यन्त घृणा करते थे उसी देशवाले दूसरे जमानेमें उसी धर्मकी उपासना क्यों करने लगे तथा उन्होंने रिवाजोंको पसन्द क्यों करने लगे ? क्या उनकी पहली धार्मिक व सामाजिक स्थिति उनकी आत्मिक मानसिक व शारीरिक उन्नतिके लिये वास्तवमें बाधक थी ? जिससे कि उनको अपने धर्म व सामाजिक संगठनमें परिवर्तन करना पड़ा, अथवा पहले समयमें दोनों बातें उपयोगी मालूम देती थीं पश्चात् अनुपयोगी मालूम देने लगीं जिससे कि उन्हें उन बातोंको बदलना पड़ा, अथवा दोनों बातोंके उपयोगी रहते भी किसी दूसरे देशवालोंने उनको ऐसा करनेके

लिये बाध्य किया जिससे कि उन्होंने ऐसा किया ? तो आपको मालूम हो जायगा कि किसी देशमें किसी समय परिवर्तनके ये तीनों ही कारण आ उपस्थित होते हैं, कभी इसमेंसे कोई दो कारण और कभी केवल एक कारणसे परिवर्तन हो जाया करता है। जब कभी किसी देश पर किसी दूसरे देशकी केवल धार्मिक आक्रमण होता है तब आक्रान्त देशमें पहले वा दूसरे कारणसे परिवर्तन होता है, जैसे कि भारतीय बौद्धोंके धार्मिक आक्रमणके कारण चीन व जापान देशका धर्म बदल गया। इन दोनों देशों पर बौद्धोंको सैनिक आक्रमण नहीं करना पड़ा था किन्तु बौद्ध धर्मके बहुसंख्यक उद्भट विद्वानोंने इन देशोंमें जाकर धार्मिक हलचल मचाई थी और उक्त देशवासियोंके हृदय पर अपना धार्मिक सिद्धांत जमाया था, जिसके कारण उक्त देशवासी बिना किसी प्रकारकी ज्यादतीके स्वयं ही अपनी धार्मिक स्थितिको हेय और बौद्ध धार्मिक स्थितिको उगदेय मानने लगे थे और तैकड़ों वर्षोंसे अभी तक बराबर मानते चले आ रहे हैं। यदि बौद्ध लोग इस उपायको काममें न लेकर और रंगनेव आदि सुसज्जमान वादशाहोंकी तरह उन उपायोंसे काम लेते तो कदापि इस प्रकारकी व्यापक व स्थायी सफलता प्राप्त न कर सकते। किसी विविध देशसे अधिकसे अधिक जितना लाभ उठाया जा सकता है उतना लाभ प्राप्त करनेके चीन व जापान देश अच्छे उदाहरण हैं। इस प्रकारकी सर्वोत्तम सफलता प्राप्त करनेकी यदि किसीमें ताकत है तो वह केवल शांति व दृढ़ता पूर्वक किये हुए धार्मिक आक्रमणमें ही है।

सैनिक आक्रमणसे प्रथम तो सफलताके मंदिरमें निवास करनेकी इच्छा करनेवाली व्यक्तिवां ही प्रायः नष्ट हो जाती हैं, यदि कुछ बची भी रहती हैं तो वे विजित देशके सम्पत्तियों पर अपना सिका नहीं जमा सकतीं, और जो कुछ सिका जमता भी है वह स्थायी नहीं रहता, समय पाते ही विजित लोग विजेताओंको मार भगते हैं और उनके आदर्शकी अपने ऊपर चढ़ी हुई चादरको शीघ्रही उतार कर फेंक देते हैं तथा विजेताओंसे जातीय विरोध मानने लगते हैं। यही कारण है कि बहुत कुछ मेल जोल व सहवास होने पर भी औरंगजेबी अत्याचारको भारतीय हिन्दू अभी तक नहीं भूले। सामाजिक त्योहारों व मंछे ठेलोंके अवसर पर पूर्व वासनाओंका उदय अभीतक होता रहता है। इसी प्रकार नव कभी किसी देशपर किसी अविचारी व क्रूरकर्मी नरेशका केवल सैनिक आक्रमण होता है तब प्रायः तीसरे कारणसे परिवर्तन होता है जैसे कि कुछ मुसलमान बादशाहोंके जमानेमें बहुतसे भारतीय हिन्दूओंको जबरन अपना धर्म बदलना पड़ा था। धार्मिक व सैनिक आक्रमणकी तरह एक व्यापारी आक्रमण भी होता है जिसके कि कारण आक्रान्त देशकी व्यवहारिक वस्तुओंमें परिवर्तन हो जाया करता है, इस आक्रमणमें राक्षसता भी गुप्त रीतिसे प्रायः सहायक रहती है, सैनिक आक्रमणसे भी यद्यपि आक्रान्त देशकी सम्पत्ति आक्रामक देशमें जाती है तथापि व्यापारी आक्रमणसे आक्रान्त देशकी सम्पत्तिरा नितना हान होता है उनका और किसी प्रकारसे नहीं होता इत्यादि अनेक

प्रकारसे बलवानों द्वारा निर्बलोंपर आक्रमण करनेकी चिरंतन पद्धतिको ध्यानमें रखते हुए जब हम भारतवर्षकी वर्तमान दशा पर ध्यान देते हैं तो हमको मालूम होता है कि यह हमारा भारतवर्ष वर्तमानमें सभी प्रकारके आक्रमणों से सर्वांशमें आक्रान्त है।

अब हम पाठकोंको यह बतलाना चाहते हैं कि इन अनेक आक्रमणोंके होनेसे भारतमें जो परिवर्तन हुआ है अर्थात् भारतने अपनी प्राचीन परिस्थितिका त्याग करके जो नूतन विदेशी पोशाक पहनी है इससे भारतका कुछ हित हुआ है या अहित। तथा भारतकी प्राचीन परिस्थिति वास्तवमें भारतके लिये अहितकर थी जिससे कि भारतने उत्तका परित्याग किया अथवा प्राचीन परिस्थिति समय बदलनेसे अहितकर हो गई थी अथवा अहितकर न होते भी प्राचीनताको त्यागनेके लिये किसीने भारतको बाध्य किया है? इन तीनों बातोंपर विवेचन करतेसे मालूम होता है कि भारतकी प्राचीन परिस्थिति न पहले ही अहितकर थी और न समय बदलनेसे ही अहितकर हो गई थी किन्तु विदेशी सभ्यतासे आक्रान्त होकर भारतने अपनी प्राचीन परिस्थितिको भ्रमते अहितकर मान लिया था जिसके कारण भारतने अपने धर्म, अपनी भाषा, अपनी औषधियों, अपने यंत्रों, अपने रीतिरिवाजों, अपने व्यापारिक आदर्शोंको गिराकर भी मुग नहीं पाया। धार्मिक आदर्शोंको गिराकर भारत बहुत अंशमें जित प्रसार गड़बड़ी बन गया, उसी तरह जित भाषाके गौरवको गिराकर अपने उन्नतिपर

श्रीक साहित्यसे हाथ धो बैठ और अपने रत्नोंसे
 वावर हो दूसरोंके काच खण्डमें सुख देखनेका
 शौकीन बन गया। तत्काल अस्तरकारक अल्प मू-
 ल्यवाली पवित्र औषधियोंका परि त्याग कर जैसे
 भाग्यको बहुमूल्यवाली अविव्र विदेशी
 औषधियां अच्छी मालूम देने लगीं, उसी तरह
 मजबूत देशी कपड़ोंके स्थानमें विदेशी बहुमूल्य
 चटनीले वस्त्र उत्तम जतने लगे। सीधे सादे कुश्ती
 कबड्डी आदिक देशी खेलोंके स्थानमें भी
 द्रव्य लुटवाळ किरकेट, फुटवाळ आदिक विदेशी
 खेल ही मन माने लगे। नत्रोंको वावर नै होने
 वाली देशी तेंछनी रोशनीके मुझाबिलेमें बालक-
 पनमेंही चश्मा चढ़वाळ तीसी व खर्वाली गैम
 वगैरह की रोशनी अच्छी लगने लगी। इत्यादि
 बातोंके ऊपर विचार करनेसे जान पड़ता है कि
 जिस भारताय सभ्यताका निर्माण आत्मिक
 मानसिक व शारीरिक उन्नतिको पूर्णतया ध्यान
 में रखकर किया गया था उसका जितने अंशोंमें
 भारतने परित्याग किया है उतने अंशोंमें भार-
 तको केवल संताप ही भोगना पड़ा है। वर्तमान
 महासमयमें इस बातका अच्छी प्रकार परिज्ञान
 क्रेता दिया है कि जिस पाश्चात्य सभ्यताके लिये
 नई रोशनीके भारतवासी तृफान मचा रहे थे
 उसमें कुछ भी सार नहीं है। वह केवल बारा
 गनाकी तरह टंकरी इच्छुक है। अपने उद्देशकी
 सिद्धिके लिये स्वतःके नार जैसे सम्राटका वंशच्छेद
 का देना भी उसके लिये बायें हाथका खेल है।
 दुनियापर अनुचित आश्रित्य प्राप्त करना ही
 एक मात्र उसका लक्ष्य है। आत्मोन्नतिके
 स्थानमें तो आत्म-तत्त्वके विश्वासका ही इसके

द्वारा सहाया होता जा रहा है। डारविन जैसे
 महाश्रुतोंके दृष्टान्ताक्षेके कारण भारत जैसे
 धर्म प्रधान देशके निवासी भी सर्गोन्नतिके
 आवारभूत आत्मतत्त्वके विश्वाससे पराङ्मुख
 होते जा रहे हैं। मानसिक और शारीरिक वृत्ति-
 योंके द्राम और प्रेम व सहानुभूति तत्त्वकी इतिथी-
 का सच्चा चित्र खींचनेके लिये एक स्वतन्त्र
 लेखकी आवश्यकता है। इस गिरी अवस्थासे मुक्त
 होनेका भारतके पास कोई उपाय है या नहीं ?
 इस बातपर विवेचन करनेसे हमारी समझमें यही
 आता है कि जितने अंशमें भारत फिर अपने
 प्राचीन आदर्शमें महत्त्व देता जायगा। उतना
 ही इसका पुनरुत्थान होता जायगा, अपनी भाषा,
 अपने धर्म, अपनी औषधियों, अपने व्यायाम
 व अपनी वस्तुओंके व्यवहार किये बिना भारतके
 पास उत्थानके लिये और कोई उपाय नहीं है।
 विदेशी भाषाओंका परिज्ञान भी भारतके लिये
 इतने अंशमें बहुत अधिक हितका है कि दूसरे
 देशोंमें जाकर उसके द्वारा भारतके अमृतोपम
 धर्म रसका आस्वादन करा सके, और उनके
 हृदयसे जड़वादको निकास कर भगवान् कुंदकुंद
 तरीखे भारतीय महर्षियोंके अद्वितीय आत्मतत्त्व
 विषयक विवेचनका अंकुर जमा सके, जिससे
 उनकी महासमयदि कारणोंसे संतप्त आत्माओंको
 अनुपम शान्ति मिले, संसारका हित हो और
 भारतका यश फैले। ऐसा करनेको हम धार्मिक
 आक्रमण कह सकते हैं और इसके द्वारा, बौद्धों
 द्वारा चीन व जापानमें प्राप्त की हुई सफलता
 तरीखी, आशा कर सकते हैं।



वीर धनराज

पट्टनकी लड़ाईकी हत्याभयनाके परिणामसे दुःखित हो महाराज विजयसिंहने अजमेराध्यक्ष धनराजको अजमेर शत्रुओंके हस्तगत कर देनेका परवाना निकाला था। उसी आज्ञा पत्रको लिए महाराज विजयसिंहका दूत उनके समक्ष उपस्थित है। राजाकी इस कायरताकी विकट आज्ञा इस वीर हृदयसे कब मानी जाती। परन्तु: इधर वे चुपचाप कायर बन अजमेरको शत्रुके आधीन नहीं करना चाहते थे और उधर महाराजकी आज्ञाको पंग कर दोषी भी नहीं बनना चाहते थे। ऐसे ही विचारोंकी तरंगोंसे उनका हृदय-सागर तरंगित हो उठा। वे अपमंजसमें पड़ गए। वीर हृदय इस घृणित संविपर राजी न होता था। पश्चात् दिल ऊब गया—दोनों कायोंसे मुक्त होनेके लिए वीरात्माने अपनी आत्म बलि करनेकी ठानी। हाथकी अंगुली पर दृष्ट पड़ते ही हीरागदित मुद्रिका उतार ली और उस प्रणवातरु निर्दय हीरोको चूर्ण कर गलेमें रख जतार लिया। वही हीरा जो किसी संकटके समय आपदासे बचाता और मनुष्य समाज जिसके प्रातिके लिए देवान् कर्ता है उस हीरोने इस वीरात्माकी हृदयकी गतिको रोका उनकी ओजस्वनी भीषणश्रीरा सन्नात कर दी। वीरात्मा इस संसारसे विदा होना हुआ रुद्ध कर दूतसे बोला:—

“ऐ दूत! जा, और राजा से कह कि मैं राजाज्ञा इस तरह अग्ने प्राणोंकी आहुति देकर कर सकता हूँ और अब मेरे इस मृत देहपर हीसे कोई मरहटा अजमेरमें प्रवेश कर सकत है”।

धन्य है वीर सेनापति! तेरी वीरता और प्रभु आज्ञा—कारितको तेरा नाम सदैव राजस्थानके इतिहासमें स्पर्शक्षरोंमें लिखा रहेगा।

“Lives of great men all remind us
We can make our lives sublime,
And departing leave behind us
Foot prints on the sands of time.”
—Long fellow

पादको! आप सदृति प्राप्त वीरात्माके विषयमें विशेष, ज्ञाता होनेको उत्कण्ठित होंगे। लीजिए ज्ञान प्राप्त करिए और अपनी आत्माको भी इस वीरात्माके चरित्रसे मरपूर कर वीर और साहसी कीजिये। कारण कि उदार प्रतिष्ठित आत्माओंके ही मार्गका अवलम्बन सर्व साधारण करते हैं। मरहटा वीर सिन्धियाको टोंग (जयपुर निकटस्थ) में परानय कर मारवाड़ सेनापति भीमराज सिन्धिया अजमेरकी ओर खाना हुए। और सन् १७८७ में अजमेरको उन्होंने मरहटाओंके सुवेदार अजमेर बेगसे छीन लिया। यह नया प्रांत धनराज सिन्धियाकी अध्यक्षतामें सुवर्द्ध किया गया। मरहटोंने अपनी इतिको पूर्ण कर लिया था और तत्पश्चात् बार वर्ष पश्चात् फिर उन्होंने मारवाड़ पर आक्रमण कर दिया। मारवा और पट्टन इन दो स्थानोंमें युद्ध हुआ परन्तु अब मारवाड़ियोंसे विजय दृष्टी दृष्ट हो गई थी। थोड़े ही काळमें

मराठा सेनापति डी बोइनी (Do Boigno) क्षत्रियत्वको प्राप्त कर भारतमाताके भक्त हो
ने अन्तर पर आक्रमण किया और घेरा डाल उसके सुपुत्रो बनेगे। एवम् भवतु।

वहीं पढ़ रहा। धनराज-अन्तराध्यक्षने वीर-
तासे शत्रुका सामना किया और धीरता,
साहससे शत्रुको बाहर ही रोके रखा। इस
ही समय पर महाराज विनयसिंहकी उक्त
शोषणा धनराजको प्राप्त हुई थी। और

फिर जो कुछ हुआ वह पाठक पढ़ चुके हैं।

इसमें कोई शंका नहीं है कि धनराज ओसवाल
जैन वंशज थे। क्योंकि सिंधवी जो पहिले
नन्दवन वोहरा ब्राह्मण थे पश्चात् वि० सं०
१४६१ सिरोहीमें मुनि सुन्दरसूरि द्वारा
जैनवर्माश्रयायी हुए थे। जोधपुरमें उनके
स्थित होनेका समय वि० सं० १५३३ अथवा
सन् १७७६ ई० से है। राजपूतानेके ओसवाल,
भण्डारी, बच्छावत, आदि वंशोमें राज-
नैतिक और मोक्षा अवतरे हैं। इन्हीं भामदास
रत्नसिंह आदिने और दक्षिणके चाण्डायाय
आदि वीरराजाओंने जैनियोंका गौरव बनाए
रखा है। परन्तु खेद तो यह है कि हमने

इन वीरराजाओंके उपकार अथवा उनके जीवन
चरित्रोंको विस्तर दिया है। उभीका परिणाम
है कि हममें कोई देशभक्त राजनीतिज्ञ अथवा
लाट साहबकी कौंसिल आदिका मेम्बर नहीं है
और लाभ हमको 'तंडी चिट्ठिया' बहनोंसे भी
नहीं हिचाते। जो वास्तविक ही है कारण कि
अब निषेडोंका रहना इन युगमें दुःसाध्य
ही नहीं दुर्लभ है। आशा है पाठकगण
अपने पूर्वजोंके कृत्योंका स्मरण कर फिरसे अपने

समान हितेयी—के० पी० जैन
अलीगंज (एटा)

नोट—इस लेखकी सामग्री Mr. Tank's
S. D. Jains से ली गई है एतथे हम उनके
आभारी हैं। लेखक—

ल।

जुवां छुरों कलासे अब सदा रेही बहम निकले।
फते सरकारकी होवे दुआये दम पदम निकले ॥
मिटे झगड़ा लड़ाई सब, आराम हरम हो।
उद्का सार दिलमेसे, इलाही एकदम निकले ॥२॥
रहे नामोनिशां कुछ भी नहीं, आलममें जमनका।
तभी इंगलैंडो हिन्दुस्तान का रंजो अलम निकले ॥३॥
यंदे इक्काठ शाहशाह पंजुम जाजका ऐसा।
कि जिसका ता कयामत भी नहीं सानी निकले ॥४॥
इलाही जोग दे सरकारकी तलवारमें इतना—
जिथर बंद जाय लाकड़का कलम सरंघे कलम निकले ॥५॥
पतन का अम इसे 'गन्ना' बढ़नेमें नतीला क्या।
मईगा गजल तेरी जो उसी दम यो सेहस निकले ॥६॥

पन्नालाल जैन,—

फुलेरा—(राजपूताना)

शुभ कामना।

हेपानल पर स्नेह—सलिल—कण—वर्षण होवे।
पतनदशा गत हो विस्मृति—पट—तलमें सोवे ॥
वीन फूटका कहीं न कोई भी जन बोवे।
डाह, मनोमालिन्य, कपट सब भारत खोवे ॥
मधुर प्रेम वीणामयी मधुरवकी झकार हो।
विश्वज्यास भारत मधुर वाद्य—जन्तु टकार हो ॥

कन्हैयालाल जैन

(कस्तुरी—)

—निद्रात्याग—

जातिवीरो ! नींद छोड़ो शीघ्र ही उठ जाइए,
 देखो सवेरा हो गया है नैचमल, धो डालिए ।
 बालंबिकी है अरुणमय चित्तमोहक यह छाया,
 औजस्यवादी विस्तारती है तिमिरमलको जो हटा ॥ १ ॥

प्राची दिशाकी वांति देखो-विदुषको लज्जित करे ।
 आरोग्यरूपी अमृतकी आकाश सद्गुण करे ।
 मंद शीतल सुरभिवाली परेन कैसी चल रही,
 प्राप्त करनेसे जिसे आनन्द लहरी आ रही ॥ २ ॥

रात्रिके मुकुलित सभी ही कमल अब हैं गिल रहे,
 भ्रमर उन पर उड़ रहे हैं-सुरभि उनकी ले रहे ।
 पक्षिगण सब नींद तनकर मधुर स्व हैं चोलते,
 उद्योतस्वागत हेतु मानों श्रेष्ठ शब्द अटोलते ॥ ३ ॥

चक्षुषी निरहिणी मित्र रही है प्रेमकर निज नाथसे,
 मंदिरोंमें बना रहे घंटा पुजारी हाथसे ।
 लचनन करने लगे हैं नित्य कर्मोंको सभी,
 ऐसे मनोहर समयको पा हो रहे प्रगुदित सभी ॥ ४ ॥

कर जोड़ वरके स्वेष्ट प्रभुसे विनय सारे कर रहे,
 भक्तिभाव लगा लगा कर हर्ष उरमें भर रहे ।
 मांग भांसे कुछ कहेवा रही बालक गा रहे,
 देखो कौन ले पुष्पकोंको चलाता जा रहे, ॥ ५ ॥

लेकर गुहारी हाथमें सब नाक गैलोंको लें ।
 कुड़े कजोटेकी घोंमें सभी जन बाहर करे,
 स्नान तागे नीरसे करने लगे हैं जन सभी,
 निद्रा तुम्हारी आँखसे लेनी निद्राई नहिं अभी ॥ ६ ॥

पक्ष्य सुन्दनोंमें पकड़ कर दुःख गौसे कुल रहे,
 गोपाल गो महिलादि ले लगे नराने जा रहे ।
 रोगिगण भी इस समय कुछ सुदित होने हैं सभी -
 कार्य अपना कर रहे हैं प्रवृत्तिसे प्रणी सभी ॥ ७ ॥

जागो उठो अब तो सबको कार्य अपना कर दो,
 लेकर जग ही कबड़े आरम्भमें न मड़ा करो ।
 इतनी आशमें माग दी जो बंद भी हो न गया,
 आरम्भके पा वंश विजित भी तुम्हारे नहिं दगा ॥ ८ ॥

दिगंबर जैन

THE DIGAMBAR JAIN.

माना कलाभिविधिषेध तच्चैः सत्योपदेशैरुगवैपणाभिः ।

संबोधयत्प्रामिद प्रवर्त्तताम्, दैगम्बर जैन समाज-मात्रम् ॥

वर्ष १२ वॉ.

वीर संवत् २४४५. माघ, विक्रम सं० १९७५.

अंक ४.



हम बड़े दौंसे देख रहे हैं कि भारतवर्षीय दि० जैन महासभा अपने महासभाको - स्थानसे पीछे ही हटती सफलता कैसे चली जा रही है, जबकि मिलेगी ? देशकी अन्य सामाजिक सभाएं वर्षोंमें नहीं त्रितु दिनपर दिन उन्नतिके मार्गपर पद बढ़ा रही है। भारतवर्षीय महासभाकी अवस्था ही जैन समाजकी अवस्था कही जाय तो कुछ असंगत न होगा, क्योंकि सभाओं और उसके सदस्योंका अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है; जैसे विना सभाओंके इस संगम कोई समाज उन्नति नहीं कर सकती वैसी ही विना उत्तरी सदस्योंके सभाकी भी उन्नति नहीं हो सकती है। परन्तु सभाओंका कार्य उनके बटे पदाधिकारियोंपर विशेष निर्भर रहता है। जिस सभाके सभापति, उपसभापति, मंत्री उपमंत्री उत्तरी और उद्योगी होने हैं वे अन्य सदस्योंमें उत्साह फैलाकर सभामें आनेके लिये बाध्य करते हैं। इसका नया उदा-

हरण दिल्लीकी कांग्रेस है। कांग्रेस होनेके कुछ दिन पहिले अनेक पत्रोंमें चर्चा होती थी दिल्ली कांग्रेसमें सफलता न प्राप्त होगी। प्रतिनिधि एवं दर्शक बहुत थोड़े आएंगे क्योंकि थोड़े ही दिन पहिले बम्बईमें विशेष कांग्रेस हो चुकी है। परन्तु ऐसी सफलता इस बार कांग्रेसमें मिली वैसी किसी वर्ष सफलता नहीं मिली थी। इस सफलतामें कांग्रेसके समापति माननीय मालवीयजीके उत्साह और उद्योगका बहुत भाग है। वे ही एक हजार किसानोंको कांग्रेसमें लाये थे जिससे कांग्रेस यथार्थमें राष्ट्रीय सभा इस वर्ष कहलाई। उसी प्रकार कांग्रेसके अन्य कार्यकर्त्ताओंका भी उत्साह कम न था। यहां पर प्रश्न हो सकता है कि अब उसमें सभासद ही नहीं या समाज भाग ही नहीं लेती-सहायता नहीं देती तो कार्यकर्त्ता क्या करें ? परन्तु जरा विचारने पर इस प्रश्नका उत्तर उन्हें स्वयं आ जायगा। बहुतसी सभाएं ऐसी भी हैं जिनके प्रारंभ कालमें केवल उनमें दो चार ही आदमी थे परन्तु उन्होंने ही ऐसी उन्नति की है आज उनमें हजारों आदमी दिखाई पड़ते हैं। इसका कारण कार्यकर्त्ताओंका उत्साह, उद्योग और कार्य करके दिवाना ही है।

यद्यपि इस समय महासभामें समस्त दि० जनसमाज शामिल नहीं है और न सहानुभूति ही



भी विचारपूर्वक नहीं की गई है। व्याख्यान न देना अर्थात् बोलनेका सर्वथा निषेध कर देना कभी भी योग्य नहीं कहा जा सकता। यदि सरकारको सेठजी से भय था तो इतनी ही शर्त करवाती कि तुम राज्यनैतिक व्याख्यान न देना। ऐसी आज्ञासे धार्मिक व्याख्यान देनेमें भी बाधा उत्पन्न कर दी गई है जो एक प्रकारसे धर्ममें हस्ताक्षेप करना ही है जिसे कोई भी मनुष्य न स्वीकार करेगा। हम नहीं समझते कि सरकारने ऐसी शर्त कागकर क्या अपना लाभ सोचा है। सेठजीने जो कुछ धार्मिक ज्ञान संपादन किया है उसको दूसरोंपर न प्रगट कर सकनेसे उनको कितना दुःख होगा और जैनसमाज भी जब किसी समाके अवसर पर उनका सरकार द्वारा इस प्रकार मुंह बन्द देखेगी तब उसके हृदयमें सरकारके प्रति जो भाव उत्पन्न होंगे उनको हम नहीं कहना चाहते। धार्मिक व्याख्यान भी न देने देना सरकार अपनी कानूनका उलंघन करती है और एक मनुष्यके जन्म-सिद्ध हकों पर पानी फेरती है। तीसरी शर्त भी सेठजी जैसे विद्वान, अध्ययन-अध्यापन करनेवाले पुरुषके साथ करना विनष्ट अविचार शीलताकी परिनायक है। जो मनुष्य प्रारम्भ ही से लड़कोंके पढ़ानेका कार्य कर रहा है और उसी पर जिसकी भीषण निर्भर है उसको यह कहना कि तुम लड़कोंको न पढ़ा सकोगे कभी भी ठीक नहीं हो सकता। सरकार सेठजीको यह आता देनेके साथ कोई कलम कानून भी निर्दिष्ट कर देती तो बहुत अच्छा होता। फिर हम ही अनुमान लगाते हैं। सेठजी कोई

धनवान नहीं हैं, उनके घरमें दस बीस हजार रुपया भी न होगा जिससे घर पर बैठे २ खांय। अपने और कुटुम्बके भोगभोगके लिये उनको कोई उद्यम अवश्य करना पड़ेगा। मनुष्य जो कार्य प्रारम्भसे करता आता है उसीको वह भली प्रकार कर सकता है। सेठजीका कार्य अध्ययन और अध्यापनका था उसे सरकार बन्द कर देगी। अब प्रश्न है सेठजी क्या करेंगे? यदि उनके पास अधिक धन होता तो कोठी खोल कर कोई अच्छा व्यापार कर सकते थे परन्तु उनके पास इतना धन नहीं है। वर्तमानमें यदि वे व्यापार करना चाहें तो सिवाय हरदी मिरच या आटा दालकी जैसी दुकानके वे अन्य व्यापार नहीं कर सकते जिसे सेठजी कभी स्वीकार न करेंगे। यदि यह कहा जाय कि वे किसी रईसके यहां रह कर कार्य करें, यह भी न हो सकेगा क्योंकि सेठजी सरकारके कोषमानन बन गये हैं, वे राजनैतिक कैदी हैं इस कारण सरकारके भयसे कोई भी रईस उनको अपने यहां न रखेगा। इसके सिवाय यदि वे कोई गवर्मेन्ट सर्विस करना चाहें वह भी न होगा क्योंकि सरकार भी ऐसे मनुष्योंको अपने आंकड़ोंमें स्थान न देगी। तब आप ही विचारिये सरकारने उनके पीछे ऐसी शर्त लगा कर उनको किस कार्यके योग्य रखा। हमने सुना है कि सेठजी इन शर्तोंसे स्वीकार नहीं करना चाहते। स्वीकार भी कैसे करें? किसी विद्वान मनुष्यको इस प्रकारकी शर्तोंमें छोड़ना न छोड़ना नास्तिक है। उसके सामने जैसा बेजोरा काशप्रद बैसा आने रहने का

गृह। यह तो है नहीं कि विद्वान् केवल इस बात पर मरता हो कि जेलमें पड़े रहनेमें शहरके आलीशान मकान, मोटरगाड़ी, वागवगीचे नहीं देखनेको मिलते हैं इससे क्लो जेलसे छूट जायगे यही नियामत है उसको तो अपनी शिक्षाका उपयोग करना है, दूसरोंका परोपकार करना है अपनी आत्माका उल्याण करना है, तब उसके पीछे ऐसी शर्तें लगाकर छोड़ना कभी भी वह पसंद न करेगा।

अब हमारा सरकारसे यही निवेदन है कि उनको यदि छोड़ना ही है तो जो तीन शर्तें ऊपर बताई गई हैं उनको न लगाये। ऐसी शर्तें लगाकर छोड़ना न छोड़ना बराबर ही है। बिना कोई अपराध लगाये पांच वर्ष तक जेलमें रटना यही बहुत हो गया।

* * *

हमें यह लिखते हुए खेद होता है सर सेठ

हुकमचन्दजीने अपनी ४९

सर सेठ वर्षकी अवस्थामें एक स्त्री

हुकमचन्दजीका और कई पुत्र पुत्रियोंके

अनुचित विवाह रोते हुए चौथा विवाह एक

और उचित, १२ वर्षकी बालिकाके

दान। साथ मिती मात्र बड़ी ८

को कर लिया। सुना गया

है कि पेटीवालेको ४००००) दिये गये हैं।

यदि कोई साधारण मनुष्यने ऐसा किया होता

तो उसके लिये हमें कुछ विशेष कहनेकी आव-

श्यकता नहीं थी परन्तु एक ऐसे पुरुष जो

जैन समाजके स्तंभ समझे जाते हैं और भारत-

वर्षोंदि० जैन महासभा एवं अन्य धार्मिक

संस्थाओंके समापति एवं और संस्थापक हैं उनके द्वारा ऐसी अवस्थामें विवाह कर लेना कभी प्रशंनीय नहीं कहा जा सकता। सेठजीकी अवस्था कन्यासे चौगुनी है इसके सिवाय सेठजीकी एक सुशीला धर्मपत्नी मौजूद है इनका-स्त्रीका स्वास्थ्य भी अब अच्छा है फिर न गालूम सेठजीने ऐसा विवाह करके क्या लाभ सोचा है? सेठजीने स्वयं ऐसे विवाहोंकी निंदा की है फिर स्वयं सेठजीने सभ्य समा-

जमें घृणात्मक समझे जानेवाले विवाहके कर-

नेका साहम किय प्रचार किया? हम

यह अवश्य कहेंगे कि सेठजीने ऐसा विवाह

करके समाजके साथ अन्याय किया है और

अपनेको नैतिक बलमें निर्बल सिद्ध किया है।

आज सेठजीने ऐसा विवाह किया है कल कोई

और दखपती मनुष्य ऐसा ही विवाह कर लेगा

ऐसा होनेसे समाजमें एक और कुरीतिका

प्रवेश होगा जिससे समाज और नर्जरित होगी।

हमें मालूम होता है कि सेठजीने ऐसा विवाह

करके जहां एक अनुचित कार्य किया है वहीं

विवाहके अवसर पर ढाई लाखका दान

करके समाजसे बाह्यवाही लूटनेका कार्य भी कर

दिखाया है। अर्थात् सेठजीने बड़नगरके

शुद्ध औपधालयको एक मुश्त

१५००००) डेढ़ लाख रुपये प्रदान

दिये हैं और इसके सिवाय हमने यहभी सुना

है कि सेठजीने जैन विधवाओं, वेशार आदिमियों,

और अनाथोंके लिये एक लाख रुपये और निकाले

हैं। हम यह स्वीकार करेंगे कि सेठजीने यह

उपयोगी और उचित दान किया है परन्तु



यह भी बिना कहे न रहेंगे कि सेठजीने अपना जो अशुचित विवाह किया है उसीको टाकनेके लिये ही यह उचित दान किया है ।

* * *

इस परिषद्का प्रथम वार्षिक अधिवेशन परत-वाड़ा (इल्लिचपुर) में गत

शास्त्रीय परिषद् । ता० ११-१२ जनवरीको हो गया । सभा-

पतिका आसन श्रीयुग पंडित वंशीधरजी न्यायतीर्थने ग्रहण किया था । अधिवेशनमें पं० घनश्यामजी काशडीवाल, पं० खूनचंदजी पं० माणिकभंदजी न्यायाचार्य, पं० मन्मथ-नलालजी न्यायालंकार, पं० देवकीभंदनजी पं० गौरीलालजी, पं० उदयलालजी पं० राम-प्रसादजी, पं० बासुदेवशास्त्री आदि उपस्थित थे । सभापतिने अपना व्याख्यान ज्ञानही ही दिया था । अन्य विद्वानोंके भी व्याख्यानोंकी खूब धूम रही । उसमें कुछ प्रस्ताव अर्थात् हिन्दीकी पाठ्य पुस्तकों व धर्मकी पुस्तकों बनाना, जैन आर्य ग्रन्थोंपर होनेवाले आक्षेपोंका उत्तर देना, अंग्रेजी इतिहासकी भूलें निरखवाना, पेटेलबिल्का विरोध, पुस्तकों जो प्रकाशित हों उनकी नाच करना इत्यादि उपयोगी बातें हुए हैं । पं० उदयलालजीने परिषद्को १०० प्रदान किये थे । परिषद्के लिये करीब ७२०) का बंदा हो गया ।

परिषद्के कार्यवाहीसे विदित होता है इसके द्वारा अब कोई उत्तम कार्य होंगे ।

* * *

इस सभाका भी अधिवेशन परतवाड़ा में सकल-लोकोंके साथ ही गया ।

खंडेलवाल दि० सभापतिका आसन अनु-जैन प्रा० सभा । पनी विद्वान श्रीयुग पं० घनश्यामजी काशडीवा-

लने ग्रहण किया था । आपने अपना मुद्रित व्याख्यान पढ़ा जो कि कुछ विशेष महत्वशाली नहीं था । इस सभाने अपनी जातिमें बहुतसी कुरी-तियां बन्द कर दी-हैं । इस वर्ष भी कुछ रीति-रिवाज ठीक की गई । आगामी वर्ष इसका अधिवेशन सिवनीमें होगा ।

यहां दो आम सभाएं भी हुईं । सभापति अजैन विद्वान वकील बनाए गये थे । शास्त्रीय परिषद्के विद्वानोंके व्याख्यानोंसे अजैनों पर जैनधर्मकी अच्छी छाप पड़ी ।

खंडेलवाल जैन ।

(नासिक)

खंडेलवाल जातिका यह सुप्रसिद्ध नासिक पथ नई सनघनके साथ उपयोगी लेखों और कविताओंसे अलंकृत होकर पुनः जनवरीसे निकलना प्रारंभ हुआ है ।

खंडेलवाल जातिकी हीन दशा सुधारना और उसमें नवनीयनका संचार करना इसका मुख्य ध्येय है । साथ ही सामाजिक विषयकी भी यह गवेषणा पूर्ण चर्चा करता रहेगा ।

यदि आप जैन खंडेलवाल हैं तो इसके स्वयं साहक बनिए, और अपने भाईयोंको साहक बनाकर इसका प्रचार करिये । वार्षिक मूल्य १। रु. मात्र ।

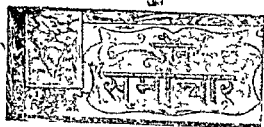
विज्ञापन ।

स० ज० के अधिपति साहक बनिए और व्यापकी योग्य हों अतः विज्ञापन दाताओंको विशेष लाभ होगा ।

मेनेजर " खंडेलवाल जैन "

प० गौतमप्रसाद (मालवा)

नोट—असमर्थ जाति भाईयोंको यह पत्र बनकी इच्छाद्वारा वन मूल्यमें रिहा किया गया ।



हिंसा बंद—सत्यमार्गी जीवदया प्रचारिणी सभा गुनांक उपदेशक पं० गौजीलालजी परवार १९ दिन मैहर स्टेशनमें ठहरे। यहां शारदादेवीके आगे घोर हिंसा होती है उसके रोकनेका प्रयत्न किया। वाममार्गियोंसे वादविवाद हुआ उसमें सत्यकी जय हुई और राजगुरु महाराजने लिख दिया कि देवी देवताओंके आगे जो पशुबलि करते हैं वे भूल करते हैं। इसलिये मैं अपने शास्त्रनुसार आज्ञा देता हूं प्रायेक सनातनधर्मी चाहे जो वर्ण हो देवी देवताओंके नामसे व्यर्थ हिंसा न करे और आ मेवा पिष्ठान चढ़ाना व ब्राह्मणको भोजन देना स्वीकार करे।

बृद्धविवाह—सुना है कि देहलीके सेठ मोहनराजजी (हीरालाल शिवनारायण फर्मके मालिक) संस्थापक हीरालाल जैन विशाल्य अपना विवाह कराना चाहते हैं। आपकी अवस्था ६० वर्षसे अधिक है। इतनी अवस्थामें विवाह करना सर्वथा अनुचित है।

दक्षिण महाराष्ट्र दि० जैन सभाका वार्षिक अधिवेशन स्तननिविशेख पर ता० २०, २१ जनवरी और १ फरवरी तक हुआ। सभापति का असन श्रीमंत पंचपणाराय बल्लालराव देसाई अमीनभावीने ग्रहण किया। विशेष हाल फिर प्रष्ट करेंगे।

स्वर्गवास—देहलीके लाला मेहरचन्द्रजीका ७० वर्षकी अवस्थामें मितो पृष सु० १९ को स्वर्गवास हो गया। आपने १॥ लाल रूपया खर्च करके एक मंदिर देहलीमें बनवाया था जिसकी प्रतिष्ठा सं० १८३९में हुई थी मंदिरका नाम मेहरमंदिर है जिसे देवनेके लिये लोग बहरसे अते हैं।

बिना शर्त छोड़ो—देहलीमें तारीख २७ जनवरीको होमबल लीग और मुसलिम लीगका जस्ता हुआ उसमें यह प्रस्ताव पास हुआ कि सेठो अर्जुनलालजी बिना शर्त छोड़े गंग।

आगरामें सभा—गन ४ जनवरीको यहां एक सभा लाला नगीमलाली रईस दिहलीके सभापतित्वमें हुई। पंटेर विलफा विरोध किया गया और वाइसरायको तार भेजा गया। यहांकी जैन वोटिंगरी इंगरत ठीक करनेके लिये ८९० का चन्दा हुआ।

आदर्श स्वार्थ त्याग—लखनऊनिवासी श्रीधुतन वू अजितप्रसादजी एम. ए. एल. एल. वी० वकीलने अपने वकालत छोड़कर समान सेवा करनेका व्रत लिया है। गत ९ जनवरीको लखनऊकी जैन समाजने आपका 'हार गोटे' सम्मान किया था। हम भी बाबूजीको इस स्वार्थ त्यागके लिये धन्यवाद देते हैं और भवना करते हैं आप अपने उद्देश्यमें सफल हों।

दिठानका चियोग—करहल निवासी पं० गुलनारीलालजी जो कलकत्तेमें रहते थे, उनका ६६ वर्षकी अवस्थामें पोप कृष्णा ११ को करहलमें स्वर्गवास हो गया। आपनेही कलकत्तेके मंदिरकी प्रतिमा खंडित हो जानेके बाद



शान्त्यर्थ सवा लाख नाप और हवन किया था । पं० देवकीनन्दनजी आदि १२-१३ और

रायसाहब हुए—गोरखपुरनिवासी बाबू अभिनन्दनप्रसादजी सुल्तार नये वर्षकी खुशीमें राय साहबके पदसे सम्मानित किये गये हैं ।

सेवाकाफल—गत ५ जनवरीको कलकत्तेके विशुद्धानन्द सरस्वती विद्यालयमें स्व० बाबू धन्वलाज्जी अग्रवाल जैन अठानीका तैलचित्र हाईकोर्टके माननीय जस्टिस सर अशुतोष चौधरीके द्वारा खोला गया ।

गंगाजलीका मुक्तदमा—यावत्तक जैनियों पर वैष्णवोंके द्वारा यह मुक्तदमा चलाया गया था कि जैनो रथयात्रा निकालते समय विमानमें गंगाजली नहीं रखते जैसा कि हमारा इनका पहिले फैसला हो गया था इससे हम लोगोंका दिल दुःखता है । परन्तु अदालतने इस मुक्तदमोंको वैष्णवोंकी ओरसे उच्च शर्तकी दस्तावेज न पेश कर सवनेके कारण रारित कर दिया ।

मुंदेलखंडमें दौरा—सेठ मणिकचन्द्र हीराचन्द्र जे० पी० टूट फंडके उपदेशक पं० पीताम्बरदासजी इस बार मुंदेलखंडका दौरा करनेवाले हैं ।

वार्षिकोत्सव—दि० जैन सिद्धान्त विद्यालय मुनेनारा ऋषिवां वार्षिक अविदेशन तृ० ५, ६ जनवरीको देहलीके रंजित लाल जग्गीपट्टजीके सभाप्रतिष्ठमें हो गया । कई उपयोगी प्रश्नार प्राप्त हुए ।

संज्ञन पे ।

देशदेशको निम्नलिखित स्थानोंसे इस प्रकार सहायता प्राप्त हुई—

१९०४) परतवाड़ा, ११०१) सुल्तानपुर
११०१) इलिचपुर १३९३) अननगांवसुर्जी
३८८९) कारंजा ११११) अमरावती
१७७८) नागपुर । कुल जोड़ ११८३७

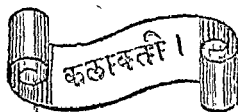
धर्मात्माओंकी भावनापूर्ति ।

जिस प्रकार आरोग्यताके लिये शुद्ध भोजन और पवित्र नलकी आवश्यकता है उसी प्रकार मस्तिष्कके आनन्दोत्पत्तिके लिये सार्विक आहार और पवित्र प्रभावार्पक स्थानकी आवश्यकता है तथा उसी प्रकार धार्मिक दृष्टिसे धर्मात्माओंकी भावनापूर्तिके लिये जिनालय—देवमन्दिर है । ऐसे पवित्र स्थानोंमें व्यवहार करने योग्य वस्तुएं भी परम पवित्र ही होना चाहिये और तब ही पावुओंकी पावना तृप्त होती है इसीसे कहेंगे हैं कि—

द्रव्योंकी पवित्रतासे भावोंकी पवित्रता होती है ।

पवित्र वस्तुएं यही हमारा नुद्रालम्ब हैं ।

दहीग धूप द्रव्या ३) २), अण्डरचीर १), (विना सीधरी, यारखोर २) रतग १) बरुगी ११), १११) शुद्ध धारणी नदी केसर १११) १११), विद्यावती अण्डरि लख टाउ २) यरग २) १) ११) शुद्ध शिल जीउ ११) तेलें, पांच टोलाफा २) मंतीका गुरमा सीधो ११) ।



(लेखक—श्री हस्तिकोर जैन, विजयगढ़)

१

जैन महिलारत्न सती कलावती देवशाल नामक नगरके सुप्रसिद्ध राजा विजयसेनकी पुत्री थी। वय क्रम १६ वर्ष अनुमान होगा। वह असामान्या सुन्दरी युवती थी। जो कोई उसे देखता मोहित हो जाता था; सच तो यह है कि जिन लोगोंके तृपित नेत्र युवती रमणीका रूप लावण्य देखनेको लालायित रहते हैं कलावती उन लोगोंकी आराध्य देवी थी। उसके सुकुमार शरीरकी अतुलनीय माधुरी देख धीरे पुरुषोंका मन भी चलायमान होजाता था, उमरते हुए नवीन यौवनकी छटा उसके अङ्ग-रसे पट्टी पड़ती थी। निदान जैसी वह सुन्दरी थी वैसे ही कला कौशल्यने उमकी अनुपम रूप कलाको देख निरन्तर उत्सर्गें वास किया था।

जिस प्रकार किसी सुचतुर चित्रकारकी क्लिखी तस्वीरके समान कलावतीका रूप लावण्य था उसी प्रकार वह चित्रकलामें अति निपुण थी। देवशालमें जिसने मन्दिर थे सनमें ही उसके अंकित चित्र तथा मूर्तियाँ थीं।

माता पिता चाहते थे जैसी सुशिक्षिता कलावती रूप लावण्य तथा गुणमें अद्वितीय है वैसा ही वर लाभ हो; परन्तु बहुत दृढ़ सौम्य करनेपर भी किसी राजकुमारको न पा सके।

एक दिन भोजने दुःखितचित्त कलावतीसे कहा—“जैसी तू परम सुन्दरी है वैसा वर प्रकृतिने कदाचित् नहीं उत्पन्न किया।”

कलावती मुस्कराई—“माताजी, सौन्दर्यके दो प्रकरण हैं, एक आन्तरिक दूसरा बाह्यिक अर्थात् किसीका वक्षस्थल सुन्दर क्रान्तिमय है तो किसीका हृदय पवित्र, और किसीकी बुद्धि प्रखर है तो किसीकी सुठाम देह यच्छति। अस्तु। पहिले आप यह वतों किस्की खोजमें हैं।”

दीर्घ निश्वास त्याग माताने कहा—“जामाता सर्वांग सुन्दर, मर्मवेत्ता जैननिष्ठ हो एक मात्र यही आकांक्षा है।”

कलावती कहने लगी—“अङ्ग सौन्दर्य तो क्षणभंगुर है, हृदयकी पवित्रता वास्तवमें सुस्थिर है—एक बुद्धिमान होना ही श्रेयस्कर है; क्योंकि जिनमें बुद्धि है वे अपने शरीरको भी सुन्दर बना सकते हैं। श्री उनके चरणोंमें है, वीरशक्ति शाली हैं। और बुद्धवान नहीं है तो सर्वांग सुन्दर होनेपर भी उसका प्रभाव अवश्यमेव शरीरपर पड़ेगा, अमक्त दरिद्रताका प्रादुर्भाव होगा वरन् सांसारिक दुःखागारमें निबुद्धि-मूर्खता ही प्रधान है। ‘रूपयौवनसंपन्ना वि-जालकुलसंभवाः। विद्याहीना न शोभन्ते निर्गन्धा इव किंशुकाः॥’ अस्तु मेरी सम्पत्तिसे बाह्य सौन्दर्य पर मुग्ध होना गितान्त भूल है।

यद्यपि माता शिक्षिता थी परन्तु कलावतीका उत्तर सुनकर उसे अनुनाप हुआ। उसने सोना कलावतीने सुवाक्यामैं पद्मपेण किया है अतएव चाहती है जैसे हो शीघ्र विवाह होजावे।



वात क्या थी क्या समझी गई । वास्तवमें संसारमें ऐसे विरले ही हैं जो दूसरोंके मनो-भावको पूर्णतया समझनेमें समर्थ हैं वरन् प्रायः ऋषि मुनियोंके मोनायलम्बनका यही कारण विदित होता है ।

मांको विपन्न देख कलावती कहने लगी—
“माताजी, आप किस विचारमें निमग्न हैं ? जिसने मुझे मृना उसने मेरे योग्य वर भी अवश्य उत्पन्न किया होगा । प्रकृति पुरुषकी सम्पत्ति है और सम्पत्ति बिना स्वामी रह नहीं सकती । प्राथमिक ही फलकी बांछा करना भारी भूल है; सब स्वतन्त्रताके आधीन हैं “यदमावि न तद्भावि भाविचेत्त तदन्यथा । इति चिन्ताविपन्नोऽयमगदः किं न पीयते ॥” (कुछ सोचकर) माताजी, यह ध्यान रखना—मेरे चार प्रश्न हैं जो कोई उनका उचित उत्तर दे सके उसीके साथ मेरा विवाह हो अन्यथा....।

२

कलावतीका एक सहोदर भाई जयसेन था जिसकी अमाधारण तेजस्विता बुद्धिमत्ता और दयालुतामें पराकाष्ठा देख प्रमोसा किये बिना नहीं रहा जा सकता, चदिनके साथ उसका असीम स्नेह था ।

“एक दिन वह बड़े मन्दिरमें दंगल कर रहा था कि सहमा एक भावुक पथिकने मन्दिरमें प्रवेश किया ।

पथिक मन्दिरकी प्रत्येक मूर्ति जो कलावतीके सुकोमल हाथोंकी मूर्ती हुई थीं, बड़े ध्यानमें देखने लगा ।

शिल्पकारी तथा कला कौशलमें जैनी अधिक प्रवीण हैं । उनके स्वरचित मन्दिर देखने मात्रसे यह भलीभांति सिद्ध होजाता है कि उनके आविष्कारोंमें क्या विशेषत्व है । यद्यपि बौद्धोंके स्तूप भी शिक्षा ग्रहण करने योग्य हैं परन्तु उनमें प्राचीन शिल्पनैपुण्य गुरुतर न मिलेगा । वरन् आधुनिक जैन मन्दिरोंमें जितना व्यय होता है अन्य जातियां कहीं बहुत पीछे हैं । काल दोष तथा अन्य कई कारणों वश जो भग्नावशेष मन्दिर देखनेमें आते हैं वे सब प्रायः जैनियोंके शिल्पचातुर्य—कला कौशल्यके एक मात्र आधार हैं । आवृ पर्वतका मन्दिर भारतवर्षमें ही नहीं वरन् संसार भरमें अपनी शैलीका आदर्श है । बहुतोंका मत है है भारतमें जो कुछ भी प्राचीन मन्दिर और उद्यान हैं वे सब जैनी और बौद्धोंके ही स्मारक हैं ।

जयसेनने उस पथिकको मूर्ति देखनेमें अतिव्यस्त देखकर पूछा—“तुम इतने ध्यानके साथ क्या देख रहे हो ?”

नवागत पथिकने दीर्घ निश्वास त्याग कर कहा—“इन मूर्तियोंके देखनेसे बोध होता है कि किसी बुद्धिमान् शिल्पकार द्वारा निर्माण हुई हैं नो मानसिक और कान्धनिक शक्तिमें अष्टिनीय है, वास्तवमें उसकी विवेचना मनोज्ञ है ।”

अभी पथिक अपना मनोभाव प्रकट नहीं कर सका था कि अनायास मन्दिरमेंसे निकलकर द्वितीया विपन्न—जयसेनके पांवमें दम दिया ।



विष अति तीव्र था । काटने ही जयसेन डगमगाकर धराशायी हो गया । शरीर मिथल हो गया, आसक्ति मन्द पड़ गई और देखते ही देखने प्राणवायु अस्थि पिंजरको परित्याग कर गई । मन्दिरके पुजारी अति व्यकुल हुए । अन्त पुरमें राजा रानीने सुना तो अति विलाप करने लगे । थोड़ी देरमें राजकर्मचारियोंसे मन्दिर भर गया । अममयश्री मृत्यु सनके आर्तनाड एनम् मन्दिरकी प्रति उनिसे इंट इंट रुदन करती प्रतिभासित होने लगी ।

यह दृश्य देख पथिकने कहा—“धवगओ न, मै अभी युवराजको सचेत किये देता हूँ ।”

युवराजका शव बाहर लाया गया । दिन दोपहरका समय अश्रुपूर्ण नेत्रोंको फाड फाड देखनेसे निस्तब्ध अर्द्ध रात्रिसे अधिक भयावना प्रतीत होता था । पथिकने अतिरिक्त सब ही दुःखमें किं कर्तव्यनिमूढ पापाणवत राडे थे ।

पथिकने अपनी शोली गोली । औषधि निम्नल नर्मम्यान पर लगादी, नीमके पत्तोंसे बयार झप कने लगा । १५-२० भिनटमें ही जयसेनने नेत्र खोल दिये, मानो घोर निद्रासे जागृत हुआ हो । चतुर्दिकू अनेक मनुष्योंको विस्मयसे देख कारण पूछने लगा ।

जयसेनने प्राणदाता पथिकका समाचार मिला तो वह अति प्रसन्न हुआ । उसने पथिकको हृदयमें लगा लिया । उरन बड़े समारम्भसे राजप्रसादमें प्रविष्ट कर अति आदर सम्मानमें कई दिनों तक आतिथ्य सत्कार किया ।

जयसेनने पथिककी कलावतीमें भेंट कराई । कलावतीने देखा पथिक चित्र और मूर्ति

निर्माणमें अति चतुर है वह अति प्रसन्न हुई उसने अनेक रहस्य चित्र विद्यामें शिक्षण दिये ।

पथिकका नाम दत्त था । वह शत्रु पुगधीश महाराज शखका कोई प्रधान कर्मचारी था । वह चिरकालमें सुन्दरी युवतीका कोई नित्र बनानेकी अभिलाषासे ध्रमण कर रहा था । कलावतीको देखकर उसकी चिर बाछा सफलभृत हो गई । शत्रु २ उसने कलावतीका चित्र भली भांति अंकित कर लिया और ता राजा विजयसेनसे पारतोषिक लाभकर स्वदेशको पयान किया ।

३.

दत्त शङ्खपुर पट्टच गया । शत्रुने पूछा—“पथिककी परिक्रमाकर तुमने क्या विचित्रता देरी ?”

दत्तने दीर्घनिश्वास त्यागकर कहा—“मैं देवशाल गया था । पृथ्वीनाथ, क्या प्रशंसा करूँ राजा विजयसेनकी पुत्री स्वनामधन्या कलावती, मानो अपमरा होकर पृथ्वी पर आई है । उसके पुनीत सौन्दर्यश्री तुलना नहीं हो सकती । कतिपय राजा उसके लिये लालाधित हो रहे हैं किन्तु सच तो यह है ऐसा रमणीय चराचरमें बड़े सौभाग्यसे मिलता है (दीर्घ निश्वास त्याग कर) और जैसी वह लावण्यवती है वैसे ही कलाकौशलमें भी अद्वितीय है ।”

शत्रुने अवहेलना कर कहा—“दत्त ! तुम कवि हो, कवियोंका सम्भरण अलङ्काररति नहीं होता । जन्तु, इसका क्या प्रमाण है कि कलावती जसमान्या सुन्दरी युवती है ?”

दत्तने कलावतीका चित्र दिग्वा दिया । शख देखनेही मुग्ध हो गया । कलावतीके रूप



सौन्दर्यका अधिकार शंखके हृदयपट पर अंकित हो गया, प्रेमान्धकारमें उसे कुछ सुझाई न देता था, विक्षिप्तकी नाईं कुछ काल तक चित्र देखनेमें स्थिर रहा, पुनः उत्तेजित हो कहने लगा—“यह किस चड़भागीकी पाणि-ग्रहीता है ? ”

दत्तने कहा—“अभी कुमारी हैं । माता पिताने योग्य वर खोजनेकी अनेक चेष्टाएँ कीं परन्तु सब विफल मनोरथ । अन्तमें यह निश्चय किया है कि जो कोई कलावतीके चार प्रश्नोंका उत्तर देगा वही उसके अमूल्य करका भागी होगा । ”

शंखने अति चिन्ता निमग्न हताश हो पूछा “क्या किसी प्रकार दर्शन हो सकते हैं ? ”

दत्त बोला—“राजन्, देखियेगा क्या ! प्रश्नोंका उत्तर देकर पाणिग्रहण कीजिये । ”

शंखने दीर्घ निश्वास त्याग कर कहा—“यदि उत्तर न दे सका तो जीवनसे हाथ धोने पड़ेंगे । ”

दत्तने कहा—“उपायेन हि यच्छपयं-उपायसे सब कुछ हो सकता है । ”

शंखने पूछा—“कित्त उपायका अवलम्बन करें ? ”

दत्तने कहा—“तप कीजिये; क्योंकि बिना तप मान मित्रता है न प्रतिष्ठा, विद्या न ज्ञान; फिर ऐसी श्री-सर्व गुणसम्पन्न बिना तप हस्तगत नहीं हो सकती । ”

दत्तने आकाशीय दृष्टिसे दत्तकी ओर देख कर पूछा—“कीमत्ता तप क्यों ? ”

दत्तने कहा—“श्रीजिन-आदेशित ब्रह्मचर्य-व्रत पालन कीजिये । सरस्वतीकी आराधनासे आपका हृदय पवित्र होगा, बुद्धि निर्मल और अन्तःकरण शुद्ध हो जायगा । अतएव जब कलावती प्रश्न करेगी तो उसका प्रतिविम्ब वाक्-देवीकी अनुग्रहसे आपके हृत्पिण्ड पर प्रदर्शित होगा और आप सुगमतासे उत्तर दे सकेंगे । तप परम पुरुषार्थ है अल्पज्ञ इसकी महिमा नहीं जानते । ”

शंखने अनुमोदन कर कहा—“मैं अभी किसी जैन महात्मासे दीक्षा लेकर ब्रह्मचर्य-व्रत धारण करूंगा । ”

४

कलावतीका अभी विवाह नहीं हुआ कीई उसके प्रश्नोंका उत्तर नहीं दे सका, निदान विजयसेनने स्वयम्बर द्वारा विवाह निश्चय किया है ।

शंखको पूर्ण विश्वास था । दत्तके आश्वासन दिलानेपर देवशालकी ओर पयान किया । सम्भव है दत्तको प्रश्नोंका मर्म ज्ञात हो । अस्तु । उसने एक पिठारा बनाया जिसमें चार मूर्ति क्रमशः इस प्रकार स्थित कीं कि एकके उत्तर देनेके पश्चात् स्वयम् पिठारेमें दूसरी निकल आवे और उत्तर देकर अन्तर्धान हो जावे ।

देवशालमें रंगमानी सुसज्जित थी । कुत्तियों पर राना महाराजा विराज रहे थे । श्रेणीबद्ध अनेक रामाओंके अंतिम पार्श्वमें एक ओर शंख भी जा बैठा । सोरी देरमें राजकुमारी कलावती नयमाल डिये रंगमूर्तिमें आई । उसने किसी ओर भ्रूक्षेप न की, फटाफटसे शंख और दत्तको देखा कर मुग्धरा गई ।



प्रतिहारीने सबको सम्बोधन कर उच्च स्वरसे चारों प्रश्न कह सुनाए “ १-देव क्या है ? २-गुरु कौन है ? ३-तत्त्व क्या हैं ? ४-परमतत्त्व कौन हैं ? ”

अनेक राजाओंने अपने अनुभव और बुद्धि अनुसार उत्तर दिया परन्तु कोई उत्तर युक्ति-संगत न था । अतएव यही प्रश्न आगे २ प्रतिहारी कहता जाता था और पीछे २ जय-माल लिये रतिकी अनुहार कलावती नीची दृष्टि किये मन्द गतिसे शनैः २ चली जाती थी । जिस राजाके पाससे कलावती निकल जाती थी वह दीर्घ निश्वास त्याग कर रह जाता था ।

अब सबको मौनावलम्बित देख प्रतिहारीने कहा—“ जातीयताका कुछ विचार नहीं है, जैन मात्र सब हो अथवा रङ्ग, उत्तर देकर सहज ही इस अमूल्य श्रीकरका भागी बन सकता है । ” क्रमशः इसी प्रकार कहते और कुछका कुछ उत्तर सुनते कलावती शंखके सन्मुख विद्यमान हुई । शंख पिढारा रंगभूमिके बीचोबीच रख फटने लगा—“ कलावती स्वयम् अपने मुखसे प्रश्न कहे यह कलाका पिढारा स्वयमेव उत्तर देगा । ”

थोड़ी देर तक सन्नाटा रहा परन्तु राजमहिषी श्रीमती और राजा विजयसेनके आग्रहसे कलावतीने सभामें इस प्रकार प्रश्न कहना प्रारम्भ किया “ १-देव कौन है ? ”

पिढारैमेंसे निकलकर एक प्रतिमूर्तिने उत्तर दिया—“ अर्हन्त भगवान्—” सर्वज्ञो जितरागादिदोषस्त्रैलोक्य पूजितः । यथास्थितार्थवादी च देवोऽर्हन् परमे-

श्वरः ॥ ” अर्थात्-व्यलेश उत्पन्न करनेवाला किसी प्रकारका कारण, और अशुभ प्रवृत्ति बढ़ानेवाला मोह न हो, जिनकी महिमा तीनों लोकमें प्रख्यात हो, जो सर्वज्ञ और शाश्वत सुखका स्वामी हो, अष्ट प्रकारके छिष्ट कर्मोंसे रहित निर्मल (जीवन्मुक्त) और जो सब नीतियोंका रचयिता हो । ”

पहिले प्रश्नके उत्तरसे सन्तुष्ट हो कलावतीने दूसरा प्रश्न किया—

२-“ गुरु-कौन है ? ” पिढारैसे दूसरी पूतरी (प्रतिमूर्ति) ने निकल कर कहा—“ सिद्ध-”

“ महाव्रतवरा धीरा भैक्षमात्रोपजीविनः । सामायिकस्था धर्मोपदेशका गुरवोमताः ॥ ” अर्थात् जो भिक्षा मात्रसे वृत्ति करनेवाले, सामायिक व्रतमें सदैव रहकर अपने और दूसरोंके हितार्थ धर्मका उपदेश करते हुए निरन्तर पृथ्वीपर अन्य जीवोंके क्लेशको वचा करके विचरते हैं और धीर होकर महाव्रतोंको धारण करते हैं तथा-अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, त्याग (निर्ममत्व)रूप पांचों महाव्रतोंका मन, वचन कायासे स्वयम् पालन करनेवाला, दूसरोंको कराने वाला और अन्य करनेवालेकी स्तुति करनेवाला ही गुरु है । ”

उत्तर ठीक है प्रसन्न हो कलावतीने तीसरा प्रश्न कहा—

३-“ तत्त्व-कौन हैं ? ” पिढारैसे तीसरी प्रतिमूर्तिने निकलकर उत्तर दिया—
तत्त्व नौ हैं-१ जीवतत्त्व-इसका मुख्य लक्षण

चेतन्य हैं । संसारमें जीवस्थिति ६ प्रकारसे है ।

२ अजीवतत्त्व—चेतन्यरहित वस्तु अजीव अन्तिम प्रश्न कहा—
है । इसके ५ भेद हैं ।

३ पुण्यतत्त्व—जिसके उदयसे जीवको सुख हो वह पुण्य है जो ९ प्रकारसे उत्पन्न होता है ।

४ पापतत्त्व—जिसके उदयसे जीवको निरंतर दुःख हो । पाप मनुष्यको १८ प्रकारके बन्धनमें डालता है ।

५ आश्रय तत्त्व—जिन कारणोंसे जीवके साथ पुण्य पापका सम्बन्ध होता है उन्हें आश्रय कहते हैं । इसके ५ रूप हैं ।

६ संवरतत्त्व—जीवके साथ कर्मका सम्बन्ध न होने देनेवाले हेतुओंका नाम संवर है । इसके सब रूप ५७ हैं ।

७ निर्मरा तत्त्व—जो कर्म जीवके साथ बंध गए हैं, जिनके कारण जीवको अनेक अवस्थाएं भोगनी पड़ती हैं उनका एक देश झड़ना सो निर्मरा है । यह १२ प्रकारके तप द्वारा साध्य है ।

८ बन्धतत्त्व—मिथ्यात्व, अविरति और प्रमाद आदि आश्रयके रूपोंद्वारा ग्रहण किये गए कर्म पुद्गलोंका आत्माके साथ (तृप्त जलके अभेद मेल समान) मेलका नाम बन्ध है । यह ४ प्रकारका है ।

९ मोक्षतत्त्व—ज्ञानावरणीय आदि सभी कर्मोंका नाश होनेपर आत्मा जब निर्मल और शुद्ध हो जाता है अर्थात् जीव जब अपने मूल स्वरूपको प्राप्त हो जाता है तब उसे मुक्त कहते हैं ।

यथोचित उत्तर पाकर कलावतीने चौथा

अन्तिम प्रश्न कहा—

४ स्वतत्त्व—क्या है ।

पियारेसे चौथी मूर्तिने निकल कर उत्तर दिया ।

“इन्द्रिय दमन—अहिंसा परमो धर्मः
जिनका मूलधार है ।”

उत्तर पाकर राजकुमारी कलावती अति प्रसन्न हुई उसने नमित मुख लजाते हुए महाराज शंखके पास आ कंठमें जयमाल डाल दी ।

अपूर्ण

क्या इशारा कर चले ?

किस लिए दुनिशमे आए, क्या सहारा कर चले ।
धर्मको हलका किया, अपरमको भार कर चले ॥
धर्म जीवन खो दिया, लेकिन न देश और जातिका—
कुछ नहीं उच्चार किया, पर विनारा कर चले ॥
यो दिया है बीज ऐसा फूटका, पर परम स्व-
मेलसे रहने न पावे, गपको न्यास कर चले ॥
तन मनमे मित्रताई—ऐसी साधोधी की ।
शील संदम देम जप तप, सब किया कर चले ॥
मनमे जीमका जो बीर, लग रहा है तिलविला ।
सो नही दूँगा दरमिअ, ये नशा कर चले ॥
धन्य जीवन है उसीका, और चाँही है सुगी ।
देशका भार जानिका जो जो सुचारा कर चले ॥
जगके माया आलमे रंग पर न लीनी कुछ कर ।
गन दिवके दीमने होम गुजारा कर चले ॥
बिम लिए 'पमा' मुन्नी पाद फिर करने लगे ।
दरमारीके लिए गन रुप इतारा कर चले ।

मनदीप-

पद्मालाल जैन



जैनियोंमें डकुल ब्रह्मिण्ड और समाजकी अवस्था ।

वस्तुका स्वभाव परिवर्तनशील है जो बात आज सचची है उसको कल भी सचची ही होगी यह नहीं कह सकते । द्रव्य, क्षेत्र दाल और भाव इनकी अपेक्षा वस्तुका स्वभाव हर समय फलता रहता है । हमारे पूर्वज किसी जमानेमें देनिक एक मन अन्न खाते थे, मगर आज यदि कोई पुरुष इतना अन्न खानेकी चेष्टा करे तो उसको समाज मूर्ख ही मतलायगी । आज एक कुटुम्बका पुरुष जिसके कि भाइयोंको खानेको भी नहीं मिलता है अपने बल द्वारा दूसरे भाईकी रोगी भी खा जानेका प्रयत्न करे या बलपूर्वक छीनले तो, चाहे उससे डरनेवाले या उसकी श्लाघा करके कुछ पड़ा हुआ टुकड़ा खानेवाले भले ही प्रशंसा करें लेकिन समाजकी दृष्टिसे, धर्मकी निगाहमें और मनुष्य जातिके कर्तव्यकी दृष्टिसे तो वह पुरुष निन्दनीय ही कहलायगा इसी दृष्टांतको कुछ आगे बढ़ाइये और देखिये कि यदि इस तरहसे करनेवाला उस कुटुम्बका एक मुख्य पुरुष है एवं सर्वका अनुकरणीय है तो उसका दृष्टांत उसके छोटे भाईको और उससे तीसरेको लेते कुछ समय नहीं लगेगा और कमजोर ओर छोटे भाइयोंको इसके लिये नुकसान उठाना पड़ेगा । मतलब यह है कि उस कुटुम्बमें एक सभ्य और कायदेसर संचालन होनेके विरह एक

हुल्लडसा खडा हो जायगा और हरपल्य अपनी मनमानीसी करनेको उद्यत होगा । कहा भी है —
यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तद्वर्तेर जना ।

स यत्प्रमाणं कुर्वते स कस्तदुपतेन ॥

हमारे समाजमें कुछ समयसे कुछ नेतागण अपने २ पुनर्विवाह पर उतारू हुए हैं । हेतु इसका यह उनलाया जाना है कि किसीकी स्त्री बीमार है तो किसीकी स्त्रीसे बनता नहीं है और किसीकी स्त्री वृद्ध हो जानेसे उनके पति-के कानिल नहीं रही हैं । बाह रे हेतु ! एक स्त्री तो बीमार है दूसरीको तो मुनीश्वरोंका वरदान है कि कभी बीमार होगी ही नहीं । एक स्त्रीसे बनती नहीं, दूसरीके हृदयका तो बीमा विक चुका है कि कभी नाराज नहीं करेगी । एक स्त्री तो वृद्ध हो गई है परतु खुदका ठेका लिया जा चुका है कि कभी सफेद घाल आयेंगी ही नहीं । क्या यही कारण हमारी समाजकी उन्नतिके होंगे ?

पाठनो, मेरा इन समाजके नेताओंके प्रति निमी तरहका द्वेष नहीं है और न मैं इनको किसी तरहकी हीनदृष्टिसे देखता हूँ बल्कि बहुतमी बातोंके लिए ये बहुत ही आदरणीय और समाजके शुभचिंतक हैं परतु फिर भी यदि ये पुरुष कोई सामाजिक दृष्टिसे अयोग्य बतावें करें तो उनको सुझाना तथा ऐसे दृष्टिसे हटाना अपना परम कर्तव्य है । हमें यहां यह देखना चाहिए और बहुत ही शांति और भीर परिणामोंसे देखना चाहिये कि आया हमारे नेताओंका यह कर्तव्य दृष्ट है या अनिष्ट । हम इस कर्तव्यको दो दृष्टियोंसे



देखते हैं, एक धार्मिक दृष्टिसे और दूसरी सामाजिक दृष्टिसे ।

धार्मिक दृष्टिसे बहुतसे भाइयोंका मत है कि यह बात लाभकारी है क्योंकि यदि ये इस तरहसे अपना पुनर्विवाह नहीं करेंगे तो एक तरहसे व्यभिचारमें प्रवृत्त हो जावेंगे जो कि विशेष हानिकार होगा। क्या ही अच्छा हेतु है। परन्तु हमारे यहां यह कहाँ लिखा हुआ है कि केवल विषयोंकी तृप्ति ही विवाहका उद्देश्य है। विषयोंकी तृप्ति ही यदि इष्ट है तो इसके लिये एक दूसरे पुरुषको मिलके साथ विवाह होनेसे उसका धर्म और काम दोनोंका निर्वाह होता उसे स्त्रीसे बध्दित रखना कहाँ तक ठीक समझा जा सकता है। विषयोंकी तृप्तिके लिए एक स्त्रीका सहधर्मिणिपना नष्ट करना कहाँ तक धार्मिक कर्तव्य कहा जा सकता है। और इसका भी तो क्या प्रमाण है कि दूसरी आदियाँ हो जिनसे ये लोग विरक्तुल पक्के घृणाचारी ही बने रहेंगे ।

दूसरे यदि सामाजिक दृष्टिसे देखें (यद्यपि इन दोनोंमें परस्पर यनिष्ट सम्बन्ध है) तो यह बात बहुत ही समानको उगल पुर्यल कर देनेवाली मालूम होती है। हमारे समानमें विभवा विवाहका जोर फलनेमें ही बहुत ज्यादा मपा हुआ है इसमें यह टबल आदियाँ करना एक तरह की आहुति देना है। जिस समानमें पहले ही इनने अविकाशित पुरुष विद्यमान हैं, जिस समानमें पहले हीमें मङ्गलिकोंकि जिसे हजारोंही भेट देने की पद्धति है उन समानमें पनाइयों और जातिके अगुओंका दोर

विवाह करना उन अविवाहित पुरुषोंको विधवा विवाहके लिये उत्तेजन देना नहीं तो और क्या है। क्या वे पुरुष नहीं हैं ? क्या उनको घनाइयों की जैसी विषय वासना नहीं है ? क्या वे संतानोत्पत्तिके लिये असमर्थ हैं ? यदि नहीं तो फिर उनको अविवाहित अवस्थामें रखकर समाजकी एक कन्याको विषय तृप्तिके लिये उनसे छीन लेनेका धनवानोंको क्या अधिकार है ? समाज उनके चलने डरती है या उनके धनके लालचमें आगई है। इस वक्त तो समाज चुप बैठी है लेकिन जब किसी युवा पुरुषने और किसी तरहका प्रस्ताव निकाला तो समाज एकदम अन्याय अन्याय चिल्लाने लगेगी। कारण वगैर कार्य नहीं होता यह प्रसिद्ध है। क्या अन्यायके कारणोंको मिलाना अन्याय नहीं है ? यदि नहीं है तो वह कार्य भी अन्याय नहीं है और लोग बहुत ही तंग हालतमें आनेसे उसका अवलंबन करेंगे ।

समान—जैनसमानके वीरो, उठो और इन कारणोंको मिटानेका प्रयत्न करो, इन महा-नुभावोंको समझाओ, नहीं तो याद रखो गुम्हारे समानमें भी शत्रु जातिके समान नाते और तलाकोंकी रस्में जारी हो जायगी। इन नेता-वनोंके शब्दोंके साथ और उन महानुभावोंमें टबल आदियोंके विरुद्ध एक नम्र विनयोंके साथ मैं यह लेख समान करता हूँ कि ईश्वर इनकी सुखि दे ।



वीर्य अथवा घातुक्षीण क्या है ?

पुरुषोंकी निर्बलताके अभियोगोंमें वीर्यता अभियोग प्रधान होता है। कुछ लोग वीर्यको घात अथवा घातु कहते हैं। आज कल मारतों इस व्याधि (रोग)की प्रबलता विशेष देखी जाती है। सबसे ज्यादा घातुक्षीण और प्रमेहके रोगियोंकी संख्या हमारे औषधालयमें दिन प्रतिदिन बढ़ती जाती है। इसका क्या कारण ? घातु अथवा वीर्य क्या है ? तर्हण पुरुष कदाचित् समझते हैं कि शरीरमें किसी जगह वीर्यका तालान भरा है। इस तालानसे जितना चाहे वीर्यका उपयोग कर लिया जावे। वे ऐसा भी मानते दिखाई देते हैं कि यह तालान खाली होगा तो शक्तिकी २-४ गोलियां खाकर फिर भर लिया जायगा और इच्छातुसार उसका उपयोग किया जायगा। यह उनके मनका भ्रम है। इस भ्रमकी दूर करनेके लिये वीर्य क्या वस्तु है उसका यहां विचार किया जावेगा। वीर्यसम्बन्धी उपयोगी वर्णन वैद्य कल्पतरु तथा बृहद्विषय रत्नाकर नामक वैद्य ग्रन्थोंमें अच्छी तरह किया गया है उसी परसे आज हम अपने प्रिय पाठकगणके सामने संक्षेपसे वर्णन करते हैं।

आप जो भोजन करते हैं पाचनद्वारा उस भोजनकी एकके बाद दूसरी ऐसे सत्त घातुएँ बनती हैं। यह बात समझने योग्य है। भोजन पकानेके लिये हमारे शरीर की पाँचों भागोंमें सत्त भिन्न

भिन्न कोठे हैं। जो भोजन पेटमें जाता है वह एकके बाद दूसरे ऐसे सत्तों कोठोंमें होकर जाता है। अब इस बातकी अधिक स्पष्ट शब्दोंमें समझ लेंगे।

जो भोजन अपने मुँहमें चबाया जाता है वह आमाशयमें चुरता है और आंतोंमें पकनेको ठेला जाता है। उस भोजनका पहले स्वेद रस बनकर नाड़ियोंमें चढ़ता है। भोजनकी यह पहली क्रिया है। यह रस दूसरे कोठेमें अधिक पककर लाल रक्त बनता है। यह दूसरी क्रिया है। इस रक्त पर फिर तीसरे कोठेमें विशेष क्रिया होती है और रक्तसे मांस बनता है। यह तीसरी क्रिया है। मांससे मेद अर्थात् चर्बी बनती है। यह चौथी क्रिया है। चर्बीसे अस्थि अर्थात् हड्डी बनती है। यह पाँचवीं क्रिया है। हड्डीसे मज्जा—हड्डीके भीतरका मावा बनता है। यह छठी क्रिया है। और इनकी सब क्रियाओं और समयके पश्चात् मज्जासे वीर्य बनता है—यह बात तुम जानते हो। इस वीर्यका शरीरमें कोई कुवाँ तथा तालान और कोई टांकी नहीं है कि जिससे जल्दीसे भा लें। सारे शरीरमें व्याप्त है। जैसे रक्त, मांस और हड्डी वीर्य अपनी बारीक बारीक नाड़ियोंसे निचुड़कर जाता है। यदि वनतमें रहे तो थोड़े भ्रमसे जितना चाहिये उतना वीर्य उपयोगमें लिया जा सके, किन्तु वनतमें न हो तो वीर्यकी नाड़ियोंको निचोड़नेमें भारी श्रम होता है। वीर्यको वनतमें रखनेका नाम व्रतचर्य है।



किन्तु वीर्यके सम्बन्धमें एक बात और भी समझने योग्य है। वह यह कि जैसे रसोईकी क्रियामें पाक बिगड़ जाता तथा सड़ जाता और खराब हो जाता है वैसे ही शरीरकी इस प्रयोगशालामें भोजनका जिस तरहका मसाला काममें दया जाता है उसी तरहका पाक तयार होता है और अंतमें वीर्य भी वैसे ही गुणवाला होता है। सुन्दर और सात्विक उत्तम उत्तम भोजनका वीर्य उत्तम और शुद्ध बनता है। और बिगड़े हुए अथवा तापसी भोजन अथवा व्यसनकी खराब चीजोंका वीर्य खराब बनता है। जैसा भोजन वैसा वीर्य। यह बात अवश्य ध्यानमें रखने योग्य है। जैसे रक्त शुद्ध होनेकी जरूरत है वैसे ही वीर्य भी शुद्ध होना चाहिये। जब रक्त बिगड़ता है तब वीर्य भी बिगड़ता है, वीर्य कम होता है और निर्बल बनता है अर्थात् पतला होता है। इतना ही नहीं किन्तु वह बिगड़ता है यह बात बहुत लोग नहीं समझते। जैसी रक्तकी परीक्षा है वैसी ही वीर्यकी भी परीक्षा है। जैसा रक्त काला पड़ता और उसे दुर्गन्ध आती है वैसे ही वीर्यमें भी होता है। वीर्यके लिये शिथिल करनेवाले और दवाओंके लिये हाथ हाथ करनेवाले क्या इन सब बातोंका विचार अपना परिशोध करने दें? कभी नहीं।

क्या? इत्यादि विषयोंमें अनजान लोग भारी आन्ति तथा भूलमें रहते हैं; इसलिये उसका भी थोड़ा विचार कीजिये।

जैसे दस्तका जुलाब लेनेसे दस्त होता है और पेशाबका जुलाब लेनेसे पेशाब अधिक होता है इसी तरह वीर्यको भी एक प्रकारका जुलाब लगता है। उससे वीर्य शरीरसे खिच आता है। यदि एकाधिक जुलाब लीजिये अथवा हल्का जुलाब लीजिये तो सिर्फ आंतोंका मल निकल जाता है। किन्तु यदि जमावगोटा जैसा कड़ा जुलाब हो तो आंतोंके सिवाय शरीरकी नाड़ियोंमेंसे रक्तको भी खींच निकालता है और उससे शरीर निर्बल पड़ जाता है। इसी तरह वीर्यके जुलाबको समझो। अच्छा, तो वीर्यका जुलाब क्या और वीर्यको जुलाब किस तरह लगता है? पुरुषको स्त्री वीर्यके जुलाबकी वस्तु है अर्थात् पुरुषके मनमें स्त्री सम्बन्धी संकल्प, स्त्रीका स्मरण, स्त्रीका स्पर्श और स्त्रीका आलिंगन इत्यादि शरीर और मनकी चेष्टाएं पुरुषके वीर्यको उत्तेजित करती हैं अर्थात् वीर्य बाहर आनेका प्रयास करता है। उसीका नाम वीर्यका जुलाब है। वास्तविक रीतिसे देखिये तो मनही वीर्यको उत्तेजित करनेवाली वस्तु है और उसीसे स्त्री सम्बन्धी इच्छा अर्थात् 'काम' को 'मनोन' नाम दिया गया है।



जुझान लेनेसे शरीर बहुत ही निर्बल हो जाता है। इसी तरह निर्बल शरीरसे वीर्यका जुझाव हुआ करे अर्थात् वीर्यका उपयोग बारबार हो अथवा दूसरी रीतिसे वीर्य बाहर जाय तो उससे भी शरीर बहुत कमजोर हो जाता है बल्कि जुझाव कड़ा लगनेसे उसके परिणाममें मरोड़ हो जाती है, रक्त पित्त आदि गिरते और पीड़ाके साथ गिरते हैं। ऐसा अनुभव कड़ा जुझाव लेनेवालेको हुआ ही होगा। वीर्यको जब ज्यादा जुझाव लगता है तब भी इसी तरह होता है। अधिक रेचकसे मल निकल जानेपर पीव और रक्त गिरने लगता है अर्थात् आंतोंसे खून निकलना शुरू होता है और पेटमें मरोड़ होती है। इसी प्रकार वीर्यको अधिक जुझाव लगनेसे वीर्य खतम हो जानेपर यदि वीर्यका जुझाव लगता रहे अर्थात् मन वशमें न रहकर वीर्यके उपयोग करनेकी मूर्खता चली रहे तो वीर्य समाप्त हो जाते ही उसके पीछे वीर्यके बदले रक्त भी गिरता है और जैसे मरोड़में पीड़ा होती है वैसे ही इसमें पीठके ऊपरी भाग और रीढ़की नसे खिंचती और सारे शरीरकी नसोंका एकदम पीड़ाके साथ खिंचाव होकर पीछे शरीर बिल्कुल शिथिल पड़ जाता है। वीर्य सम्बन्धी बहुत जुझाव लेनेवालोंको अर्थात् अतिविषयी निर्बल पुरुषोंको इस बातका अनुभव अवश्य होना ही चाहिये।

इस तरह पुरुषका वीर्यस्त्री सम्बन्धी विचारोंसे उत्तेजित होता और बाहर जाता है। अतः स्त्रियोंको वीर्यका जुझाव कहे तो कहा जा सकता है। किन्तु उनका सब आधार उसने मनोवृत्ति पर है।

दृढ़ मनवाले पुरुष अथवा मनवृत्त वीर्यवाले पुरुष कदापि एकदम उत्तेजित नहीं होते हैं और उनके वीर्यको जल्दी जुझाव नहीं लगता। इससे विपरीत निर्बल मनवाला पुरुष अथवा निर्बल व कम वीर्यवाला पुरुष जल्दी उत्तेजित हो जाता है, जल्दी कामी बनता है और जल्दी वीर्यका जुझाव लगता है। स्त्री सम्बन्धी विचार करते अथवा स्त्रीके साथ बातें करते करते शरीरसे वीर्य निचुड़ कर बाहर निकल जाता है उसीका नाम वीर्यका जुझाव है और जो जुझाव अधिक लगा अथवा बारबार लगता रहा वह पानी जैसा होता है। इस तरह बहुत कामी पुरुषको बारबार वीर्यका जुझाव लगता है वह जुझाव बहुत पतला होता है। और उसीसे अधिक निर्बल और बहुविषयी लोग शिकायत करते हैं कि हमारा वीर्य पानी जैसा पतला पड़ गया है। किन्तु वीर्यसम्बन्धी इस जुझावमें दूसरी एक विशेष बात भी ध्यानमें रखनी है। वह यह कि बहुवीर्यवाले शरीरसे थोड़े ही ध्रुमसे बहुत वीर्य खिंच आता है। और थोड़े वीर्यवाले शरीरसे अधिक ध्रुमसे भी थोड़ा वीर्य आता है।

युवा पुरुषोंमें वीर्यके सम्बन्धमें जो स्त्री शिकायतें देखनेमें आती हैं उनमेंसे एक शिकायत उनकी भारी चिन्ताका कारण बनी हुई देखनेमें आती है। वह शिकायत यह है कि उनके वीर्यका जल्दी जुझाव लग जाता है। वे ऐसा मानते हुए जान पड़ते हैं कि जुझाव लेनेपर यदि वीर्यको जुझाव लगते विव्रम्ब लगे तो बहुत ठीक और यही पुरुषत्व है। जुझाव



जल्दी लगे उसे वे वास्तविक पुरुषत्व नहीं मानते । वैद्यशास्त्र तो कहता है कि बड़का क्षय हुए बिना जल्दी जुड़ाव लग जाय उसीका नाम वास्तविक पुरुषत्व । और जुड़ाव लगे बिना लगनेके साथ अधिक परिश्रम पड़े और अन्तमें बड़का भी क्षय हो उसका नाम न्यून पुरुषत्व अथवा निर्बलता है । निरोगी शरीरवालेको अरुंडी (कैस्टल ऑएल) आदिका सादा जुड़ाव भी जल्दी लगता है और रोगी शरीरवालेको कड़ा जुड़ाव भी बराबर नहीं लगता । इस स्वाभाविक प्रमाणसे तो वीर्यको जुड़ाव जल्दी लगना ही सच्चा पुरुषत्व है परन्तु जुड़ाव लिये बिना बराबर पाखाने जाना जैसे रोग है वैसे ही वीर्यके किसी विकारोंसे बराबर जुड़ाव लगा करे तो वह वीर्य सम्बन्धी रोग है । इस प्रकार वीर्यको जुड़ाव लगा करे तो वह कोई पुरुषत्व नहीं है ।

वीर्य सम्बन्धी इतनी बातें जाननेके बाद अब हमारे भोजनसे वीर्य कितना बनता है और उस वीर्यसे सर्व कितना करना चाहिये इस विषयका हिसाब करना चाहिये ।

विद्वानोंने अनुभव और अनुमानसे ऐसा खोज लिया है कि ८० रतउ भोजनसे २ रतउ रक्त बनता है और २ रतउ रक्तसे २॥ तोड़ा वीर्य बनता है । इन हिसाबसे ८० रतउ भोजन जितने समयमें खाया जाय उतने समयमें निम्न २॥ तोड़ा नया वीर्य शरीरमें बनता है एक वृष्ण औषधसे मनुष्यमें आया है कि जो सुन्दर और अत्यन्त सुखादुराग विरह तथा क्षीनमें रहकर वीर्यका उपयोग करता हो उसके शरीरसे

वीर्यका जुड़ाव एक ही समय २ से २॥ तोला निकलता है । इन दोनों हिसाबोंका सार यह है कि २ मन भोजनका सन्ध (वीर्य) एक समयके जुड़ावके साथ निकल जाता है । स्वस्थ तरुण पुरुष प्रतिदिन औसत १॥ से २ रतउ भोजन खावे तो ४० दिनमें २ मन भोजन खाया अर्थात् उपरोक्त हिसाबके साथ मिलान करनेसे ४० दिनोंमें उसके शरीरमें २॥ तोला वीर्य जमा होता है । इस सब हिसाबका सार यह निकला कि स्वस्थ पुरुष भी ४० दिनोंके बाद वीर्यका उपयोग करे तो शरीरमें वीर्य सम्बन्धी आय व्ययका खाता बराबर हो । यदि इससे कम समयमें वीर्यका खर्च हुआ फरे तो बुरा हो और अन्तमें दिवाला निकले । बहुतसे लोग जो वीर्य सम्बन्धी इस आय व्ययका विचार नहीं करते वे बहुत काले नादिहंद अर्थात् दिवालियेकी स्थितिमें होते हैं । परितापका विषय तो यह है कि लोग अपनी कमाई और पैसेके खर्चका नित्य हिसाब करते हैं और कतराव्योत कर पैसेका बचाव भी करते हैं परन्तु जिस वीर्य पर शरीरके जीवन और सब तात्कालिक सुखोंका दार मशर है अगर वह उस वीर्यके आय व्ययका कुछ भी विचार नहीं करते ।

पुरुषमें वीर्य परिपक्व होना है अर्थात् कितने वयमें वीर्य परिपक्व बनता है यह बात भी यहाँ बड़े बिना न चरेगी; क्योंकि वीर्य सम्बन्धी निर्बलताही भारी दिशामें अचर वीर्यता असमय उपयोग करनेसे जन्म पानी हुई देखनेमें आती है । वीर्यका सत्य प्रकार प्रकारकर करना है कि पुरुष शरीर २५ वर्षकी वयमें संपूर्ण

खिल जाता है यदि किसीको संदेह हो कि उस उमरके पूर्व तर्ह लड़के संसारमें पड़ते हैं और उनके वीर्यसे लड़का भी पैदा होता है इसका क्या कारण ? इस प्रश्नका खुलासा यह है कि प्रत्यमें वीर्यका बीज तो बाल्यावस्थासे ही होता है और १९ से २० वर्ष तक यह वीर्य परिपक्व होने लगता है । ऐसे अपक्व वीर्यसे जो सन्तान पैदा होती है वह निर्वल होती है और वर्तमानमें छोटे बच्चोंके निर्वल होनेसे उनकी मृत्यु संख्या भी बहुत बढ़ी होती है उसका यही कारण है, इतनाही नहीं परन्तु ऐसे अपक्व वीर्यसे उत्पन्न हुआ बालक यदि मोटा ताना भी हो और अधिक जीता हो तो भी उस प्रमाणमें अधिक निर्वल होता है और साधारण कारणोंसे बीमार पड़ जाता है । परिपक्व वीर्यसे जनित बालककी स्थिति प्रमाणमें अत्युन्नत होती है ।

युवा पुरुषमें १६ वर्षकी उमरसे वीर्य प्रगट होने लगता है किन्तु वह गुलाबकी कच्ची कलीके समान है उसमें सुगन्ध तो होती ही है किन्तु यह सुगन्ध बहुत प्रकट नहीं होती । जब कली पककर खिलती है तभी उसकी सुगन्ध प्रकट होती है । इस कलीको पकनेके पूर्व तोड़कर उसकी विना इच्छा ही पकाओ तो उसकी पखुदियां कुछ खिलकर उसका छोटा आकार बनेगा परन्तु गुलाबके पेड़ पर रह कर जैसी खिलती फूलती वैसी वह कभी भी नहीं खिलती । इसलिये तर्ह बालकोंकी १६ वर्षकी आयुमें अरिपक्व वीर्यभण हो तो इससे भारी हानिके सिवाय और कोई लाभ नहीं । तर्ह लड़कोंके शरीरकी बनावट और उनकी सब घातुएं १६ से २५ वर्षके आयु तक

संपूर्ण हो जाती हैं । उनमें जितनी शीघ्रता होती है उतनी कच्चाई रह जाती है । बियां १६ से २० वर्षकी उमर तक पूर्ण रूपसे तर्ह नाई अर्थात् स्त्रीत्वमें आती हैं । इस प्रमाणमें स्त्री पुरुष संपूर्ण शरीर विकसित होनेके और पूर्ण वयमें आनेके पश्चात् ही संसारमें पड़े । ऐसा वैद्यक शास्त्रका भी मत है । वैद्यक शास्त्रोंकी इस आज्ञाका उल्लंघन करनेसे ही अपने भारत वर्षमें निर्वलता घातुक्षीण प्रमेह आदि २ रोगोंकी प्रचलता अधिक बढ़ गई है । और असखी कारणोंको न जान कर और अपनी भूलोंको न सोच कर शक्तिकी गोलियां तथा दवाइयोंकी खोज करते फिरते हैं ।

पंडितराव वैद्य जैनी ।

दा० वी० रा० य० सर हुकमचंदजी
पारमार्थिक औपचालय-इन्दौर

पुरुषार्थ ।

बनाओ मूलमंत्र पुरुषार्थ ।

जपे निशदिन जो इसको होय सिद्ध सकल पदार्थ ॥

रहते हैं जो भाग्य-अपीन ।

शीघ्र हो जाते तेरह तीन ॥

मर जाते वे जो ही करते हाय २ सुखार्थ ॥

पूर्ण न होती कोई आना ।

कर न जो पुरुषार्थ जरासा ॥

समस्तो पुरुषार्थ ही को सदा स्वर्गीय पदार्थ ॥

बनाकर अपनी उच्च आशा ।

फेंको पुरुषार्थका पाशा ॥

होगी विजय तुम्हारी, जीवन होगा पर-स्वार्थ ॥

हुए पुण्य अरु प्राप्त स्मरणीय ।

जपकर मंत्र यही रसणीय ॥

करना है यदि कुछ कार्य लोकार्थ तथा परमार्थ ॥

बनाओ मूलमंत्र पुरुषार्थ ।

निर्भय

महाविद्यालय मथुरा की

कुछ कर्तव्य ।

पाठको, आपको यह बात मली प्रकार विदित होगी कि किसी कार्यकी उन्नति अन्नति, उसके कर्त्ताओंकी योग्यता एवं अयोग्यता पर निर्भर रहती है; जो कार्य किसी अयोग्य पुरुषके हाथमें होता है वह हजार प्रयत्न करनेपर भी उन्नति नहीं कर सकता और जो कार्य किसी योग्य पुरुषके तत्वावधानमें होता है वह बहुत शीघ्र उन्नति कर जाना है । कुछ दिन पहिले जिस जैनगज्जके केवल ३००-४०० ग्राहक थे उसीके आज १००० ग्राहक हैं, जिस जैनगज्जके किसी समय साप्ताहिक होने पर भी महीनों दर्शन नहीं होते थे आज उसीका नियमित रूपसे प्रत्येक सोमवारको प्रकाशित हो जाना अवश्यमेव कार्यकर्त्ताओंकी कर्त्तव्यपरायणता और योग्यताका परिचायक है । जिस समय अजीमद निगाली मुयोग्य पंडित श्रीलाडनी इसके सम्पादक थे उस समय भी जैनगज्ज साप्ताहिक होते हुए मासिक था । और ग्राहक भी ३००-४०० से अधिक न थे । हम यह नहीं कहते कि उनमें सब सम्पादकी योग्यता नहीं, परं इन कार्यको शायद विदेश मध्यका न समझनेके कारण ही ऐसा करते होंगे या और कोई कारण हो उसे मंजूर ही माने । अब: पढ़ाओंमें यह विदित हो गया कि पंडितश्री जैनगज्जके उन्नतिके

द्वार पर नहीं पहुंचा सके थे ।

अब पंडितश्रीके हाथमें महाविद्यालय मथुराका कार्य है—यानी वे उसके प्रिंसिपल—अधिष्ठाता हैं; किन्तु हमको उनके अधिष्ठातृत्वमें भी विद्यालयमें कुछ परिवर्तन नहीं मांजूम होता है और यही कहना पड़ता है कि 'वही चाल बेदंगी जो पहिले थी सो अब भी है, । हमको यह मालूम है कि पंडितश्री विद्यालयमें हर समय नहीं रहते परन्तु उनका यह तो कर्त्तव्य है कि वहांके कार्यकर्त्ता योग्य रहें । सबसे पहिले किसी संस्थामें उसका सुपरिन्टेन्डेन्ट योग्य होना आवश्यक है; परन्तु हमको मालूम है कि महाविद्यालयके वर्तमान सुपरिन्टेन्डेन्ट बाबू रामकृष्ण योग्य नहीं हैं, न वे समाजको जानते हैं, न समान उनको जानती है । हिसाब किताब भी ठीक रखना नहीं जानते, यात्रियोंसे मिलते नहीं, छात्रोंकी भी देखरेख नहीं, रखते, इन्हीं त्रुटियोंके कारण वे हस्तिनापुर आश्रममें न रह सके । जैनगज्ज केवल पात्र होनेपर भी विद्यालयका मासिक हिसाब नहीं चलता विद्यालयमें अध्यापकगणभी नियमित तौरसे नहीं रहे जाते । किसी २ विषयके तो अध्यापक एक २ दो २ वर्षतक नियमित नहीं किये जाते । यह बड़े दुःखकी बात है कि मातृ-वर्गिय दिगंबर जैन महाविद्यालयमें जितने अक्षर हैं उनके विद्यार्थी भी नहीं हैं । यानी नाम महाविद्यालय और छात्र केवल १५-२० हैं । ऐसी अवस्थामें महाविद्यालयकी कालीके हवा, म. विद्यालयमें मित्र देगेसे कोई



हानि नहीं। ऐसा न करनेसे वही मसल होगी 'नकटा जिये घुरे हवाल'। पं. श्रीलालजी एवं मुंशी मूलचन्दजी ऐसा करनेसे अपने स्वतंत्र अधिष्ठातृत्व एवं मंत्रित्वकी रक्षा और मथुराकी शोभा भले ही बंदाते रहें परन्तु उनके इस कार्यसे समानकी रक्षा एवं शोभा होती दृष्टिगोचर नहीं होती। हम तो यही जोरकी आवाजसे कहेंगे कि या तो मथुरा विद्यालयकी दशा सुधारी जाय या उसको बहुत शीघ्र काशीके स्या. म. विद्यालय में मिला दिया जाय। हम इस ओर इन्दौरके दानवीर सर सेठ डुकमचन्दजीका ध्यान विशेष आकर्षित करते हैं क्योंकि आप स्या. महाविद्यालय काशी एवं महासभा दोनोंके सभापति हैं इस कारण आपका इस विषयमें हस्ताक्षेप करना बहुत ही आवश्यक है अन्यथा आप जैसे महापुरुषोंके सभापतित्वमें इस विद्यालयकी ऐसी दुर्दशा कभी शोभा नहीं दे सकती। आपका कर्त्तव्य है कि विद्यालयकी दशा सुधारे या उसको काशीके विद्यालयमें मिला दें क्योंकि दोनों विद्यालयोंके एक ही उद्देश्य है। तब आपके सभापतित्वमें दोनोंकी उद्देश्योंकी रक्षा होना कोई कठिन बात नहीं, आशा है सेठ साहब इस ओर ध्यान देंगे।

हम एक बात पर और कुछ कह देना आवश्यक समझते हैं। वह यह है कि कुछ दिन पहिले काशीके स्या० म० विद्यालयके मंत्री बाबू सुमतिशालेजीने एक चिट्ठी मुंशी मूलचन्दजी मंत्री महाविद्यालय मथुराके नाम जैन मित्रमें इस आशयकी छपाई थी कि दोनों विद्यालयोंको एक कर देनेमें आपकी क्या

सम्मति है। उसका जो उत्तर जैनगान्धर्वमें छपा है। उसे देखकर मुझे एकदम अवाक रह जाना पड़ा। मुंशीजी कहते हैं कि महाविद्यालय मथुराका रूपया धार्मिक शिक्षाके लिये है अतः स्या० म० वि० में नहीं मिलाया जा सकता। उनके इस कथनका यही अभिप्राय निकलता है कि काशीके विद्यालयमें धार्मिक शिक्षा नहीं दी जाती। देखा पाउको, समानकी आखोंमें कैसी धूल डाली जाती है। क्या मुंशीजीको नहीं मालूम है कि स्या० म० वि०से ही शिक्षाप्राप्त पं० माणिकचन्दजी न्यायाचार्य, पं० बनलालजी धर्माध्यापक आपके विद्यालयमें रह चुके हैं और वर्त्तमानमें भी पं० उपरावसिंहजी न्यायतीर्थ उसी विद्यालयसे शिक्षाप्राप्त धर्माध्यापक हैं। यदि मुंशीजीका केवल यह कारण अर्थात् काशीके विद्यालयमें धर्मशिक्षा नहीं दी जाती है इसलिये मथुरा विद्यालय उसमें नहीं मिलाया जा सकता। विशुद्ध भोच है। और मुंशीजीका यह भय कि हमारा विद्यालय स्या० म० विद्यालयमें मिला देनेसे उसका रूपया धार्मिक शिक्षामें खर्च होगा बिल्कुल व्यर्थ है। जहां तक मेरा ख्याल है दोनों विद्यालय मिलकर समानकी उन्नति बहुत शीघ्र कर सकते हैं। मुंशीजी या अन्य कार्यकर्त्ता यदि ऐसा नहीं करते हैं और विद्यालयकी चोन्ही छीझलेदर करना चाहते हैं तो वह सिवाय दुर्भाग्यहक और कुछ नहीं है।

बनारसके हिन्दूकालेनका एक विभाग रणधीर संस्कृत पाठशाला है। उसमेंसे अच्छे २ संस्कृतके विद्वान निकलते हैं और उसके उद्देश्यमें



कोई बाधा नहीं आती। उसी प्रकार उक्त दोनों विद्यालय मिल कर केवल दि० जैन कालिनके संस्कृत विभाग कहलायें तो उसमें कोई झूट न लग जायगी और जिस प्रकार इस समय उनमें धार्मिक शिक्षाके साथ २ संस्कृतकी शिक्षा होती है वैसी शिक्षा कालिनके एक विभाग हो जाने पर भी हो सकती है, इसमें कोई बाधा नहीं आती ।

तत्पर्य यह है कि महाविद्यालय मथुराका कार्य वर्तमानमें जैसा चल रहा है उसको देखते हुए विद्यालयको स्या० म० वि० काशीमें मिला देना ही उपयुक्त है। मथुरा महाविद्यालयके कार्यकर्त्ताओंका यह कहना कि इस विद्यालयका द्रव्य धार्मिक शिक्षाके लिये है अतः काशीके विद्यालयमें नहीं मिलाया जा सकता बिल्कुल युक्तिशून्य है क्योंकि काशीके विद्यालयमें धार्मिक शिक्षा दी जाती है यह समान अच्छी तरह जानती है। इसके अतिरिक्त समानमें एक कालिनकी आवश्यकता देखते हुए यदि महाविद्यालयका कार्य अच्छी तरह चलता हो तब भी काशी और मथुराके विद्यालयोंको एक करके उसको स्याद्वाद दि० जैन कालिनका संस्कृत विभाग बना देना भी योग्य है । १२। लाघ जैनियोंके होने हुए एवं परोढ़ाधिपतिगणोंके होने हुए एक जैन कालिनका न होना जैन समानके लिये अच्छाकी बात है। इस समय कालिनकी आवश्यकताको कोई दूरदर्शी भक्षीकर नहीं कर सक्ता। कालिनका

संस्कृत विभाग बन जानेसे अंग्रेजीका विभाग खोलनेमें कार्यकर्त्ताओंको बहुत सुगमता हो जायगी।

अन्तमें हमारा मुन्शी मूलचन्द्रजी, पं. श्रीला-लनीसे नम्र निवेदन है कि समानके हितकी दृष्टिसे विद्यालयका कार्य योग्य-रीतिसे चलावे अन्यथा उसे स्या० म० वि० में मिला देनेमें विचार न करें। हम दानवीर सर सेठ हुक्मच-दनीसे भी फिर बिना कहे न रहेंगे कि आपका नाम भारतवर्षमें ही नहीं संसारमें प्रख्यात हो रहा है, जैन समानकी उन्नति देखनेके इच्छुक हैं एवं भारतवर्षीय दि० जैन महसूमा और स्याद्वाद दिगम्बर जैन महाविद्यालय काशीके समापति हैं—आपके नेतृत्वमें मथुरा विद्यालयकी दुर्दशा एवं दिगम्बर जैन कालिनके संस्कृत विभाग बननेमें बाधा पड़ना कभी भी उत्तम नहीं कहा जा सकता है अतएव इसको शीघ्र व्यवस्था कीजिये। महास-माका अभिशेखन कोशमें शीघ्र होनेवाला है। आपको चाहिये उसमें स्वयं प्रकारकर इस माम-लेको साफ करें और उचितके मार्ग पर जैन समानको एक कदम आगे बढ़ानेमें सहायता दें। हम यह भी जरूर देना उचित समझते हैं कि यह होगा किसी द्वेष युद्धिके कारण नहीं छिटा गया है बल्कि समानकी हितकी दृष्टिसे ही छिटा गया है।

मदययन्ता ।

ફિલ્ફામંકલ-ચિંતામણી.

સદુપદેશરૂપ સંવાદ.

લેખક:-પાગલ. હુસીઆ.

ચિંતામણી:-મંગળ ! તજો ! તજો ! !

આ બાલિક સૌંદર્ય પર વધતા જતા મોહને; અરે ! લાલસારૂપ પ્રેમને ! ! આ હાડ મોસાદિથી મટેલા-ચર્મરૂપ સૌંદર્યને તજો ! ! મારાં આ અસાધ્યતાથી ભરેલાં દેહ પગના નિચારોને-અરે ! તારા હૃદયમાં વિષમરૂપ હુબ્બરૂપવાને આ આલતી ક્ષણથી તિલાંજલી દે ! આ હુટ મોહ-અજને આ સેકડે કાળી નાખ ! તેના મુદ્દમમાં મુદ્દમ ! આણું આણું જેટલા તુકડા કાપી ફેંકી દે ! આ મારું બાલિક સૌંદર્ય નાશ પામનારું અને જોયું થકી રાખ થકી ઉડનારું દેહ તારાં અરે ! તારાં દુષ્ટપણુમાં-દુષ્ટપણુમાં વધારોકરાવનારું નીવડી તારી આરૂપ અધમ-અરે-નીચ ગતી કરાવશે ! સૌંદર્ય સાથે દેહનો વિનાશ અને દેહનાશ સાથે સૌંદર્યનો નિશ્ચયથી વિનાશ થવાનો છે, આ આવરૂપ-નિશ્ચયરૂપ જગતની કિંમતી-કોણ છલુ છે ? આ જગતની ગોલતી જન્મ-મર્યુરૂપ કિંમતી દુષ્ટતા-આં કમીની-અરે-કમીની ખરી પણ તેમાં નીચ વેળા પડના મોહને તજ દે ! તજને જન્મ-મર્યુરૂપ દુષ્ટતા દર કરવા પ્રયત્ન ! આહા ! પરમાત્માને ભજ ! પ્રભુની ભક્તિ કર ! તારું અંતઃકરણ શુદ્ધ કર ! શુદ્ધ કર ! !

મિત્ર મંગળ:-શું શુદ્ધ કરે ? અંતઃકરણ ! અંતઃકરણ તો તારાંમાન છે તે ! તારા શિવાયતી તારા રૂપ સ્વરૂપ શિવાયતી મારી દૃષ્ટીએ અન્ય ચીજ નથી ચડતી ! તારાં ચિત્તમાં મરત અનેલો ! તારાં પ્રેમના આજ્ઞા પી-પીને સુખ થયેલો હું શું શુદ્ધ કરે ? શુદ્ધ કે અશુદ્ધ શું સમજી શકું ? કંઈ પણ નહીં ! તેજ ખાત નહીં ! પ્રિયે ! આહ ! મારો નેત્ર ચિંતામણી આમ કેમ કિંદાચ થક-મોહપ્રભુત્વે મોહી મને તરકોડે છે ?

ચિંતામણી:-આ તરકોડતું નથી, પણ

તારાં મનને નિત્ય જોત બનાવવા માટેનો આ પ્રયાત છે. અને આ જગતના નીચ ફેદમાંથી ઉગારી શાંતીના નિર્મળ પવિત્ર સ્થાન પ્રત્યે દોરી જવાનો દાશ્યુ પ્રયાત છે. આ નિષ્કામ શરીર ઉપરથી તને-અરે-તારા-આ નિષ્કામ મંગળ પ્રત્યે મન કરનારા મનને-રે ! રે ! ! આ તારા સંસાર શક્તિના સમુદ્રના તુફાનને શંત બનાવવા માટેના બિદગારો છે. મંગળ ! મંગળ ! ! વિચાર કર ! વિચાર કર ! ! તારો મારા પર જેટલો પ્રેમ-તેથી વિશેષ મારો નહતો ? હતોજ ? હજુયે છે ! પણ તે હવે જુદીજ દીની ! જુદાજ ભાવનો ! તદન જુદાજ વિચારોના પ્રવાહમાં ફેરવાયેલો ! મેં ! મારો; અરે ! આ મારો ખોટો પ્રેમ-જગતની જ-ળમાં ફસાવનારો પ્રેમ ! આ જગતમાં ફસાવનારો પ્રેમ ! અરે ! પ્રત્યક્ષ વિષમ-રૂપ-નરકમાં તળીયે રૂપાકનારો પ્રેમ ! આ નરક-વિષરૂપ તારા-મારા દેહાદિપરથી-દેહાદિ સૌંદર્યપરથી ખેંચી લઇ સા-વધ થઈ ! તેમ મંગળ ! ! મંગળ ! ! સાવધ થા ! સાવધ થા ! !

મિત્ર મંગળ:-શું સાવધ થાકું ? શું શું બોલે છે ! મને તારું કથન સમજાતું નથીને ! પ્રિયે-મમ-હઃપહારિણી-ચિંતામણી ! ચિંતામણી ! ! અને રમતું બોલ ! મારાં-તારાં બાહ-પાસ રૂપ અરસપરસ બંધનરૂપ-અરે ! આનંદરૂપ ! તારાં પ્રેમાનંદનો દલાવો ! તારા પ્રેમ-રસનો પ્યોસ પીવાદે ! તારાં પ્રેમ વગર-અરે તારાં પ્રેમ નિષીમાં આ મત્સ્યને સદાકાળ ન્હાવદે ! મને તો તારાં શિવાયતું કંઈ પણ દીધીયે પડતું નથી ! અહા ! ચિંતામણી ! ચિંતામણી ! ! ચિંતામણી ! !

હરીગીત.

છે પ્રેમ એવી વસ્તુ કે તે સાર્થને નથી માનતી ! લગ્ન તથા જનમાનને પણ તે કદાં ન પીજાનવી ! દિપક પર અજતાં પતંગો સર્વદા નિરસાર્થ તે ! તે પ્રાણ અરપે છે ચક્રોરો ચંદ્રપર નિરસાર્થ તે ! હે પ્રાણુ વસ્ત્રમ પ્રેમદા તુજ બોગની તું બોગીતી ! દરદા નહીં કંઈ અન્યતી તું એકલી મમ પ્રેમણી ! મમ નેત્ર આ આતુર રહે છે નવ વદનના દર્શને ! ને હનહન આ હૃદય નિરાદિત તવતતુના સ્પર્શને !

દેહ પડનાવું જ છે ! જન્મમાં પહેલો સંસ્કાર જન્મ ! અને છેલ્લો સંસ્કાર મરણ ! એ બેક સંસ્કાર શરીરના પુતળાને ! શરીરના નિયમાનુસાર જન્મ નિયમે બધાંયેલા છે ! જન્મનાર મૃત્યુને વશ થવો જ જોઈએ ! ઉપન થયેલી જન્મ-મીનિને વિનાશ થવાનો છે ! આપણી નજરે આ મૃત્યુ રૂપ નિષમ બાળીયે છીએ ! નહીં તત્તાં મૃત્યુ (મડદી) પર જ આવ્યો ! આ બારી ચડતાં સર્પ રૂપ મૃત્યુ હાજર હતો જ ! જેવું મારાં પર ચોરોતુ મૃત્યુ ટળ્યું તેવું જ આ મૃત્યુના-મૃત્યુ રૂપ નહીં અને સર્પના હાથમાંથી તારું મૃત્યુ ટળ્યું ! પણ તે માટે પ્રભુને ઉપકાર માનવાનો મૂકી વળી મૃત્યુની જગતી જ્યોત સમ જગતી ભૂલી હવે જગતના વિષય ક્ષેત્રમાં કસાય એવો તે કીધો મૂર્ખ હોય કે પોતાના શરીરની રાખ ઉડવાની છે તે ન જાણતો હોય ? વિચાર ! વિચાર ! મંજળ ! તારા મન-પ્રદેશમાં લીન થઈ વિચાર કર કે :—

શેર :—ચંદ દિન પદચાનો સપકવા ખુમાર !
મચોતકો તુરશી દેંગી નીચા ઉતાર !
જાએ મિલકે જનમન ઊઠાવેંગા ચાર !
હાથ મજકર કહેગાં ફીર બાર બાર !
કિસ લીયે આપેયે કયા કર ચસે !
જે મહાં પાપા મહાં પર ધર ચસે !

માટે જ મંજળ ! તારા-મારા પરની મમતા મૂક ! પ્રભુને ખાડ માન ! બચાવનારને શોધવા આતુર બન ! બચાવનારાના હાથમાં તારું સર્વસ્વ છવન અર્પી દે ! તો જેમ મને યોગ્ય અરે-સુદમ-સમયમાં પ્રકાશ થયો, મારી દિવ્ય ચક્ષુઓ ઉઘડી-તેમ તારી ઉઘડશે ! તને પ્રભુને પ્રકાશ પડી-પ્રભુના દર્શન થશે ! માટે મારા પરને પ્રેમ પ્રભુની બાજુ પર જવા દે-પ્રભુ પર વરસવા દે ! પ્રભુ વિનાવું બધું અસત્ય છે ! ફક્ત પ્રભુ ! પ્રભુ ! જે જ સત્ય છે ! જેમ ચિંતામણીને સર્વજ્ઞ સ્વભાવે જોતો હતો તે જ દૃષ્ટી વડે દૃષ્ટિને પવિત્ર કરી પ્રભુની પ્રીતિ મેળવ ! મારા પર જટલો પ્રેમ છે તેથી અનંત મણી પ્રેમ-સ્નેહ-પ્રીતી પ્રભુ

પ્રત્યે લગાડ ! પ્રભુ પર પતંગીયાની પેઠે બળ ! ચક્રો જેમ ચંદ્ર પર પ્રાપ્ત અર્પે તેમ પ્રભુને તારાં પ્રાણ સોંપી દે ! અને જન્મ મરણ રહીતતુ નિર્લય સ્થાન શોધવા તત્પર થા ! તત્પર થા ! !

મંજળ :—ખરું ! આ દેહની પણ દુરાપ ઉઠશે તે ખરું ! તારું કથન અક્ષરે અદાર સત્ય છે ! પણ પ્રભુ તે શું ? તે પર પ્રેમ કેવો ? તે સમજી શકાયું નથી ! તારા જ માટેની ઉછળતી પ્રેમ-જવાબા હવે વખારે ઊઠ્યો છે ! આ ધુનના વિનાની નોકળતી બહુકલી-પ્રેમ રૂપ-અમિ જવાબા ! તારા તરફ જ આકર્ષાય છે ! તો તારા શિવાય અન્યને માટે ક્યાંથી ઉછળી શકે ? તારું કહેવું સત્ય છે ? પણ તારું આ મનોહર દિવ્ય વદન યાદ આવતાં બધું ભૂલી જઈ છું તો ચિંતામણી ! ચિંતામણી ! રપટ બોલકી પૂર્ણ-સમજવ !

ચિંતામણી :—એટલો તો પણ સંતોષ જણાય છે કે ; ચિંતામણીતું કથન સત્ય છે, તે ઉપરથી ખાતરી થાય છે કે ; મંજળ અવસ્ય સન્માર્ગે વળશે જ ! માટે સાંભળ ! મંજળ ! ! એક ચિત્તે સાંભળ ! ! પ્રભુ ! મહાન ઉપકારી હોય ! આખા વિશ્વને તારનારો અધમેતો પણ તારક દુષ્ટોને સંહારક અને દયાળુ મહાન દયાનો નિધી છે ! તે કૃપાવંત ભગવંત તને અને મને બેઝને તાર-શેજ ! તારાં અને મારાં તેમજ આખા વિશ્વના દુષ્ટો દરોજ ! જન્મમર્ણ્ય પણ રહિત કરાવવા તે જ સમર્થવાન છે ! આ ભવસાગરની જાળમાંથી પણ છોડવવા તે જ શક્તિમાન છે ! એવા દયાળુ પરમાત્માતું તો વર્ણન કરીએ તેટલું થોડું જ છે ! પ્રભુ પોતાપર પ્રેમ રાખનારને પોતા તરફ ટુરે એ છે ! એ પરમાત્મા જ સરળ અને સંધા મારો બનાવે છે ! તો મંજળ ! મારાં પરની ઉછળતી તારી પ્રેમ જવાબાને પ્રભુ પર ફેંક ! અરે ! એ ક્યાર દૃષ્ટીમાનથી ફેંકી તો જો ! દેહતાં જ તને શિતગતા પ્રાપ્ત થશે અને તારો તે વડે ઉદાર જ થશે ! આ જન્મગેનો અને દેહાદિ બાધાનો સંસાર તોડ ! મોહછત થા ! મહાન-સત્તીરપણ તો મોહછત બનવામાં છે ! વિચાર કર ! !



આજ સુધિની જોની રિયતી હતી તેવીજ હજી કાય હરતે પ્રભુ હૃદયે ચાંપી,
રહેત તો મહુ પછી શું થાત ?

જન્મ મહુ દે ટાળે—સગજ મન ૫

મંગળા:—અહા ! મહુ પછી અરેખર ખૂંડાં
કર્મોના ખૂંડાં ચાખવાંન પડત ! ચિંતામણી !
ચિંતામણી ! સમજાવ ! સમજાવ ! ! પ્રભૂતા પ્રેમનું
અદ્ભુત રહસ્ય સમજાવ ! ! તારાં તારૂંની બિન્ન
જાતી પ્રેમાશિનો પ્રવાહ-હવે-પ્રભુ તરફ જરૂર
વાળાશ ! મહુ બમે છે ! અરેખર મહુએ મારાંમાં
ધર મહુ છે ! જન્મ ધર્યો ત્યારથીજ મહુના ત-
રજ ખેંચાયો જાણી છું ! મહુજ ખેંચી રતો
છે ! અવસ્ય મારાં દેહને હવે જલદી પકડશે !
અહા ! હવે મારું શું થશે ! ઓ પ્રભુ ! પ્રભુ !
પ્રભુ ! ! જ્યાવ ! તારા દાસપર દૃષ્ટાર ! ચિં
તામણી ! ચિંતામણી ! ! સત્ય મર્ગ જતાવ !

ચિંતામણી:—અહા જ્યારે તેં તારાં મહુને
નિહાજ્યો ત્યારે પ્રભુ જરૂર તને પોતાતરફ ખેંચી
મહુથી જ્યાવશે ! નિર્ભય થા ! પ્રભુ તારી પીઠ
પાછળજ હમેશાં હોશે છે ! તે તને અરે પોતાના
અનુયાયીને કદી પણ મહુના કાયમાં ન સોપે !
પ્રભુ તરફ વળ ! તારા હૃદયના પ્રવાહને પ્રભુ તરફ
વહેતો મે ! અને હવે સત્યને બાળી અરેખરો
જ્યાં કુધી આ તારૂં દેહરૂપી સાધન છે ત્યાં મુધીજ
પ્રભુને નિહાળી ચકોચ ! આ મહાન પ્રવાસે
મોક્ષ મનુષ્ય જન્મના બદલામાં હવે પ્રભુજ
મેળવ ! તારી કાયને આજ મહાન મર્ગે ચલાવ !
માથુ:—

કાય પદે ક્રો પ્રભુ પ્રદક્ષિણ,

અરે પદે જા દોડી—સગજ મન ૬

દેહ વિધાનના કાદ રમીને,

“માગજ” પી પ્રભુવાણી—સગજ મન ૭

માટે મંગળ ! મંગળ ! ! પ્રભૂતા નામની દરેક
અવયવમાં—અરે ! દરેક રોમાંચમાં ધૂન લગાવી
તારાં દેહરૂપ જોઆદ નિર્જન પરેલા જંગલમાં
કર મંગળ ! તારો ચહેરાત કોઈ દિવ્ય પ્રકાશથી
પ્રકાશિત થયેલો દેખાય છે ને ?

મંગળા:—અહા સત્ય ! સત્ય ! ! ચિંતામણી !
સર્વ સત્ય ! ! પ્રભુ ! પ્રભુ ! ! ચિંતામણી પ્રભુ
આ પાપીને બિહાર કરશે ? આ પાપીને પાપની
મારી મળશે ? જોહા ! જોહા મને બિહારવા ! મને
સમજાવવા ! મારાં કાન પવિત્ર કરવા તારી પ્રભુ
પ્રેરિત અમૃતવાણી જોહા ! મારી જયવાની—અરે
બિહારવાની રાદ જતાવ ! મને તો લાગે છે કે;
આ દેહ-મહુ અને અધર્માચરણ કરવાયાળા
મંગળતા માટે પ્રભુ નથી ! હું કેમ ઉગરીશ !
ચિંતામણી મારું શું થશે ? જોહા ! પ્રભુ ! પ્રભુ ! !
બિહાર કર ! બિહાર કર ! ! આ મંગળનો હસ્ત
મઢી સે ! મઢી સે ! ! જ્યાવ ! જ્યાવ ! !

पाणी नहीं ! तमारा भाग्यमां बदल्य आगयी-
आ धरीही सर्वस्व तमने संप्रत करे धु ! भाई
कह नही ! तुं डोख भाव ! !

वितागणी:—सत्य ! सत्य ! तने पश्चात्तापना
अग्निमे पवित्र छोई छे । तारा सुप्रत करेवां
जघां राखेडो प्रभू प्रदक्ष करीज ! अने तारा-
भारां देदने सूर्य्युं जनासी आंदर योतानी स्थापना
करेये भाई आगयी आ देदने साक्ष करवा प्रथम
करीये ! अने परमात्मानुं भजन करीये ।

सज्जन—(अश्रव)

प्रभूना बेदने पाणी-पागल से स्थानने जखी,
प्रभूना रंगमां जगि-जंतरना बेद से छाखी-१
जगतनुं जगतमां हेने,
ताई तुं सुखधी लेने.

प्रभूनी दिव्य ज्योतीमां-सकण करीज दे आणी-२
जगतमां जगती शुं लेयुं,
व्यवहारे सर्वने ज्ञायुं.

हवे प्रभू प्रेममां रागी-भेषेधुं सत्य से भाणी-३
शुद्धाणी इक्षाना, डांटा,
संजधी निवना डांटा.

शुद्धाणी पुण्य सुभधे-वे प्रभू सत्य पीछाखी-४
धर्युं ते नाम तुं जगरी.
भवा दिन दिन तो आरी.

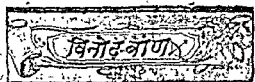
जगत इभ सुभ संसारी-अण्ड सुभ से हवे भाखी-५
अण्ड ज्योति भरीं वसीधुं,
जगम धरतां अरे जसीधुं.

नगर ज्योतिभखी धरतां-देभायुं आत्म ३५ नाभी-६
आत्म ३५ आत्ममां रमतां.
ज्योति ३५ निंदीमां भभतां.

छिछगती हदेरी जीर्णमां-सुगती ज्योती से भाणी-७
अण्ड दये रमे ज्योती.
जगतना भानने लुखी.

पहे अण्डा चारी लोणीरी ध्यानमां आखी-८
पागल निज ज्योति भरतीमां.
सदा दुमे आत्म हस्तीमां.

धीरे भद्राचरी ध्याननने-पके भजपुत ताखीने-९



एक आदमी—ठहरो, ठहरो, कहीं बाण न छोड़
देना। आज सुसीका दिन है। बाण छोड़कर
किसीका दिख न दुताओ। मने कहा—क्यों भाई
आज क्या है ?

मै—मादूम होता है तुम सातवें आसमानसे
उतरकर आए हो। तुमकी नहीं मादूम आज हमारे
नगरसेठ धनपालका विवाह होनेवाला है ?

ए०—अरे तू क्या बक रहा है ? उनके घरमें
एक सुशीला पत्नी और कई पुत्र पुत्रियां मौजूद हैं
तथा उनकी अयस्था भी ४५ वर्षकी होनेको आई
है वे विवाह करके अपनी फजीहत न करावेंगे। तू
झूठ बोलता है।

मै—इसमें फजीहत काहेकी। उनके घरमें करोड़ों
रुपया मौजूद हैं वे एक नहीं दश विवाह कर सकते
हैं। पहिले तो लोग छिपानवे २ हजार विवाह
करते थे। इसके सिवाय उनका शरीर भी तो ऐसा
निबल नहीं है। वे दो हटे कटे आदमियोंका सिर
पकड़कर लड़ा सकते हैं तो एक छोटीसी दुलहिनको
क्या खिटा भी न सकेंगे। उनके आगे चूं तक भी
कोई नहीं कर सकता है।

मै—चाहे जो हो मैं अपना बाण छोड़ता हूं। देखो,
यह गया। बाणमें कुछ शब्द हो रहा हैं। सुनो, सेठ
साहब विवाह मल्ले ही कर लें-पर यह मुझको
छोड़नेवाला विनोदी भी फिर अपने विनोद बाण
ऐसे ताक २ कर मारेगा कि जैन समाजमें फिर
बदल नहीं इससे भी अधिक खिया एक धनिक रखने
लगेगा। कई खियोंका होना भी तो धनवान होनेकी
पहिचान है।

* कौन कहता है जैनियोंमें विवाहके लिये
कन्यायें नहीं मिलती हैं। उनका तो भय बाजार
भी लगने लगा है जो अधिक रुपये लगाने उरीको
मिळ जाय।

* * *

जो यह कहते हैं कि देशमें अकाल पीड़ितों और बीमारोंकी जैनी लोग सहायता नहीं करते, वे बड़े मूर्ख हैं। क्योंकि दुःखियोंको दान देनेसे शुभ कर्मोंका बंध होगा जिससे जैनी शीघ्र मोक्ष न जा सकेंगे।

* * *

हमारी सरकार नजरबन्दों पर बड़ी ही दयालु है। है तभी तो उनसे छोड़ते समय कह देती है कि जाओ कुछ करना नहीं, बैठे रह जाओ। मगर सरकारने सेठी अजुनटालको छोड़ देनेका वचन तो दिया है मगर उनका एक दुखा दूर नहीं किया अगर सरकार उनको कुछ लिफनेमें भी मना कर देती तो सेठीजी बड़े ही सुखी हो जाते।

* * *

बाबू अजितप्रसादजीने समाजसेवाके लिये जीवन अर्पण तो कर दिया है कही वे किसी जैन संस्थामें पहुँच कर भिक्षुओंके अधिष्ठाता न बन जाय।

* * *

अप तो 'सत्योदय' अकेला रह गया है, 'जैनहितैषी' और 'जातिप्रबोधक' ने बीचहीमें उसको छोड़ दिया। अंधेरी रातमें लखर भी छाया मार देना चाहिये। बस विनोदी अँगोहो खुप सुखकी नींद आयेगी। इधर कुछ दिनोंमें विधवाओंके विलापन और शाखोंके मननइस राखनन हमारे विनोदीने पाया उत्तर कर ही थी।

* * *

पक्षियों सरकारसे रजिस्टर्ड करा लें।

* * *

श्रीमती दि० जैन बन्दी प्राणिक समा तो कुछ दिनोंसे खूब ही सोगई है। क्या बन्दीमें कोई उनको जगानेवाला नहीं है? न हो तो कबो विनोदी ही चुपकेसे आकर जगा दे।

* * *

श्रीमती भारतवर्षीय दि० जैन महासभासे न मादूम जैनियोंको कोई फल क्यों नहीं मिलता! अभी तो उसके सभापति एवं महामंत्री काम करनेमें नश्युपक ही हैं।

* * *

जैनहार्डस्त्वलोमें जैन हेड मास्टर कभी न रखना चाहिए। वे सेठोंके आगे अजैन हेडमास्टरकी तरह 'हा हजू' थोड़े ही करेंगे।

* * *

आजकल हड़ताल बड़ी हो रही है कहीं जैनी भी हड़ताल न कर दें, नहीं तो संसारमें अपर्म ही अपर्म फैल जायगा क्योंकि जैनियोंने तो धर्मका ठेका से रखा है।

* * *

आजकल मित्र राष्ट्र जगद्ध्यापी शान्ति स्थापन करनेके लिये जी तोड़ परिश्रम कर रहे हैं—पर दिगम्बर और श्वेताम्बर जैसी दोटा जातियोंमें शान्ति कौन स्थापित करेगा! वे तो तीनोंके लिये अवश्य पुत्र करते रहेंगे।

* * *

महासभाको एक प्रस्ताव पास करके पंडित पद्मा सावजीको "जैनधर्म रक्षक" की पदवी अर्पण देनी चाहिये। उन्हींके उद्योगसे जैनधर्म अब तक टिका है नहीं तो न मादूम कपका यह सवातल समा जाता।



हवा न लग जाय । बात-तो अच्छी है ।

*

*

*

अहहहह ! ओर विनोदी हम तो बड़े खुश हो गये । कुछ मिठा गया क्या ! नहीं मंई मिठा तो कुछ नहीं, एक बात याद आ गई । वह क्या ? छुगो, आजकल जैनसमाजमें विधवाविवाहकी चर्चा हो रही है विधवाविवाहके पक्षपातियोंसे जब कहा जाता कि देखो जिस प्रकार एक सांड कई गौओंके साथ भोगकर सन्तान उत्पन्न कर सकता है परन्तु एक गाय ऐसा नहीं कर सकती । उसी तरह पुरुष भी कई विवाह करके सन्तानें उत्पन्न कर सकता है परन्तु स्त्री नहीं । इस बातपर वे लोग विश्वास नहीं करते और कहनेवालोंकी हंसी उड़ाते हैं । इसीलिये पुनर्विवाहके विरोधियोंको कहिये कि किसी सेठके एक साध आठ दस या इससे भी अधिक विवाह करा दें तो विधवाविवाहके पक्षपातियोंको प्रत्यक्ष उदाहरण मिल जायगा और विधवाविवाहका आन्दोलन करना छोड़ देंगे । विनोदी, है तो सेठदू आनेकी बात; शायद उदाहरण ही बननेके लिये सर सेठ हुकमचंदजीने एक और विवाह किया है । फिर तो किसीको इसका विरोध न करना चाहिये । यह धर्मकी रक्षा करना है । इससे तो विधवाओंके शीलताकी भी रक्षा होगी ।

*

*

*

“ विनोदी । ”



नई फसलका ताजा माल आ गया ।

— भाव भी घटा दिया गया है —

पवित्र काश्मीरी केशर

मूल्य १।) १।=) लोला

पता—मैनेजर दि. जैन पुस्तकालय—सुरत



सुशील शिक्षा—इस पुस्तकके लेखक जीवनलाल चंपालाल जैन हैं । यह पहिले लक्ष्मी मासिक पत्रिकामें भी प्रकाशित हो चुकी है । मैत्रियोंके सुधार और शिक्षाकी बातें प्रदोत्तर रूपसे दिखाई गई हैं चीज २ में नीतिके पद दोहे भी दिये गये हैं । इस पुस्तकका मूल्य १=) है जो अधिक मादूम होता है । पुस्तक मिलनेका पता प्रकाशक—चुशीलाल धनजी, अंजड़ (बड़वानी) ।

धनपाल चरित्र—छोटो सादृश्री पुस्तक में १२ पत्र हैं । मूल्य १=)॥—पुस्तकके लेखक हैं चांदनमल भावू और प्रकाशक आत्मानन्द जैन ट्रेक्टर सोसाइटी अम्बाला शहर । इस पुस्तकमें राजा भोजकी सभाके पंडित पनपालका जीवन चरित्र है । यह पहिले जैन-धर्मके कट्टर विरोधी थे परन्तु एक जैन साधुके संगमसे जैन धर्मके पक्षपाती होगये । पुस्तक एकवार पढ़ने लायक अवश्य है ।

पद्मावती पुरवाल्—यह पद्मावती परिपक्वा मासिक मुख पत्र है । सम्पादक हैं पं० गंगाधरलालजी न्यायतीर्थ और प्रकाशक पं० श्रीलालजी काव्यतीर्थ । प्रथम वर्षका अंक ९ हजार पाठ समालोचनार्थ आया है । इसमें केवल ४ पृष्ठ हैं । सिवाय सम्पादकीय लेखके और कोई लेख पढ़ने योग्य नहीं है । एक मासिक पत्रका ऐसी अवस्थामें निकालना अच्छा नहीं मालूम होता है । मासिक पत्र पुस्तकसादृशमें ही अच्छे मादूम होते हैं । सम्पादक महोदयको चाहिये कि लेख भी उपयोगी देनेका उद्योग करें । हम पद्मावती पुरवाल भाइयोंसे भी कहेंगे कि इसके माहक बनकर इस पत्रके उन्नत बननेमें सहायक हों । पत्रका वार्षिक मूल्य १) पेशगी है । माहक बननेवालोंको मैनेजर 'पद्मावती पुरवाल, काव्यलिय ८ मदेन्द्र योतलेन पो० नाथगंजात बटकरताको लिपता चाहिये ।

મુનિ—યહ પત્ર મહાવીર મુનિમળલક્ષ્મી મુસ
માસિક પત્ર છે । દરમાર પાસ વર્ષે ત્રીન અંક ૫-૬
સમાલોચનાથે આયા છે । હસમે પ્રાયઃ સવ લેખ પઠ-
નીય છે । છપાદ સપાદ મી રત્તમ છે । આદ્યા
હોતી છે કિ હસ પત્રસે શ્વેતામ્વર સ્થાનકવાસી જાતિમે
અચ્છી જાગૃતિ હોગી । હસ પત્રમે સવકે પઢને યોગ્ય
લેખ રહતે છે । વાર્ષિક મૂલ્ય ર) છે । મૈનેજાર 'મુનિ'
વે.દવજ (જ્ઞાનવેદ) કો પત્ર ટિલ્કનેસે પ્રાપ્ય ।

બ્રહ્મચર્ય દિગંવરિન:—લેખક શાસ્ત્ર વિશા-
રદ જૈનાચાર્ય (ધે.) શ્રી વિજયધર્મસૂરીશ અને
પ્રકાશક યશોવિજય અંધમાળા બાવનગર. આ
૭૫ પૃષ્ઠના સુંદર પુસ્તકમાં આચાર્યશ્રીએ ગ્રંથરચના
પદ્ધતિ પછી પાળવાના નિયમો તથા ઉત્તમ
સંતાન ઉત્પન્ન કરવાની સમગ્રજ્ઞ ધણીજ સરળ
રીતે દર્શવિધી છે જે દરેક સ્ત્રી પુરુષે વાંચવા
ચોગ્ય છે. વળી ધણુંજ ખુશી થવા જેવું છે કે
જોની ૫૦૦૦ પ્રતો જામનગર નિવાસી વ્હોરા
ધારશીભાઈ દેવરાજના મહંમ પત્નીના સ્મરણર્થે
તેમના પુત્ર પોપટલાલ તરફથી તદ્દન મફત
વેંચવામાં આવી છે, જે પ્રકાશક પાસેથી મળી
કદ છે.

જૈન દર્શન:—લેખક ન્યાય વિચારક મુનિ
(ધે.) ન્યાયવિજયશ અને પ્રકાશક અભયચંદ
ભગવાનલાલ માંબી, જામનગર, પૃષ્ઠ ૧૦૫ આ
પુસ્તક ૫૫ માર્ગના મહંમ દાની રોક તલકા
બાઈચંદના સ્મરણર્થે ભેટ મળે છે, જેમાં નવ
તાલકા ૭ દ્રવ્યો, વજુ રત્ન, ગુરુધાન, રવા-
લા, આદમચી, અપ્પાલમ વગેરેનું દિગંવર
કરગ રીતે કરવામાં આવેલું છે જે વળે શિશુના
દંત્રેને ઉપયોગી છે, મુત્ર ચણેસેના આચાર
વર્ણવના આદાર લેવાની રીતે સ્વેત્કાંતર અને
અનુસારીને જાણવેલી છે જે હિં. રીતેને અન-
વધી.

યુરક રત્ન:—પ્રકાશક સરતુ સાદિત્યવર્ધક
કાર્યાલય અમદાવાદ. પ. ૪૮૮ અને હિં. માર
બાર આના. કાર્યાલય તરફથી પ્રકટ થતી વિવિધ
અંધમાળાનું આ ૮૯થી ૯૧મું સંયુક્ત પુસ્તક
છે, જેમાં વિવાદાર્થિઓએ શાળા છોડવા પછી
ધ્યાનમાં રાખવા ચોગ્ય ઉપયોગી સૂચનાઓ
સંબંધી ૧૦ પત્રો તથા બીજા ૭ ઉપયોગી લેખો
છે જેમાં શીળ સત્તાનો ઉપાસી- શીર્ષક લેખ
ખાસ વાંચવા ચોગ્ય છે. આ અંધમાળાનું વાર્ષિક
મૂલ્ય માત્ર ૨) છે.

સેવક:—અમદાવાદથી પ્રકટ થતું માસિક
પત્ર વર્ષ ૧ અંક ૧૨૦. તંબી-કાલાભાઈ મનોર-
દાસ પટેલ, વાર્ષિક મુલ્ય ર. ૨) ૧૪ પૃષ્ઠના આ
નવીન માસિકમાં જુદા જુદા ૨૦ લેખો છે. જેમાં
બે ઐતિહાસિક છે. એક લેખ હાંદી ૫૫ છે.
લેખન યેલી સારી છે અને દરેકે આદક થવા
ચોગ્ય છે.

નવીન પુસ્તક

જૈન સંસ્કાર વિધાન

જૈન સગા વિધિ.

સગા, મરણ, ગર્ભાનાનાદિ સંસ્કારો

ગુરુદાતી અર્થે સંહિત.

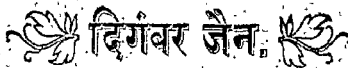
મૂલ્ય રૂ. ૦-૮-૦

દિગંવર જૈન પુસ્તકાલય, ગુરુત.

સ્વસ્ત્ય સેવક સંસ્કાર છે ।

હુડ મોડ નમુના મુત્ર । ૨૨ માર પત્ર-
ઓની વાચન છે ।

પત્રા: પાટકોર સ્થાને જામનગર નં ૦૧૮



THE DIGAMBAR JAIN

नामा-कल्याणिनां विषयः सर्वः सत्योपदेशस्तु गवेषणाभिः ।

संशोधनस्य नामदं प्रवर्तताम्, दिगंबरं जैन समाज-मात्रम् ॥

वर्ष १२ वॉ.

वार संवत् २४४५, फाल्गुन, विक्रम सं० १९७५

अंक ५



कालचक्र की गति किसी समय नहीं रुकती

है। वह अपना कार्य

महासभा का सदा किया ही करता है।

जोर्णोडार- उन्नति अवनति काल

चक्र की दो धाराएं हैं।

जिस समय किसी जाति या देश पर कालका

प्रकोप होता है उस समय वह अपनी अवनतिकी

धारा उसकी गर्दन पर रख देता है जिसके

कारण उस जाति या देश की अवस्था बहुत ही

सोचनीय हो जाती है। यदि उसकी गर्दन परसे

उस धारा को हटानेवाला कोई कर्मवीर न उत्पन्न

हुआ तो उसका अस्तित्व भी मिट जाता है।

हम यह भूमिका जैन समाज और दि० जैन

महासभा के लिये बांध रहे हैं। जैन समाज पर

भी कालचक्र फिर रहा है परन्तु उसको यह

प्रश्न बहुत कठिन मान्य हो रहा है कि

कौनसी धारा उसकी गर्दन पर रखे ?

पाठकमण भी अपने हृदयमें विचार रहे होंगे

कि वास्तवमें जैन समाजके लिये यह निश्चित

करना कि वह उन्नतिके मार्ग पर जा रही है

या अवनतिके बहुत ही उल्लंघनवाला है। परन्तु

कालचक्र अभी अवनतिकी धारा जैनसमाज पर

रखनेके लिये तैयार नहीं है, क्योंकि जैनसमाज

कभी २ ऐसा करवट रहा है जिससे बड़े-

विद्वानोंको भी असमंजसमें पड़ना पड़ता है

कि यह जागृत है या निद्रित। अभी थोड़े ही

दिन पहिले हम भी लिख चुके थे कि महासभा

निद्रित है इस कारण जैन समाज भी निद्रित

है। परन्तु महासभा की कोठामें कायापलट देख-

कर यह आशा ही नहीं परन्तु विश्वास हो

चला है कि जैन समाज निद्रित नहीं है किन्तु

बहगट जा किये हुए इस आशासे आंखें खोल-

ता और मृदुता है कि मुझे जगानेवाला कर्मवीर

कोई आता है या नहीं। अभी तक कोई कर्मवीर

तो समाजके जगानेके लिये नहीं आया परन्तु

उसके प्रतिनिधि आने लगे हैं।

इन प्रतिनिधियोंने भारतवर्षीय दि० जैन

महासभाके अधिवेशनमें एकत्र होकर जैनसमाजको

जगानेके लिये उसके कानोंमें भेरी बनाई है

और बहुतसा सामान एकत्र किया है। प्रथम

ही महासभाके सभापतिका भाषण जिसे हमने



अन्यत्र प्रकाशित किया है, समाजके जगानेके लिये एक अच्छी आवाज है। सभापतिने जैन समाजकी प्रत्येक आवश्यकताओं पर प्रकाश डाला है। आजकल जो अंग्रेजी पढ़े लिखे धार्मिक ज्ञानसे शून्य बंटाए जाते हैं, सभापति का कहना है यह अंग्रेजी पढ़नेवालोंका दोष नहीं है किन्तु कारण यह है कि उनको समाज द्वारा धर्मज्ञान-रोजक रूपसे प्राप्त करनेके लिये सुभीते और अवसर प्राप्त नहीं हैं। पाठकोंके हृदयमें यह प्रश्न अवश्य उठा होगा कि उनको कैसे अवसर और सुभीते चाहिये इस प्रश्नका उत्तर हम पाठकों के सामने पहाले दे चुके हैं, उनको आवश्यकता है जैन कालिनकी और अंग्रेजी वस-सूत्र दोनोंकी विद्वता रखनेवाले जैन विद्वानोंकी। सभापतिने वर्तमान युग परिवर्तनकी ओर भी ध्यान करते हुए कहा है कि सारा संसार चार वर्गोंके महासूक्तकी वटिनाइयोसे घबड़ा उठा है अब यह चाहता है कोई जैनधर्म जैसा ज्ञाननिदायी उपदेश जिससे फिर कभी ऐसा महायुद्ध न छिड़े। इसलिये जैनधर्म जिनके मर नया और अमर्य्य अवसर परमार्थ व परमेश्वर जिनके उपरिभूत है। मनय यह रहा है कि जैनधर्मके अनुयायियों, जागो, तुम्हारा कार्य कर्मका समय आगया है, मेरा न सानी है, उठो कमर कसो और एक बार फिर महात्मा गान्धीके उपदेशको संसारके कोने-२ में पंजा दो। महापरिनिर्वाण शब्द की ध्यान देने योग्य है कि जैनसमाज यदि इस अवसरका उपयोग करना चाहती है तो उसके लिये अपने कार्यमें व माधवोंमें नई

फूँकना आवश्यक है। हम यह यह स्वीकार करेंगे कि सभापति का भाषण, जैनसमाजकी अवगति और उसकी उन्नतिके उपायको भली प्रकार दिग्दर्शन करनेवाला है। यदि समाज उसमें बताए हुए उपायोंका अवलम्बन करे तो जैनसमाज अपनी आयु पंचमकालके अंत तक-२१००० वर्ष तक मरण शय्यापर रोगियोंकी भांति पड़े-२ न बिता कर एक बार फिर नवजीवन प्राप्त कर सकता है और संसारको दिखा सकता है कि हम भी एक उन्नत समाज हैं, हमारे समाजमें भी धर्मवीर, कर्म-वीर और भारतमाताके सच्चे सेवक-देशभक्त मौजूद हैं।

हम कई बार लिख चुके हैं कि सभाओंका कार्य उनके कार्यकर्ताओंपर बहुत कुछ निर्भर रहता है। हमका विषय है कि इस वर्ष उद्योगी और समाजहितधी लाडा भगवानदासजी महासभाके महासंजी वनाये गये हैं। आपकी कर्तव्यशीलताका बड़नगर औपचार्य जीता जागता उदाहरण है। हम केवल उक्त लाडा-जीके परिश्रम और जातिप्रभेदके भगोसे पर ही महासभाका जीर्णोद्धार हो गया ऐसा कह रहे हैं। पर इसके साथ इस वर्ष और भी कार्यकर्ता भेजे बनाये गये हैं कि वे यदि अपनी जगह-दारी व जैनसमाजकी अवगति पर ध्यान देकर अपना कार्य करें और महासंजीके कार्यमें महा-यत्न देंगे तो महासभाका जीर्णोद्धार करना हमारा मक्य होगा।

महासभाके कार्यकर्ताओं इस वर्ष उत्तमनीव परिवर्तन यह और हुए हैं—महाविद्यार्थ्य महासंजी

मंत्री सुखी मूलचंद्रके अतिरिक्त पं० नालारामजी इंदौर और उपमंत्री पं० गौरीलालजी शास्त्री और तीर्थक्षेत्र कमेट्रीके महामंत्री पं० धनलालजी बनाये गये । हम इन कार्यकर्त्ताओंसे तथा अन्य मंत्री जो इस वर्ष प्रांतिक सभाओंके और महासभाके विभागोंके नियुक्त हुए हैं उनसे कहेंगे आप लोग संसारके नये परिवर्तनोंकी ओर दृष्टि रख कर अपने २ कर्त्तव्योंका पालन करें । यह समय केवल नाम मात्रके कार्यकर्त्ता बननेका नहीं रहा है किन्तु अपने सिपुर्द किये गये कार्योंको उचित रीतिसे करनेका समय है । यदि प्रत्येक मंत्री अपने २ प्रांतमें महासभाके उद्देश्यानुसार कार्य करना प्रारम्भ कर दें तो महासभाका नाम सार्थक होकर सारे भारतके जैनियोंकी महासभा कहलाने लगे और महासभा द्वारा प्राप्त किये गये प्रस्ताव सारे देशके जैनियोंके लिये लागू हो जाय, महासभाकी आवाज सारे भारतके जैनियोंकी आवाज समझी जाने लगे । हम एक बार फिर कहेंगे देव और जलकी उत्पत्ति अथवा उत्पत्ति के कार्यकर्त्ताओं पर निर्भर है, यदि महासभाके सर्व कार्यकर्त्ता अपने २ कर्त्तव्योंके पालन करनेका दृढ़ विचार करें तो जीर्ण महासभाका जीर्णोद्धार होकर नव जीवन प्राप्त करलेना असंभव नहीं है ।

आप सबको यह मालूम होगा कि सभाओंके कार्योंके लिये द्रव्यकी कितनी आवश्यकता रहती है बिना द्रव्य कार्यकर्त्ताओंका उत्साह कार्य करनेकी ओरसे कम हो जाता है और उत्साह कम होनेसे निर्धारित आवश्यक काम नहीं हो पाते हैं । इसलिये अगर

तुम महासभाको दि० जैन समाजकी जायत सभा देखना चाहते हो, यदि तुम आशा रखते हो कि महासभा जो अथवा केवल नाम मात्रकी सभा थी वह अब इस उत्पत्तिके युगमें हमको उत्पत्तिका मांस बनाकर हमारी आवश्यकताओंकी पूर्ति करे, मांसमें फली हुए कुरीतियां अज्ञान अन्याय दूर करना तथा अन्य कार्य जो कुछ तुम सभासे कराना चाहते हो तो इस वर्ष महासभाने अपने सचके लिये जो १८८०० रुपयेका बजट प्राप्त किया है उसकी पूर्तिके लिये उदारता दिखाओ । यह रकम लाखों दिगम्बर जैनियोंके होते हुए पूरी होना कठिन नहीं है । इसलिये हम समस्त दिगम्बर जैन समाजसे अपील करते हैं कि इस द्रव्यको जितना शीघ्र हो सके उतने ही शीघ्र पूर्ति कर दें । अन्यथा कार्यकर्त्ताओंकी शक्ति सारे समय द्रव्य एकत्र करनेकी ही चिन्तामें बीत जायगी और वे महासभाके उद्धारके कार्य न कर सकेंगे, अतएव द्रव्यके दिगम्बर जनोंकी चाहिये कि अपनी २ शक्तिके अनुसार इस बजट पूर्तिके लिये सहायता देवे और दूसरोंसे दिलावें ।

हम कई वर्षोंसे जैन समाजमें एक बंधकी आवश्यकता सुनते चले आ रहे हैं । समय २ पर आवश्यकता । समाचार पत्रोंमें भी इसका आन्दोलन हो चुका है तथा हम भी इसके लिये लिख चुके हैं परन्तु अभी तक इस आवश्यकताकी पूर्ति नहीं हुई । इस वर्ष फिर महासभाके अधिवेशन

के समय स्वागतकारिणी सभाके सभापति श्री-
युत सेठ मुखलालजी अ.न. मजिस्ट्रेटने इसकी
ओर संकेत किया है। बहुतसे लोगोंको बैंककी
आवश्यकता नहीं प्रतीत होती होगी परन्तु
हम कहेंगे कि जैन समाजके बैंकको नियंत्रण
और पराधीनतासे जीवन वित्तानेवालोंका एक
बैंकके होनेसे कल्याण हो सकेगा। जनसमानकी
संस्थाओंमें किसी प्रकारकी स्वतंत्र आजीविका
पर सत्नेवाली शिक्षा नहीं दी जाती है। इस
कारण उनमेंसे निकले हुए प्रायः सब छात्रोंको
नौकरीकी ही शरण लेनी पड़ती है क्योंकि वे
प्रायः साधारण स्थितिके होते हैं उनके घरमें
इतनी पूंजी नहीं होती है कि वे बिना नौकरी
किये स्वतंत्र कार्य करते हुए समाजकी ओर
देशकी निःस्वार्थ सेवाके लिये आगे आ
सकें। हमने देखा है कि संस्थाओंसे निकले
हुए कितने छात्र जिनके हृदयमें व्यापार
करनेकी उत्कट अभिलाषा है परन्तु पास धन
न होनेसे एवं कोई सहायक न मिलनेसे वे
निरुपाय होकर नौकरी करने लग जाते हैं।
यदि जैन समाजमें कोई ऐसा बैंक हो जो पूरी
मानके साथ ऐसे नवयुवकोंको सुदूर व्यापा-
रके लिये धन दे सो बहुत कुछ लाभ हो सकता
है। ऐसा होनेसे समाजकी आर्थिक स्थिति
भड़ेगी और समाजमें स्वतंत्र निःस्वार्थ सेवक
उत्पन्न होने निम्नसे जैन समाज और जैनधर्मकी
भी उत्थिति होगी।

ऐसा बैंक सोचना जैन समाजके लिये कोई
कठिन काम नहीं है। ज. कि. समजमें रायर-

हादुर सर सेठ हुक्मचंदजी, रायबहादुर कल्या-
णमलजी, रायबहादुर कस्तूरचंदजी, लाल नम्बू-
प्रसादजी, हरीभाई देवकरणवाले आदि बैंकको
करोड़पति, लाखपति मौजूद हैं। इस कार्यके लिये
हम दानवीर सेठ हुक्मचंदजीसे आग्रहपूर्वक
कहेंगे कि आप आगे आर और इस कार्यको
हाथमें लेकर जनसमानकी एक भारी आवश्य-
कताकी पूर्ति करें, आपके द्वारा यह कार्य बड़ी
सरलता व सफलताके साथ पूर्ण होसकता है।

द्रव्यके प्रश्नके समय सेठजीको कुछ सोचने
विचारनेकी आवश्यकता नहीं है, क्योंकि प्रथमतो
आप स्वयं समर्थ हैं, इसके अतिरिक्त यदि आप इस
कार्यमें हाथ डालेंगे तो—जैन संस्थाओं, मंत्रियों,
तीर्थों आदिका सब रूपया जो कि कई लाख होगा
और इस समय दाताओं या अन्य महाननोंके
यहां सुदूर जमा है या जमीनोंके अन्दर गड़ा
है और उससे दूसरे-तीसरे उठा रहे हैं—सब इस
बैंकमें आ सकेगा, जिससे अनेक लाभ होंगे।
ऐसा होनेसे संस्थाओंका रूपया सुरक्षित रहेगा,
अभी जिससे अन्य लोग लाभ उठा रहे हैं
बैंकमें आ जानेसे जैन जातिके निधन, और
नवयुवकोंके व्यापार साधनमें काम आयेगा जिससे
वे ऊपर उभर भटकने, निराजीवन भ्रमने और
परीधानतासे बच सकेंगे। जिससे जैनसमानकी
प्रगतिमें बहुत सहायता मिलेगी। यहाँ पर यह
भी कह देना आवश्यक मानता हूँ कि
संस्थाओंका जो रूपया अभी (२०, ॥, ॥२०) वा.
इससे भी कम या अधिक व्यापार पर दूसरोंके
उठा गया है, वह त्याग यदि समाजके लोगोंकी



न्यायापारके लिये दिया जायगा तो परोपकारी संस्थाओंके लिहाजसे वे इससे भी अधिक सूद देनेसे इन्कार न करेंगे ।

हम आशा करते हैं कि सेठ हुकमचंदजी तथा अन्य श्रीमान इस ओर ध्यान देकर समाजकी केवल एक आवश्यकताकी ही नहीं किन्तु समाजकी उन्नति पर लानेके एक अंगकी पूर्ति करनेका उद्योग करेंगे ।

* * * *

समाचार पत्र पढ़नेवालोंको यह भली प्रकार विदित होगा भारत सरकार दो ऐसे बिलोंको मिनका नाम रोलेट बिल है पास करनेका पूर्ण विचार कर चुकी है । जिस समय यह वाइसरायकी कौंसिलमें पेश किये गये थे उस समय और सरकारी सब भारतीय प्रतिनिधियोंने एक स्वरसे इसका विरोध किया था पर सरकारने इसका कुछ ख्याल न करके उसको सिलेक्ट कमेटीमें भेदे दिया । इस कमेटीने एक बिलको ३ वर्षके लिये और एकको स्थायी कुछ ही परिवर्तन करके रिपोर्ट पेश कर दी है । रिपोर्ट पर मान० मालवीयजी, खापर्डे, मि० पटेलने हस्ताक्षर नहीं किये अस्तु ।

जबसे यह बिल कौंसिलमें पेश हुए तभीसे देशभरमें इसके बिलड आन्दोलन मचा और एक स्वरसे आवाज उठी कि यह बिल भारतवासियोंकी स्वतंत्रता पर वज्राघात करनेवाला है, इससे सब सत्ता पुलिसके हाथमें आ जायगी, जिसको चाहेगी उसको पकड़ लेगी,

जिसका न कोई गवाह हो सकेगा, न बकील और न अपील—इसलिये सरकार इन दोनों बिलोंको पास न करे । परन्तु सरकारने जब न लोह प्रतिनिधियोंका कुछ कहा माना और न जनताके ही विरोधका कुछ ख्याल किया तब महात्मा मोहनदास कमचन्द गांधी सत्याग्रहकी लड़ाईके मंशानमें उतर आये क्योंकि भारतवासियोंके पास केवल यही एक उपाय है । महात्मा गांधीने इस अमोघ शस्त्रके द्वारा दक्षिण अफ्रीकामें कई बार विजय प्राप्त की है । इस सत्याग्रहकी आवाज जबसे महात्मा गांधीने उठाई तबसे सड़कों हस्ताक्षर सत्याग्रह पत्रपर हो चुके हैं । इसमें श्रीमान गांधी, श्रीमती गांधी, मिसेज विसेन्ट, श्रीमती सरोजिनी नायडू, मि. हार्निमेन स्वामी श्रद्धानंद आदि अनेक बड़े २ नेता शामिल हो चुके हैं । तथा भारतके एक किनारेसे लेकर दूसरे किनारे तक महात्मा गांधीकी इस भीम प्रतिज्ञा समर्थन हो रहा है ।

हमारे पाठकोंको यह सुनकर आश्चर्य होगा कि महात्मा गांधी अहिंसक माननेवाले फिर ऐसी लड़ाई करनेके लिये क्यों उतारू हो गये आश्चर्यकी कोई बात नहीं है किन्तु जैनधर्मके प्रधान तत्व अहिंसाका रूपान्तराही सत्याग्रह है । पाठको, जरा जंगलमें आइये और देखिये, वह सामने मुनि महाराज बैठे ध्यान कर रहे हैं जिनमें यह शक्ति है कि यदि दृष्टि उठाकर क्रोधसे किसीकी ओर देखे तो वह भस्म हो जाय, यदि पैर तलेकी मिट्टी उठाकर किसीके सार से तो उसका काम



तमाम हो जाय इत्यादि, ऐसी महा शक्तियोंको धारण करनेवाले मुनि महाराजको एक दुष्ट तलवार लेकर मारनेके लिये आ रहा है, उसे देखकर मुनि अपने ध्यानमें लीन हो जाने हैं और विचारते हैं कि यह मनुष्य हिंसा करने आ रहा है, यह हमारी आत्माका कुछ न बिगाड़ कर भी इस शरीरको छिन्नकर अन्याय करेगा, परन्तु उसके बुरे कार्य, अन्याय, दुष्टताको जानते हुए भी अपने ध्यानमें लीन रहने हैं और समझते हैं कि यह तो अन्याय कर ही रहा है हम क्यों इसके साथ बुराई करें। पाठको यह मुनि महाराजका सत्याग्रह है या जैन धर्मका परीपहमहन व्रत है। इस व्रतका फल यह होता है कि मुनि महाराजके मारनेके पहिले ही कोई देवी शक्ति आकर या संयोगसे कोई मनुष्य आकर उस हिंसक मनुष्यको वहीं फील देता है या उसे उन्नित दंड देकर मुनि महाराजकी रक्षा करता है। यदि अपने दुर्भाग्यसे वह मनुष्य मुनि महाराजका प्राण ही ले लेता है तो मुनि महाराज तो मोक्ष या स्वर्ग या उत्तम गतिमें जाकर मुनिता उपभोग करने हैं परन्तु उस दुष्टको या तो राजा उसी भवमें प्राणदंडकी आज्ञा देता है और तर्दी तो मरने पर उसके लिये नरक भुजा ही है, वहां नाता प्रकारक दुःख सहता है। परन्तु साधारण यह है कि सत्याग्रह करनेवाले ही या महा भीत होती है और यह सत्याग्रह अन्याय और जल्मीक रोदनको अतिमार्ग है। अतएव हमें एक दुष्ट वैश्याको रोदनके लिये मुदमिनचक है। अतएव ये जनी भाईयो, जो दत्तात्रेय

पालनेवाले, स्वामी श्रद्धानंद (मुंशीराम एम. ए. जो १९ वर्षसे राजनैतिक मामलोंसे अलग थे) के इन वाक्योंको ध्यानमें लेकर—कि इन रौलट बिलोंने वह समय उपस्थित कर दिया है कि योगियोंको भी अपनी समझ छोड़कर आना चाहिये—रखनेवाले इन रौलटी बिलोंको दूर करनेके लिये अपना धर्म समझकर सत्याग्रहके व्रतसे पीछे न हटना।

पाठकोंको यह जान कर हर्ष होगा कि थोड़े दिनोंसे जो बम्बई प्रा-
च्यार्ड दि० जैन न्तिक सभा कुछ निद्रित प्रान्तिक सभा। सी हो गई थी अब
किं जागृत हुई है।

उसका सत्तरवां वार्षिक अधिवेशन आगामी मित्री चैत्र सुदी १२-१४-१९ तारीख १२-१४-१९ अप्रेलको गजपंथानी पर होगा। सभापतिका आसन श्रीमान् सेठ सूरचन्द्र भाई शिवरामजी (मालिक फर्म सेठ नाथा रंगनी गांधी बम्बई-दुकान) ग्रहण करेंगे इसी अवसर पर दक्षिण महाराष्ट्र दि० जैन सेंडेलवाल पंच महासभाका अधिवेशन भी यहीं पर होगा। अतएव हमारा सर्व पाठकोंसे निवेदन है कि इन दोनों सभाओंके अधिवेशन पर पधार कर जागृति और धर्मनैतिक कार्योंमें सहायता दें। बम्बई प्रांतिक सभा केवल बम्बई प्रांतकी ही पर भी सारे भारतवर्षके जैनियोंकी उपनिद्रा उत्थाप कर रही है। इनकी द्वारा 'जैनमित्र' प्रणिमनर विज्ञापन कर अनेक जगह २ सेप्टी



सिवाय जैनसमाचार और देशके समाचार भारतके जैनियोंको सुनाता है इसके सिवाय इस समाका अनुकरण प्रायः अन्य समाएं कर रही हैं इस कारण सार भारतके जैनियोंका कर्तव्य है कि इसके कार्योंमें सहायता दें। बम्बई प्रान्तके जैनियोंको तो अवश्य ही इस अधिवेशनमें सम्मिलित होगा च हिये। समाओंकी सफलता जितनी ही अधिक संख्यामें गुरुप्य उसमें सम्मिलित होते हैं उतनी ही अधिक होती है इस कारण बम्बई प्रान्तके ग्रामसे जैनी भाइयोंका एक अच्छा समूह गजपंथाजी पर इसमें शरीक होनेके लिये आना चाहिये, और जो प्रतिनिधि फार्म समाकी ओरसे आवें उनको भी अपना प्रतिनिधि चुनकर और उमें भरकर समाके आफिसमें बम्बई भेज दें।

सभामें अनेक धीमान, श्रीमान् पधारंगे और जाति-उन्नति एवं धर्म-उन्नति पर विचार करेंगे तथा अनेक विद्वानोंके धार्मिक और सामाजिक व्याख्यानोंके सुननेका अवसर प्राप्त होगा इसके सिवाय गजपंथाजी तथा अंजननेरी गवीनक्षेत्रके दर्शन करनेका लाभ होगा। हमारा समाजके विद्वानों, व्याख्याताओं, श्रीमानों, धीमानोंसे भी निवेदन है कि इस अवसर पर पधार कर समाजके हितका विचार करें और इस नये युगके परिवर्तनमें सभा एवं समाजको किन उपायोंका अवलम्बन लेना चाहिये जिससे उन्नति हो सो सभाके सामने रखें।



विवाह समयदान—इन्दौरके रायबहादुर सर सेठ हुकमचन्दजीने अपने विवाहमें डेढ़ लाख रुपया औषधालय और एक लाख रुपया जैन विधवाओं और जैन अ मथोंके लिये प्रदान किये हैं।

स्तुत्य दान—कारंजा (आकोला) के उदार चैता सेठ जम्बूशह देवीदास चौरेने दस हजार रुपये श्री महावीर ब्रह्मचर्याश्रम कारंजाके भवन बनानेके लिये प्रदान किये हैं।

सुरेना विद्यालय—इसका जो डेप्युटेशन निकला था पूर्व प्रकाशित { १८३७ के सिवाय वर्षोंमें ५९९), पुलगांवमें ९९६), आकोलामें ४५३), आरवीमें ७९१) और प्राप्त हुए। श्रीमती वेसरबाई बड़वाहाने बिना किसी प्रेरणाके विद्यालयके प्रीव्य फंडमें एक हजार एक रुपये दिये हैं।

आग लगी—गुजरात प्रान्त ता. जेम्पुरर बड़च ग्राममें गत ता. ३० जनवरीको आग लग गई। मन्दिर जल गया पर प्रतिमाओंकी रक्षा कर ली गई।

जैनियोंका डेप्युटेशन—राजसभाओंमें जैन प्रतिनिधियोंके स्थानके आन्दोलनके लिये दक्षिण महाराष्ट्र दि० जैन सभाने अपने स्वनिधिके अधिवेशन पर मि० लट्टे और मि० कोठारीको इंग्लैण्ड जानेकी अनुमति दी है। मार्ग व्यय आदिके लिये कुछ चंदा भी हो गया है।

स्वाकाद महाविद्यालय काशीका सप्तहवां वार्षिक अधिवेशन राय नानकचंदजीके सभापतित्वमें ता० ८ मार्चको हो गया।



समाम हो जाय इत्यादि, ऐसी महा शक्तियोंको धारण करनेवाले मुनि महाराजको एक दुष्ट तलवार लेकर मारनेके लिये आ रहा है, उसे देखकर मुनि अपने ध्यानमें लीन हो जाते हैं और विचारते हैं कि यह मनुष्य हिंसा करने आ रहा है, यह हमारी आत्माका कुछ न बिगाड़ कर भी इस शरीरको छिन्नकर अन्याय करेगा, परन्तु उसके बुरे कार्य, अन्याय, दुष्टताको जानते हुए भी अपने ध्यानमें लीन रहते हैं और समझते हैं कि यह तो अन्याय कर ही रहा है हम क्यों इसके साथ बुराई करें। पाठको यह मुनि महाराजका सत्याग्रह है या जैन धर्मका परीहमहन व्रत है। इस व्रतका फल यह होता है कि मुनि महाराजके मारनेके पहिले ही कोई देवी शक्ति आकर या संयोगसे कोई मनुष्य आकर उस हिंसक मनुष्यको वहीं कील देता है या उसे उन्नित दंड देकर मुनि महाराजकी रक्षा करता है। यदि अपने दुर्भाग्यसे वह मनुष्य मुनि महाराजका प्राण ही लेलेता है तो मुनि महाराज तो मोक्ष या स्वर्ग या उत्तम गतिमें जाकर मुनिरा उपभोग करने हैं परन्तु उस दुष्टको या तो राजा उसी भवमें प्राणदंडी आज्ञा देता है और तहाँ तो मरने पर उसके दिये नशक गुलाही है, जहाँ नाना प्रकारके दुर्ग सज्जता है। वहनेका कारण यह है कि सत्याग्रह करनेवाले ही की महा जीन होती है और यह सत्याग्रह अन्याय और जल्मीके सेकनेवाले अविमानों मरने हैं—कर्मकी मृष्ट वक्तियोंकी जीनेके लिये सुदुर्लभ वस्तु है। जल्मीके जैसी शर्तों, जो इत्यादि

पालनेवाले, स्वामी श्रद्धानंद (मुंशीराम एम. ए. जो २५ वर्षसे राजनैतिक मामलोंसे अलग थे) के इन वाक्योंको ध्यानमें लेकर—कि इन रौलट बिलोंने वह समय उपस्थित कर दिया है कि योगियोंको भी अपनी समृद्धि छोड़कर आना चाहिये—रखनेवाले इन रौलटी बिलोंको दूर करनेके लिये अपना धर्म समझकर सत्याग्रहके व्रतसे पीछे न हटना।

पाठकोंको यह जान कर हर्ष होगा कि थोड़े दिनोंमें जो बम्बई प्रा-
बन्ध दि० जैन न्तिक सभा कुछ निश्चित प्रान्तिक सभा। सी. हो गई थी अब फिर जागृत हुई है।
उसका सत्तरहवां वार्षिक अधिवेशन आगामी मिति चैत्र सुदी १३-१४-१५ तारीख १३-१४-१५ अमेलको गुजराती पर होगा। सभापतिका आसन श्रीमान सेठ सूरचन्द्र भाई शिवरामजी (मालिक कर्म सेठ नाथारंगजी गांधी बम्बई-दुकान) ग्रहण करेंगे इसी अवसर पर दक्षिण महाराष्ट्र दि० जैन लंडेलवाल पंच महासभाका अधिवेशन भी यहीं पर होगा। अतएव हमारा सब पाठकोसे निवेदन है कि इन दोनों सभाओंके अधिवेशन पर पधार कर जात्युन्नति और प्रामाणिक कार्योंमें सहायता दें। बम्बई प्रांतिक सभा केवल बम्बई प्रांतकी ही वर भी मौर भारतवर्षके जैनियोंकी उत्पत्तिका उपाय कर रही है। इसीके द्वारा 'जैनमित्र' मनीयताएँ निरंतर कर अनेक उत्तम २ लेख



आल इंडिया जैन पोलिटिकल कानफरन्स ।

ऊपरके शीर्षिका जो लेख श्रीयुत वाडीलाल मोतीलाल शाहने "दिगंबरजैन" अंक ३ वि० सं० १९७२में मुद्रण कराया है उस सम्बन्धमें मुझे यह साफ बताना चाहिये कि मैंने जो वर्धाकी हस्तकृत प्रगट की थी वह श्रीमान पंडित धन्नालालजी व अन्य किसीकी प्रेरणासे नहीं की थी । पं० धन्नालालजी वर्धाके पीछे मेरे लेख लिखने तक न मुझे मिले और न कोई मेरा उनसे वर्धाके सम्बन्धका पत्र व्यवहार हुआ जब मैंने श्वेताम्बर जैन हेरल्डमें पटेल विलकी पुष्टता सहित भाषण तथा इंग्रेजी जैनगान्धमें उसके वर्णन विना भाषण ऐसे दो भिन्न भाषण एक ही व्यक्तिके देखे तब मुझे खुशाला करनेकी जरूरत पड़ी । यदि जैसा बाबू अजितप्रसादजीने मुझसे कहा था कि भाषणमें यह बात न आयगी वैसा होता तब मैं उस बातको न लिखता । पटेल विलकी पुष्टता पर न बोलने तथा न प्रगट होने सम्बन्धी बात जो कुछ हुई थी सो मेरी बाबू अजितप्रसादजीसे हुई थी । परन्तु उन बातोंसे मुझे यही विश्वास दिलाया गया कि सभापति साहब उस बातको सभामें न बोलेंगे । जब बोल चुके तब यह निश्चय कराया गया कि बोले तो बोले पर किसी पत्रमें प्रगट न होगा । बाबू अजितप्रसादजीने सभापतिकी राई विना मुझसे निश्चय रूपमें कहा था यों ही कहा इसके लिये मैं कुछ क्रह नहीं सकता । वाडीलाल मोतीलाल शाहने

अपने इस लेखमें मेरे सम्बन्धमें जो कुछ लिखा है उसपर मैं कुछ लिखना नहीं चाहता । मैं स्वयं अपनी तुच्छ बुद्धिवश जैसा कुछ समझता हूं उसके अनुसार जातिसेवा जो कुछ बने वैसा रच मात्र करता हूं । मेरी अंतरंग भावना यही है कि जैनजाति श्री ऋषभादि तीर्थकरोंके सच्चे आत्मानंदी धर्मको पहचाने और अहिंसाके तत्त्व पर चलकर मनुष्य समानको ज्ञानादि बलोंसे बलिष्ट बनावे, पशुके ऊपर गुजरनेवाली वृथा निर्दयताओंको निर्मूल करे, वृक्षादि पर भी वृथा अन्वय नहोने दे, आवश्यकतासे अधिक अन्नादि न खाकर बचावे जिससे अन्य प्राणियोंका लाभ हो, तथा यथाशक्ति धर्म व जाति तथा देशकी सेवामें लग जीवनको सफल करे ।

शीतलप्रसाद ब्रजचारी ।

—४३ दिव्य-गान । ४३—

आओ, स्तब्धजने ! कृपा करो ।

काटो परापीनता जाल, हमको दो आनन्द विहाल ।
करनेको कृत कृत्य निहाल, भय, चिन्ता, सन्ताप हरो ॥
विना तुम्हारे देशोद्यान, (जो था अमरवती समान ।)
हुआ दाय । यौभक्त्य महान, अतः देशपर दाय धरो ॥
पट्टती जहां तुम्हारी दृष्टि, होती वहां दौख्य जल वृष्टि ।
जिससे प्रमुदित होती मृष्टि, अतः देश निज दृष्टि करो ॥
जिषम होता है आवेश, नहीं कलेश वही गिनता कलेश ।
इससे अब हममें तविशेष, स्वाभिमानका जोश, भरो ॥
हमारे प्रेम करो निर्व्याज, कृपा रखो मेरी लाज ।
हमको दो आश्वासन आज, "धराराओ मत धैर्य धरो ॥"
हमको दे करके उत्साह, शान्त करो छातीका दाह ।
एवं कहो यही "सोत्साह, दुःख महोदधि स्वयं तरो ॥"
हमको छलकर परम उदाह, समझाओ था काहे —
"धनकर अन्य जनको दाह, हा !"



वृक्षारवृक्षानन्द ।

(भारतवर्षीय दिगम्बर जैन महासभाके चौबीसवें व दिगम्बरजैन मालवा प्रान्तिक सभाके पंद्रहवें अधिवेशन (कोटा-राजपूताना) के सभापति श्रीमान् राय साहब सेठ माणिकचंदजी सेठी तानिखुल्लुल्लका भाषण जो गत ता० ७ फरवरीको पढ़ा गया ।)

आदि पुरुष आदीश जिन ।

आदि सुविधि करतार ।

धर्म धुरंदर परम गुरु ।

नमो आदि अवतार ॥

गतकारिणी सभाके सभापति महाशय, जनधर्मके पूज्यताता, मित्रभ्रातागण, माताभो तथा वहिनो ।

निम्न प्रतिष्ठित और प्राचीन जैन समुदायको महासभाके वार्षिक अधिवेशनोंमें ऐसे ज्ञानी, अनुभवी, कार्यरक्ष, व समान सेवक सभापतियोंको सभाके सन्मुख उपस्थित होकर उसके कार्यके अवलोकन करने, त्रुटियों पर ध्यान दिवाने, व स्वविवेक के लिये सुगमताका मार्ग दिवानेका सीमाव्य प्राप्त हुआ है, आन उभी स्थान पर आप महानुभावोंने एक ऐसे युवकको या सदा किया है विमर्श अनुभव हमारी आंखोंके समान अन्य है, जिसके धर्म सम्बन्धी ज्ञान किसी प्रकार उन युवकोंको कथवा नहींको, कि जिसके जैनधर्म पक्ष है, आपने सन्मुख उपस्थित करनेके योग्य नहीं, और जिसको सांसारिक व्यवहार व दूसरी उत्तोगी भावोंको वक्तव्य नहीं हो पन है कि

जितने कम अवकाश उसके प्राप्त करनेके लिये इस छोटी अवस्थामें उसको मिले हैं ।

महानुभावो ! इन त्रुटियोंके होते हुए भी यदि मैं इस समय आपके सन्मुख उपस्थित हो अपने टूटे फूटे विचारोंद्वारा आपकी सेवाके लिये उपस्थित हुआ हूं, तो उसका कारण यही है कि बचपनमें बड़ोंकी आज्ञा पालन करना, छोटेके लिये एक बड़ा धर्म बतलाया गया है । मुझमें यह साहस नहीं कि जो आज्ञा आप महानुभावोंने दी है उसका उल्लंघन कर सकूं ।

जिस समय मुझे सभाका आज्ञापत्र इस वर्षके अधिवेशनमें सभापतिका आसन ग्रहण करनेके लिये मिला, मेरे मनमें तरह तरहके संकोच पैदा होते थे; परन्तु थोड़े ही विचारके बाद मुझे यह ज्ञात हुआ कि समानके नेताओंकी इस आज्ञामें भी अवश्य कोई बड़ा मर्म होगा, और यदि मैं अपनी अल्पबुद्धिके अनुसार उस प्रयोजनको आपके सन्मुख उपस्थित कर सकता हूं, तो वह यह है, कि एक युवक को इस उंचे स्थान पर खड़ा करके आपने जैन सभाके समस्त युवकोंको चेतावनी देकर आज्ञा दी है, कि अब समय आ गया है कि ये धर्मके विचारोंमें सुगम हों, अपने जीवनके चरित्रोंको शुद्धकर, समान व धर्मही नेत्रोंके शंकेको होधमें लें, इस महाधर्मक्षेत्रमें सत, सत, पतते इस प्रकार उपस्थित हों, कि एकबार फिर हमारी प्राचीन Philosophy का प्रभाव समस्त मनुष्य समानके जीवनपर पड़कर हमारा देश दीन २ में बनने लगे ।

अगर इसी धर्मकी सिद्धिके लिये हम बड़े



पदका गौरव आपने मुझे प्रदान किया है, तो मैं उसकी स्वीकृतिमें अपना अहोभाग्य समझता हूँ; क्योंकि मेरा विचार है कि यदि मैं इस पदके संकेत व इस अवसरके महत्वको पूर्ण रीतिसे समझ उसका उपयोग कर सका, तो उसके द्वारा मेरे जीवनका कल्याण होगा और यदि समानके युवक आपकी इस आज्ञा द्वारा अपने कर्तव्योंका ज्ञान प्राप्त कर वह कर्मपरायण हुए तो समानका उद्धार होगा।

महापुरुषगण ! आपकी इस असीम कृपाके लिये, जो आपने मुझ पर प्रगट की है, मैं किसी प्रकार अपनी कृतज्ञता शब्दों द्वारा नहीं व्यक्त कर सकता।

छोटा जैसी छोटी सेवा कर सकता है अपनी शक्तिपर सेवा करनेका यत्न करेगा। आप कदापि आज्ञा न करें कि मैं किसी प्रकार बड़े अथवा महत्वके विचार आपके सामने उपस्थित कर सकूँगा। युवक समानके लिये सेवा बड़ा धर्म है, इसलियेमें अपने समानके युवक बंधुओं व बहिनोंके लिये सेवाके भाव लिये हुए कुछ विचार उद्यत करनेका साहस करूँगा,

नया परिवर्तन ।

अपने इन विचारोंको उपस्थित करनेके पहिले यह आवश्यक है कि हम उस बड़े परिवर्तनका कि जो इस समय दुनियांकी नकेयलराज्य सीमाओं में, किन्तु समस्त मनुष्य समुदायके विचारों, परस्पर व्यवहारके विषयों तथा राजनैतिक नियमोंमें हो रहा है, व्याप्त हैं। यह कहना वास्तविक होगा कि संसारके समस्त द्वीपों व

मनुष्य समानके केन्द्रोंमें मनुष्य प्राणियोंके हृदय नई आशाओंसे, सेवा, भक्ति व प्रेमके भावोंकी हिलोरीमें लहरा रहे हैं, और यदि इस बड़े परिवर्तनका कोई संकेत है तो वह यह है कि मनुष्य समान कीतराग विज्ञान के मार्ग पर अपने विचार आरुढ़ कर रहा है। मुझे भय है कि यह बात बहुतसे सज्जन आश्चर्यकी दृष्टिसे देखेंगे, और यह ठहरावेंगे कि कीतराग विज्ञानके मार्ग पर कि, जो हमारे जैन सिद्धान्तोंके अनुसार तीनों लोकोंका सार है, समस्त मनुष्य समानका ध्यान जा रहा है। यह कहना वास्तविक नहीं, किन्तु कल्पित है; परन्तु महानुभावों, मेरा विचार है कि यदि इस सर्वव्यापी युद्धकी उन साढ़े चार वर्षकी कठिनाइयों व दुःखोंके पश्चात् भी, कि जो मनुष्य समानने उठाई हैं, राग व द्वेषसे रहित होकर आत्मज्ञानकी ओर उनको वैराग्य न हो तो यह बात आश्चर्यजनक होगी। संसारमें नितने दुःख, लड़ाइयाँ, वैर, निर्दयता व आत्याचार हम देखते हैं उनका एक कारण राग अथवा द्वेष होता है। राष्ट्रोंके स्वार्थ तथा उनके परस्पर द्वेषोंके कारण यूरुपमें इस महा युद्धकी रचना हुई, और जिस समय द्वेष व रागके अंग खिरने लगे, सत्य व धर्मकी जय ने, जो मरुत्तिका नियम है, अपना रूप दिखा शक्तिका झंडा दुनियामें फहराया। जिस राष्ट्रने अपनी अज्ञानताके कारण 'मनुष्य बाहुबल', तथा 'बुद्धिबल' को 'सत्य' अथवा 'आरिम्भिक बल' से ऊँचा समझा था, नीचा देखा जो राष्ट्र सत्य व न्यायके मार्ग पर थे उन्होंने

विजय प्राप्त की, और पिछले दो माहके सप्ताह-चारपत्रोंको जिन सज्जनोंने ध्यानपूर्वक पढ़ा है वह इसको अनुभव कर सकते हैं कि राष्ट्रीय परस्पर व्यवहार, मनुष्य समाजके जीवन तथा उनके विचारोंमें कितना बड़ा परिवर्तन हुआ है, और कितना और भी बड़ा परिवर्तन दुनियामें आनेवाला है ।

जैनधर्मका गौरव ।

इस प्राचीन धर्म समुदायके सभासदों तथा अनुयायियोंके लिये इसमें बढ़कर गौरवकी और क्या बात हो सकती है कि इस परिवर्तनमें जो हुआ है और हो रहा है उसमें दुनियाकी मनुष्य समान अपने दुःख व कठिनाइयोंसे प्राप्त किये अनुभव द्वारा हमारे उन प्राचीन व उच्च सिद्धान्तोंको, कि गिन पर हमारे अन्तिम तीर्थंकर श्रीमद्गोपी स्वामीने दुनियाके उद्धारके लिये स्वयंरहित कार्य किया, उनको मनुष्य समानके कल्याण व जीवनकी सफलताका साधन स्वीकृत करने लगी है ।

महानुभावो ! जैनधर्मके ये सिद्धान्त अब केवल हमारे सिद्धान्त नहीं हैं, उन सिद्धान्तों को मनुष्य समान आज अपना कह रही है; हमको इसमें अपना गौरव नहीं समझना चाहिये । यह सब उसी परमेश्वर श्रीमद्गोपी स्वामीके प्रभावका फल है ।

ब्रिटिशराज्य तथा सिंहासनके प्रति राजभक्ति ।

व्यापी युद्धके समयमें भी अपना जीवन यथोचित रीतिसे शान्ति पूर्वक व्यतीत कर रहे हैं तो उसके लिये आज हमारा यह स्पष्ट कर्तव्य है कि हम ब्रिटिश राज्य तथा सिंहासनके प्रति, कि जिसको सम्राट् जार्ज पंचम आभूषित करते हैं, अपनी सच्ची राजभक्ति प्रकट करें । महानुभावो, जैनधर्म व जैनसमाजको ब्रिटिश सिंहासनकी उन्नतियोंमें बहुत सुगमताएं प्राप्त हुई हैं और इसलिये हमारा उस राज्यके प्रति भक्तिके भाव प्रकट करना स्वाभाविक बात है; परन्तु आज जब हम ब्रिटिश राज्य सिंहासनको उन अटल नियमोंकी नींव पर जमा हुआ पाते हैं कि जो मनुष्य समानके उद्धारके लिये मंगलकारी हैं, तो हमारा प्रेम व भक्ति उसके लिये स्वयं ही दुगुनी हो जाती है । ब्रिटिश साम्राज्य अब केवल ब्रिटेनके द्वीपके निवासियोंका राज्य नहीं है, वह राज्य आज उतना ही हमारा है कि जितना उनका । हम आज एक पड़े साम्राज्यके नागरिक होनेका गौरव रखते हैं, समानताके आधार पर ब्रिटिश साम्राज्यमें हमारे नागरिक होनेका नया प्रमाण हमारे देश भ्राता लार्ड सिटका ब्रिटिश राज्यके मंत्री पर नियम होना तथा लार्डकी उपाधि उनको प्रदान किया जाना है, कि जिसका हर एक भारतवासी गौरव कर सकता है । इस साम्राज्यमें जैनधर्मके अनुयायियोंके लिये उन्नतिके करोड़ों द्वार खुले हैं । महानुभावो, धर्मिक समुदायों में व भई आशाओंमें पूरा सन्तुष्टि-गौरव होना है ।

ब्रिटिश निवासियों तथा भारतवासियोंके

साम्राज्यके सिंहासन छान परस्पर प्रेम व भक्ति की रस्तीमें संगठित होगा दुनियाके भविष्यके लिये एक टोन्हार व वैवी बात प्रतीत होती है । धर्म और कर्म दोनों क्षेत्रोंके संगठनसे एक नये युगका विकास हो रहा है ।

सम्राट्के पुत्रवियोग पर शोक ।

ऐसे समय हमें यह जानकर दुःख हुआ है कि हमारे प्रिय सम्राट् जार्ज पंचम पर; कि जिन्होंने सम्राज्ञी सहित युद्धके घोर कठिन समय अनेक महत्वके कार्योंमें रातदिन परिश्रम करके योग दिया, पुत्रवियोगका वज्र पड़ा । प्रियसन्तानगण, गीव अथवा अमीर, सन्तान सबके लिये यकसां प्रिय होती है, प्रजा और सम्राट्का संबंध जैसा मैंने निवेदन किया है हमारे साम्राज्यमें बड़ा घनिष्ठ है इसलिये स्वाभाविक रीतिसे सम्राट्के इस दुःखमें उनकी जैन प्रजा भी उनके साथ सहानुभूति करती है और राजकुमारकी अकाल मृत्यु पर शोक प्रकट करती है ।

कोटा नरेन्द्रकी सभाका धन्यवाद ।

महानुभावो, जब मैं आपकी आज्ञा लेता हूँ कि जैनधर्मसमाजकी ओरसे श्रीमान कोटा नरेन्द्रका, कि जिनकी राजधानीमें आज हम अनुवर्तन करनेको एकत्रित हुए हैं, हार्दिक धन्यवाद प्रकट करूँ ।

नरेन्द्रमंडलकी स्थापना पर हर्ष ।

हमारी समाजका अधिकांश भाग भारतीय देशी रियासतोंकी प्रजा होनेका गौरव रखती है, इसलिये हमको यह जानकर बड़ा हर्ष हुआ है कि इस वर्षकी शीघ्र कान्फरेन्समें, जो दो

सप्ताह पहिले देहलीमें हुई थी, यह निश्चित कर लिया गया है कि देशी रियासतोंके संबंधमें कठिनाइयोंको दूर करनेके लिये "नरेन्द्रमंडल" स्थायी व नियमितरूपसे स्थापित किया जावे । हमारा विश्वास है, कि हमारे भारतीय नरेन्द्रों का एक मंडल स्थापित हो जानेसे और उनके एक दूसरेसे परामर्श होनेसे देशी रियासतोंके शासनपर बड़ा उपयोगी प्रभाव पड़ेगा ।

निस्वार्थ सेवकोंके प्रति कृतज्ञता

मैं पहिले निवेदन कर चुका हूँ कि युवकोंके लिये सेवार्थ परमधर्म है । महानुभावो, उस धर्म मार्गपर चलनेके लिये पहिला पाठ यही है कि हम उन महापुरुषोंके जीवन पर, कि जिन्होंने स्वार्थ रहित अपने तन, मन, धन द्वारा सेवा की, उसका मनन करें, व उनके गुणोंको जानकर उनका अनुकरण करनेका यत्न करें, व उनके लिये कृतज्ञताके भाव प्रकट करें ।

ऊँचा पद उन्हीं महापुरुषोंका अधिकार है कि जिन्होंने सेवाकी जीवनका मुख्य उद्देश्य समझ उसीमें अपना जीवन परमार्थके लिये व्यतीत किया । मैं क्षमा चाहता हूँ, वह परमार्थ नहीं, किन्तु उच्चश्रेणीका स्वार्थ ही है, क्योंकि आंतरीय दृष्टिमें "स्व" व "पर" का अंतर वास्तविक नहीं किन्तु कल्पित है ।

जैन समाजका इतिहास ऐसे आदर्श चरित्रोंसे शून्य नहीं है कि जिनका हमारा युवकसमुदाय अपने जीवनमें उपयोगिताके साथ अनुकरण कर सकता है ।

हम अपने जीवनमें अनेक महान् पुरुषोंको बड़ा कहते हैं क्यों ? इसीलिये कि उन्हीं



बड़ी सेवाएं की हैं और करते हैं। हम उनको मान देते हैं, हम उनसे प्रेम करते हैं उसका कारण यही है कि आत्माको 'सेवा' प्रिय है। बड़ा कहलाना अथवा सेवक होना मेरे विचारमें एक ही मानी रखता है। जो व्यक्ति विशेष-रूपसे सेवा करते हैं उनका मान विशेष रूपसे किया जाता है। वह मान हम उनका नहीं करते; किन्तु उसके द्वारा हम उनके अच्छे गुणोंका अनुकरण करनेकी हार्दिक इच्छा प्रकट करते हैं, जिससे हमारे अन्दर भी उन्हीं गुणोंका विकास हो। ऐसी विशेष रीतिसे सेवा करनेवालोंकी गणना जिस समाजमें अधिक होती है उनका ही उस समाजको महत्व अधिक होता है। मैं समझता हूं कि 'सेवा' जैन-समाजका मुख्य लक्ष्य है। परन्तु जहां इस समाजके प्रत्येक व्यक्तिको विशेष रूपसे सेवक होना चाहिये, अधिकतर भाग सेवाके भावसे शून्य दिखाई देता है। हमारी समाजके ऊंचे श्रेणीके सेवकोंकी गणना हाथ की पांच अंगु-लियों पर की जा सकती है। महानुभावो, ऐसे महान पुरुषोंमें हम नाबू देवकुमारजी रईस आरा, टिप्पी चंवररायजी रईस कानपुर, सेठ मानिकचन्द पानाचन्दजी जे. पी. बम्बई, सेठ दासोदरदासजी मथुरा, सेठ परमेशदासजी कन्नडा, वं० गोपाळदासजी न्यायवाचना निगम, इन सबको कि जो यद्यपि आज हम संसारमें नहीं हैं, किन्तु उनकी अपूर्व सेवाके कारणोंके कारण गणना करने हैं और मेन, आर, व आकारसे धरन क्रममें अपना गौरव समझते हैं।

वर्तमानमें मेरे भ्राता सर सेठ हुकमचंदजी इन्दौरनिवासी जो सेवा कर रहे हैं वह प्रशंसनीय है व हमारी पूजनीय बहिन मगनबाई बम्बईवालीके अपूर्व कार्यसे आज इस समाजका बालक बालक भी भली भांति परिचित है।

सेवाके लिये विचारोंकी दृढ़ता।

मैं इन उदाहरणों द्वारा यदि आज अपनी समाजके युवक भ्राताओं व बहिनोंके सम्मुख सेवाके भाव उपस्थित करनेका साहस कर रहा हूं तो उससे मेरा तात्पर्य यही है कि सेवा वह धर्म है जिसके पालनसे न केवल अपने जीवनका कल्याण होता है, किन्तु समाज सुधार, देश सुधारके लिये भी यही एक मार्ग है, और इसीके द्वारा अन्तमें मनुष्य मोक्षको प्राप्त होता है। यदि यह विचार सत्य है तो क्या हमारे लिये यह उचित नहीं कि हम सब अपने-अपने योग्य बनानेके लिये यत्न करें। भाइयो तथा बहिनो, सेवा बिना पूंजीके नहीं होती। सेवाके लिये जिस पूंजीकी आवश्यकता है वह सोना, चांदी व जवाहरात नहीं हैं, जो चलती फिरती छाया है। उसके लिये जिस स्थायी व अमूल्य पूंजीकी आवश्यकता है, वह हमारा धर्म विचार है।

विचारकी दृढ़ता इसलिये पड़ी पूंजी है, कि इसके होते ही दूसरी सारी कष्टनाशक मानने लगती है। इसीके एक विद्वानका कथन है, "Will there is a will, there is a way" जो सेवा हार्दिक भावोंसे होती है वही सच्ची सेवा है। जो प्रदान है वह अपने हार्दिक भावोंसे दान धन अर्पण करने देते हैं, परन्तु



जिनके पास धन नहीं वह भी अवश्य उसका प्रमाण दूसरी रीतियोंसे दे सकते हैं। मनुष्य चाहे वह धनवान हो चाहे निर्धन हो, सेवाके अवकाश उसके लिये जहां भी हो, उपस्थित हैं।

अधिवेशनके सम्बन्धमें ।

इतना कह कर अब मैं जैन महासभाके उन कार्य व उद्देश्योंकी ओर फिरता हूँ कि जिनके लिये हम सब इतने वर्षोंसे बराबर यत्न कर रहे हैं और जिस संबंधमें आज एक बार फिर हम सब इस स्थान पर एकत्रित हुए हैं। यह उत्सव हमारी तीन सभाओंका सम्मिलित उत्सव है, अर्थात् भारतवर्षीय दिगंबरजैन महासभा, श्रीमालवाप्रांतिकसभा और हाड़ोती प्रांतिकसभा।

भारतवर्षीय महासभा ।

भारतवर्षीय महासभाको स्थापित हुए, आज २४ वर्ष हो चुके हैं। मालवा प्रांतिकसभा १९ वर्षसे कार्य करती है, और हाड़ोतीप्रांतिकसभाका यह पहिला ही अधिवेशन है। अर्थात् नामके लिये हम इन तीन सभाओंको एथक् २ नामसे पुकारते हैं, तदपि वास्तवमें वह एक हैं। भारतीय समाजमें प्रांतिक सभाओंका स्थान वही है जैसे मनुष्यके शरीरमें अनेक अंगोंका है। हमारी जैनसभाका शरीर भारतवर्षीय महासभा है। प्रांतीय सभाएं केवल उसके अंग हैं। इसलिये जो कार्यविवरण प्रांतीय सभाओंका है। वह स्वाभाविक रीतिसे महासभाका कार्य ही है। इतना ही नहीं, किन्तु प्रांतीय सभाओंका जन्म भारतीय महासभासे ही हुआ है और इसलिये आज जो कुछ जाग्रति हम अपनी सभाओंमें

देखते हैं, उसका श्रेय महासभाको ही दिया जाना है। इसी महासभा द्वारा जैनगण्ड सात-हिक्रपत्र २४ वर्षसे प्रकाशित हो रहा है, तथा इसी महासभा द्वारा एक महाविद्यालय मथुरामें आज २० वर्षसे स्थापित है कि जिसमें जैन-सिद्धांतके साथ व्याकरण, काव्य, न्याय, कोष आदि विषयों पर शिक्षा दी जा रही है। महासभाका एक उपदेशक विभाग भी है। तीर्थोंकी रक्षाका जो कुछ कार्य इस समय तक हो सका है वह इसी महासभाका प्रताप है। इस महासभाको इस समय निम्नलिखित प्रांतीय शाखा-सभाएं हैं:—

- (१) मालवा, (२) बम्बई, (३) बुंदेलखंड,
- (४) बरार, (५) नागपुर, (६) हाड़ोती (गन्तुताना),

महासभाका हेड कार्टर इस समय सहारनपुरमें है। मुझे भय है कि भारतीय महासभाका जैसा यनिए संघ प्रांतिक सभाओंसे होना चाहिये, वैसा इस समय नहीं है, क्योंकि यह स्पष्ट रीतिसे प्रतीत होता है कि प्रांतिक सभाओंके कार्यका निरीक्षण अथवा उनमें जैसा महासभाको योग देना चाहिये, वैसा नहीं होता, और संभवतः यही कारण है कि अनेक प्रांतीय सभाएं एक-दोरीमें काम न करती हुई एथक् एथक् अपनी सुगमताओं व विचारोंके अनुसार कार्य करती हैं। इस विचारणीय विषय पर मैं यहां संकेतरूपसे आप महानुभावोंका ध्यान आकर्षित करता हूँ। यह बड़ा ही आवश्यक है कि प्रांतीय और महासभाका कार्य इस प्रकार संगठित कर एक-दोरीमें बांटा जावे, जिससे देशके अनेक



भागोंमें समाजसुधारका कार्य उत्तम रीतिसे चल सके, और इसके लिये मेरे कहनेकी आवश्यकता नहीं है, कि भारतीय महासभाका प्रबंध इस प्रकार निर्माणित किया जाना जरूरी है, कि जिससे समस्त प्रांतीय महासभाओंके प्रतिनिधियोंको उसमें योग देनेका अवसर प्राप्त हो सके।

मालवा प्रांतिकसभा ।

मालवा प्रांतिकसभा, कि जिसका यह १९वां वार्षिक अधिवेशन इसीमें सम्मिलित हो रहा है, साधारण रीतिसे समाजसुधारका कार्य अपने अनेक विभागों द्वारा कर रही है। इस सभाके कार्यके मुख्य विभाग इस प्रकार हैं:-

- (१) विद्याविभाग, (२) उपदेशकविभाग, (३) अनाथरक्षाविभाग, (४) सरस्वतीमंडार, (५) सभास्थापकविभाग, (६) तीर्थक्षेत्ररक्षाविभाग, (७) ट्रेक्टप्रचारकविभाग (८) शुद्धऔपधाल्य विभाग, (९) मासिकपत्र विभाग ।

जो कार्य इन अनेक विभागों द्वारा हो रहा है उसका विस्तारित वर्णन आपको वार्षिक रिपोर्टमें ज्ञात होगा। विद्याविभागकी उल्लेखनीय संस्थाएं "इन्दौरका महाविद्यालय, रतनमहा नैनचौडिंग स्कूल, इन्दौरका प्रसिद्ध "श्राविकाश्रम" जो श्रीमती कंचनचौडकी उदारताका फल है, अथवा इंदौर व बड़वाहाकी कन्या पाठशालाएँ हैं।" मालवा प्रांतिक सभाके उपदेशक विभागका कार्य विशेष रीतिमें प्रगत्ताके योग्य है, क्योंकि इसके द्वारा मालवाके अनेक स्थानोंको उपदेशका लाभ पहुंचा है और इस प्रांतीयमहासभा शुद्धऔपधाल्यविभागविषय रीतिमें कार्य कर रहा है यह कार्यधर्मार्थोंके लिये गौर-

वकी बात है। यह औपधाल्य समाजकी एक होनहार संस्था है। मुख्य बात इस औपधाल्यकी यह है कि औपधियां यहांसे सर्व साधारणको विना मूल्य दी जाती हैं। वास्तवमें इस औपधाल्य द्वारा प्रांतीय सभा समाजसेवाका एक अमूल्य कार्य कर रही है। इसकी इस समय शाखाएं मालवा प्रांतके उपरान्त मध्य प्रदेश, संयुक्त प्रांत, नीमाड़, गुजरात, राजपूताना, वागड़ दक्षिण, पंजाब और नेपालमें स्थापित हो चुकी हैं? जिनकी संख्या ११२४ बताई जाती है। ट्रेक्ट प्रचार विभागने गत वर्षोंमें ७ ट्रेक्ट प्रकाशित किये हैं।

हाड़ौती प्रान्तिक सभा ।

हाड़ौती प्रान्तिक सभा जिसका यह पहिला अधिवेशन है उसके लिये हम यहांके समाजसेवकोंको हार्दिक बधाई देते हैं। आशा है कि यह सभा इस प्रान्तके लिये समाज सुधारके कार्यमें सहायक होगी।

सभाओंका प्रबन्ध व देशकाल ।

सभाओंके प्रबन्ध द्वारा यद्यपि समाजसुधार इस समय तक अवश्य हुए हैं, अनेक कारणोंसे इन सुधारोंकी गति इतनी मन्द हुई है कि हम बहुधा यह नहीं बतला सके कि वास्तवमें जो सुधार हुए हैं वह समाजके कार्य द्वारा हुए हैं अथवा वे स्वयं समयके परिवर्तनका फल हैं। उन कारणोंमें कि जो इस देशमें हर प्रकारके सुधारोंमें बाधक रहे हैं, शिक्षाका अभाव अथवा शिक्षापन्थालीकी मूर्खियां इत्यादि वहां व मुख्य कारण हैं। महानुभावों, यह एक मूल कारण हमारी सारी आनखियोंका पट्टा ना मक्ता है।

शिक्षाप्रणाली जो इस देशमें पिछले १०० वर्षोंमें रही है वह भारतनवासियोंकी आवश्यकतानुसार कदापि निर्माणित नहीं हुई थी; लेकिन एक बड़ा कार्य पिछली शताब्दीकी शिक्षाने जो इस देशमें किया है वह यह है कि पश्चिमीय विचारों व विज्ञानका प्रभाव अधिकतासे भारतवासियों पर पड़ा, और देशमें शान्ति रहनेसे एक प्रकारकी जागृति देश व समानोंमें पैदा होने लगी, व जहाँ पश्चिमीय विद्वानोंने भारतवर्षकी प्राचीन philosophy के मंडारोंका अध्ययन करके उसके महत्वको स्वीकृत किया, हमारे देशमें समानका अधिकतर भाग, जिसपर पश्चिमीय शिक्षाका प्रभाव पड़ा, स्वयं अपने धार्मिक ज्ञानसे वंचित रहा ।

धार्मिक ज्ञानके अभावसे पुराने व नयोंमें विरोध ।

धार्मिक ज्ञान, विचार तथा अभावसे शून्य शिक्षाप्रणालीने जिन पुरुष और स्त्रियोंको शिक्षित किया वह यदि हमारे प्राचीन धर्मके उच्च सिद्धांतोंको अपने जीवनका साध्य न बना सके, अथवा वे हमारे प्राचीन धर्मसे विमुख रहें तो क्या उनके लिये आप उन्हींको दूषित ठहरावेंगे? यह दोष, महानुभावो, उनका नहीं; किन्तु उस देश का लक्षण है कि जिसमें उनको रहना पड़ता है । विषय बहुत बड़ा व महत्वका है, इसका उल्लेख यद्यपि मैं संक्षिप्त रीतिसे ही यहां पर कर सकता हूं, इस समय इसलिये आवश्यक है कि हमको वे कारण स्पष्ट रीतिसे माहूम होने लगते हैं कि जिनसे वर्तमान अनुसार शिक्षित युवक और उनके

परके बड़े बूढ़ों तथा वंशुओंमें जिन पर पश्चिमीय शिक्षा व विचारोंका प्रभाव नहीं पड़ा विरोध बढ़ता जाता है, इसीलिये एक ओर समानोंमें ऐसे युवक पुरुष व स्त्रियोंको देखते हैं कि जो पश्चिमीय सभ्यताके चेगमें बहकर उन्हींके समान विचार स्वाभाविक रीतिसे करते रहते हैं, दूसरी ओर हम उन महान् पुरुषोंको पाते हैं कि जिनको साधारण बोल चालमें "पुराने खयालातके लोग" कहनेकी प्रथा पड़ गई है ।

आज इस देशकी प्रत्येक समानके घर में यही विरोध दृष्टिगोचर होता है, जिससे सामाजिक सुधारके कार्योंमें बड़ी बाधाएं पड़ी हुई हैं, इतना ही नहीं किन्तु घर और कुटुम्बियोंके परस्पर व्यवहार व प्रीतिमें भी अन्तर पड़ता जाता है । महानुभावो व प्रियवन्दुओ व महिलाओं इस बढ़ते हुए अन्तर व भेदका केवल एक और ही कारण है । और वह है, धार्मिक शिक्षाका अभाव, अथवा धार्मिक ज्ञानका उचित रीतिसे प्रचार न किया जाना । हमारे समानके युवक यदि धर्मसे निष्पल हों अथवा उनकी ओरसे उदासीन हैं तो उसका कारण यही है कि धर्मज्ञान रोचक रूपमें प्राप्त करनेके लिये उनको सुभीते व अवसर प्राप्त नहीं हैं ।

नये परिवर्तनमें जैन समाजके लिये नये अवसर ।

मैं ऊपर निवेदन कर आया हूं कि दुनियांमें बड़ा परिवर्तन हो रहा है, और भी बड़ा परिवर्तन मनुष्य समान पर आनेवाला है, और यह भी निवेदन कर चुका हूं, कि दुनियांकी समस्त मनुष्य समान वीतराग विज्ञानके मार्ग पर

कलावती ।

(टेसक-श्रीयुव रूपदिशोर जैन, विजयगढ़)

(गतांसे बाल ।)

६

कलावती विवाह कर शंख नगर आ गई उसने अपनी राजधानीमें अनेक विद्यालय, बाचनालय, अनायालय, भिक्षुको अन्न भण्ड, दान मनुष्य और पशु पक्षियोंको स्वास्व्यागार, पथिकालय स्थापित किये; बड़े २ जैन मन्दिर निर्माण कराए जिनमें साष्ट विहित पूजा प्रथात्मक लिये बुद्धिमान पुजारी नियत किए थे । निदान राजा और रानी बड़े प्रेमसे कालक्रम करते थे ।

कलावतीके सदाशिवने राजा शंख कुछका कुछ बन गया था वह प्रजासे दयावांश भूमि कर लेता था सो भी पलाय नही । प्रजा धन धान्यसे परिपूर्ण थी धन, जन, दल आदि किसी शक्तिकी कमी न थी । रानीने कुछ दिनोंमें गर्भ धारण किया ।

गर्भ चिन्ह देख राजाको अति हर्ष हुआ परन्तु कुछ क्षणभंगुर था समय पलट गया । कराल कालकी ऐसी ही विकराल गति है कि आयात दूध किम्बा पशु इत्यादि इसके जगज्जालमें पड़ कर दवांशोल होते हैं ।

सुवराज जयसेन अपनी पवित्र कलावतीको इतने दिन बीतने पर भी विस्मय न कर सका अपने विश्वसेवकों द्वारा शंख नगर बहिरको दुलाने सन्देशा भेजा । परन्तु शंख रानीको प्राणोत्ति अधिक प्यार करता था प्रेमविरास भेजना अस्थोकार किया ।

जयसेनने बहिनके लिये दो उत्तम, सौम्य स्रवित साड़ी भेजी थीं जिनमें यथास्थान घेल चट्टीमें जवसेमका नाम अंकित था ।

साड़ी पाकर कलावती अति प्रसन्न हुई । उसने एक साड़ी अपने सुकोमल अंग पर धारण कर परिचारिकाओंसे कही—“ इस साड़ीमें सब प्रेक्षणी

गन्ध आती है, वास्तवमें इसका भोजनेवाला सुमे हृदयसे प्यार करता है । ”

शंखने शान्तपुरामें प्रवेश किया—“ राक्षसी भोजनेवाला सुमे हृदयसे प्यार करता है । ” रानीके मुखसे सुनकर राजा शंखको बड़ी शंका हुई उसने समझा रानी सुमे नहीं चाहती और कियीसे इसका युक्त प्रेम है । यह सोचते २ उसका शरीर कांपने लगा क्रोध कम्पित अवरो पर दन्तारोपण होने लगा ।

क्रोध मनुष्यको हतबुद्धि बना देता है ज्ञान नष्ट हो जाता है । शंखका मन ऐसा किता कि उसने रानीको देशसे निकाल देना निश्चय कर लिया । दिनभरा इसी निन्तामें बीता रातको चाण्डाल पुजा राजाने आता ही—“ रानीके दोनो हाथ काटकर वनमें त्याग आओ । ”

रानी हो रही थी । चांडाल सुसारस्यामें ही गोथ दूर उद्यानमें ले गया । सचेत हो रानीने वनमें लानेका कारण पूछा ।

चाण्डालने राजाका-निर्वाण दण्ड कह सुनाई । रानी सुनकर ब्रज्राहतकी भांति स्तम्भित रह गई, चम्पे जैसा सज्जल रंग पाण्डु गोगीची नाई पीला पड़ गया, सहस्र बुधिकदेश समान वेदना होने लगी । उसने यहूत सोचा परन्तु कोई अपाधा उसे हात न हुआ उसने अनिश्चय भ्रम बराते हुए कहा—“ बन्धु, हाथ क्या समस्त शरीर ही प्राणेश्वरता है यदि उन्हें..... ” कठ भग्न हो गया आगे कुछ न कह सकी ।

यद्यपि चांडाल आगेकी निधन बातों समस्त गया परन्तु रानीका सुकुमार शरीर तेज पुत्र देख हाथ न काट सका ।

रानीने चाण्डालको सोच निमग्न देख कहा—“ तुम सेवक हो राजाकी आज्ञाका पालन कर शीघ्र लौट जाओ । ”

चाण्डालने देखा पास ही एक शय पड़ा है उसने रुक करउसे कहा—“ माताजी, अपनी अंगुठी और कंगन इससाहिमें डाल दीजिये मैं काट ले जाऊंगा । ”



यह कहकर चाटवाल अश्रुवारसे अपना यक्षस्थल भिगोने लगा ।

दूसरे दिन जब छटे हुए हाथ राजाके पास पहुँचे तो उसे बड़ा दुःख हुआ नेत्रोंसे अश्रुधारा बहने लगी । वरत बहुत दिनों तक अनेक चेष्टा करने पर भी राजा गनीशो विस्मय न कर सका ।

६

राजमहिषी कलावती निर्जन बरमे बैठी दायं दृश्य और भग्नकण्ठसे अश्रु पहाते हुए भगवान् जिनैश्वर्यसे प्रार्थना कर रही है “प्रभो, मैं तो चली मेरी निष्कण्ठताके लिये आप ही माक्षी हैं । यस अपने चरणोंमें मुझ शीतलशिखरों लाश्रय दो । भगवन्, तुम संपन्न हो मरण पश्चात् मेरे गुदा-चाण्डो विषयमें प्रार्थारका यज्ञ विवश होने देना । यदि आप पर मेरा दह भाव हो-यदि दस भगवन् गिनीशो आरक्षी लज्जा हो तो मारनेके पूर्व एकवार प्रार्थनकर करण दशन मिले एक मात्र यही आशा है ।”

गनी जब अनिद हुई तो सामने ही एक साधु महात्मा दृष्टिगत हुए । साधुने विस्मित हो पूछा “पुत्री, तू क्यों है ?” महाराणी कलावतीने अपनी दुःख कथा अधोपान्त कह सुनाई । साधु ने वज्रात शिखु देकर अति विषम हुआ उसने दीर्घनिद्रास त्याग पृष्टा—“पुत्री, क्या किसी साथीके आनेकी प्रतीक्षा है ?”

कलावतीने दीर्घनिद्रास त्याग का कहा—“साथी एक यही संधे नियन्ता महावीर स्वामी हैं ।”

साधुने समझा कोई कुलीन रमणी है । व्यथकी बंदमें पड़ शक्तिमें तिरस्कृत हुई है अस्तु । उमने आश्वस्त देखकर कहा—“जब महावीरके नामसे दश इतनी श्रद्धा है तो जबतक तेरे दिन न फिर हमारे महावीर नामक विहार (आश्रम) की चला यथाउचित तुझे कुछ चष्ट न होने देंगे ।”

साधुने लपटे से गनी विहारमें जा रही । वह सांसारिक दुःखोंसे मुक्त हो भिक्षुवनियोंकी भक्ति आनन्दसे निश्चय दिवाने लगी ।



सती साध्वीको विलेपित कर भंगे अपार दण्ड दिया ।
(निधे निश्वात न्याग) आह ! ऐसा अघर्म करके भी म
जीवित हूँ ! पापानि, क्यों नहीं मुझ दृशस कुला-
धर्मको भस्म कर डे ! छत्र, तू ही क्यों नहीं
गिर पड़ती, क्या मैं सधारेने मुझ दिगंने योग्य
हूँ। हाय ! रानी ! हा प्राणेश्वरी ! ! ” कहते २
राजा अचेत हो गया ।

जब राजा चेतन्य हुआ तो उसने 'निश्चय दिया
' जिस प्रकार करविहीनरानी सिंह हिस भयानक
पशुओंका वनर दुई है वही प्रकार मुझे भी प्राण
वित्तजन करने चाहिए । ” यह सोचकर राजा
वनमें जानेको उद्यत हुआ ।

कर्मचारीगण एवम् प्रजाके कानों तक गन उपोक्त
दुःखद घटना पटुवी तो अति विपन्न हुए । सब
यही जानते थे कि देशकारने आए हुए राजके साथ
रानी मादिके गई दुई है पशु राजान निश्चा
अमवश रानीको त्यागा और दोनों हाथ बट्टा
चाण्डाल द्वारा निर्वासन दण्ड दिया है तो यह जन
सब नहि २ करने लगे । सबके सीधण आर्तनादसे
स्वर्गोत्तम शत्रु नगर छिगतपुत्र दर्शने लगा ।
क्योंकि रानी जवसे निराद कर आई प्रजामें भय,
जन, दल अदि निनी शक्ति की कमी नहीं
रही थी । जनता उन्नतमना नवनिष्कारोमें लीन
थी कि यहहा ऐसा वजगत हुआ । अस्तु, ऐसी
प्रजापालनैक तत्पर, शैलनगर राज्यकर्ता सधाजीको
खोदर प्रजा कैसे सन्तोष करतो उनका अधीम
दुःख अकथनीय है ।

राजा वन जानेको उद्यत है । सबही सम्मग पर
स्वनेही चला करते हैं पशु रानीके विधोने
राजाही दना विविपतामें परिणत कर दी है ।
अतएव राजा उसक विधको भग्न करनेमें
समर्थ न हुआ ।

राजके राज्य पर इसका कुछ प्रभुत्व था पशु
वह बहुत दिनोंके प्रवेश गया हुआ था अस्तु
परसह परामर्श पर सब रक्तं तिता मज्जेहीको
बुन लाए ।

मज्जेहीने राजाको विपन्न देखकर कहा—'राजन
विना विनागे एक बार जो कुछ आपने किया उसका
परिणाम केत नभकर और दुःखदाई हुआ अब
आप पुन विना विचारे काम करते हैं जिसका
प्राप्ति होना असम्भव है । कल एक योगिराज
अमितेजसे साक्षात् हुआ था यह यही उनमें ही
निरास करने है यदि आप उनसे उपदेश लाभ
करेंगे तो अवश्यमेव शान्ति मिलेगी ।

८

योगिराज अमितेजने राजाको उपदेश दिया ।
“ यह सत्ता वंश भूमि है मन, वचन, और
वर्ममें जो कार्य सम्पदन होगा अवश्यमेव उसका
फल भोगना पड़ेगा—” याचधोरो प्रजपुत्रैः
रक्षेय कमभि । कृपस्य सनिता दहप्राकारग्ये-
पराएव ।

यह समझता कि सुप्त दुःखों स्थि और ने
जन्म दिया है भ्रम है यह दुःखों रमेका फल
है । लौकिक भी उति है कि 'प्रमाणमन्त्राण-
प्रवृत्तय' ज्ञान-समस्त दर्शनकारोंने भी 'वर्मकी
सत्ता शब्दान्तरसे स्वीकार की है और फल भी
स्वीकार ही मानकर अपने २ विद्वान्तरा
समयन कर सके हैं, केवल वर्मके जड़ होनेसे
उनका प्रेरक ईश्वर वपता कोई दूसरा कारण
माना है पशु जैन लोग स्वात्माने भिन्न को
कारण नहीं मानते । यद्यपि वर्म जड़ है तथापि
उसकी अनन्त प्रकारकी शक्तियां हैं भाएव शुद्ध-
दुष्ट-निजान अनन्त शक्तिके स्वामी 'आत्माको
सत्तानी वनात्तर, अपने आधीन शुभाशुभ गतिमें
लोहको चुम्बककी तरह खींचनेकी शक्ति रहता है
उसमें दूसरे प्रेरककी वह अपेक्षा नहीं करता यदि
यह शक्त की जावे कि जड़ अपेक्षा या उर्तार
कैसे कर सकता है ? जो एर मशिकी ही ले
लीजिये जड़ होने पर आत्माके उपकारक और
अनुपकारक प्रत्यक्ष सिद्ध है इसी प्रकार वर्म जड़
होने पर भी आत्माके मोहित कर लेता है ।
वर्मके प्राप्ति तीन साधारण रूप हैं, प्राप्ति-विप-
और सचित । प्रत्यक्ष तो वर्तमान दशामें

फल दे रहे हैं, क्रियमान् किये जा रहे हैं जिनमेंसे बहुधा संवित होंगे जो आगामी जन्ममें प्रारब्ध बनेंगे ।

राजन्, आपने दुर्पा और रुन्देद्वय रानीको दुःख दिया। आपको विचारना चाहिए ऐसा क्यों हुआ ? आपने जिसको दुःख दिया कर्मवश उसका फल अवश्य भोगना पड़ेगा "अवश्यमेव भोक्तव्यं कृत्वा कर्मशुभाशुभ।" जो बीज आपके मनमें उलब रहा है जलाकर भस्म का दीजिये यदि उसमें भङ्ग निकल आए तो आपको दुःख ही यातना भोगनी पड़ेगी। आप विचारसे काम लें तभी बन्धाण होगा ।

योगीने उपदेशसे राजा कुछ शान्त हुआ उसने बन जाना किमी और समयको वधित कर दिया।

एक दिन राजाने योगीगजमें बड़ा—"महात्मन्, रात में एक रथ लेता है-कन्नाडस्थी एक टटा नीचेभी ओर मुक्त हुई है जिसमें एक सुन्दर अनमोल फल लगा हुआ है। इच्छा करने ही लगा मेरी ओर मुक्त जाती है। और....."

धीमे बात काटकर योगीराजने कहा—"राजन्, योग होता है अब आपके दिन सिर। यह विश्वास रहिए अभी आपकी रानी जीवित है उसने पुत्र प्रसव किया है। भाग संपन्न ही अपने भोग जनिष्ठ नष्ट सिन्धुवा सुन्दर सुग अयलोरन कर आनन्दित होंगे। भाग इतरसनः बनें रानी की खोज कराइये।"

थोड़ी देर पीछे दत्त राजसभामें उपस्थित हुआ। राजाने भ्रमवश रानीके प्रति किया हुआ अत्याचार से २ बार कह सुनाया।

दत्तने बड़ा पश्चात्ताप किया—"राजन्, कटावती स्त्री नहीं थी वह मानवी वेशमें साक्षात् स्वर्ग राज्यकी अधिष्ठात्री देवी थी। ओह ! आपने विना विचार हाथ कटवाकर जनसमाजमें कितनी धू धू कराई। राजासे बेचारी किसीके सामने आनेगी, आह ! यह अपना मुख धोने तरसे अक्षम होगी !"

'दत्त ! मैं रानीकी स्वयम् सेवा सुभ्रूपा करूँगा यह बड़ी कष्टसहिष्णु स्त्री साथी है मुझे क्षमा कर भेषामें अंगीकार करेगी। अस्तु जिस प्रकार हो सके एकवार रानीसे साक्षात् करा दें मैं नेत्र चिर कृतज्ञ रहूँगा।" यह कहकर राजा अनुनाममें अपना वक्षस्थल भिगोने लगा।

दत्तने दीर्घनिश्वास त्याग कर कहा—"रानी अवश्यमेव आपको क्षमा कर देगी परन्तु उसका मिलना भूति पटित है। अस्तु अब मैं जाता हूँ, ययासम्मय द्वंद्व खोजकर शीघ्र लौटूँगा।" यह कहकर दत्तने चाण्डालसे बन दत्तादिका पता पूछकर उसी ओर पयान किया।

साधुके उपदेशसे दस विहारमें आया । यहाँ उसने अच्छे साधुओंका समाज देखा सदृश कोनेमें बैठी हुई एक भिक्षुकी नीर उसकी दृष्टि पड़ी जो अपने बालकको गोदमें लिये लोरी या रली थी, दत्त "हा रानी ! हा रानी ! ! " इहकर चरधर्म गिर पड़ा । रानीके नेत्र भी नीरत्र न रह सके पर भी अश्रुधारायें अपना वक्षस्वधल भिगोने लगी । दत्तने राजाका पञ्चाशाप, विद्योगामिने अज्जरित होना अपरा दृष्ट तथा आद्योपान्त कष्ट सुनाई और रानीमें, वियोगी आत्मत्र मृत्यु राजाको दर्शन दे पुनर्जीवित करनेकी प्रार्थना की, परन्तु रानीने अपने आश्रयदाता साधुसे आज्ञा लेनेको बाध्य किया । अस्तु दत्तने रानीको संग ले जानेकी साधुमें प्रार्थना की ।

यद्यपि दत्तके कहनेसे राजाकी मनोवेदनाका आभास मिल चुका था परन्तु कलावती सती साध्वी है इसका राजाको पूर्ण विश्वास तथा हार्दिक अनुताप देखनेके अतिप्रायसे साधुने राजासे स्वयम् आकर रानीको लिया ले जानेकी आज्ञा दी ।

१०

साधुकी आज्ञागुसार राजा अपने सर्वचारिण्यो सहित महावीरविहारमें आया । सपने पूर्ण भ्रान्ति-भेद भगवानके दर्शन किये साधुानोंसे बहुत कुछ भेद भाग की तब राजा उस कोठरीमें आया जहाँ रानीका आवासस्थान था ।

कलावतीने स्वयम् अपना करविहीन प्रतिनिध्व एव कोनेमें स्थापित किया था एक ओर छोटी शय्या पर नवशिशु बनाया था जो अपने अश्रु डेरी चुन रहा था ।

राजाके ध्यानपूर्वक प्रतिनिध्वकी ओर टकटकी लगा रही, उनका वीमल हस्तिपद पटलने लगा । रानीसे जिस मोहनी मूर्तिसे हृदय मन्दिरमें स्थापना कर प्रति समय स राधागामे निमग्न रहते थे वही प्राणप्रिया सन्मुख विद्यमान है यह स्वयम् भला उन्हें किस प्रकार सन्तोष होता । आनन्दकी विप्लवज्वाला सरस्तीमुख हुई है वह दीइकर मुखके देहमें गिर पड़ने की को धे कि सदृश किष्कीने

पीछेसे राजाका हाथ पकट कर कहा—“राजेश्वर, अभागिनी कलावती यह है । यह तो मूर्ति है ।” यह कहकर रानी कलावती राजाके शरीरमें लिपट गते । दोनोंके गण्डसे बह अधिराल नयनाश्रु झरने लगे ।

राजा लज्जित नम्र मुख त्यक्त कलावतीको पञ्चाशाप दृष्टिसे देखते हुए भग्नस्वस्ते कहने लगे “प्यारी क्षमा ! प्यारी क्षमा ! !”

कलावतीने राजाके हाथ खींचकर कहा—“हूँ हूँ ! प्राणनाथ, आप हाथ न जोड़ें यह काम मेरा है मैं तो आगयी दारुनी हूँ ” पुष्टपाण्यि या प्रोत्साह्यता या श्रेष्ठकृपा । सप्रसन्नमुखी भर्तृमा नारी धर्मभागिनी ।

राजन दीर्घनिश्चय त्यागकर कहा—“ओह, मैं ने क्या अराधना किया निरस्तदर्श मैं पापी हूँ प्यारी, मुझे कैसे क्षमा करोगी !”

रानी कलावतीने आचलसे राजाके आंसु पोंछकर कहा ‘स्वामिन् आपका कुछ अराध नहीं है पूर्वाभिलाषि कर्मवश मुझे यह सब यातायात भोगनी पड़ी परन्तु आपके हृदयमें मेरे लिये प्रेम...’

गन्धर्विणु राजदुर्गा नौचे बैठा रो रहा था राजाके उस गोदमें उठा लिया । अपरिचित राजाका मुख देख पलक और अरिष्ट रुदन करने लगा । राजाके मुखचुम्बन और मस्तिष्क ग्रहण पश्चात् रानीसे कहा ‘दायक दृष्टिले रोता हूँ कि वह एक पापीकी गोदमें है ।

“नही नहीं महाराज, हमने कारण यह अनुपात है । बालक समझता है अथ उत्तका मरचा आश्रय-दाता मिल गया ।”

सन्ध पटक, एति रानीकी क्षमा प्रार्थना मित्रपर अब इन दस अक्षरों अधिक वरणाजनक नहीं बाधा चाहते परन्तु प्रार्थना करने हैं कि इनकी दृष्टिमें इसी प्रकार धर्मज सती साध्वी जन नगत्ता निनेन्द्रेण आदेशित कार्याक सम्पादन प्रयत्न हो । तब ही नारी धर्म सफल होगा ।

पवित्र काजमीरी केशर नि. १०

१।=) तीज पता-नि. धन पुष्पहालय-मूरत

व्याख्यान ।

श्रीमान सेठ सुखदेवजी वज

ओं मेजिस्ट्रेट ।

समापति स्वागतकारिणी नभा, भारत दि० जैन
महासभा, मालवा दि० जैन प्रा० सभा और
हाडौती प्रा० सभाका संयुक्त अधिवेशन

कोश ।

पंच परम पद प्रथम का नमू शारदा गाय ।

जा प्रसाद उद्यत भयो स्वागतार्थ सुखदाय ॥

प्रिय मज्जनवृन्द और महिलाओं,

आज आप लोगोंको इस स्थानमें एकत्रित
देखकर जो हर्ष होता है वह वचनार्थी है ।
और आप लोगोंका स्वागत करते हुए मुझे
बहुत ही आनन्द होता है, निःसन्देह यह मेरे
कोई पुण्य प्रकृतिका ही उदय है जो आप
जैसे महानुभावोंके स्वागत करनेका यह अपूर्व
अवसर प्राप्त हुआ है । इसलिये मैं इसे अपना
पूर्ण सौभाग्य और फलव्य समझ कर ही इस
कार्यमें अग्रसर हुआ हूँ । यद्यपि मैं इस कार्यमें
किष्कुन्त ही अनुभवही हूँ और इसमें पक्षि
कभी भी मुझे ऐसा अवसर प्राप्त नहीं हुआ
है तो भी अपने माइयोंके उत्साह दिवाने
और इस भावी आनन्दका विचार करके ही
स्वागतार्थ उद्यत हो गया हूँ, इसमें सन्देह
नहीं है कि मेरा यह प्रयत्न अवश्य ही सफल
होगा । मैं चाहता हूँ कि आप सब लोग
तो भी आनन्द हों कि ये आप जैसे लोग
पुरुषोंके समुदाय होंगी, कारण कि

जिस प्रकार आप लोगोंने मार्गके शीतादि
कष्टोंको झेलकर तथा अपने द्रव्य और समयको
व्यय करके कृपापूर्वक पधार कर हम लोगोंको
आभारी किया है और अपने धर्मानुसारका
पूण परिचय दिया है उसी प्रकार ये वृद्धियां
भी क्षमा की जावेंगी ।

सबसे प्रथम मैं रामराजेश्वर पंचम, राज
महाराज तथा महाराजाधिराज कोटा नरेशका
हृदयसे अभिनंदन करता हूँ कि जिनके न्याय
शासनमें हम लोग निर्विघ्नतापूर्वक अपने
धार्मिक और सामाजिक उत्थति सम्बन्धी कार्य
करनेमें समर्थ हुए हैं । इसके पश्चात् मैं श्रीमान
न्यायाधीश दीवान बहादुर महाशय तथा अन्य
राज्यवर्गीय पुरुषोंका भी आभारी हूँ कि जो
समय समय पर उत्तम प्रबन्ध द्वारा धार्मिक
कार्योंमें सहायता पहुंचाने रहने हैं तथा इस
अवसर पर भी बहुत कृपा दिखाई है ।

हर्षका विषय है कि इस शुभअवसर पर हम
लोगोंको अपनी जातीय व धर्म सम्बन्धी उत्थति
विनायक मन्त्रियोंको प्रगट करनेका समय मिला
है इसलिये हम लोगोंका भी कर्तव्य है कि
इस अवसरको सदाके अनुसार यों ही न जाने
देवें और अपने अपने मन्त्रियोंको प्रगट करके
सब सम्मानानुसार फलव्य निर करके उस पर
चरनेका हृद मंज्य कर लें ताकि भविष्यमें
फिर भी हम लोगोंको विटपेपन (धिम हुवे दो
दीसना) करना न पड़े अर्थात् पुराने पास हुए
प्रस्तावोंको फिरसे पास करनेका अवसर न आए
और हम आगे आगे करनेमें समर्थ हों ।



“क्योंकि जिस समय अन्य समाजें आगे आगे बढ़ी जा रही हैं उस समय हम लोग अपने ही स्थान पर ध्रुव रहें यह बात हमारे अस्तित्वकी विधातक है अर्थात् हम अपने स्थान पर भी नहीं रह सकते हैं । हमारा ऐसी अवस्थामें अवश्य ही पता होगा जैसा कि पूर्व कालीन इतिहासोंको देखनेसे और आनकी स्थिति पर विचार करनेसे विदित होता है । अर्थात् एक वह था कि जब भूमंडलमें यह धर्म दिगन्तव्यापि हो रहा था और जगत से उ जैसे धनी व पं० प्रवर टोडरमलजी, सदासुख-दासजी प्रभृति विद्वानोंसे यह समान परमक्रांति-युक्त हो रहा था । आज उसी समानमें गिने चुने नाम मात्रके लिये दो चार विद्वान व श्रीमान् रह गये हैं और जनसंख्या भी उत्तरोत्तर ह्रास होती हुई अर्थात् प्रति दश वर्ष (मनुष्य गणना)में अपने १०००० हजार माई भगनियोंको खोकर चुपकी बैठी है अर्थात् इस समय इसकी कुल संख्या (दिगम्बर, श्वांबर, स्थानकवासी मिठकर) केवल १२५०००० साढ़े बागह लाख ही रह गई है । यदि यह क्रम बराबर चालू रहा तो अठारह सौ २५० वर्षोंमें फिर स्वच्छ मैदान दृष्टिगत होगा शायद इतिहासके पृष्ठों पर ही जैन व जैनी शब्द गिवाई देगा । महानुभावो, क्या हमारा इस समय भी यही कर्तव्य है कि हम लोग जाति व धर्मकी ओर झुट भी ध्यान न देकर केवल अपनी पूर्वापार्जित लक्ष्मी व भोग सामग्रियोंमें तल्लीन हुये आने व नव जीवनको अन्य प्राणि-योंकी नाई बिताकर कालके महपान बन नाव ।

संसारमें यावत् प्राणी मात्र अपने अस्तित्वको रखते हुए आगे बढ़नेकी चेष्टामें लगे हुए हैं ऐसे समयमें हम भी यदि आगे न चले सकें तो कमसे कम नाथ में तो अवश्य ही चलना चाहिये । कारण-‘अवसर बीते पे जु फिर पड़ताये का होय । सूखो खो किसानको कहा करे फिर तोय ।’ आज हमको कैसा अच्छा समय प्राप्त हुआ है कि हम लोग अपने साम्राज्यके न्याय शासनमें बिना किसी प्रकारके विघ्नवाशाओंके स्वतंत्रता पूर्वक अपने २ धर्मोंका प्रकाशन कर सकते हैं । विशेष हर्ष आप लोगोंको यह जानकर होगा कि गन चार वर्षोंसे जो हमारे सम्राट् महोदय प्राणी मात्रकी स्वाधीनताकी रक्षार्थ युद्धमें लगे रहे थे और उस युद्ध कार्यमें आप लोगोंने तन धन तथा जनसे यथासंभव सहायता देकर राज्यभक्ति दर्शाई थी सो वह युद्ध हमारे सम्राट्की जयपूर्वक अंतको प्रस हो गया है । जिसके लिये हमको हर्ष मानना चाहिये । और वह हर्ष केवल हमारे लौकिक लाभ दृष्टिमें ही नहीं किंतु धर्म दृष्टिमें भी “अहिंसा परमो धर्म” के अनुसार अनंत प्राणियोंका संसार होना बंद हो गया इसलिये भी मानना योग्य है । अब इससे और कौनसा शांतिका उत्तम अवसर प्राप्त होगा । तात्पर्य सब प्रकार यह समय हमारे अत्युत्कृष्ट है इसलिये हमारे अब इन सम्मेलनसे लान उठाया चाहिये ।

यहां मैं सर्व प्रथम सम्मेलनोंका अभिप्राय प्रगट कर दूं तो सुकिंगमत होगा । मुदइयुन्द, सम्मेलन, मेला, मंथ, आदि शब्द एक र्थवाची ।



हैं। यह संवकी प्रथा तब तक नहीं है किन्तु प्राचीन कालसे प्रायः सब देशों और सब जातियोंमें प्रचलित है। जनसमुदायको किसी अवसर विशेष पर किसी नियुक्त स्थानमें, नियुक्त समयके लिये, किसी अवलम्बनसे इकत्रित होना ही मेला, संव व सम्मेलन कहा जाता है। सम्मेलनमें अनेक स्थानोंके सभी स्थितिके लोग जैसे विद्वान्, मूर्ख, श्रीमान्, निर्धन, बाल, वृद्ध, युवा, नर नारी, कुमार विवाहित, विधुर वा विधवाएं, योगी वियोगी, सुखी, दुःखी भक्त अभक्त, धर्माचारागी विषयाचारागी, लोभी उदार, स्वाधी परमाधी इत्यादि पचारेते हैं। ऐसे अवसरमें यदि समाजके नेताएँ चाहें तो बहुत कुछ सुचारु कर सकते हैं। क्योंकि इस समय एक दूसरेको अनुकरण करनेका अच्छा अवसर है इन नेताओंका अभिप्राय यही प्रतीत होता है कि मनुष्योंको घासे निज घासते निकलनेका असर मिलता है कि जिससे मनुष्यका परिवर्तन होता है, व्यापार आदिको दृष्टि बढ़ती है, होशयारी आती है और घर पर अराकाश न मिटनेके कारण दो पृष्ठादि नियम धर्म यदि नहीं हो सकते थे सो भी यहाँ पर भरे प्रकार हो सकता है परस्पर छिद्रता तत्त्व भर्त्ता व दिनेपक्षों द्वारा धर्मादि-प्राप्त लाभ होगा है जातिमें अनुभवी और नेताएँ परस्पर मित्रता भावोंमें उत्पन्न हुई कर्तव्यों पर विश्वास रखके उन्हें सफलता

स्थिति ठीक करनेके लिये भी परस्पर सहाय करते, उपाय सोचते, लोगोंको बताते हैं। इस प्रकारके और भी अनेकों लाभ होते हैं जिनसे आप लोग स्वयं परिचित हैं ? परन्तु यदि हम लोगोंने मिलकर कुछ लाभ न उठाया तो फिर समाचारपत्रोंवाले हमारी भी समालोचना करनेसे न चूकेंगे, इससे यह फल होगा कि हमारा अमूल्य समय भी गया, द्रव्य भी खर्च हुआ, और शीतादिकी बाधाओं सहन कीं लाभ कुछ भी नहीं हुआ। कहावत चरितार्थ हुई "कि घने भी जल गये और मुनाई भी लग गई फिर भी भूखे रहे।"

अनुसार, मैं पहिले ही कह चुका हूँ कि सबके साथ न चलनेसे हमको जीवित नहीं रह सकते हैं इसलिये हमको भी सबके साथ ही दौड़ना होगा। अब हमें यह देखना है कि हम वास्तवमें पिछड़े हुए हैं या कि साथ चल रहे हैं ? तो मालूम होना है कि हम बहुत पिछड़े हुए हैं। अभी हम धार्मिक विषयको धार्मिक धार्मिक विद्यमान विद्वानोंके लिये छोड़कर सामाजिक स्थिति पर ही विचार करते हैं क्योंकि "न घबों धार्मिक दिना" अर्थात् धर्मात्माओंके बिना धर्म भी (निराधार) नहीं चल सकता है। जब सबसे प्रथम हमारी गिया सत्यन्धी चिन्ताहीकी ले लानिये, तो आपको अपनी जातिमें विवाह वि० सुमनसिद्धि के भेन बार



वर्षोंमें कुछ थोड़ेसे बकौल व अध्याएक दिल्लेन लगे हैं, हिन्दीमें तो अब तक किसी भी जैनीने हिन्दी साहित्य सम्मेलनकी उपाधि प्राप्त ही नहीं की। संस्कृतमें अब तक एक भी व्याकरण आचार्य नहीं है और न साहित्याचार्य ही; यदि हैं तो सिर्फ दो (जैन) न्यायाचार्य ही—
१. न्यायाचार्य पं० गणेशप्रसादजी वर्णी और
२. पं० मानिकचंदजी न्यायानार्य, ज्योतिषी पंडित भियालालजी व वैद्य कन्हैयालालजीके सिवाय कोई न्योतिषी व वैद्य प्रख्यात नहीं है। जियोमें शिक्षाका अभाव ही सा है। शिक्षा शिक्षाका नाम ही सुननेसे भय होता है और तो जाने दीजिये यह वैश्य जाति जिसको आप लोग सुशोभित कर रहे हैं वाणिज्य प्रधान जाति है परंतु शोकके साथ कहना पड़ता है कि आज यह जाति भी अन्य जातियोंके समान व्यापार बिनासे अनभिज्ञ रहनेके कारण अत्यन्त दीन परावीन कार्य (नौकरी) करने लगी है। वैश्य जातिके लिये नौकरी (शब्द) घृणास्पद है परंतु व्यापार न मानने अपवा पृथीके अभावहीके कारण इस आस्थाको प्राप्त हो गये हैं। व्यापार भी जो कुछ देल जाता है उसे व्यापार कहते हुए रुझा आती है बाल्यमें यह तो परस्परमें डीनाझपटी ही है अथवा सराफी है। इन बातोंको हमारे व्यापार विज्ञ भाई भूते प्रकार समझा रहे हैं। हाय! जिस जातिमें नगलसेठ जैसे बनी हो गये आज उसमें नगरसेठ तक नहीं दिताई देते हैं। हमें यह कहना पड़ना है कि हमलोग वास्तवमें व्यापार करना ही भूल गये हैं हमको केवल धर्म रह गई है इकानशरी,

हमारे पूर्ण मुख्य ज्ञान भराकर देशांतरोंमें जाकर प्रायविक्रय करते और वहांका माल वहां लेकर बेंचते इससे अपने देशमें शिल्पकलाकी वृद्धि होती, देशका कच्चा माल (जो कि आज विदेशोंमें जाकर वहांसे पक्का बनकर कई गुणी कीमत पर पीछे यहां आता है) यहीं साफ होकर उत्पन्न पक्का माल तैयार होकर विदेशोंमें जाता था। और उसके बदले यहांपर वह वस्तुएं जो यहांके लिये आवश्यक हों और वे यहां नहीं बनती हैं, आती थीं, इस संसारकी बड़ी भारी आवश्यकताकी पूर्ति करनेवाली यह एक पैदाश (वणिज) जाति ही थी, जो कि आज मार्ग भूल गई है। यदि आज भी यह समान अपने इतिहास व पुराणों परसे विचार करके कर्तव्याय पर स्थिति हो जाय तो इसमें सन्देह नहीं है कि कुलपारम्परागत रुविर अभी भी इसके शरीरोंमें बह रहा है यह जाति पुनः शीघ्र दक्षता प्राप्त कर सकती है। परंतु विद्या विना विवेक नहीं और विवेक विना सिद्धि नहीं होती है। अतएव हमारा सर्व प्रथम यह कर्तव्य है कि हम अपनी जातिमें जितनी शीघ्रतासे हो सके विद्या-शिक्षाका प्रचार करें। राज्यभाषा (अंग्रेजी) देशभाषा (हिन्दी) और धर्मभाषा (संस्कृत) यथायोग्य मुख्य गौण रूपसे सदाचार नैतिक व्यवहार और धार्मिक शिक्षाके साथ२ पढ़ावें। उच्च क्रोटिक विद्वान तैयार करें, उन्हें साथ ही स्वतंत्र आजीवी बनायें, वर्तमान समयके अनुकूल व्यापारी शिक्षा दें, देशमें शिक्षकश्री जैसे वृद्धि होवें ऐसे यत्न करें, कुछ कारखाने खोलें और निराश्रित भाइयोंको कार्यमें लगायें। हमें अब जातिमें शिक्षा इसके लिये नहीं देना चाहिये कि जितसे नौकर तैयार हों वे किन्तु



ऐसे लोग तैयार करना चाहिये जो कि व्यापारी-
 श्रेष्ठों द्वारा आजीविका करके अपने जातिहितके
 लिये कुछ समय लगा सकें। प्राचीन पंडितोंकी
 जीवनीमुननेसे विदित होना है कि वे लोग व्या-
 पारीयों और व्यापारी होने पर भी बड़े बड़े ग्रन्थ
 लिख गये, बड़े ग्रन्थोंपर लम्बी टीकायें भाष्य वच-
 निकादिकर गये हैं जिन्हेंकि प्रसादसे आज हम
 भैरवधर्मको जान रहे हैं, दूसरी बात यह है कि
 जो भाई व्यापार तो करना चाहते हैं पंतु पूंजीके
 बिना लाचार होकर नौकरी करने लगते हैं तथा
 नौकरी न मिलने पर अथवा नौकरी न कर सकनेके
 कारण “मुक्तिमा किम् न वरोति पापम्” अर्थात्
 भूता वयः २ पाप नहीं रमता है ? सभी कुछ
 करता है। इस दृष्टिके अनुसार और भी अनेक
 प्रकारके नहीं करने योग्य कार्य कर बैठते हैं।
 ऐसी दृष्टासे आवश्यक है कि उन्हें पूंजी (योग्य-
 तानुसार) देकर दिया काँ, इस कार्यके लिये
 हमको भैरवधर्मकी आवश्यकता पड़ेगी। अब प्रश्न
 होगा कि धर्ममें पूंजी कहाँसे आवेगी ? तो
 उत्तर यह है कि इसके लिये हमें धन न करना
 पड़ेगा। किन्तु हमारे तीर्थों व मंदिरों और

महानुभावोंने कदम बढ़ाया है इत्यदि।
 सामाजिक रीतियोंपर विचार करनेसे तो
 वही बात है कि ‘अपनी नाय उबारिये
 आपहि मरिये लान’ सबसे प्रथम हम दान्यत्व
 सम्बन्ध ही पर विचार करते हैं तो हमको यही
 बहुत बेमेल कार्य दृष्टिगोचर होता है अर्थात्
 कहीं तो “बड़ी बहू रो बड़ो माग” अर्थात् वर
 छोटा और बधू बड़ी, और कहीं बूढ़े बाबाके
 साथ छोटीसी बालिका और कहीं बहुत छोटे २
 बालक और बालिकाओंका सम्बन्ध होता है
 जिसके कारण अत्यन्त सरावियां हो रही हैं
 और उसके लिये बाल्य विवाह (१८ वर्षसे
 कम पुत्र और १२ से कम कन्याका) वृद्ध-
 व्याह (४० वर्षसे ऊपर) तथा कन्याविक्रय बंद
 करना पड़ेगा। इसके सिवाय जातिमेंसे अनाव-
 श्यक व्यय कम करना होगा। जिसके लिये वेश्या
 नृत्य, अतिशबाजी, फुलबारी आदि बंद करके
 जीमन भी कम करना होगा, पुत्रोंके भी
 व्याहोंकी कुछ हद्द (संख्या) नियत करना
 होगी, और यह भी करना होगा कि एक यौ-
 तथा पुत्र पुत्रियोंके रहते हुए, भिवारी अन्धोंके



स्थानों पर ५ सेरकी गटरी और विस्तर भी बिना कुलीकी सहायतासे नहीं उतार सकते हैं। गाड़ीसे तांगे तक लानेके लिये मन माने पैसे लेकर कुली वा बूछोंको पहुँचाता है, आधे मील भी पाँच पयादे चढ़नेसे हाँफ जाते हैं, किंचित भी धूप टंड सह नहीं सकते हैं। जिनकी यह दशा है उनमें शारीरिक बड़ कितना होगा सो अनुमान कर लीजियेगा कि जब कोई इन पर कुछ बलात्कार कर बैठता है तो ये पुलिसको पुकारते ही रह जाते हैं और जब तक पुलिसवाला इनकी सहायताको वहाँ तक पहुँचाता है उसके पहिले ही वह अतलाई अपनी मन्मानी करके चले देता है और ये इस तरह गया, अभी तो तो था, यहीं था, वहाँ गया, कालासा था, जमान था इत्यादि पाठ पुनः ही रह जाते हैं। हाय ! जिनके पूर्व पुरुष ऐसे थे कि मनो बेश उठा सकते तथा कोसों चले जाते थे, जंगल पहाड़ोंमें एकाकी जानेमें नरा भी न हिचकते थे आग उनकी संतान कुली! ओ कुली! करते रह जाते हैं, गाड़ी सीटी देती है सामान भी उतारनेको रहँचाता है। यह सब निर्वृत्ताका कारण है; अपक्ष्णीय व क्षीणवीर्यसे जो सन्तान होगी वह ऐसी ही होगी, सो प्रथम तो उत्पत्ति ही ऐसी फिर जो दूध आदि पदार्थ जिनसे हमारे भाइयोंके शरीरको पुष्टि मिलती थी अब देखनेको ही मिलना है। दूध जो कि लप्याचा पका २० सेर १५ बॉ पहिले मिलता था। आज ३ सेर भी कठिनातासे शुद्ध मिलता है और तो नाने दीजिये, आनाज भी घर पेठ खानेको नहीं मिलता है तिस पर भी बाहरी वाकचित्त्य इतना बढ़

गया है कि चाहे भोजनके लिये भले ही एकवार मुख चने पिष्टे परंतु पैरमें पाँच रुपयाका बढ़िया बूट होना ही चाहिये, बढ़िया कलप कमीज और काजर पर होना ही चाहिये, कोट पेन्ट पर खी नित्य फिरना ही चाहिये, डेडी हजामत होना और बढ़िया कामनिया आयल तथा पियर्स सोप अवश्य चाहिये इत्यादि, फिर और तुरा यह कि उष्टे शरीर शोषक पदार्थोंका सेवन करना। जैसे बीड़ी, चुस्ट, चाप, काफ़ी, भं, सोडावाटर, लेमनेड, बर्क आदि। भला सोचिये तो सही कि 'ग्रह प्रहीत पुनि वातवशा तिहि पुनि बीड़ी मार। ताहि पिपाइये बाख्शी कहां कौन उपाचार।' इसलिये बन्धुवर्गों, अब केवल चिकित्सा व उपरी घनावटसे ही काम नहीं चड़ेगा किन्तु आवश्यक है कि भीतरी अवस्था सुधारो। शारीरिक बड़ बढ़ानेके लिये इन बाल वृद्ध तथा अनेक व्याहोंको बंद करके ब्रह्मचर्य व्रत पाठन (स्वस्त्री संतोष व्रत ही ग्रहस्थोंका ब्रह्मचर्य है) नियमपूर्वक होना चाहिये। सोडा, बीड़ी, चुस्ट आदि हानिकारक पदार्थोंके बढ़ले की दूध आदि उत्तम पदार्थोंका सेवन करना चाहिये, नित्य दयाशक्ति व्यायाम करना चाहिये। नी दूध प्राप्त करनेके लिये गौशालाएँ बनाना होंगी, गाय भैंस आदि दूध देनेवाले जानवरोंकी रक्षा और पालन करना होगा, पहिले समयमें गरवा पशु-शास्त्रों की भाँयः प्रत्येक ग्रहस्थ शक्ति-प्रमाण पशु गाय-महिषि आदि रक्ता पा, उससे खूब नी दूध खाते गोबरसे गृह शुद्धि होती और गलानेको कंठे होते सेतोता खाद होता इत्यादि अनेकों लाभ। वास्त भी उन दिनों बहुतायतसे



होती थी। आज कल घोर पशु हिंसा हो रही है इसीसे खेती आदि कार्योंमें भी बाधा पड़-
चने लगी है अब मछा वी दूध कहांसे प्राप्त
होवे। इसी घोर निम्प्रयोजन हिंसाका फल है
कि हमारा देश प्रति वर्ष दुर्भिक्षसे पीड़ित होता
चला जा रहा है। हाथ, अहिंसा प्रचन देशमें
भी परमोपकारी पशुओं तक की रक्षाका न होना
यह हमारे लिये उज्जात्पद नहीं तो क्या है !
इसलिये हम लोगोंको पशुश्रमा और पशु
पालन करना भी कर्तव्य है। यह हमारे शरीर
रक्षाका मुख्य साधन होगा। अब शारीरिक
बलसे आगे चलिये तो विशावलोक सम्मन्वये कह
ही चुका हूं। अब मानसिक बलकी भी यह
दशा है कि हम सबको सत्य कहते हुए
हिचकते हैं। हमसे जब कोई कर्मचारी घुंस
मांगता है और बिना घुंस वह हमारे कार्यमें
बंटक होता है तो हम चुपकेसे उसकी मुड़ी
गम गर देते हैं परन्तु हममें यह साहस नहीं
है कि उसही इस शिकायतको अधिकारियोंके
पास तक पहुंचायें। बहुतसे लोग इस प्रकार घुंस
देना दया समझते होंगे परन्तु यह आम लोगोंके
प्रति घोर अन्धकार करना, राज्यकी आज्ञाका
उल्लंघन करना है। और भी देखिये कि यदि
खेतीमें पूरा भी कुछ राइसड़ा देंगे तो डर
जोग इत्यादि। अब सामाजिक परदा तो
नहना ही क्या है ! इनमें तो ३ और
६ बाली बात हैं, पशु बली तो पास पास
मिट्टर द्रव्यसे भरे हैं, परन्तु हमारे फंडे किसी
भी विषयमें खर्चमें होकर मिटना नहीं
पाते हैं। सभी अस्सी २ गंडे पांखली और

अलग पकाते हैं। कोई तेरापंथी तो कोई बीस-
पंथी, कोई छापेवाला तो कोई उसका निषेधक,
कोई बाबूदल, कोई पंडितदल, कोई ज्ञानानन्दी
तो कोई केवल ब्राह्मकियानुयायी इत्यादि। इस-
लिये ऐक्यमत होकर समान संभनकी भी पर-
मावश्यकता है।

अब चलिये संस्थाओंकी अवस्था पर विचा-
रिये तो पहिले तीर्थक्षेत्रों ही को ले लीजिये।
तो वहां पर मुनीम पुजारियों और माली व्या-
सोंका ही स्वराज्य है। इन्हें कमना पड़ता नहीं
है, भक्तजन घंटार दे जाते हैं और ये लोग
मूछों पर तन देकर भोग उड़ाते हैं। अपने
अधिकारी योंको चारलूसी काके खुश रखते
और उल्टे पुरट समझाकर नये नये मुवद्दमें
मामठे तैयार करते रहते हैं। इन मुस्झोंमें इन
लोगोंका पूरा हाथ रहता है। और इनके द्वारा
बकीलों आदिका भी काम चलता है। मैं निश्चय
पूर्वक कह सका हूं कि यदि दिगम्बर तथा
श्वेताम्बर समानके नेता स्वयं परस्पर मिल कर
चाहने तो इन तीर्थोंका कमीका निबेरा हो
जात; परन्तु नौकरशाही के मोरे पता ही नहीं
लगने पाता है। आज कल इन कोठियोंके मुनीम
लोग हाथी पर चढ़ते हैं। आज लोगोंने जैन-
मित्र, अंक ११ वर्ष २० में 'सत्य घटना पढ़ी होगी'
वह निम्नदेह बन्य ही दे। अन्येक तीर्थ पर मुनीम
पुजारी चौकीदार सिमही सजाम काते हैं और
इतना मांगते हैं जो इन्हें दे दें। यह उदार
और उपरी कुछ मुंद पर-प्रशंसा का देते हैं।
नहीं देनाउत पंजून बाली घुंसके नरोंसे मृषि
रिया नाल है ! यही दशा घावते हुए ग्य-



नाधिक हमारे जैनमंदिरोंकी समझिये। अब चलिए विद्यालयों छात्रालयों और आश्रमोंकी दशाका निरीक्षण कीजिये तो आपको विदित हो जायगा कि इनसे जितने लाभकी सम्भावना है उसका शतांश भी लाभ कठिनतासे होता है। सदा इनमें कर्मचारियों, अधिकारियों और छात्रोंकी लड़ा लड़ी हुआ करती है इसका कारण केवल प्रबन्धकी कमी है। इन बातोंसे कोई यह अभिप्राय न निकाले कि मैं इनकी शिकायत करके इनको उठा देना चाहता हूँ। नहीं २ किंतु मैं चाहता हूँ कि इनमें सुप्रबन्ध होवे, क्योंकि व्यय तो हो ही रहा है और लाभ यथार्थ नहीं होता है। मेरी दिगम्बर तथा श्वेतांबर संप्रदायके नेताओंसे भी सविनय प्रार्थना है कि आप लोग परस्पर मिल कर तीर्थोंके झगड़ोंको आपसमें ही नरमा नरमीसे निचटा लो। जैनधर्मका सिद्धान्त कषायोंको मंद करना है न कि तीव्र करना। देखो, ये तीर्थक्षेत्र वैराग्य, ज्ञान, धर्मध्यानके ही साधन थे जो कि आज आर्त और रौद्र ध्यानके उत्पादक हो रहे हैं। इन तीर्थोंके झगड़ोंसे निवृत्ति प्राप्त नगति दशा पर विचार करो कि यह कहाँ जा रही है ? इसका अस्तित्व कैसे रहेगा ? इत्यादि और जो द्रव्य इन झगड़ोंसे बचेगा उसे शिक्षा स्तानमें, अनाथ पालनमें अपना और भी ऐसे ही सर्वोपयोगी कार्योंमें लगाओ। संस्थाओंकी मुख्यसंस्थाकी और ध्यान दो जिम्मे दपोषित लाभ होवे।

अव्यवस्थाका कारण एक यह बड़ा भारी है कि समाज मनुष्योंसे उनकी योग्यतानुसार कार्य

नहीं लेती है। यदि वकीलसे दवा कराइयेगा और वैद्यको अदालतमें खड़ा कीजिये तो दोनोंकी फीस ठीकसे भी अधिक देने पर भी रोगी मर जायगा और केश भी बिगड़ जायगा इसी प्रकार से पंडितोंसे प्रबन्ध व मेनेजरका काम लेना, नाबुओंसे हिसाब किताब व तौल नाप, व्यापारियोंसे पठनक्रम बनवाना इत्यादि। दूसरी बात एक यह भी है कि एक ही आदमीसे “पीर बबर्ची भिखी खर” के अर्थात् किसी संस्थाके सुपरिन्टेन्डेंटको ही लीजिये, तो वह अध्यापन भी करे अध्ययन भी करता जावे, योग्य देखरेख (संस्थाकी पूरी सम्हाल) हिसाब व प्रबन्ध भी रखे, भोजनशालाकी सम्हाल, सामान खाना रखना, तोड़ना, चन्दा वसूल करना, लोगोंसे चन्दा नवीन माना, सहायताकी चिट्ठियां लिखना, अधिकारियोंके पीछे २ फिरना इत्यादि सभी काम करना पड़ते हैं। फल यह होता है कि कोई भी कार्य पूरा नहीं होता है। तीसरी बात यह है कि कोई सार सम्हाल करनेवाला नहीं है। चाहे कोई ईमानदारीसे करे व पैसैमानीसे जितके गले पड़ा सो ही सम्हाले। यहाँ तो चन्दा देकर झुटकारा पा लिया। इसलिये मैं इस ओर सवाजना चित आकर्षित करता हूँ कि वह संस्थाओंकी योग्य सम्हाल करे और जो मनुष्य जिस कार्यके योग्य होवे उससे वही कार्य लेवे। योग्यतानुसार कार्य और अधिकार दो, एक ही व्यक्ति पर उचिततः अधिक भार मत लादो, योग्य कर्मचारियोंको उचित पुरुस्कार और अयोग्यको दण्ड विधान रखो, व्यावस्था सुधर जावेगी। व्यक्ति-



चाहिये यह कार्य भी तीर्थरक्षासे कुछ कम पुण्य व महत्त्वका नहीं है। और वास्तविक प्रभावनाका कार्य है।

प्रभावनाका अमिप्राय जहां तक मैंने समझा है यही है कि जिन लोगों ने जिनधर्मको विपरीत समझ लिया अथवा जो-कुछकुछ ही जैनधर्मको नहीं समझे हैं उनको यथार्थ धर्म जैनधर्मका बता देना ही प्रभावना है।

और वह प्रभावना इसलिये नहीं कि इससे जो लोग होणी या वे लोग जैनधर्मको अच्छा कह देंगे इससे ही कुछ हमारा माला हो जायगा इत्यादि किंतु जैनधर्म जीव मात्रका धर्म है और वह सम्पूर्ण जीवोंकी दया बताता है उसको किसी व्यक्ति व समुदायका पक्ष नहीं है। इसीसे वह सबका धर्म है और इसी लिये सभीको उसे जानना चाहिये। आज-कल प्रायः लोगोंने जैनधर्मके सम्बन्धमें बहुतसी किंवदंतियां बना रखी हैं। कोई इसे सरावगी व बनियोंका धर्म कहता है, कोई केवल पानी छन का पीना, आल आदि बंदमूछ नहीं खाना, रात्रिको नहीं खाना, मंदिरमें जाकर दर्शन कर खाना मात्रको ही जैनधर्म मान बैठे हैं। कोई कहते हैं कि जैनधर्म ग्रहणोंका धर्म ही नहीं है वह तो साधुओं ही का धर्म है। कोई कहता है जैनधर्मके अनुसार चंडेतो पांव रखनेको भी मनह नहीं मिटे इत्यादि अपन्य कत्तनाएं कर रही हैं। ऐसे लोगोंको वास्तविक धर्मका स्वरूप बता देना ही प्रभावना है। वास्तवमें जैनधर्मका सिद्धांत है कि विपरीत अभिप्रायोंसे त्याग कर मन्थार्थ सबको समझान करना और दयासे भरने

पद और शक्तिके अनुसार विपक्ष और कर्मायोंको कुश करता माने, और इसलिये इसको प्रत्येक मनुष्य धारण कर सकता है। नया राजा नया रंक। वास्तवमें यह धर्म क्षत्रियों ही का है। जितने तीर्थंकर हुए हैं वे सब ही क्षत्री थे। लोगोंमें ऐसे विचार फैलना स्वाभाविक है। इस लिये कर्तव्य है कि ग्रन्थोंका उद्धार किया जावे, उपदेशक बढ़ाए जावें और उन उपदेशकोंसे केवल धर्म प्रचारका ही काम लिया जावे, उनमें अन्दा इच्छा कराना नहीं चाहिये; यह बात उनके यथार्थ कार्यके लिये वापक है। उपदेशक लोग अच्छे विद्वान् द्रव्य क्षेत्र काल तथा भावके ज्ञाता अनुभवी वयोवृद्ध होना चाहिये, सदाचार और चारित्रवान होना चाहिये तभी प्रभाव पड़ सकता है अन्यथा नहीं।

स्थानीय व जातीय पंचायतें और शास्त्र-समायें बराबर चालू रहना चाहिये, स्थायीयका प्रचार बढ़ाना चाहिये। इत्यादि ऐसी बहुतसी बातें हैं जिसमें बहुत कुछ सुधार व म्यूनाधिकता कामकी अवश्यकता है और जिनके सम्बन्धमें उपस्थित विद्वान् मंडली आपको मनायेंगी उसे सुन कर आप लोग अपना कर्तव्य पथ इदरीतिसे निश्चित कर लेंगे अब मैं अन्तर्गो घोड़ासा समाजोंका उद्देश वा कर्तव्य यह कर अपने कर्णको समाप्त करूंगा।

महानुभावा समाजों व पंचायतियोंका उद्देश धार्मिक और सामाजिक उत्थति करना है। वे समायें शिक्षा जनसमुदायके और कोई कर्तव्य हैं। इनमें समितिज होनेवाले महानुभाव पालन करने २ मन प्रकट करके बहुमनसिसे

मत स्थिर करते हैं और फिर स्वयम् तदनुसार चला कर औरोंको आदर्श रूप बनकर मार्ग बताते और चलाते हैं। इसीका नाम समा है और यही उसका उद्देश्य व कर्तव्य है। जो लोग नेता हैं व होनेका दावा करते हैं उन्हें चाहिये कि आदर्श बनें, कारण कि केवल "परोपदेशे पाण्डित्यं" हीसे काम नहीं चला सक्ता है। यह समासे नियम चला आता है कि "महज्जनः येन गतः स पन्थः" अर्थात् पड़े प्रत्यक्ष जिस मार्गसे चलते हैं वही मार्ग श्रेष्ठ समझा जाता है। और जो लोग केवल खुद फनीहत दीगरे नसीहत करते हैं उनका जनता पर उल्टा प्रभाव पड़ता है। इसलिये समाओंके नेतागण जैसे समापति, भञ्जी, समासद आदिको तथा उपदेशकोंको अवश्यही प्रस्तावों पर अमल करना चाहिये, तभी सुधारकी आशाकी जा सकती है 'अन्यथा आप्ये रोदन् वृषा' बाड़ी कहावत चारितार्थ होगी।

आशा है कि आप मेरे इस वक्तव्य पर विचार करेंगे। अन्तमें आप लोगोंको फिर हृदय से स्वागत करता हुआ प्रार्थना करता हूँ कि आप अब अपना कार्य प्रारंभ करें।

नई फसल का ताजा माल आ गया।
— और भी पया दिया गया है —

पवित्र काश्मीरी केशर

मूल्य १। १।= तोला

प्या-मनेजर दि. जैन पुस्तकालय—मुरत

हमारा स्वास्थ्य और यात्रा ।

हमारे पाठकोंको यह जानकर खुशी होगी कि हमारा स्वास्थ्य कुछ दिनोंसे अच्छा ही है और हम महासमादिके अखिर्वेशनमें गत ता० ७ फरवरीको कोठामें सामिल हुए थे। वहांसे हमारा विचार दक्षिणकी यात्राएं करनेका हुआ था और कोई ऐसा साथ दूँद रहे थे कि जिसका साथ होनेसे यात्रा भी सुभीतेके साथ होनेके अतिरिक्त नहां २ हम जावें वहांकी संस्थाओंका निरीक्षण करके और समादि करके कुछ न कुछ समान सुधारका भी कार्य साथ २ कर सकें। शुष्यादयसे ऐसे मनीषिलपित साथी मास्टर दीपचंदजी उपदेशक हमें मिल गये जिनको साथमें लेकर हम गोमट्टसगामी (जैनविद्वी) तथा मूलवद्वी तक की यात्राके लिये प्रयाण किया है और कोठासे झालरापाटन, उज्जैन, मन्सी, पड़नगर, रतलाम इन्दौर, बलवाहा सिद्धवरकूट होते हुए खेडवा जा रहे हैं और वहांसे अंतरीक्षनी, अमोत्रा, अमरावती, कारंजा, वर्षा, मुक्तागिरी, मातकुली, बार्सी, कुणल गिरी और सोलापुर होते हुए जैनविद्वी जावेंगे। इस भ्रमणमें कई संस्थाओंका निरीक्षण करते हैं और समाएं भी होती हैं जिनकी रिपोर्ट प्रकट होनेकी आवश्यकता है। इसलिये इस भ्रमणकी संक्षिप्त रिपोर्ट इस पत्रमें छपनेके लिये हम भेजते रहेंगे। यदि किसी २ हमसे पत्रव्यवहार करना हो तो अभी सेठ हीराचंद अमीचंद शाह सोलापुर के पते पर लिखें। हम करीब १० दिनमें सोलापुर पहुंचेंगे। ता० २४-२-१९

समानसक—

मूलचंद किसनदास कापड़िया

दिगंबर जैन.

THE DIGAMBAR JAIN.

नाना कलाभिविविधैश्च तज्यैः सत्योपदेशैस्तुगुणैर्यथाभिः ।

संशोधयत्ययमिदं प्रवर्त्तताम्, दिगम्बर जैन समाज-माध्वम् ॥

वर्ष १२ वॉ.

वीर संवत् २४४५, वैश्व. विक्रम सं० १९७५.

अंक ६.



पाठकोंको मालूम होगा कि बम्बई दि० जैन प्रांतिक सभा का सत्तरहवां दि० जैन बम्बई वार्षिक अधिवेशन गणप प्रा० सभा और धार्मी क्षेत्र पर ता० १३ महाराष्ट्र खंडेल-१४-१५ को होना वाला सभा निश्चय हुआ है। इस वर्ष अधिवेशनके सभापति समाज हिन्दू, उन्नतिके प्रेमी सेठ मूरचंदजी बनाए गये हैं। उनके सभापतित्वसे सभा ज बहुत कुछ सफलता मिलनेकी आशा काती है।

इसी अगस्तपर गंजपंथाजीमें महाराष्ट्र खंडेलवाल पंच महामपाका भी वार्षिक अधिवेशन सेठ हरमुखदासजी सुपारीवालोंके सभापतित्वमें होगा ऐसे समयपर जातिमुद्योग, शिक्षा प्रचार कुरीति निवारण इत्यादि समाजहितके कार्यों पर विचार दिया जायगा। अतएव आवश्यकता को सर्व म्यानोंमें जैनोंमाई और

खंडेलवाल माइनोंके आनेकी है परन्तु बम्बई प्रान्तके ग्राम २ से दश पांच भैनियोंको तो अवश्य ही आना चाहिये जिम ग्रामसे अधिक मनुष्य न आ सके वहांवालोंको चाहिए कि अपना प्रतिनिधि तो गंजपंथाजी पर अवश्य ही भेजें। महाराष्ट्र प्रान्तके खंडेलवालोंको अपनी पंच महामपामें सम्मिलित हो कर जातिहितके कार्योंमें अधिक भाग लेना चाहिये। खंडेलवाल जातिमें अशिक्षा और कुरीतियोंका प्रचार फैलकर बहना पड़ता है कि यह जाति बहुत पिछड़ी हुई है और इसमें समदसूचकता नहीं है।

वर्त्तमानमें संसारके बड़े परिवर्त्तनको देखा कर और भविष्यमें होनेवाले परिवर्त्तनोंका विचार कर बिना किसी मित्रके स्वीकार करना पड़ता है कि जैनसमाजकी वर्त्तमान गतिसे उमरी वास्तविक उन्नति होनेकी आशा नहीं है। आवश्यकता है कि यदि पहिले सभाज दिन यामें १० मील चलता रहा हो तो अब अपनी गति इतनी तीव्र करे कि जिससे दिन मरमें सौ मील चल सके और जो आगे बढ़ी हुई जाति शीघ्र ही उन्नतिके दौलती आकर तेर करने लगेंगी उनके नरावर हो जाय। अतएव क्या महामपा क्या प्रांतिक सभाएं प्रस्ताव पास करके

द्विजदण्ड कर देना और प्रायः बागनी घोड़े दौड़ाना ही करती आई है परन्तु यह मली प्रकार समझ लेना चाहिये कि अब इतने हीसे कार्य न चलेगा; किन्तु जो प्रस्ताव पास किये गये हैं और जो किये जाय उनके अनुसार कार्य करनेकी आवश्यकता है ।

जो कुरीतियां समानको रसातलमें पहुँचा रहीं है और दूसरी जातिके सामने उसको मुंह दिखानेमें लजित कर रही हैं उनको इस प्रकारके नियम बना कर दवा देना चाहिये जिस प्रकार भारतकी स्वाधीनताको दवानेके लिये रौलट कानून तैयार किये गये। बिना ऐसे नियमोंके बड़े २ धनी जो अपने धनमें मदोन्मत्त हो रहे हैं वे ऐसी कुरीतियोंके करनेसे बचन आयेगे और इनके बाग न आनेसे अन्य लोग भी जो इन्हींका अनुकरण करनेवाले हैं इन कुरीतियोंका गला न घोंटेंगे ।

समानकी मनुष्यमुख्या दिनपर दिन घटती जा रही है इसके कारणोंको भी दोनों सभाओंका खोज निकालना कर्त्तव्य है। यदि ये कारण खोज कर लिये गये हों या खोजनेसे अब मित्र तो उनके अनुसार कार्य करनेमें किसी प्रकाश का अगा पीछा न करना चाहिये । यदि ऐसे कार्योंके करने कुछ अदृष्टशी विरोध करे तो उनकी किंविन् भी परवाह न करके कार्य प्रारंभ कर देना चाहिये । यदि समान ऐसे ही विरोधोंमें दक्ष अनेको ऐसी ही अवस्थाके भीतर-अनतिक्रम अवसरपर कर्त्तव्य भीतर दृष्टे रखनी अपनी जनहानिके कारणोंके मंजूरके लिये कुछ उपाय न करेगी तो इसकी

जो अवस्था होगी उसको विचारकर हृदय कंपित होता है ।

समानमें स्त्री पुरुष-जो अब भी अज्ञानाधिकारमें पड़े हुए स्वयं अपनेको भी नहीं पहिचान पाते हैं, अपने कर्त्तव्योंको भी नहीं जानते, यहां तक कि जैनधर्मकी मुख्य बातोंसे भी अपरिचित हैं-उनमें शिक्षा प्रचार किस प्रकार हो इसका भी विचार करना दोनों सभाओंका परम कर्त्तव्य है । शिक्षाकी प्रशंसा करना व्यर्थ है केवल इतने ही शब्दोंमें समझ लेना चाहिये कि यदि शिक्षाका प्रचार सारे जैन समाजमें हो जाय तो प्रायेक प्रकारके झगड़े, सर्व कुरीतियां, प्रत्येक दुःख दूर होकर समान अवनतिसे निकल कर उन्नतिके सिंहासन पर आरुढ़ हो जाय । यहां पर सभाको एक बातका विचार कर लेना और भी बहुत आवश्यक है वह यह कि समानमें कैसी शिक्षा प्रचारित होना चाहिये । वर्तमान शिक्षा प्रणाली ही समानको लाभदायक है या दूसरी या इनमें ही कुछ विशेष परिवर्तन कर देना ही पर्याप्त है ।

समानके सम्मुख इस समय तीन कार्य बहुत आवश्यक हैं एक शिक्षा प्रचार, दूसरा कुरीतियोंका बहिष्कार करना और तीसरा समानकी नेगसे घटनेवाली जनसंख्याको रोकना ।

इन तीनों बातों पर बन्धु प्रांजिक सभा और संदेशान पत्र महामन्त्रको अपने अधिकार पर विचार करना चाहिये-और जो इसकी पूर्तिके लिये उपायोंकी आवश्यकता हो उनको सीम कार्यरूप परिचय देना चाहिये ।



पाठकोंको मालूम होगा कि श्रीयुत अर्जुनलालजी सेठी बी० ए० पं० अर्जुनलाल विना किसी अपराधके सेठी प्रमाणित हुए बेलोरके जेलमें पड़े सड़ रहे हैं।

जयपुर सरकारने उनको ५ वर्षके लिये दूसरी आज्ञा न देने तक कैद रखनेकी आज्ञा घोषित की थी। अब उनको ५ वर्ष जेलमें सड़ते हुए बीन गये, जयपुर सरकारकी ५ वर्ष वाली आज्ञाकी मद्दत बीन गयी—परन्तु अभी तक वे कारागृहमें मुक्त नहीं किये गये और न कोई दूसरी आज्ञा की ही घोषणा की गई। कुछ दिन हुए जब सरकारने उनके पीछे गला घोट शर्तें लगा कर छोड़ना चाह था परन्तु तब भी वे अभी तक नहीं छोड़े गये। न छोड़े जानेका कारण कुछ विदित न हुआ, किंतु जहां तक अनुमान होता है पं० अर्जुनलालजीने जयपुर नजाना, लड़कोंको न पढ़ाना और व्याख्यान न देना यह तीनों शर्तें स्वीकार नहीं की अन्यथा कोई कारण नहीं था कि सेठीजी छोड़े जानेपर भी कारावासमें ही सड़ते रहते। यह शर्तें कैसी हाथ, पैर और शंक्को जकड़नेवाली हैं सो पाठक विचार सकते हैं। सेठीजीने इन शर्तोंको नहीं स्वीकार कके उचित किया। वास्तवमें शर्तें स्वीकार करने योग्य नहीं थी।

अब हम सरकारसे केवल इतना निवेदन करना चाहते हैं कि 'सेठीजीके' विषयमें केवल जैन समाजकी ही नहीं किन्तु सारे भारतकी यह धारणा है कि वे निर्दोष हैं फिर ऐसी अवस्थामें उनको कैद करके ही बुरा किया गया, धर्ममें

सेठीजीको शारीरिक और मानसिक दुःख दिया गया और दिया जा रहा है। बिना किसी वारण शान्तिप्रिय जैन समजके हृदयमें ऐसा आघात पहुंचाया गया जिसे वह कभी न भूलेगा और बिना किसी अर्थके भारतवर्षके एक विद्वानको कारावासमें सड़ाया गया और सड़ाया जा रहा है। यह सब कुछ हुआ सो ठीक, परन्तु अब तो जब कि इंग्लैण्ड सरकार आयर्लैण्डके उन सिनफिनरोंको कैदसे मुक्त कर रही है जिन्होंने खुल्लम खुल्ला ब्रिटिश सरकारके विरुद्ध बर्तना करना चाहा और अब भी उनका आन्दोलन जारी है तब क्या वारण है कि भारत सरकार भारतीय राजनैतिक कैदियोंको नहीं मुक्त करती है? क्या दया और न्याय भी विशेष आदमियोंके लिये है? सबके लिये नहीं शुद्ध बन्द हो गया, सुलह भी होनेवाली है, सरकार इंग्लैण्डके राजनैतिक कैदियोंको मुक्त कर रही है, पर निरीह और निरुपय भारतीय राजनैतिक कैदियोंके छोड़नेकी कोई बात नहीं। अर्जुनलालसेठीके ५ वर्ष पूर्ण हो गये हैं अब सरकारका परम कर्तव्य है कि उनको छोड़कर सेठीजीके कुटुम्ब, जैन समाज और भारत वर्षके शोकाकुल हृदयको शान्त करे। •

जिम जातिको अपने पूर्वजोंका अभिमान नहीं है जो जाति महावीर जयंती अपने उद्धार कर्त्ताओंका मक्तिमें स्मरण नहीं करती है उसके जीवनका कुछ भी मूल्य नहीं, इसी प्रकार जिस धर्मके अनुयायी अपने धर्म प्रवर्त्तकोंका किसी दिन एग्य हो कर विशेष प्रयोजनके

साय स्मरण नहीं करते उस जाति । धार्मिकजीवन और उसकी जंका दूर हो जाती है । इसी भी शिथिल है । मित्रार्थमं वाले अनेन गुरु प्रकार जन्म महावीर स्वामी चाल्यावस्थामें ही नानककी, आर्यसमानो स्वामी दयानंदकी, ये तब ही चारण लब्धिके धारक विजय संजय शैव महादेवकी, वैश्वनाथ श्री कृष्णकी वर्षभरमें नामके दो पतियोंकी किसी विषयकी संशय एक दिन जयंती अवश्य मनाते हैं । जैनियोंके इनको देखते ही दूर हो गई और उन्होंने भगवानका नाम सन्मति प्रसिद्ध किया । महावीर अपने किसी उपास्य देवताकी जयंती भगवान्‌के चाल्य कालके खेल में ऐसे हुआ मना कर धार्मिक जीवनको दृढ़ बनाते । इसी करते थे कि स्वर्गसे देव भी आकर उनके साथ बतको लक्ष्ममें रत्न कर जैन समानमें महावीर खेलते थे । एक दिन महावीर अन्य बालकोंके जयंती केम सुदी ११ को उत्साह और समा साथ २ एक दीर्घकालके बट घुंसा चढ़कर रहेके साथ यनाई जाने लगी है । चाहिये तो खेले लगे कि जिय ग्राम या शहरमें जैनियोंकी स्तुति हो उस २ ग्राम वा शहरमें महावीर खेले लगे कि जिय ग्राम या शहरमें जैनियोंकी स्तुति हो उस २ ग्राम वा शहरमें महावीर जयंती मनाई जाय । इस दिन प्रातःकाल श्री महावीर स्वर्गका पूजन करना चाहिये और दोनहाके बाद सर्व जैनियोंको किसी भी स्थानमें एकत्र होकर महावीर स्वामीके जीवनकी गुणावलि का वक्तान कर । चाहिये समासवन पुष्पमाला आदिसे मली प्रकार सजाना चाहिये ।

करें तथा जिस प्रकार महावीर स्वामीने जगत्के जीवोंका कल्याण किया था उसी प्रकार तुम भी मनुष्यके हितके कार्योंको करके अपना और दूसरोंका कल्याण करो ।

अनन्तके दिन गये उन्नतिके दिन आ रहे हैं; पराधीनताकी वेष्टियां समझका प्रवाह खटाखट द्रुत रही हैं, और जैनसमाज और स्वाधीनताके स्वर्ण की गति । कवन धारण किये जा रहे हैं, जहांपर स्वतंत्र-

चरिताका नगारा बजता था वहां अब स्वतंत्रताकी तूती बोल रही है । अमीरोंके दिन गये अब निर्धनोंके दिन आ रहे हैं । शताब्दियोंसे दुःख और शोम्से दबी हुई प्रजा गर्दन उठाकर सास लेने लगी है । भारतवर्षमें भी स्वतंत्रताकी लहरें बेगसे उठ रही हैं भारत यद्यपि धर्मप्रधान देश है परन्तु वह भी अपने धर्मको अगे रख कर संसारका अनुकरण कर रहा है । संसारका प्रवाह जिस ओर बह रहा है उसी ओर बहनेके लिये वह भी अपने हाथ पैर फेंक रहा है । स्वभाव्य निर्णयका सिद्धान्त प्रत्येक राष्ट्रके लिये नव छागू है तब कोई कारण नहीं जो भारत इससे भ्रंशित रहे । अभी नहीं तो कुछसमय बाद इसको वह प्राप्त कर लेगा । जिस समय वह उसे प्राप्त कर लेगा उस समय भारतवर्ष भारतीयोंका होगा और भारतकी जो जातियां उन्नत होंगी उनका भारतके प्रत्येक कार्यमें हाथ रहेगा । उसके धर्म, धन आदिकी रक्षावा प्रत्येक जातिको ध्यान रहेगा, जो जातियां अवनत होंगी । अशिक्षित, अकर्मण्य, बर्बर होंगी वे सब या तो पहिले ही

प्रवाहमें बह सकनेकी ताकत न होने कारण कालके गालमें पड़ चुक जायगी या उन्नत और आगे बढ़ी हुई जातियों द्वारा कुचल डली जायगी, उनके अधिकारों, उनके हकों, उनकी मागोंकी ओर कोई कान न देगा । कोई भले ही यह कहे कि ऐसा न होगा; परन्तु समय हमें यह स्वीकार नहीं करने देता है । कहां है वह बौद्धधर्म जिसका भारतमें साम्राज्य था, कहां है वह ग्रीस जाति जिसका सिका यूरोप पर बैठा था, कहां है मुगल साम्राज्य जिसने भारतमें अठार शताब्दियों शासन किया । वे सब शक्तिवर्तियोंको द्वारा कुचल डाले गये, बलशाली धार्मिक आक्रमणोंके द्वारा वे धर्म जिसके अनुयायी अल्प संख्यामें थे दब गये और उनका नाश हो गया या स्थानान्तरमें प्रचारित हुए । वास्तवमें यह वही नजाना है कि जिसमें शक्ति है वही जीनेका अधिकारी है शक्तिहीनको जीनेका कोई अधिकार नहीं ।

वर्तमान समयमें वे ही देश या जातियां जीवित रह सकती हैं—जिनमें ज्ञान, धन, बल आदि सब प्रकारसे भापूर हैं, वे जातियां जो अशिक्षित हैं, निर्बल हैं उनको या तो दूसरोंमें मिलकर—दूसरोंका चोला पहिनकर संसारमें जीवित रहना पड़ेगा या वे सदाके लिये पदलुलित होकर धूलमें मिल जायगी फिर उनके नाम देनेवाले केवल इतिहासज्ञ रहेंगे—या उनके अस्तित्वको बतानेवाली पुस्तकें रहेंगी ।

भारतवर्षकी वे जातियां जो सामुदायिक शक्तिसे हीन हैं, अज्ञानांधकारमें पड़ी हैं; परन्तु उनके मनमें अपनी शक्ति व्यय कर रही हैं, संसारमें क्या हो रहा है इस तरफसे बिल्कुल



वेपरवाह हैं—उन्हें यदि संसारमें जीवित रहना है तो अपनी सामुदायिक शक्तिको बढ़ाना चाहिये इसके लिये यदि स्वार्थीका त्याग करना पड़े तो 'सर्वनाशे समुत्पद्ये अर्थं त्यजति पंडितः'—इस नीतिके अनुसार अपने स्वार्थ भी त्याग देना चाहिये, जातिके प्रत्येक बालक व बालिकाको शिक्षित करना चाहिये, ऐसा कोई स्त्री पुरुष न रहे जो लिख पढ़ न सके, परस्परके अगड़ोंको अपने अस्तित्वकी रक्षाके लिये त्याग देने चाहिये और संसार किम ओर जा रहा है उस ओर लक्ष्य देकर अपने कार्योंको उसी दृष्टिसे करना प्ररंन कर देना चाहिये जिससे वह संसारकी किसी भी रूप्य जातिने पीछे न रहे और जय न तियां परीक्षाके लिये कसौटी पर बसी जाय तब वह भी बावन तोछा पाच रत्ती उरें- किसीसे किसी प्रकार कम न हो । तब ही वह अपने अस्तित्वको संसारमें कायम रख सकती है, अपने हकोंकी रक्षा कर सकती और दूसरे उसके हक हठर रहे हों तो उनसे छीन सकती है ।

जैन समाज भी इस समय सामुदायिक शक्ति में हीन है—अज्ञानके अंधकारमें पड़ा है, परस्परके अगड़ोंमें अपने समय घन और शक्तिका व्यय कर रहा है और संसारमें क्या हो रहा है उसकी ओर धृष्टियान नहीं करता है । इसके यह सब लक्षण नाश होनेके हैं । यदि जैन समाज अभीसे न जाग्रत होगा, यदि जैनसमाजके लीडर बहुप्रतिभासे अभीसे संसारका प्रवाह उठर सजने योग्य समाजकी पदानेका प्रयत्न न करेंगे, यदि उसके अन्दर शिवाजी प्रवाह जाके, पादपाके

अगड़ोंको मिटाकर भारत-वर्षके प्रत्येक जैनीको एक सूत्रमें बांधनेका प्रयत्न न करेंगे तो संसारके प्रवाहमें उसका ठहरना असंभव है । वर्तमानमें तो वह संसारके प्रवाहमें ठहरनेमें विचकल अशर्म्य उसका स्थान बिल्कुल पीछे है । यदि यही दशा रही तो जैन समाज और प्राणोंसे प्यारा जैनधर्म इतिहासज्ञोंकी जिह्वापर और पुस्तकोंके पत्रों पर लिखा हुआ रह जायगा । हमारा ख्याल है—अभी जैन समाज इतनी अकर्मण्य नहीं हो गई है वह आंखोंसे देख सकती है और कानोंसे सुन सकती है, जसा देख और सुन सकती है वैसा हाथ पैरोंसे कार्य भी कर सकती है, जैनसमाजके नेता भी इतने अदूरदर्शी और निरहयोगी नहीं है जो जैनसमाजके अस्तित्वके मिटने न देंगे किंतु स्वयं जैनसमाज तथा उसके नेता अनेक विघ्न बाधाओं और सर्व प्रकारकी कठिनाइयोंकी कुछ भी परदाह न करके विरोधियोंको घका देते हुए अपने मार्ग कण्टकोंको दूर करके संसारके प्रवाहमें योग्य स्थान प्राप्त करेंगे और जो कहते हैं जैन समाज एक कायर अकर्मण्य और केवल रातको न खाना, पानी छान कर पीना इतने ही में धर्म समझनेवाला समाज है उनको दिता देगा कि देतो हम कैसे वीर, कर्मवीर और वीर भगवानके सत्यो उपामक हैं ।

नरका केसर तकर है ।

शून्य और नगुना मुक्त । हर भगवद् एन-
मोही मरणा है ।

पता: कादम्भीर हटोस श्रीनगर नं० १८



वार्षिक रिपोर्ट—दुधगांव शिक्षा प्रसारक संस्थाके सातवें वर्षकी। मि. कार्तिक सु. १० से आश्विन वदी ३० सं. २४४४ तक। प्रकाशक—नानारावजी पेंडेकर जनरल सेक्रेटरी दु. सि. प्र. संस्था दुधगांव (सत.रा) दुधगांवमें शिक्षाप्रचार करनेवाली कई संस्थाएं हैं इनसे जैन अजैन दोनोंको लाभ पहुंचाया जाता है। प्राथमिक शिक्षण प्राप्त करनेवालों गत वर्ष ३०८ छात्र थे इस वर्ष २७६ छात्र। कमीश का कारण २४ छात्रोंको गांवमें कम हो जानेके हैं। जैनियोंके १२६ लड़के हैं। कन्याशालामें ४२ बालिका हैं जिनमेंसे ३० जैनियोंकी है। इसके साथ विद्यार्थीश्रम से भी ४० लड़के स्थानीय और अन्य स्थानोंके हैं वर्तमान ८ छात्रोंको शिक्षा और भोजन खर्च दिया जाता है। अन्य छात्रोंके लिये भी उनकी इच्छा मुताबिक भोजनालयमें प्रवेश होता है। ग्रन्थ मन्दिर दे जिनमें ८०० पुस्तके हैं—यह पुस्तकों बालबालनालय मन्दिर और प्रौढ़ वाचनालय मन्दिर इस प्रकार दो भागोंमें विभक्त हैं। इसी ग्रन्थ मन्दिरके निकट मोक्षत वाचनालय है जिनमें १७ मासिक व ९ अन्य पत्र अते हैं। यहाँ पश्चिममें ज्ञान प्रचारके लिये सानोदय व्याख्यानमाला है इसके द्वारा मित २ विषयोंपर विद्वानोंके भाषण होते हैं। एक और शाला अजमेरी स्कूल है, किन्तु लोग इसके लक्ष्य कम उठाते हैं। सप्त संस्थाओंमें इस वर्ष २१८८॥॥ की आय हुई और शिक्षा प्रचारक संस्थामें १०८५७॥, विद्यार्थीश्रममें ६४१॥॥, ग्रन्थ

मन्दिरमें ११९१॥, अंतर्नी स्कूलमें १९५॥ खर्च हुए।

महिला महोदय—लेखक सुनिभी बाल. विजयवी महाराज और प्रकाशक जैन वार्डालय भावनगर। १७८ पृष्ठकी गुजराती भाषाकी पुस्तकमें कन्याके विवाह समये लगाकर गर्भरक्षा, आहार विहार, प्रयत्ति, जन्म संस्कार आदि बालकके जन्मतककी सर्व आवश्यक बातोंका प्रथम स्वर्ग विमानमें दर्शन दिया है, दूसरेमें संतान पालन, तीसरेमें पुत्रोत्पत्ति शिक्षा और शिक्षासे लाभ, चौथेमें प्राचीन सतियोंके संक्षिप्त अनुकरणाय जीवनचरित्र और वर्तमान बालकी कुछ परोपकारिणी स्त्रियोंका परिचय, पाँचवेंमें विवाह कथ करना, षष्ठे वरके साथ वरना, गहने कैसे पहिरना, पतिके प्रातिपक्ष, छठेमें प्राचीन स्त्रियोंका जीवनचरित्र और सतवेंमें स्त्रियोंकी प्राचीन कालकी शिक्षा, नियमित दत्तान, बुद्धि विकास, सामान्य घमंशास्त्र, छी सुभासक उपायोंका वर्णन है। पुस्तक गुजराती जाननेवाली स्त्रियोंके लिये बहुत उपयोगी है। मूल्य १॥ प्रकाशकसे प्राप्त।

श्रीसमेश्वर यात्रादिवरण (सन्धि) ११२ पृष्ठकी पुस्तकका मूल्य—यात्रा प्रचार। लेखक धारवानसद वैद्यपाल, दिगंबर जैन—राधारव (अलीगढ़) और प्रकाशक धीमान देठ गुर्लाबचंदजी बाला, भंशी भी दिगंबर जैन धर्म प्रभावनी समा संग्रालेख (राजपूताना)—इस पुस्तकमें प्रथम यात्रा जानेवालोंको आवश्यक सूचनाएं दी गई हैं। फिर लेखकने अपनी यात्राका विवरण दिया है। अन्तिम त्रिमासका विवरण है। इसके बाद शिवराज पर्वत्तपर जो कथा: टोके मिलती हैं—उनका नाम और प्रशाल पूजन करनेके मंत्र और पद्य दिये हैं। इसके बाद पं. जवाहरलाल कृत समेश्वर पूजा



है । फिर परिष्कृतमाकी विवरण और-हाथसंघ
विस्तरजों तक जोर और तीर्थ पड़ते हैं उनका
विवरण देकर पुस्तक समाप्त की गई है ।
लेखक और प्रकाशकका परिश्रम प्रशंसनीय है ।
पाठियोंकी यात्रा करते समय इस पुस्तकको
भी रखनेसे सुभीता होगा ।

सोनागिर यात्रा विवरण—(सचिव) इस
पुस्तकके भी लेखक और प्रकाशक भी उक्त
पुस्तकके ही महाशय हैं । मुख्य यात्रा प्रचार—
पृष्ठ ३३९ । पुस्तकका विषय नामसे ही प्रगट
है—विषय और आवश्यक सूचनाके पश्चात् सोना-
गिरछेत्रकी पुत्रा कवि आचारामजी कृत है ।
इसके पाने ७० कूटा और १६ मन्दिगोंका
विवरण है । यह पुस्तक भी सोनागिरकी यात्रा
करनेवालोंके लिये उपयोगी है । उक्त दोनों
पुस्तकें प्रकाशकसे प्राप्त होती हैं ।

नूचीपत्र—दि० जैन मासका प्राग्विक समा-
हित शुद्ध औषधालय बदनगर । प्रकाशक लाला
भगवानदासजी जैन महामंत्री । औषधालयकी
निषकारलीके पश्चात् औषधालयके संक्षिप्त विवर-
णसे प्रगट होता है कि इस औषधालयकी

और सहायता देनेके फर्मकी नकल है । देश
हितार्थियोंका कर्तव्य है कि इस औषधालयको
पवित्र औषधियोंका प्रचार करें और इस
औषधालयको आर्थिक सहायता पहुंचावें ।

धर्मात्माओंकी भावनापूर्ति ।

मित्र प्रकार भारोग्मताके लिये शुद्ध अन्न और
पवित्र मनुष्यकी आवश्यकता है उसी प्रकार मस्ति-
ष्कके आनन्दोल्लासके लिये सात्विक आहार और
पवित्र प्रेमाकर्षक स्थानकी आवश्यकता है तथा
उसी प्रकार धर्मिक दृष्टिसे धर्मात्माओंकी भाव-
नापूर्तिके लिये जिनालय-देवमन्दिर है ।
ऐसे पवित्र स्थानोंमें व्यवहार करने योग्य वस्तुएं
भी परम पवित्र ही होना चाहिये और तब ही
भावनाओंकी भावना तृप्त होती है इसीसे कहते
हैं कि—

द्रव्योंकी पवित्रतासे भावोंकी
पवित्रता होती है ।

पवित्र वस्तुएं नहीं हमारा मन्त्रालय हैं



પ્રમત્ત થતો ન હોવાથી કોમળી સ્થિતિ સુધરતી હોય તેમ લાગતું નથી, આ લેખકે જોતોતી કેટલીક કોન્ફ્રન્સોમાં અને કેટલીક સભામાં ભાગ લીધેલો છે, તેમાં ફક્ત કોન્ફ્રન્સો અને સભાઓ દ્વારા પસાર કરતી જોવામાં આવે છે પણ તેના અમલ ખીલકુલ થતો હોય તેમ લાગતું નથી. માટે આખા જૈન સમાજની સાર્વજનિક ઉન્નતિ માટે સમસ્ત જૈન જાતિના આગેવાન નેતાઓ પોતાની અંદર રહેલી માનદસા, મિત્રતામિમાન, પ્રકાશ, અન્યાયવૃત્તિ, અને આપણીને ફર કરી સકલ જૈન સમાજ અને બીરસાશનની ઉન્નતિ માટે કોષપણ સંમીન કાર્ય હાથ ધરવું જોઈએ. જુદા જુદા શીરકાઓ વચ્ચેના ભિન્નભાવ જેમ ફર કરવા યોગ્ય છે તેમ જુદા જુદા શીરકાઓ વચ્ચેના કુસંપ પણ ફર કરવા યોગ્ય છે.

હાલમાં કેટલોક વખત યયાં દિગંબર અને ચેતામ્બર વચ્ચે સમેદિશિખર અને અંતર્દક્ષ પાર્શ્વનાથના સંબંધમાં જે તીર્થો સંબંધનો અગડો ચાલે છે જેમાં બંને તરફના લાખો રૂપીયા કોર્ટ ચલી ખરચાઈ ચલેલા છે, જે હવે લાંબો વખત ચાલુ ન રહે, ને એક ખીજના ખરા હકનું સંરક્ષણ થાય તેવી રીતથી એક જૈન પંચાયત (સલાહ) મારફતે શાકશી વાડીવાલ મોતીલાલ સાંઘના હાથે મુજબ નીકાલ આવવો જોઈએ.

માટે શા માટે સંપ નહિ કરીયે ? બ્યારે અમારી ગતિ, અમારી જાન, ગોત્ર તેમજ શરીર, અધન, જન્મમુખી, જોગ્યપદાર્થ, રહત સહનતા નિયમો અને સર્વોપરીશાસનનાં કર્તા બ્યારે એકજ છે તો કોઇ એવું કારણ નથી કે જે અમારાં એકજ અંગનાં સ્વરૂપને સામાન્ય ઉન્નતિના કાર્યમાં ભિન્ન ભિન્ન બનાવી શકે. એકજ સમાજમાં સંપ વાં પારિષદ બજા જેટલું ચઢવું થાય છે તેટલું ભિલ ભિન્ન થઇ શકનાથી થતું નથી. માટે ઉપર જણાવેલા કુસંપથી રોમનો નાશ કરવાને તથા તે ફરીથી ચલા ન પામે તે મહારામ તે આપણી યુટ અનેકવતા છે, કે જેણે આપણા ધર્મ, આપણી જાતિ આપણી નિદા વગેરે સર્વને નદ્રાપ સ્થાપિતમાં લાવી મુક્યા છે, માટે આપણી સાર્વજનિક ઉન્નતિને માટે આપણી સંઘીર્જતાએને ફર કરી પૃથક પૃથક શક્તિએને એકજ કરી સંપની વિજય પતામ શરકાવવી જોઈએ.

ક. હાનીકારક રિવાજ—નાચે જણાવેલા હાનીકારક રિવાજે આપણા એકલાનું નહિ બધું સારા ભારત વર્ષનું સલામત વાળી નાંખ્યું છે. આપણા આ મનુષ્ય ગણરૂપી શેવળી અંદર તેની ઉન્નતિથી ખીજને દહન યનામાં સાધનજૂન હાની કારક રિવાજ એ મુખ્ય છે. ધર્મની અવનતિ કરનાર, આગાર રિવાજમાંથી પતન કરનાર વળી તે સાથે આપણા સંસાર જાતદારને ધુળમાં મેળવનાર તથા તમામ કોમ (જે જે કોમમાં તે રિવાજ ચાલુ છે તે) ને, તથા દેશને ધણ અંધમ સ્થિતિ એ પડોડાનનાર ધણ તેજહે. મુગ ધારે (આપણા પૂર્વજો) સમયને અનુકરોને તે પેરી કેટલાય રિવાજો મુલ આદ્યવી સમાજ દિતને ખાતર તે કેટલેક અંશે લાજક કરેલા, પણ કાગલને સ્વર્ધ અને અચનતાને વધ થઇ તેનો મુગ લેવું નહિ સમજેતાં “ગાકીયા પ્રચાદ”ની યે માનુ રહેતાથી પરિણામે લાજ નહિ કરતાં હાનીકારક રિવાજ નીચાયા.



જેવામાં આવે છે. આ રિવાજે આપણી જૈન યુવાનો સો વૃદ્ધ મગિયા, બાસના યુગને સહી. કોમ એકનીત નદિ પશ્ચિમ સધળી કિંદુ કોમને અધોગતિ રૂપી જોડા દવાડામાં ફેંકી દીધા છે. નિજ તનવું ઠેગણું નહિ તો, દેશ કસાધી સાચવે. બાળક બનાવે બાળકો, એ હિંદમાં શો દમ હવે ? ૨ બાર વરસે બાપ ધાતાં લાજ નહીં ક્યાં આવતી ? શાને કરે કામોંધ, કોમળ કાય નિર્મળ ભાવથી; સસારની શું રીત બલે કાણું કાણું ને લાવે, બાળક બનાવે બાળકો, એ હિંદમાં શો દમ હવે ? ૩ મૂંખ મા ને બાપ પોને, ભાગ્યવાળા ધારતા, નિજ પુત્રને ધર પુત્ર બોવા, પુત્ર ગરદન મારતા; અભાગીયા કાષ્ઠ મોકાણેને, વહેણી લેતા માણે, બાળક બનાવે બાળકો, એ હિંદમાં શો દમ હવે ? ૪ અભાગ રંગ ઉમંગથી, રજુ જંગમાં પસારવતા, ક્યા ગયા એવા શુર, યાત્રુ મૈન્યને હંકારતા ઉદાર તારો કિંદુ શુ છે ? સકમ ધાવો ઓ બવે ? બાળક બનાવે બાળકો એ હિંદમાં શો દમ હવે ? ૬ ! સકા છે કાય એકમાં, પણ એક સુક્તિ આદરો, સૂક્તન લાઇ મકંટ હાથથી, જાનિને હરતે ધરો; પ્રત્યેપતિ જેવાં જાડા, જોખમેણું કામે, તે, નહિ બાલને પણ સોપું, વનમન યકો બલવાનને. ૧

૨. કલ્પેકાંવાળાં બાળસગ—આ અનિષ્ટને દાનીકારક રિવાજ મિથ્યાકૃત્તાંબનાનીઓમાં ધણેક આશે જેવામાં આવે છે, તેઓની માન્યતા એવી છે કે મારો હોકારો પારજીઆથી પુણ્ય તો અમે કૃતાર્યે યયા, કેમકે અમારા બાળકો વખતે મોટી ઉમરના યતા કુદરતી ખોા, બગીચા, ઓરી, અજ-બાસ, વગેરે આવનાથી તેમજ કોઇ બાવ પુછે નહિ તો અમારું કુળ ઓણું થતાની સાથે અમારા બાળકો કુંવારા રહી જાય, આવી ખોટી માન્યતાએ કરી જાગકતા નાની ઉમરમાં એટલે વરતી ઉમર ૨ થી ૩ અને ૪ થી ૫ અને ૬ અને તેથી ૫ થી નાની ઉમરમાં તેનાં વેપીયાન કરતાં આવે છે, જેમાં પછીથી કુદરતી ખોડ આવવા છતાં તેમાં ફેરફાર થઇ શકતો નથી જેથી પરિણામે એક બીજાને ગદાપાટુ છ'છગી ગુજરતાની સાથે એ પૈંદવ્ય દશા પ્રાપ્ત થાય તો પછી "પણુ ખાતું સુધારી લેવાનો" પ્રસંગ આવે છે, માટે તે બંધ થવાની જરૂર છે.

સાંપ્રત કાળમાં આ અધ્ય રિવાજે વારતનર્દ-ની જૈન અજૈત તથા તમામ કિંદુકોમને કેવી અધોગ તિથિ-પકોચાડી છે તે નંચેતા ૫૬ પરથી સમજાશે.

બાળસગ.

(હરીગીત)

કિંદા વદાસા હિંદ ૧૧ તારે તેજ કમ જાણું થયુ ૥
 ૧. પુરો દીમે તારા, રીંધે ક્યાં નાતું રજુ !
 તનુજ તારા કિંદુજના, કામને ના અનુભવે,
 બાળકો, એ હિંદમાં શો દમ હવે ? ૧

મહાશયો ! છાંતહાસ બાળકોને માણુગ દશે કે-મધ્યકાળગ આપણા કુદેવે આપણા પર ધર્માધને જીવમી મુસવમાની સત્તાનો ઉલ્લેખો, જે ધર્માધ પ્રજા હિંદુઓની કેટલીક યુવાન બા-ળાઓનું હરજી કરી પાણિ મકંજી કરતા, પરજોનીને હરામ સમજતા હતા. જેથી તે ધર્માધ પ્રજાના જીવમથી બચતા તથા કિંદુ ધર્માતુસાર લગના પવિત્ર રિવાજના સરક્ષણાર્થે તે બખતના આપણા પૂર્વજોએ-સગથને અનુસરીને ક્રાણપણમાં લગન કરવાનો પૃથા ચાલુ કયો, જે આજકાલ મુસલ-માની અધાધુનાના સમય બાપ જવા છતાં પણ મગણુન ધર કરી ખેડો છે, તો હવે તે અધમ રિવાજને દૂર કરવા માટે હાલમાં આપણા પર સાર્વભોમ ચિટીય સજ્જતતત્તી ન્યાયી તેમજ જાનિ ભરેલી અને ચીતલ તેમજ અદલ ધનાશી રાજ્ય સત્તા પ્રમત્રી રહી છે. જેથી કોઇ પણ જાતની વદેદત્ત વિના સુધારો કરવાને અનુકૂળ સમય મળે

રૂપીયા હોય અને તે આપના આરમા પ્રમંગે હોય, અને ચર્ચા કરીને હોય. ત્યારે આખી નાત જમાડે, સ્ત્રીના શ્રીમત (અધરણી) પ્રસંગે આખી નાત જમાડે અને સગનાદિ પ્રસંગોમાં મેરા મેરા વરથોડા તેમ ખીજા પુરો કરે અને તેના મુઆ જાદ તેના દોઢરા પાસે આવવાને પાછ પછુ ન હોય છતાં તે જેટલી પતરાજી રાખે છે, તેનાથી સેંકડો બલકે હજારો ઘણી રહેવાતા મિથ્યાભિમાની કુળવાનોમાં જોવામાં આવે છે.

મુળ પુરુષે તો-સદ્વિદ્યા, સદ્ગુણ, સદાચરણ, અને પ્રમાણિકપણથી ધન પ્રાપ્ત કરી, ધર્મ, જ્ઞાતિ અને સમાજ દિનને ખાતર સ્વાર્થને ત્યાગ કરી આત્મલોગ આપી ધર્મ, જ્ઞાતિ, અને સમાજ સેવા બળવી કુળ સંપત્તિ સંપાદન કરેલી, તેને બદલે દાસમાં નથી જોની પાસે. સદ્વિદ્યા, સદ્ગુણ, સદા ચરણ, કે સમાજ દિનના શુભ વિચાર તેમ નથી. પ્રમાણિકપણ કે સત્ય, કેવળ સ્વાર્થમાંજ મગી રહ્યા છે તો પછી તેઓનું ગુમાન “મારે મોગલને કૃષાય પીંજાર” એ માફક ક્યાં સુધી ચાલી શકે? આવી રીતનું નિષ્કુરપણ અમારા લૈન સમાજની દૈતરીકે જ્ઞાતિ અને પેટા જ્ઞાતિના મિથ્યાભિમાની કુળવાનોમાં વ્યાપી રહેલું છે, ખીજી દોષ વાતમાં નહિ પણ કન્યા આપવા લેવામાંજ, પણ દરે વખત આવી લાગે છે કે-કુલવાન કરતાં યુવવાન વધારે પુલકે. માટે લૈન સમાજ ની દરેક જ્ઞાતિના આગેવાનોએ સમાજ દિનને માટે ઉદાર આદર્શથી દરેક જ્ઞાતિના મનુષ્યો સંપન્ન એકજ રીત ભગવાનના પુત્રે હોય, એમ જાણી પેલાનામાં રહેલી સ્વાર્થ શતિ અને દુષ્પરિણે ત્યાગ કરે તક અને પેટા વડથી જોગણ એક ખીજા માથે કન્યા વ્યવહારથી જોગણ જવું જોઈએ.

दुष्परवर्तमान

(भारत० दि०) जैन महासभा व मालवा दि०
जैन प्रा० सभाका संयुक्त अधिवेशन कोटा
(राजपूताना) के सभापति-राय साहब
सेठ माणिकरंजनी सेठीके व्याख्या-
नका शेषांश)

जैन धर्मका महत्त्व ।

महानुभावो, हमारे प्राचीन जैनधर्मके जो
उच्च सिद्धान्त आज दुनियाकी मनुष्य समाज
पर प्रभाव डाल रहे हैं, विचार करके देखिये,
क्या वह सिद्धान्त इतने गंभीर व विशाल
नहीं है कि हमारे इन प्रयोजनोंकी सिद्धिका
मांग हमको दिला सकें ? यदि आज वे
सिद्धान्त पश्चिमीय सम्य राष्ट्रोंकी कि जो
अपनेको उन्नतिशाली कहते हैं और जिनका
अनुकरण घर-घरमें हमारे युवक अपना सौभाग्य
समझते हैं, प्रिय अथवा हितकारी होने लगे
हैं, तो अवश्य वे सिद्धान्त इतने विशाल व
प्रभावशाली हैं कि यदि हम और हमारे युवक
उनको अपने जीवनका साधन बनावें तो हम
पश्चिमीय राष्ट्रोंके समान ही नहीं किन्तु उनसे
भी बढ़ चढ़ कर उन्नतिशाली बन सकते हैं ।
हमारी दृष्टि आज उनकी सी है कि जिनके
पक्षकी गनीमत्त सोनेकी खान मीसूद है, परन्तु
वह फटे हुए बिगड़े जो दूसरेने उतार कर
फेंक दिये हैं उनकी पहिनेकी दोड़ते हैं
दूसरोंकी शूजनकी बची खुची पर अपना उदरपूर्ण
करना गनीमत समझते हैं । यदि हमको—मेरा
यहां संकेत जैन समाजकी युवक समुदायसे है—

अपने सुवर्णकी खान का बोध हो जावे, यदि
हम उस धनको प्राप्त कर उसका उपयोग कर के
योग्य बन जावें तो अवश्य जानिये कि हमारे
शरीर पर अच्छेसे अच्छे वस्त्र होंगे व हमारे
भोजन अतिस्वादित होंगे ।

तात्पर्य मेरे निवेदन करनेका इतना ही है
कि यदि हम अपने धर्मके सिद्धांतोंका ठीक
अनुभव कर लें, व दुनियाके परिवर्तनको दृष्टिमें
रखते हुए उन प्राचीन सिद्धांतों द्वारा अपने
जीवनको उपयोगी बनानेका हृदय विचार कर लें
तो फिर हमारी सारी कठिनाइयां दूर हो जावेंगी ।

जैनधर्म ऐसे गूढ़ व उच्च तत्वोंके रसोंसे
भरा हुआ है तथा इतना विशाल है कि उसमें
हर श्रेणीके मनुष्योंके लिये अपना जीवन
आनन्दमय व कल्याणकारी बनानेकी गुंजायश है ।

हमारे धर्मका सार है—

अहिंसा लक्षणो धर्मो लक्षणैः प्राणिनो ययः ।

तत्समाधर्माधि निलोके कर्तव्या प्राणिनां ययः ॥

इसमें वह सार है कि जिसके लिये अब
मनुष्य समाजके हृदय दुनियाके चारों कोनोंमें
हिलोरे ले रहे हैं, वैज्ञानिक विद्वान् अपने
आविष्कारों द्वारा नित नये प्रमाण देकर मनुष्य
समाजको इस सारकी ओर खींच रहे हैं ।
यूरोपमें जो इस समय League of Nations
बन रहा है उसका एक सिद्धान्त यह माना
गया है ।

उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्ब-
कम्, अर्थात् उदारचित्तवालोंका सारा संसार
बन्धु है और हम आशा कर सकते हैं कि
अब दुनियाके प्रवक्ताकी रचना इसी आधार

पर होगी। जब दुनियाकी रचना ही अब हमारे सिद्धान्तों पर किया जाना मनुष्य-समाजके सामूहिक नेताओंने स्वीकृत कर लिया, तो क्या हमारा यह कहना व्यर्थ होगा कि जैन धर्मके लिये एक नया और अमूल्य अवसर परमार्थ व परसेवाके लिये उपस्थित है नैवाला है ? सवय पुकार कर कह रहा है, जैन धर्मके अनुयाइयो, जागो, तुम्हारा समय आ गया।

वान्धवत्व व अहिंसा।

जैन धर्म न केवल अपने सिद्धान्तों द्वारा समस्त मनुष्योंके लिये बान्धवत्वका भाव प्रकट करता है किन्तु “अहिंसा” द्वारा संसारके प्राणी मात्रके लिये दया करना सिखाता है। आचारण मनुष्य समान, बान्धवत्वकी आवश्यकताको मान, द्वेषोंको मिटानेका यत्न कर रही है, और साथ ही यह ज्ञान भी पैदा होता जा रहा है कि मनुष्य समानकी निम्नेदारियां दुर्मं प्राणिगोंके लिये भी हैं। जैनधर्मके अनुयाई अपने पवित्र आचरण व धर्ममय जीवनमें ऐसे समय मनुष्य समान पर बहुत बड़ा प्रभाव उत्पन्न सकते हैं। मैं इन विषय पर अधिक नहीं कहना चाहता, भेरा निवेदन इतना ही है कि इनको समयके संकेत निम्नपूर्वक पढ़ लेना चाहिये, समान व समाभक्ति लिये आनेवाले नये समयमें जयती गति सीधे करना होगी, उनके कार्य प्रजात्योंमें पशुमीय प्रबंधकी मुक्तिमें द्वारा विनयी व हवाई जहाजकी गति पैदा करना होगा। जैनसमान गति ऐसे जन्मे अमरका उपयोग करना चाहती है, जो दुर्मंके लिये भी अपने कार्यमें व समाभक्ति में नई नई कुरता आवश्यक होगी।

सभाके नये प्रबन्धकी आवश्यकता।

सबसे बड़ा काम हमारे सामने अपनी महा-सभा व प्रांतीय सभाओंके सुधारके संबंधमें यह है कि उनके प्रबंधको इस प्रकार रचें कि सभा हम सबकी जीती व जागती सामूहिक शक्ति बने। हमारी सभाओंने गत वर्षोंमें अवश्य सगहनीय कार्य किया है, उनके द्वारा कई सुधार हुए हैं; परन्तु अभी हमको बहुत लंबा रास्ता चलना है। इसीलिये हम उत्सुक हैं कि हमको जो कार्य करना है उसको निश्चित करें, उसके लिये उचित प्रबन्ध कर अनुकूल सामिग्री व सुविधाएं उपस्थित करें।

हमारी समाजका अंतिम अभीष्ट आत्म कल्याण है। आत्मकल्याणके लिये सेवा ही एक सच्चा मार्ग है, बिना पवित्र चरित्रोंके हम सेवक नहीं बन सकते। जीवनको पवित्र व सफल बनानेके लिये आत्मिक व लौकिक ज्ञानकी आवश्यकता है।

हम अब सभाके प्रबन्धका अनुमान उन अनेक मार्गों द्वारा करेंगे कि जिनमें हम अपने कार्यको सुगमतापूर्वक विगमित कर सकते हैं। वे ये हैं:—

१. शिक्षा

१. बालक व बालिकाओंकी शिक्षा,
२. सामाजिक कुतूहियोंका निवारण,
३. धार्मिक ज्ञानके प्रचारकी व्यवस्था,
४. समाजमें दूरदर्शन उपाय,

शिक्षाके विषय पर मैं अधिक जोर देनेकी आवश्यकता नहीं। सभाका प्रबन्ध उद्देश्य पर होना चाहिये कि जैन समुदायका कोई मनुष्य



अथवा बालिका कुपट न रहने पावे । मेरा विचार है कि जैन समुदायमें अनिवार्य शिक्षा समान और सभा द्वारा अभीष्ट किया जाना आवश्यक है । परन्तु इसके लिये स्थान स्थान पर विद्यालयोंकी आवश्यकता होगी इसलिये जितने साधन बालक व बालिकाओंकी शिक्षाके लिये इस समय प्राप्त हैं उनका पूरा पूरा उपयोग करते हुए उन सुविधाओंको किस प्रकार बढ़ाया जावे उसका विचार करना चाहिये । हमारी समान अथवा जातिके लिये शिक्षा प्रणाली देशकी शिक्षा प्रणालीसे पृथक् नहीं हो सकती । मैं कह आया हूँ कि भारतवर्षकी शिक्षा प्रणालीमें एक बड़ा परिवर्तन, राजनैतिक सुधारके साथ होनेके स्पष्ट चिन्ह प्रतीत होते हैं । हमारी सभाको समाजकी विशेष आवश्यकताओंकी ओर ध्यान देकर उनका प्रबन्ध करना है, और वह विशेष आवश्यकताएँ मेरे विचारके अनुसार निम्नलिखित हैं:-

(१) जैन बालकों व बालिकाओं अथवा युवकोंकी धार्मिक शिक्षाका उचित प्रबन्ध ।

(२) निर्धन व अनाथ बालकों व बालिकाओंकी शिक्षा पानेके लिये उचित सहायता ।

(३) उच्च शिक्षाकी ओर जैन युवकोंकी अधिकतासे लाना ।

(४) स्त्रीशिक्षाका जैन समुदायमें प्रचार किये जानेके लिये एक बड़ा आन्दोलन अथवा विधवाओंकी शिक्षाका विशेष प्रबन्ध ।

(५) व्यापारिक शिक्षा जो हमारी समानके लिये विशेष रीतिसे आवश्यक है, उसके लिये उपाय करना, व सुविधाएँ पैदा करनेके लिये ध्यान देना ।

(६) कला व कौशल सम्बन्धी शिक्षाके लिये अपने युवकोंको उद्यत करना व उसके लिये सहायता देना ।

समाजका कार्य शिक्षा सम्बन्धी इस प्रकार निर्माणित होनेसे अब हम यह विचार कर सकते हैं कि इनके लिये हमको क्या करना चाहिये । मैं यहाँ पर यह निवेदन कर देना चाहता हूँ कि जैन कॉलेज, जैन हाईस्कूल, जैन विद्यालय जितने गीं हैं अथवा नये खोले जायें उनका होना लाभदायक है । परन्तु उनका प्रबन्ध व व उनकी योजना उत्तम रीतिसे होना चाहिये । जैन शिक्षा संस्थाओंमें जहाँ तक बन सके शिक्षा-प्रचारकी उत्तम व नई युक्तियाँ ग्रहण करना चाहिये ।

अब मैं क्रमपूर्वक उन ९ बातों पर आता हूँ कि जिन पर मैंने अभी कहा है कि हमारी सभाको विशेष रीतिसे ध्यान देनेकी आवश्यकता है ।

१. धार्मिक शिक्षा ।

जैन समाजके विद्यालयोंमें तो धार्मिक शिक्षाका प्रबन्ध होता ही है परन्तु हमको ध्यान देना है उन बालक बालिकाओंकी धार्मिक शिक्षाके उपायों पर कि जो जैन विद्यालयोंके अतिरिक्त दूसरी पाठशालाओंमें पढ़ते हैं, उनके लिये धर्मशिक्षा सम्बन्धी पुस्तकोंका तैयार होना आवश्यक है । यह पुस्तकें श्रेणीवार होनी चाहिये । ऐसी पुस्तकें इस समय तक कुछ तैयार हुई हैं जिनका उपयोग जैन समाजकी पाठशालाओंमें किया जाता है, परन्तु ऐसी पुस्तकोंके और भी अधिकतर रोचक रूपमें संपादन किये जानेकी

आवश्यकता है। यह कार्य ऐसे ही विद्वान् कर सकते हैं कि जो शिक्षाके कार्यमें निपुण वा धर्मके ज्ञाता हों।

ऐसे केन्द्रों? जहाँ जैन समुदायकी संरक्षा अच्छी है और जहाँ बालक सरकारी अथवा अन्य पाठशालाओं में पढ़ते हैं वहाँ इस बातका प्रबंध होना चाहिये कि उन पाठशालाओंके प्रबन्धकर्ताओंकी आज्ञा प्राप्त कर धार्मिक शिक्षाके लिये मददसोंमें जैन विद्वानोंद्वारा सभा की ओरसे प्रबंध किया जा सके। धार्मिक शिक्षाका विषय बड़े महत्वका है। मैंने आज आरम्भमें ही इसके संबंधमें बहुत जोर डालकर आप महानुभावोंका ध्यान उसपर दिलाया है।

बनारस हिंदू यूनिवर्सिटीमें जैन फ़िनासकीके प्रोफ़ेसरकी आवश्यकता।

धार्मिक शिक्षाका कार्य उत्तम ढंग पर लानेके लिये यह बहुत आवश्यक मालूम होता है, कि शिक्षाके प्रचार अथवा उसकी पद्धतिके निर्माण करनेका कार्य एक बड़े शिक्षाके केन्द्रसे हो। बनारस हिंदू यूनिवर्सिटी जो हिन्दू जातिकी महानुभवा संस्था है, और जैन समाज हिन्दुओंका आंतरिक अंग है, उससे बढ़कर दूसरा कोई केन्द्र मुझे इस कार्यके लिये अच्छा नहीं प्रतीत होता, और मैं यह विचार नग्ननापूर्वक आज समस्त जैन समुदायके सम्मुख उपस्थित करता हूँ कि हमारे हिन्दू महाविद्यालयमें समस्त जैनसामान्यकी ओरसे एक अथवा दो प्रोफ़ेसर

(Chairs) जैन धर्म (Jain Philosophy) पर लेक्चर देनेके लिये स्थाई कोष स्थापित कर नियत रीति में, और यहां दो या तीन

जैन धर्मके Research Scholars के लिये फ़ण्डम् भी रखे जावें, उनके कार्यके लिये एक अच्छी Library जैनधर्म ग्रन्थोंकी रहे, जहाँ जैनधर्मके प्रोफ़ेसर यूनिवर्सिटीमें पढ़नेवाले जैनियोंको उच्च धार्मिक शिक्षा दे सकेंगे, यह बहुत कुछ कार्य एक उत्तम रीतिसे धार्मिक शिक्षाके प्रचारका अपने आदेशमें करा सकेंगे। इस बड़े व महत्वके कार्यके लिये जैन समुदायके तीनों सम्प्रदायोंके मिलकर काम करनेकी बड़ी आवश्यकता है, और मैं आशा करता हूँ कि इसपर तीनों सम्प्रदायोंके नेता शीघ्र विचार करेंगे।

२. गरीब भ्रमण अथवा बालकोंकी सहायता।

गरीब बालकोंकी शिक्षा पानेके लिये सहायता करना, उसके लिये धन एकत्रित करके उसका उपयोग करना, इसपर सभाको विशेष रूपसे ध्यान देना चाहिये। फ़ितने होनुहार लड़के गरीबीके कारण उच्च अथवा उपयोगी शिक्षाके लाभसे वंचित रह जाते हैं। समाजका सबसे बड़ा धन उसके बालक हैं और इसी लिये उनको उन्नतिके पूर्ण अवसर देना सभा की ही कर्तव्य है।

जैन समाजका इस समय देहलीमें एक अनाश्रालय है, जिसकी व्यवस्था इस समय संतोषजनक नहीं है। मैं समाजका ध्यान उसपर दिलाता हूँ, उसके लिये धन की व प्रबन्ध की बड़ी आवश्यकता है।

३. उच्च शिक्षा।

मुझे यह ध्यानमें पड़ा हुआ होता है कि हमारी समाजमें उच्च शिक्षाकी ओर नज़र ध्यान



दिया जाना चाहिये, नहीं दिया जाता। समाजमें उच्च शिक्षा न होनेसे हम सुधारके कार्योंमें कितने असमर्थ रहते हैं, यह प्रत्यक्ष है। उच्च शिक्षाके लिये देशमें जितनी सुविधाएं हैं, हमारे युवकोंको उनसे पूर्ण लाभ उठाना चाहिये। उच्च शिक्षासे ही एक घनिष्ठ संबंध उच्च व्यापारिक शिक्षा तथा कला कौशल सम्बन्धी शिक्षासे है जिनपर मैं आगे चलकर निवेदन करूंगा।

४ स्त्री शिक्षाके लिये आन्दोलन।

स्त्री शिक्षाकी आवश्यकता व लाभ को समाजने स्वीकृत कर लिया है, उसमें अब कोई वाद विवाद नहीं है। समाजके सारे सुधारोंका केन्द्र गृहस्थका घर है, उस घरकी शोभा व पवित्रता स्त्रियों द्वारा है अशिक्षित स्त्रियां समाजके कुरूप हैं। शिक्षित स्त्रियां समाजका आभूषण व बल होंगी। समाज अपनी अर्द्धांगियोंको अशिक्षित रखकर कदापि आगे नहीं बढ़ सकता। दोनों अंग समान अपने अपने कर्तव्यके लिये दक्ष होना चाहिये। जैन धर्मे स्त्रियोंको उच्च स्थान दिया है।

“यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते
तत्र देवताः”

समाजमें उनके कर्तव्य स्पष्ट हैं। स्त्रियोंकी शिक्षा प्रणालीके विषयमें बहुत कुछ कहा जा सकता है। समय थोड़ा है। मैं केवल संकेत-मात्र यह निवेदन करता हूं कि हमारे देशमें स्त्रियोंकी शिक्षापद्धतिके निर्माणित करनेके लिये ध्यानपूर्वक विचार किया जा रहा है हम इस विषयमें अवश्य पश्चिमीय शिक्षा

पद्धतिको अनुकरण नहीं कर सकते। स्त्रियोंकी उच्च शिक्षाके विषयमें कुछ कहना इस समय भूल होगी समाज इस समय कर्तव्य यह है कि समाजमें उपदेशकों अथवा उपदेशिकाओं द्वारा एक बड़ा आन्दोलन स्त्री शिक्षाके प्रचारका किया जावे व कन्यापाठशालाओंके खोलनेकी ओर पूरा जोर दिया जावे। समाजकी स्थापित की हुई कन्यापाठशालाओं की संख्या बहुत ही कम है। मैं अपने समाज भाइयोंसे अपील करता हूं कि इस कार्यमें देर करना बड़ी भूल होगी।

विधवाओंकी शिक्षा।

विधवाओंको उचित शिक्षा दिये जानेका प्रश्न इसी संबंधमें विचारणीय है। इस समय जैन विधवाओंके लिये हमारी समाजके चार “श्राविका आश्रम” बम्बई, इन्दौर, देहली, मुरादाबादमें स्थापित हैं, जहां पर विधवाओंको अधिकतर धार्मिक शिक्षा दी जाती है। यह सब नई संस्थाएं हैं। हमारा उद्देश्य ऐसी संस्थाओंसे यह होना चाहिये कि हम अपनी उन बहिनोंको, कि जिनका दुःसाध्यवश जीवनका सहारा संसारसे उठ गया, जीवनके उद्देश्यका मर्म सिखाकर उनका जीवन पवित्र, मंगलमय व समाजके लिये उपयोगी बनावें। वह लोग कि जो धर्मके अटल नियमोंके तत्त्वको न समझ सामाजिक सुधारकी आड़में विधवा दिवाहके लिये आन्दोलन करते हैं उनसे जैन समाज कदापि सहानुभूति नहीं कर सकता, इसीलिये जैन समाजकी जिम्मेदारियां विधवाओंका जीवन समाज व नगर सेवाके मार्ग पर पवित्र कल्याणकारी बनानेके लिये और भी अधिक है।



यदि हमारी समाज इस जिम्मेदारीको अपने ऊपर उचित रीतिसे उठाकर पूरा कर ले तो मेरा दृढ़ विश्वास है कि हम विधवा विवाहके प्रश्नको बड़ी सुगमता पूर्वक हलकर सकेंगे । जैन धर्म विवाहको धार्मिक संस्कार मानता है और उसपर इस समय भी दृढ़ रीतिसे स्थिर है । विधवाओंके जीवनके लिये उपचारिका, उपदेशिका, शिक्षिका व उनके साथ ही आयेना इत्यादि अनेक उच्च मार्ग खुले हुए हैं ।

व्यापारिक शिक्षा ।

जैन समुदायका अधिकांश भाग व्यापारिक है, इसलिये व्यापारिक शिक्षाका प्रश्न हमारे आर्थिक साधनोंके लिये बड़े महत्त्वका है । यह शिक्षा इस समय हमारे युवकोंको हमारी ही दुकानोंद्वारा मिलती है । हमारे यहांके हिसाब किताबकी प्रणाली व व्यापारिक ढंग बिल्कुल हमारे मारवाड़ी व दूसरे देश भाइयोंसे मिलता जुलता है । व्यापारिक शिक्षाके लिये हमारी समाजको उनसे मिलजुल कर काम करना लाभदायक होगा । हमारी आवश्यकतानुसार व हमारी वर्तमान पद्धतिकी सन उत्तम पाठोंको लेते हुए परिचामीय व्यापारिक शिक्षा पद्धति (Commercial Educational System) को उपयोगी पाठोंको हमको अपनी पद्धतिमें शामिल करना होगा । देश देशान्तरोंका भ्रमण व समुद्र पार देशोंमें आर्थिक सिद्धिके लिये पहुंचना अब हमारे लिये आवश्यककीय मनीषा होता जाता है । यह सब प्रथम नियम हमको अपने देश भाइयोंसे निम्नर क्रम करना है व

समाजके नेताओं द्वारा तय करना है, समाजको शोध अपने हाथमें लेना चाहिये ।

कला कौशल सम्यन्धी शिक्षा ।

व्यापारिक शिक्षासे मिलता जुलता ही प्रश्न कला व कौशलकी शिक्षा है । कला व कौशल, व्यापारका एक बड़ा साधन है । इस समय हमारे देशमें अनेक प्रकारके नये कारखाने खोलनेका उपाय व औद्योगिक उन्नतिके लिये कार्य किया जा रहा है । भारत सरकारने सर टॉमस हालेन्डकी अव्यक्ततामें जो औद्योगिक कमीशन बिठाया था उसने इसी वर्ष अपना कार्य समाप्त करके रिपोर्ट प्रकाशित की है । विज्ञानके उपयोग, खोज व प्रचारसे नये अवसर उपस्थित होंगे । जैन समाजको ऐसे अवसरमें पूरा लाभ उठानेके लिये तैयार होना चाहिये ।

मेरा इसके समबन्धमें अधिक कहना व्यर्थ होगा, नितना ही आप इस पर विचार करेंगे उतना ही अधिक इसका महत्व आपको प्रतीत होगा, हमको अपने ही कारखानोंके लिये योग्य युवक तैयार करनेका प्रयत्न अभीमे करना चाहिये और समा ही समाजको इस कार्यमें मार्ग दिखाना सक्ती है ।

२-धार्मिक ज्ञानका प्रचार ।

शिक्षा सम्बन्धी कार्यके साथ ही दूसरा विषय मनुष्यके सम्मुख धार्मिक ज्ञानके प्रचारका है । जैन धर्मका माहिर्य अनेक अपूर्व महयोगे भरा हुआ है पर रहस्य व मिथ्यात्व मनुष्य समाजके चक्षुषोंके लिये हैं, हम जैन अनुयायियोंका यह धर्म है कि हम मनुष्य समाजकी सेवा उन्हीं उच्च शिक्षाओं



के प्रचार द्वारा करें, कि जो हमको दुनियामें सब पदार्थोंसे अधिक प्रिय हैं। जैनधर्मके उच्च सिद्धान्तोंकी पश्चिमीय अनेक अनुभवी विद्वानोंने मुक्त कंठसे प्रशंसा की है, यदि वे रहस्य व तत्त्वकी बातें उचित रीतिमें शिक्षित समाजके सन्मुख उपस्थित की जावें तो अवश्य एक बड़ा अर्थ सिद्ध होगा, उसमें हमारा प्रयोजन कदापि यह नहीं होना चाहिये कि लोग जैन धर्मको स्वीकृत कर इस सम्प्रदायमें सम्मिलित हों। हमारा भाव इस प्रचारके कार्यमें सेवाका भाव है। हम अपने भंडारके खनाने विचारवान समुदायके सन्मुख इसलिये रखनेका यत्न करेंगे कि हमारे उच्च सिद्धान्तोंका प्रभाव उनके द्वारा मनुष्य समाजपर पड़े, धर्म जीवनमें है। सम्प्रदायमें नहीं। सेवाका प्रयोजन केवल निम्नार्थ सेवा है। इस आदर्शको लेकर जो कार्य प्रचारका होगा उसमें सफलता मिलना आवश्यक है। ऐसे महान् कार्यके लिये पहिला साधन विद्वान व सदाचाही प्रचारकोंका तैयार करना है। इस समय यह कार्य मुरना, इन्दौर, हस्तनागपुर व मथुरा ब्रह्मचर्यआश्रम व महाविद्यालयों द्वारा हो रहा है; परन्तु जो विद्वान तैयार किये जा रहे हैं वह एक ही प्रकारके हैं, आवश्यकता इस बात की है कि आज कलकी शिक्षित समाजमें हमारे धर्मके सिद्धान्तोंका प्रचार करनेके लिये ऐसे प्रचारक तैयार किये जायें कि जो पश्चिमीय साहित्यमें प्रवीण हों, और निम्नको हमारे धर्मके उच्च सिद्धान्तोंका ज्ञान हो। आरम्भमें इनके लिये सहज उपाय यही है कि जो मैंने ऊपर निवेदन किया है कि बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटीमें जैन

फिलॉसफीके प्रोफेसरोके लिये व Research scholars व Readers के लिये फौरन ही धनकी योजना कर स्थाई प्रबन्ध किया जावे।

ऊपर बताये हुए जो विद्यालय धार्मिक विद्वानोंके तैयार करनेके लिये स्थापित हैं उनका प्रबंध भी जहाँ तक हो सके इसी बताये हुए आधार पर लाना चाहिये।

सरस्वती भंडार, ग्रन्थोद्धार संग्रह व प्रकाशन।

सरस्वती भवनोंकी स्थापना पर गत वर्षोंमें बहुत बड़ा जोर दिया गया है। जैनधर्मका कितना बड़ा साहित्य भंडार इस समय तक गुप्त पड़ा है, और उसका केवल एक कारण हमारी समाजकी उदासीनता है। इस संबंधमें बड़े खोज व कार्यकी आवश्यकता है। हम आशा करते हैं कि हमारे जो प्राचीन ग्रन्थ जर्मनी व अन्य देशोंमें चले गये हैं वह फिर ब्रिटिश सरकारकी द्वारा पीछे इस देशको लानेका यत्न किया जावेगा।

इस समय भारतवर्षमें भी अनेक स्थान पर (नैसे ईडर, नागौर) अनेक प्राचीन ग्रंथ तालोंमें बंद पड़े रीमरूपा आहार हो रहे हैं, यह ग्रंथ केवल जैन समाजकी ही मिल्किपत (Property) नहीं, किंतु मनुष्य समाजका धन है। इसलिये हमारी समाजकी, कि जो उनकी Trustee समझी जाती है, उनके संग्रह करने व उनको नाशसे बचाने तथा उनके प्रकाशन व प्रचारका कार्य तीव्रतासे करना चाहिये। मैं अपील करता हूँ, कि इस कार्यमें हमारे योग्य भ्राता श्रीधुत पन्नालालजी धाकलीवाल कलकत्तावालोंको सभासे इस कार्यमें पूर्ण सहायता दी जावेगी,



मुझे यह कहनेमें हर्ष है कि श्रीयुत ऐलक प. जालालजी थहाराज द्वारा एक विशाल सरस्वती भवनकी स्थापना जालरापाटनमें भी इस समय हो रही है और मुझे आशा है कि बहुत कुछ उपयोगी कार्य इसके द्वारा होगा ।

धार्मिक ग्रन्थोंकी वृद्ध सूची ।

इस समय जैन मंदिरमें धार्मिक ग्रन्थ जो मौजूद हैं उनकी सूचियां मंदिरोंमें ही रहती हैं; मैं अपील करता हूँ कि ममस्त मंदिरोंके ग्रंथोंकी एक वृद्ध सूची तय्यार करनेका कार्य ममाको अपने हाथमें लेना चाहिये ।

धार्मिक संस्कार ।

धार्मिक संस्कारोंके संबंधमें जो प्रभाव समाज डालना है उसका आन्दोलन धार्मिक प्रचारकों द्वारा होना चाहिये ।

३. सामाजिक कुरीतियोंका

निवारण ।

बल विवाद ।

समाजकी स्थापनाके दिवससे ही सामाजिक कुरीतियोंको मिटानेका प्रथम हाथमें लिया गया था । और हमको यह देखकर हर्ष है कि बहुतनी कुरीतियां मिट गई हैं अथवा मिटती जा रही हैं; परंतु ऐसी कुरीतियां कि जिनका समाजके भविष्य पर बड़ा हानिकारक अमर पड़ रहा है अब भी हमारी समानमें उपस्थित हैं ।

सबसे बड़ी हानिकारक बात बलविवाद है । मगध आ गया है कि जब समाजके अपने कानून द्वारा बलविवाद करनेवालोंको दंडनीय ठहराया जायिये । हम अपने गुणधर्मी शीन्हा अब इसके द्वारा एक दिन भी नहीं सहन कर

सकते । बालविवाहकी रोक दंड द्वारा छोटी उम्रकी विधवाओंकी संख्याको स्वतः कम कर देगी, और एक बड़ी असुविधा जो इस समय समाजके सामने उपस्थित है, निवारण हो जावेगी ।

वृद्ध विवाद ।

वृद्ध अवस्थाके पुरुषोंका छोटी उमरकी कन्याओंके साथ विवाहको समाजने निन्दित ठहरा दिया है परंतु उसकी रोकके लिये समाजने कभी कोई शस्त्र पैदा नहीं किया, कोई सुधार उस समय तक नहीं हो सकता जब तक समाजकी पुलिस अपने शस्त्रोंके भय द्वारा समाजके कानूनकी पाबन्दी न करावे ।

व्ययव्यय ।

व्यर्थ व्ययकी कुरीति हमारी समाजके अनेक दुखोंका एक बड़ा कारण है, जितना धन व्यर्थ रीतिसे शादी, मृतकजीवन, व दूसरे अनेक कुमार्गोंमें व्यय होता है, यदि वही धन समाजके समाजके सामूहिक कार्योंके लिये मिल सके तो कोई कठिनाई हमारे सामने न रहे, शादी, मौत, अथवा दूसरे कर्मोंमें व्यय किस समाजके भीतर हो इसके पक्के नियम बनाये जाकर उन पर अमल कराना चाहिये, समाजके बनाये हुए नियमोंको जो न माने उसको समाजमें दंड देना चाहिये ।

ऐसे धनाढ्य पुरुष कि जिनके पास धन व्यर्थ व्यय करनेको मौका है उनमें हमारी अपील है कि वह धन समकानुसार श्रममें दें, यह दान नहीं, मेरा है, जिनमें एकछा व समान दोनोंका कल्याण हो ।



४. एक्यता

समा व समानका जो परम कर्तव्य व उद्देश्य होना चाहिये, अब मैं उस पर आता हूँ, और यह है "जैन समाजकी एक्यता"

तीर्थक्षेत्रोंके झगड़े ।

महानुभावो, जिस प्राचीन धर्मके हम अनुयायी हैं, वह हमको दुनिया भरके लिये बान्धवत्वका भाव सिखाता है । हर व्यक्ति कि जो जैनी शब्द द्वारा संबोधित किया जाता है उसमें बान्धवत्वकी मात्रा इसीलिये विशेषतासे झलकना चाहिये । यही जैनियोंका वात्सल्य धर्म है । मुझे विश्वास है कि आज इस समाजमें कोई ऐसा व्यक्ति मौजूद नहीं है कि जो इस धर्मका पक्षपाती न हो, परन्तु क्या वह धर्म हमारा कथन मात्रके लिये ही है ? धर्म वही है जिसका प्रभाव अनुयाइयों द्वारा प्रकट हो । क्या हम और हमारी समाजें वास्तवमें उसका पालन कर रहे हैं ? शोक है, नहीं ।

तीर्थक्षेत्र सम्बन्धी जो झगड़े जैन समाजमें प्रचलित हैं, यदि उनका इस समय तक उचित रीतिसे निवृत्त नहीं होने पाया, तो उसका एक कारण यही है कि बान्धवत्व भावमें उसको निवृत्तिका हमारी समाजोंने यत्न नहीं किया जिन तीर्थक्षेत्रों द्वारा जैन समाज शांतिका मार्ग द्वंद्वी थी वही तीर्थक्षेत्र आज महा अशांतिके कारण चलाये गये हैं । महानुभावो, इस पक्षको परस्पर मेल जोलसे बान्धवत्व भावमें नष्ट निवृत्तिका यत्न करना चाहिये । जो धन हम अंगडोंमें व्यर्थव्यय कर रहे हैं वही धन समाजके उपयोगी कार्योंका साधन बन सकता

है । तीर्थक्षेत्रोंके झगड़े इस समय जैन समाजमें बान्धवत्व भावके विकासके बाधक हैं, इसीलिये इनको शीघ्र तय करनेकी आवश्यकता है ।

पंचायतें ।

आपसके झगड़ोंके निपटानेके लिये नातीय व स्थानीय पंचायतोंकी स्थापना पर पिछले अधिवेशनमें जोर दिया गया था; परन्तु इस समय तक कोई उन्नति उस कार्यमें नहीं हुई । मेरा विचार है कि ऐसी पंचायतोंकी स्थापनाके लिये समाजको उत्तेजन देना चाहिये, इस सम्बन्धमें खंडेलवाल महाराष्ट्र जैन समाज व नागपुर प्रान्तीय समाजों जो कार्य कर दिया है, उससे हम शिक्षा ले सकते हैं ।

महानुभावो, मुझे भय है कि मैं आपका बहुत समय ले चुका हूँ मैंने यत्न किया है कि ऐसे महत्वके अवसर पर जो प्रश्न विचारणीय हैं उनको संक्षिप्त किन्तु स्पष्ट रूपसे आपके सामने उपस्थित करूँ ।

पटेल विल ।

एक और महत्वका विषय, जिसपर आज इस स्थानसे जैन समाजकी ओरसे स्पष्ट शब्दोंमें विचार प्रकट किया जाना आवश्यक है वह है "पटेलका विवाह विल ।" जैन समाज अपने धार्मिक सिद्धांतोंके आधार पर इस विलका विरोधी है, और हमारा कर्तव्य होगा कि हम इस संबंधमें और दूसरी हिन्दू जातियोंके साथ इस विलका विरोध करें ।

जैन समाचारपत्रोंके सम्पादकोंसे अपील

जैन समाजके समाचार पत्रोंके सम्पादकोंसे मैं एक विनयपूर्वक अपील करता हूँ, समाजके



तिके कार्योंमें समाचार, पत्रोंका आश्रय दूंदना पड़ता है, हमारे समाजके समाचार पत्र जब हमारी समाजोंके प्रोगामके अनुसार विषयोंपर जोर देंगे और बार बार उनपर लेखनी द्वारा समाजको चेतावनी देंगे तभी कुछ कार्य होना संभव है। मुझे आशा है कि मेरी इस प्रार्थना पर सम्पादक महाशय अवश्य ध्यान देंगे।

महानुभावो, अब मैं इस भाषणके अंतमें फिर एक बार आपकी उस असीम कृपाके लिये व मानके लिये जो आपने मुझे प्रदान किया है सविनय धन्यवाद प्रकट करता हूं। और अपने बंधुओं तथा वहिनोंसे हाथ जोड़कर प्रार्थना करता हूं कि "जैन धर्म व जैन समाज" का भविष्य तुम्हारा है; और तुम्हारे ही हाथमें है, उसको प्रभावशाली बनानेका यत्न करो। "जैन धर्म" का प्रभाव यदि दुनिया पर डालना है, तो वह हमारे आचरण द्वारा पड़ेगा। वह प्रभाव सिंहादोंका टोल बनानेसे नहीं पड़ सकता जो पुरुष अथवा स्त्री अपनेको 'जैन' कहने में बात उसी समय जैनी होनेका शौर्य का

देवकी चरित्र ।

(लेखक-कूरचन्द अग्रवाल, मुरार-शालाद्वय)

आजकल होलीकी छुट्टियां हैं इसलिये बाजारमें खूब चहल पहल रहती है। भीड़के घमसानके कारण बाजारोंके दृश्य सुहावने देख पड़ते हैं। यार दोस्तोंसे मिलता जुलता और बाजारोंमें घूमता हुआ मैं ठीक साढ़े वाठ बजे अपने घर वापिस आया। घरमें प्रवेश करते ही मेरे नौकर लल्लूने मुझे एक बात कहकर आश्चर्यमें डाल दिया। उस समय मैंने भी कुछ ध्यान न दिया और लल्लूके साथ उलटे पावों लौट गया। मार्गके बाजार और गलियां लांबता में बड़े बाजारमें पहुंचा। वहां मुझे मेरे मित्र पंडितजी मिले। उन्होंने मुझसे प्रश्न किया कि मैं कहाँ जा रहा था? मैंने उनसे कह दिया कि घरपर कोई व्यक्ति भागता हुआ कह गया है कि मेरे मित्रगंडलके मित्रोंमें कुछ झगड़ा हो गया है वहीं पर मुझे बुलाया है। यदि मुझने और उस व्यक्तिसे गृह दर गृह बात होती तो मैं सत्याप्रत्ययका विचार करता। इस समय यदि मुझे आश्रय हुआ तो भी चुपचाप चला आया।

रहस्यका पता लगेगा । मैंने व्यग्र होकर पूछा, "तब क्या मामला कुछ और है ? उसने अवश्य कहकर कहना आरंभ किया—“लगभग आधा घंटा हुआ जिस समय मेरे घर पर आकर किसीने आवाज दी कि तुम्हें बाबूजीके यहां बुलाया है । बस इतना कहकर वह चला गया । मैं घरके भीतर था इस कारण न देख सका वह कौन था और क्यों आया था । उनी समय मैं बाबूजीके यहां पहुंचा । बाबूजी अपने कमरमें बैठे हुए एकांतमें किसी गहन विषयपर विचार कर रहे थे । मेरे प्रवेश करने और बुलानेका कारण पूछने पर वे मुझसे कुछ हुए मैं चुपचाप वहांसे लौटा । सदर द्वारपर आते ही एक अपने मित्रसे मैंने यही कथा कही तब उसने कहा यह वही देवकी है जिसने सहस्रों घरोंके स्त्री पुरुषोंको नर्कका मार्ग दिखाया है । इतना सुनते ही मेरे शरीरमें विजली दौड़ गई और उसकी खोजमें निकल पड़ा, दूती बीच आप मिल गये । बोलिये अब क्या करना चाहिये ? मेरी इच्छा तो यही है कि आज उसे पकड़कर उसको भरपूर दंड देना चाहिये ताकि फिर कभी वह ऐसा करनेका साहस न करे और उसे कुछ शिक्षा लग जाय । "

पंडितजीका और मेरा परामर्श हो गया । मेरे अनुरोध करनेपर प्रथम हम लोग मित्र मंडलमें गये । वहांका दरवार गरम था । हम दोनोंके प्रवेश करते ही वे लोग सब एकादम हंस पड़े और कुछ आपसमें बातें करने लगे जिसको हम दोनों न समझ सके, अलवत्ता उन बातोंका हमने यही सार निकाला कि

देवकीको मगदाने मंत्रमें हमारे घर भेजनेकी उन्होंने भी शरारत थी; क्योंकि उनमेंसे दो एक ऐसे भी थे जो उसके (देवकीके) परम भक्त थे । यद्यपि उस समय उन लोगोंने आज्ञा भी किया, किंतु हम लोग न ठहरे उसकी तलाशमें चल दिये । समय भी ठीक म्यारहका हो गया ।

पाठको ! इस समय जब कि मैं एक रहस्यका भंडा फोड़ने चला हूं तो आपसे कुछ भी न छिपाऊंगा और यहां यह भी कतला देना ठीक समझता हूं कि कुछ दिवससे मैं एक मामलेकी तलाशमें हूं । मैं सी० आई० डी० का एक इन्स्पेक्टर हूं और मुझे गुप्त अड्डोंका पता लगानेका काम सौंपा गया है । मेरा सी० आई० डी० का कार्य करना किसी पर विदित नहीं । अपने स्वार्थके लिये न मैं किसी पर अत्याचार करता हूं और न अनाचार; वही कारण है कि सब लोग मुझसे प्रसन्न रहते हैं और मेरे कार्यसे अनभिज्ञ हैं । यहां पर व्यभिचार बढ़ चला है । कुमारियोंके कौमार नष्ट होनेकी बात जहां तहां सुनी जाती है और कुमारियां भगा ले जाई जाती हैं । इस कार्यके लिये मेरी मातृदत्तीमें कई आशुमी दिये गये हैं ।

मैं देवकीको केवल एक व्यभिचारिणी स्त्री समझता था इसके अतिरिक्त कुछ नहीं, किंतु मुझे बादको ज्ञात हुआ वह बड़ी साहसी शीषण स्त्री है । उसने बड़े २ अनर्थ किये हैं ।

समय अधिक होनेसे पंडितजी अपने घरको चले गये, किंतु हम लोग बालकी खाल निकासनेवाले जासूस हमें जैन कहाँ । कुछ समय तक मैं विचार करता रहा पश्चात् तदर



बानारमें मैंने एक युवाको लम्बी दूरीसे जाते हुए देखा । मैंने उसका पीछा करना उचित न समझा । तुरंत ही एक सिपाहीके हाथमें रुपया दे उसके कानमें दूध दिया कि वह किसी तरकीबसे उस आदमीको शहरके बाहर लाल कोठीमें ले आवे ।

मैं अकेला ही गलियां लांघकर नदीपर पहुंचा । नदी वेगसे बह रही थी । नाव खेना मैं जानता हूं किंतु बिना मांझीके पूछे उसकी नाव कैसे खोलता ? लाल कोठी नदी पार है । मैंने मांझीको जगाया और नाव तैयार कराई । इसी बीच दो युवा पुरुष आ पहुंचे । वे भी नदी पार जाना चाहते थे । पूरी नावका किराया आठ आना मैंने मांझीको दिया । उनमेंसे एकने आवश्यक कार्यवश उस पार जानेकी इच्छासे उसी नावमें बैठना चाहा; क्योंकि वहांपर केवल एक ही नाव थी । मांझी कह दिया सकता था उन दोनोंको बैठाना मेरी इच्छापर निर्भर था । मुझे उसकी दीनता पर कल्याण आ गई और उनको बैठा लिया । मार्गमें मेरी उनसे कुछ बातचीत न हुई । केवल मैंने इतना ही पूछा कि वे कहाँ जाना चाहते हैं !

उन्होंने कहा—लाला कोठीके मस्तेमें सम्मिलित होने ।

प्रश्नात् उन्होंने मुझमें पूछा कि मैं कहाँ जाना चाहता हूं ! मेरा भी वही उत्तर था । उन दोनोंमेंसे एक कुछ घबड़ाया सा जान पड़ता था मेरा उत्तर सुन उसे धीरम हुआ ।

इस समय प्रबुद्ध हवा चल रही थी इससे मांझीका मन और भी बड़ गया था इसी लिये

मांझी नावको तिरछी खे रहा था । लगभग आधे घंटेमें हम लोग उस पार हुए और लाल कोठीकी पग इंडीपर चलने लगे ।

पन्द्रह मिनट चलनेपर वह मार्ग समाप्त हुआ और हम लोग सिंहद्वारसे कोठीमें पहुँचे । वहाँपर बहुत कान लगानेपर भी किसी प्रकारकी गाने बजानेकी ध्वनि न सुनाई देनेपर उनमेंसे एक युवाके पैर खिसकते थे और उसका संदेह बढ़ता जाता था ।

इन दोनों अपरिचितोंके परिचयकी पाठकी आपकी बड़ी चिंता होगी । हम भी आपको कष्ट न देकर यहींपर आपको बता लाये देते हैं । इन दोनोंमेंसे एक वह कानिस्टविल है जिसको मैंने रुपया दिया था । दूसरा वही व्यक्ति है जिसको लानेके लिये उस कानिस्टविलसे कहा था । सब कुछ जानते हुए भी नावमें बैठे हुए अथवा लालकोठीकी ओर चलते हुए मैंने उससे बात न की; क्योंकि मुझे इस बातका पूरा ध्यान था कि कहीं वह मेरी कार्यवाहीको समझ न ले और कहीं उसके जीमें यह संशय न हो जाय कि मैंने उसे पहचान लिया है । अंधेरी रात्रि होनेपर भी वह मेरी ओर पीठ करके बैठा था ।

बार बार वह युवा उस कानिस्टविलसे अपने संदेहकी बात कहता था । कानिस्टविल बागवत उसे आश्वासन दे रहा था । बागवत ठीक बीचो बीच कोठी पर पहुंचते ही वह युवा बहुत बिगड़ा और उस कानिस्टविलको लताड़कर अपना प्रभाव जमाकर भागना चाहता था उसी समय मैं उसके पास जा पहुँचा और मैंने



कहा। इस कार्यमें वेचारे कानिस्टविलका कोई दोष नहीं। दोष मेरा है।

युवा—यहां परदेशमें मेरा अपना पराया कोई नहीं। आपको इस प्रकार मुझे धोखा देनेसे क्या लाभ ?

मैं—इस प्रकार आपका छुटकारा नहीं हो सकता।

युवा—तब किस प्रकार छुटकारा हो सकता है ?

मैं—इस प्रकार—जब तुम अपनी जीवनी आदिसे अंत तक मुझे सुनाओ। मुझे मालूम हुआ है कि तुम्हारी जीवनीमें बड़े रहस्य है।

युवा—कैसी जीवनी ? क्या बात ?

मैं—मेरे सामने तुम्हारी एक चाल भी काम न आयी।

इतना कहकर मैंने जेबसे एक विस्तौल निकाल उसके माथे पर लगा दी और कहा “ या तो अपना चरित्र बताओ अन्यथा अभी तुझे यमपुर भेजकर अपना हृदय शीतल करूंगा। ”

वह पत्थरकी भांति सन्न खड़ा रहा मुखसे धोल न निकला।

उसे मौन देख फिर मैंने उससे कहा यदि वह अपना वृत्तांत मुझे न बतलायगा तो मैं उसके प्राण लिये बिना कदापि न छोड़ूंगा। वह धर २ कांपने लगा और उसपर मेरा प्रभाव जम गया। उसके नेत्रोंसे आंसुओकी धारा बह चली। वह बारम्बार मुझसे अपने छुटकारेकी प्रार्थना करता था, किंतु मैंने एकपर कान नहीं दिया।

अंत बह ईश्वरसे प्रार्थना करने लगा और अपनी प्राणीन स्मृतिग्राहक पश्चात्ताप करने

लगा। आध घंटा इसी प्रकार बीता जब उसका चित्त शांत हुआ वह बोला—बाबूजी ! क्यों वृथा उस मेरे पापकर्मको सुनते हो ? मेरी प्रार्थना है कि अब आप अपनी गोलीका शिकार बनायें अथवा अथाह नदीमें मुझे ढकेल दें, कारण अब मैं संसारमें अधिक जीवित रहना नहीं चाहता।

नहीं, नहीं, ऐसा नहीं। मैं यह उचित समझता हूं कि प्रथमतः अपनी कथा कहो और मुझे आज्ञा दो मैं उसे छपाकर संसारको बतला दूं ताकि कभी कोई तुम्हारी भांति पापमार्गमें सुखकी आशा न करे।

इस समय वह संसारसे विरक्त हो गया था उसके विचार शुद्ध हो गये थे। वह चहता था कि नारी जातिको मेरी जैसी पातकी कुल फलंफली, पति हत्यारीसे संसारको कुछ भी शिक्षा मिले तो मैं नरकमें पड़ी हुई भी प्रसन्न रहूंगी। पश्चात् उसने इस प्रकार कहना आरंभ किया:—

बाबूजी ! यह तो आप जानते ही हैं कि मैं जातिकी मारघाड़ी नाइन हूं। मेरा नाम देवकी है। इस समय मेरा मन विरक्त हो रहा है और एक क्षण भी अपना कर्मकी सुख संसारको दिखाना नहीं चाहती। इस समय एक २ करके पिछले पाप कर्म मेरे नेत्रोंके सामने आ आकर मुझे भयभीत कर रहे हैं। मेरी इच्छा यही है कि दीप्त ही अपनी जीवन् लीला समाप्त करूं। मैं नहीं समझती कोई बंड मेरे पापोंके लिये उपयुक्त हो सकता है सुखके भ्रममें आकर मैंने बड़े २ अनर्थ किये



हैं किंतु कहीं भी सुख नहीं पाया इतना फिर भी कहती हूँ कि पुरुष जाति यदि अपना कर्तव्य निभावे तो स्त्रियाँ इतनी दुष्चरित्रा न हों।

मैं जिस समय पांच वर्षकी थी उसी समयसे जन्मानोंके नवयुवकों तथा अड़ोसी पड़ोसियोंकी आंखोंमें खटकने लगी। वे मुझे प्यार भी करते थे और घृण्यकर भी देखा करते थे। मैं उन दिनों क्या समझती थी जो कोई मुझे प्यार करता और पैसे देता उसीकी गोदमें बैठती। दिन दिन मेरा सौंदर्य बढ़ने लगा छोटे बड़े सब ही की दृष्टि मुझपर पड़ने लगी।

हमारे यहांकी रीतिके अनुसार नित्य जन्मानोंके यहां आने जानेका काम ठहरा। नाई ब्राह्मणोंका वहीं परदा ही नहीं होता। बेरोकटोक हम आते जाते हैं। सेठ लोग अपने घरकी मुधि भी नहीं लेते अलबत्ता इधर उधर लार टपकाते फिरते हैं।

मेरी माँकी अवस्था इस समय २० वर्षकी है लेकिन उसका शरीर अब भी ऐसा गठा हुआ और उसकी गुन्दरतामें नामकी भी बल नहीं आया है। यह अब भी पौड्या वर्षीया सुक्की जान पड़ती है। जब वह नया शिलासे भ्रंगार करके बेप मूषण पड़ती है उस समय सेठकी सेठानी नचती है। बहुतसे युवा उसे सेठानी ही कहा करते हैं।

उसके सेठानी करनेका भी कारण है।

“कारण क्या है और उसका नाम क्या है ?” मैंने पूछा।

“इस समय मैं आपसे कोई भी बात छिपान रखूंगी। वैश्य जातिके कई सेठजी उसकी घातमें लगे रहते हैं, किंतु वह आज सेठ राधे-लालकी अंकशायिनी हो रही है। उसका नाम गुलाबो है। राधेलाल समझते हैं कि वह उनके प्रेमपाशमें बंधी थी किंतु उनका ऐसा सोचना भ्रम था। उसने अपना ध्येय रुपया कमाया और जैन करना बना रक्खा है।”

“बाबूजी ! जिस प्रकार मेरी माता सेठोंकी सेठानी बन रही है उसी प्रकार मेरा भाई किशना जो नाचने गानेमें प्रवीण है और नाचके समाशमें सदैव नायिका अथवा नायकका पार्ट लेता है, वह एक अच्छा एक्टर है, उसपर सहस्रों सेठानियाँ मुग्ध रहती हैं। वह भी पट्टा जैन करता है।

व्यभिचारिणी माताकी अधीनता और छत्रछायामें रहकर मैं कब सदाचारिणी रह सकती थी। इन बातका तो आप सहजमें ही अनुमान कर सकते हैं। मेरे लिये लोग व्याकुल होने लगे। इधर मैं अपनी माताकी चाल ढाल, योली पानी, नान और नखरोंका स्वतः ही अनुकरण करने लगी। बहुत दिन तक मेरी माँने सेठ राधेलालको डाँटा, डाँसा पट्टी भी दी। अंतमें एक दिन मुझे भंग पिटाई गई। जब मैं भंगके नशेमें घूर हो गई उस समय मुझे सेठनोंके कमरेमें ले जाकर मुलादिया। क्या उसी दिनसे मेरी जीवनयात्रा दृमगी और दह बची।

यदि मैं नायक हूँ तो क्या हूँ। अंतमें माता-पाड़िन तो हूँ। मातापानी वैश्यके यहां बाल-विक्रमना सोचना टकरा। इन लोगोंका मेरी

वैश्योंसे ही अधिक रहता है इसी कारण हमारी रीति रिवाजमें कोई भेदभाव नहीं, वस मेरी १२ वर्षकी अवस्थामें पापके शान्तिपुर नगर-के एक नाहंके बालकसे सगाई कर दी गई । आयुमें वह बालक मुझसे अधिक छोटा नहीं केवल एक ही वर्ष छोटा था, किंतु गेरी-अवस्थके मामले वह निरा बालक था । सुख और चैनसे रहने, खूब खानेको मिलने और स्त्रीजातिके स्वभाविक गुणके अनुसार मेरे उस अवस्थामें भी पूरी स्त्री थी । इसपर किसीने ध्यान नहीं दिया । एक तो माताकी संगतसे मैं दूसरे ही काममें फंस गई इसपर बालक पतिका सहवास; मैं किस प्रकार धैर्य धरती और अपनी चढ़ती हुई जवानीकी उमंगोंको रोकती । मुझमें बेसी सामर्थ्य कहां थी । उस समय उन पाप कर्मोंमें ही मैंने सुख संग्रह रखा था ।

(अपूर्ण ।)



विश्व-वन्द्य ! विश्वज्ञ ! विश्व-प्रियता-अगाध हो,
कुरुणासिन्धु ! कृपाशु ! दीन-जनमनाधार हो,
दीनदयालु ! अगम्य ! परात्पर ! हृदय-सार हो,
अमित पापना पुत्र भक्त हो, जले, छार हो ।
मृत्यु सुगन्ध पर सन नलें, सत्य धर्म स्वीकार हो,
चहुं दिशि उदित अग्र प्रभो ! यही जैन संसार हो ।

कन्हैयालाल जैन

वाक्यामृत ।

मैं जिसका समर्थन करता हूं वह ऐसे स्वा-
मित्ववादका एक प्रकार—यदि उसे सर्व स्वामित्व
वाद कहा जाय तो—यह है कि जिससे मनुष्य
यह धारणा करते कि वह स्वार्थ और आलस्य
पूर्ण एका-तमें अन्य सर्वसे पृथक् रह ही नहीं
सकता किन्तु उसे पड़ोसियों और परमात्माके
प्रति कर्तव्य पालन करना है और उनकी ओर
दुर्लक्ष करनेसे अथवा उनको न पालन करनेसे
उसको ऐसा दण्ड भोगना पड़ेगा जो दण्ड
मनुष्योंके बनाये हुए कानूनोंके दण्डोंसे भी
अधिक कठोर है ।

ए. सि. वेन्सन

* * * * *

अन्य कार्योंकी अपेक्षा दान मनुष्योंके चरि-
त्रको अधिक उज्ज्वल करना है ।

साउथ.

* * * * *

जैम रखो । स्वयं अपने लिये ही नहीं किंतु
आकाशमें भ्रमण करनेवाले सूर्यके समान मनुष्य
मात्रको अपना भाई समझकर सर्वेकी सेवा करो ।

शिल्लर

* * * * *

अपनी की हुई सेवामें बारबार स्मरण कराना
यह सेवाका बदला लेनेके बराबर ही है ।

रोसिन

* * * * *

दयाने अनिवार्य जादूभरी शक्ति है । अन्य
सब योग्यताएं दयाने अपेक्षा हीन बलवाली हैं ।
दया उग्र कोपको शान्त करती है । चंचल



प्रेमको स्थिर बनानी है । सौंदर्यसे हृदय मोहित होता है किन्तु दया प्रेमकी पशुवृत्तिको उन्नत बनाती है ।

रॉचेस्टर

* * * *

द्रव्यका नहीं तो हृदयका किंचित् दान देना चाहिये ।

पोस्क्वीयर क्वेन्सल

* * * *

हममे हो मके उतनी, सर्व प्रकार, सर्व मनुष्योंकी, सर्वत्र, हर समय, पूर्ण शान्तिसे और हो सके वहां तक कल्याण करो

फ्रांसिस पियु

* * * *

प्रेमपूर्वक दिया गया छोटेमे छोटा दान भी महान दान है

फिलीमैन



सुधार-उपचार



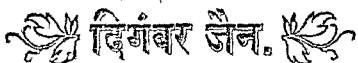
क्या प्रियवर ! यह ही है नर-कर्तव्य निभाना ?
क्या यद्व्यगता यही-सफल निज जन्म बनाना ?
मानव जीवनका उद्देश यही प्रियवर है ?
यदा उन्नति पथ दुःखा कभी गौरी प्रमत्त है ?
पारम्परिक विवेकसे ही निज उन्नति चाहने ?
हेतुवत्क कर्तव्य पर नमोद्देश निभाहने ? ॥
जो दुनको पर परद्व ज्ञाना दोई चंदे,
प्रेम श्रुतिही गीनि नीमिने कहीं मगने ।
कर रीतिगोचना नातिके तेष दिना ।

सामाजिक कुरीतियोंको बलहीन बनाए ।
उसे आप अपना अशुभ चिन्तक क्यों है मानने ?
उसके सन्तोद्देशको आप न क्यों पहिचानने ? ॥
कर सहायता उमे सहायक क्यों न बनाने ?
उन्नति गतिके मार्ग कहां क्यों भूले जाते ?
बिन कारणके कार्य मिद्ध क्या हो सकता है ?
बिना किए उपचार रोग क्या खो सकता है ?
तब अपने उपकारके द्वार न क्यों विस्तृत करो ?
दिह । दृष्टिसे अभ्युदयका पथ निरस्तो प्रियवरो ॥
दिन दिन नूतन सम्प्रदाय बन रही यहां है,
मिथ प्रेमकी झलक दीखती नहीं यहां है ।
होकर टुकड़े भिन्न जैन नित छिन्न हो रहा,
चहुंदिशि भीषण पवन ज्वाल है प्रज्वलित महा ।
उन्नत हो यदि एक तब जल उठता है दूसरा,
सूख गई हा ! भूमि अब शाम्य शामला उर्वरा ॥
नरकर उन्नत एक-दूसरा गतेप्राण हो,
उन्नति परकी उस द्वेपीके लिए बाण हो ।
उत्साहित तो दूर लगाते पथमें कष्टक,
हंते हैं वे मय्य नाति-उन्नति-हित बाधक ।
जलने हैं वे देगकर परिश्रान्ति अविरामको ।
नाम चाहने हैं मनो नहीं चाहने ज्ञानको ॥
तनकर यह सब द्वेषभाव एकना धार लो,
विगत ममग्र आतद्व अहमें नातिमार लो ।
नाति कुगीनि विनाशक कर्ममें प्रिय ! तुझा लो ।
सामाजिक उत्थान मार उरमें विचार लो ॥
मन्ददृष्टि बनो जगद नर महता डग्धान हो,
नाकर मनु पेरो नष्ट धर्मिन पवनरी न न दो ।

कन्हैयालाल जैन



॥ धावतीरागाय नमः ॥



THE DIGAMBAR JAIN.

नाना कलाभिविनिर्घैश्च तस्य सत्योपदेशैस्सुगविवर्णाभि ।
स योषयत्वंशमिदं प्रवर्त्तताम्, दैगम्बर जैन समानं प्राप्नुम ॥

वर्ष १२ जै

वार सन् २४४० ज्येष्ठ विक्रम सं० १९७६.

अंक ८



किसको यह जानकर शोक न होगा कि श्रीमती बम्बई दि० जन हमारा शोक । प्रातिक सभाके सुयोग्य महामन्त्र बम्बईके हीराचंद गुमानजी जन बोर्डिंग, हीरागांव, ईडर पाटगाला, चोरमद लम्बवेरी आदिके एक गृही और महामन्त्र, अहमदाबाद बोर्डिंगके सेक्रेटरी श्रीयुक्त लक्ष्मणभाई परमानन्ददास पारिख L C E का गत २ जूनको हृदयकी गति अकस्मात् रुक जानेसे स्वर्गवास हो गया । आपका जन्म बोरसद ग्राम जिला अहमदाबाद में भेवाडा जातिमें हुआ था । जातिमें आपके कुम्भारों और आपका बहुत मान था । इस समय आप बचईमें इन्कमटेक्स डिप्टी क्लर्क के पद पर थे और भारी वेतन पाते थे । आपने L C E की इजिनियरिंग की उच्च परीक्षा पास की थी और बम्बई की अच्छी योग्यता थी । आपने कुछ दिन तक इन्कमटेक्स

कलेक्टरके स्थान पर भी कार्य किया था । और कार्य निपणता और प्रमाणिततासे उद्यमान्य और लोकमान्य दोनों हो गये थे । सन् १० में आप अपने छोटे भाईको लेकर व्यापारार्थ जर्मनी भी गये थे और कुछ दिन तक वहां आपकी कोठी रही थी । वहांसे लौट कर आप रतलाम दि० जैन बोर्डिंगके मंत्री और बम्बई दि० जैन प्रातिक सभाके सहकारी महामन्त्री भी रहे । इस समय आप एक मामकी डुट्टी लेकर वायु परिवर्तनार्थ आवू चले गये थे वहांसे लौटते समय अहमदाबादके निकट डागरवा स्टेशनके पास रेलमें ही आपके प्राण पखेरू उड़ गये । पाठकों यह जान कर भी दुःख होगा कि लल्लुभाईकी वर्तमान पत्नी हमारे ज्येष्ठ सहोदर जीवनलालजीकी ज्येष्ठ पुत्री है जिसका विवाह हुए अनी केवल पांच ही मास हुए थे । कर्मोंकी लीला विचित है । जिस बातका स्वप्नमें भी भ्रम न था वह आखोंके सामने आया । आप परोपकारके कार्योंमें बहुत भाग लेते थे । जो मनुष्य इनके पास किसी कार्यके लिये आता उसका कार्य ये कर देते थे । आपके



उद्योगसे बोरसद ग्राममें अनेक सार्वजनिक कार्य हुए थे । ता० २ जूनको जोगमदका संघ कार-वार भी बन्द रहा था ।

भाई लखलुभाईदे अकामांत स्वर्गवाससे जो हानि जैन समाजकी हुई है इसकी शीघ्र पूर्ति न हो सकेगी, और जो शोक उनके कुटुंबियों पर आ पड़ा है वह लिखे नहीं लिखे जाता । आपके एक बड़े भाई और एक छोटे भाई हैं । पहिली पत्नीसे एक पुत्र और एक पुत्री भी है ।

+ + +

समयने विचित्र घलटा खाया है । लोगोंकी

बुद्धिमें भी परिवर्तन हो

सर्वत्र क्षोभ । गया है । जो वस्तु किसी

समय लोग मस्तकसे

लगाते थे आज वही पैंतोंको छूती दिखाई

पड़ती है, जिनको लोग पूज्य मानते थे

उन पर उनका पूज्य भाव नहीं रहा; जिनकी

प्रशंसा करते हुए उनका पेट फूल जाता था

उनको भी यहा तहा कहनेमें जिहा कुपित

नहीं होती । संसारमें एक प्रकारकी सम्मताकी

कुन्दमी बन रही है जो अपना घटाटोप सारे

संसार पर छाये हुए है, लोग उस सम्मताके

पैर चूमने हैं और यहां वह नहीं है उसको

लानेके लिये गमीन आसमानके कुतरे एक

द्विजे टालते हैं । उस सम्मताकी ऐसी ज्योति

है जिससे प्रकाशके साथ अन्धकार भी है, पर

सम्मताभिमानी और उस सम्मताके धामोंको

बह अवनति रूप-कुपरिगम रूप-अन्धकार

नहीं दिखाने देता । उनमें पड़कर लोग उल्टे सीधे

सब प्रकारके कार्य सम्मतासुता सम्मताके लगे

हैं । भारतवर्ष धर्म प्रमाण देन है अतः नाना

प्रकारके धर्मोंका होना भी संभव है । और

उसके साथ ही वर्ण और जाति भेदका होना

भी अनिवार्य है । पर नवीन सम्मताके अभिमा-

नियोंको यह इष्ट नहीं, अतः वे इसके दूर करने-

भेदोंके मिटानेका उद्योग किया करते हैं । अनेक

नये धर्मोंकी स्थापना हुई, धर्मोंमें परिवर्तन हुए ।

जैनधर्म और जैन समाजमें भी परिवर्तन करने-

वाले पैदा हुए । अब तक तो दिगम्बर

समाजमें ऐसे विचारवालोंकी धूम दिखाई पड़ती

थी पर अब श्वेताम्बर समाजमें भी एक २ करके

इनकी उत्पत्ति होती दिखाई पड़ रही है ।

वर्तमानमें श्वेताम्बर समाजमें पं० बहेचरदासके

भाषणोंसे क्षोभ फैला हुआ दिखाई पड़ता है ।

पंडितजीके सिद्धान्तसे देवद्रव्य कोई वस्तु ही

नहीं और जैनधर्म एवं जैन समाजमें परिवर्तन

होना चाहिए आदि ।

x x x

उदयपुर मेवाड़में गत उद्येष्ट वंदी २ से

७ तक दिल्लीके लाला

नैमित्तिक अधि- मोहनलालजीके सभापति-

वेशान । स्वर्मे भारतवर्षीय दि०

जैन महासभा और मा-

लवा प्रांतिक दिगम्बर जैन सभाके नैमित्तिक

अधिवेशन सफलताके साथ हो गये । अधिवेशनमें

न्यायाचार्य पं० भाषिकनंदजी, ब्र० शीतलप्रसाद-

जी, पं० नृपचंदजी, ब्र० कुंवर दिग्विजयसिंहजी,

पं० कस्तूरचंद गढ़ोपदेशक, पं० गोरीशालजी,

पं० नन्दनलालजी, पं० शंभूराजजी ताली,

ब्र० ज्ञानानन्दजी, बा० गुरजनलजी आदि

विद्वान और निवेद्य मुनि नन्दसागरजी, पेशक

स्वागती वत वतवत महादान आदि १२ स्वागती

श्रावक उपस्थित थे। समा में उक्त विद्वानों के सिवाय, अनेक विद्वान रायबहादुर पं० गोरी-शंकर झा और कन्हैयालाल मेहता के क्रमसे जैनधर्म के प्राचीनत्व और मनुष्य कर्तव्य पर प्रभावशाली एवं सारगर्भित भाषण हुए। उदयपुर में वैष्णव अग्रवाल बहुत हैं जो जैनियों से बहुत प्रेम रखते हैं। इस उत्सव पर भी उन्होंने सर्व प्रकारसे प्रबन्ध करने में उद्योग किया। किसी प्रकारका जैन और अजैन में मनमुटाव न था। एक दिन कुंवर महाराणा साहब भी मंडफ देखने पधारे थे। उदयपुर की सेठ मोतीचंद प्रेमचन्द दि० जैन पाठशाला के लिये अपील किये जाने पर करीब ८००० की प्राप्ति हुई। सभापति ने भी उपदेशक फंड में ४००० दिये। जेठ वदी ७ को ऐलक पन्नालालजीका केशलोच हुआ। इसी समय एक जैनसंघमी संघकी स्थापना हुई। संघपति मुनि चन्द्रसागरजी और उपसंघपति ऐलक पन्नालालजी हैं। यह उत्सव मुनि महाराज व त्यागियों व जैन अजैन के परस्पर प्रेम के कारण एक स्मारक रहेगा।

संयुक्त सभा के अधिवेशन में निम्नलिखित आशय के प्रस्ताव पास हुए:—

१-भा० दि० जैन महासभा के सभापति सर सेठ हुकमचन्दजी ने जो सभापतिके कार्यसे स्तीफा भेजा है वह अस्वीकार किया गया और कार्य करते रहनेकी प्रार्थना की गई।

२-कोटा नरेश ने जो जैन मूर्तियोंको देनेकी उद्धारता दिखाई उसके लिये धन्यवाद।

३-मालियर नरेश ने मदनगर औषधालयको

तीस रुपये मासिक सहायता प्रदान की है तदर्थ धन्यवाद दिया गया।

४-लाला जयप्रसादजीको अवतक मंत्रीका कार्य योग्यतापूर्वक करते रहनेके लिये धन्यवाद।

५-महा सभाकी नियमावली संशोधन करनेके लिये एक कमेटी बनाई जाय।

६-उदयपुरकी जैन पाठशाला दृढ़ की जाय और प्रान्तीय छात्रोंके लिये एक छात्रालय खोला जाय और प्रबन्धके लिये एक कमेटी बने।

७-दि० जैन तीर्थक्षेत्रों, मन्दिरों, पाठशालाओं विद्यालयों आदि शिक्षा संस्थाओं धर्मादा आदिके हिसाब प्रति वर्ष कार्विक शु० १५ तक महासभाके दफ्तरमें आना चाहिये। और वे संस्थाएं अपना हिसाब साफ रखें।

८-मथुराकी किसी कंपनीने अंगूठीमें बाहु-बलिकी मूर्ति बनाना शुरू किया है उसका बनाना रोका जाय।

९-तीर्थ क्षेत्र कमेटीका हिसाब सहकारी महामंत्री आडिट कराकर महासभाके दफ्तरमें आगामी अधिवेशन तक भेजें।

१०-स्वदेशी मालका व्यवहार जैन त्त्री पुरुष करें। और घनाश्व भी अपना द्रव्य भारतके कच्चे मालको पक्का बनानेमें लगावें।

११-भावनगजा बड़वानीकी प्राचीन मूर्तिके रक्षाके लिये छतरी आदि आवश्यक किया शीघ्र पूर्ण कराई जाय।

१२-महुमशुमारीमें सर्व दि० जैनी धर्मके खानेमें दिगंबर जैन और जातिके खानेमें अग्रवाल, मंडेलवाल आदि लिखावें।



१३-उदयपुर राज्यमें केशरियाजीकी प्रचन्व-
कारिणी कमेटीमें दिगम्बर जैन मेम्बरमें भी होने
चाहिए ऐसी महाराजा साहबसे प्रार्थना की जाय ।

१४-दशलाक्षण पर्वमें श्वेताम्बर पर्युपण पर्वकी
तरह, कलाल, हलवाइयोंकी भट्टियां कसाई
खटिकों आदिके हिंसाके कारवार बन्द रहें ऐसी
महाराजा साहबसे प्रार्थना की गई ।

१५-भारतवर्षीय दि. जैन संस्थाओंकी अंतरंग
जांचके लिये एक कमीशन दो वर्षके लिये
नियत किया जाय जो संस्थाओंकी व्यवस्था
और भावी सुप्रचन्वकी रिपोर्ट महासभाको दे ।
उसमें ब्र० ज्ञानानंद, बाबा भागीरथ वर्णा, पं०
बंशीधर शास्त्री, मेम्बर और बाबू सूरजमल
मंत्री नियत किये जाय ।

१६-जैनगण्ड उपदेशक विभागमें कार्तिक
कृष्ण ३० स० ७७ तक ६४००) रुपया
अधिक खर्च होनेकी संभावना है । उसके ६४
हिस्से करके उदार महाशयोंसे स्वीकार करनेकी
प्रार्थना की जाय ।

१७-साकरोडा उदयपुर रियासतमें जैन
मन्दिर बनानेकी आज्ञा अभी तक नहीं मिली
अतः यहाँक ठाकुरसाहबसे जैन मंदिर बनानेकी
आज्ञा देनेकी प्रार्थना की जाय ।

१८-सभाओंके कार्य चलावे व उपयोगी संस्था-
ओंके लिये एक जनरल फंड एकत्र किया जाय ।

श्रीयुत पं. पद्मलाल शास्त्रीवान नरामंत्री
जैन मिहान्त प्रकाशनी
हिन्दी संग्रहा जैन संस्थाका बहुत दिनसे
मासिक पत्र । यह विचार था कि उक्त
संस्थाकी ओरसे ज-
नैन विद्वानोंमें जैन धर्मके उत्तम कोटिके मिहान-

न्तोंका प्रचार करके उनके हृदयपर जैन धर्मका
प्रभाव जमानेके लिये एक हिन्दी और बंगला
भाषाका मासिक पत्र निकले । पर आर्थिक
स्थिति ठीकन होनेके कारण संस्था अब तक इस
कार्यके लिये असमर्थ रही । संस्थाका अब
पवित्र प्रेस खुला गया है परंतु कागजकी बड़ी
मंहगाईके कारण संस्थाका इतना साहस नहीं
होता है कि बिना अन्य लोगोंकी सहायताके
वह मासिक पत्र निकाल कर हजार पन्द्रह सौका
घाटा सह सके । अतः पांच छः फारमका मा-
सिक निकालनेके लिये यदि आप लोगोंसे
संस्थाको (१५००) वार्षिक सहायता कुछ दिन-
के लिये मिल जावे तो एक मासिकपत्र
सहजमें निकल सकेगा । यदि (१००) या क-
मसे कम (५०) वार्षिक देनेवाले ३० भी
धर्मात्मा निकल आवें तो यह परमोत्कृष्ट कार्य
शीघ्र प्रारम्भ हो जाय और संस्थाके मुख्य
उद्देश्यकी सिद्धि हो जाय । हम अपने पाठकों
व अन्य उदार सज्जनोंसे कहेंगे कि पंडितजीके
धर्म प्रचारके इस कार्यमें अवश्य हाथ बटावें ।

x x x

संसारभर में प्रसारनी केरिनी सेवारी तीव्र
गतिसे दौड़ा भारी रही
शुद्धतन प्रांतनां हे, भारतभर में पशु ते
कैनीश्यानी भारीने भारतवासियोंनी
शिथिलता। भार निद्राते अंग इरी
सुनी छे। भारतनी अर्थ

એક અવયવમાં કોઈ પ્રકારની અસ્વરંચતા હોય તો સર્વ શરીર દુષ્પ્રી થઈ પડે છે અને તે શરીરથી કોઈ પણ ઉત્તમ કાર્ય પૂર્ણ રીતેથી થઈ શકતું નથી, તેવી રીતે બધે જૈન સમાજ પોતાનામાં સુધારા ધર્મપચાર, શિક્ષણનો વિસ્તાર કુરીતિ બદલકાર આદિ નાના પ્રકારનાં કાર્યો કરવામાં સતત ઉદ્યોગ કરતી રહે પણ જો તેનું એક પણ અંગ આલસ્ય, શિથિલ, ઉત્સાહહીન હોય તો જૈન સમાજનું કોઈ પણ કાર્ય સફળ થઈ શકતું નથી. આ સમયમાં જૈન સમાજની ઉન્નતિને માટે યુક્ત પ્રાન્ત પંચજપ્રાન્ત, મધ્યપ્રાન્ત, દક્ષિણપ્રાન્ત આદિ સર્વ દેશોના જૈન બંધુ સતત પ્રયત્ન કરી રહ્યા છે પણ લખતાં દિલગીરી થાય છે કે મહારા ગુજરાત પ્રાન્તના જૈનીઓ ગાઢ નિદ્રામાં પડી પોતાના કર્તવ્યને ભુલી ગયા છે અને એવી સ્થિતિ ધણી દુઃખદાયક છે હમણા એક તાલે બનાવ બન્યો છે કે જ્યારે સુગમ દિગંબર જૈન પ્રાન્તિક સમાજ ૧૭ સુ' અધિવેશન ગમપંથાજી પર ભરાયું હતું ત્યારે બાઈ અમૃતલાલ વિઠ્ઠલદાસ ધામી ભાવનગરવાલા અને એચાર હોકરાઓ સિવાય એક પણ ગુજરાતી બાઈ ત્યાં આવ્યા ન હતા. જો કોઈ કહેવા માંગે કે આવી સમયથી કંઈ પણ લાભ થતો નથી તો હું કહીશ કે આ તરફારી ભૂલ ભરેલી વાત છે. આવા સમયમાં એક પણ દેશ એવો નથી કે જેણે સમા દારાજ પોતાની ઉન્નતિ ન કરી હોય. ભારતમાં પણ આ સમય જે કાંઈક ઉન્નતિના પ્રભાતની જ્યોતિષ્કાંત્ર અગ્રણ્ય છે તો તે પશ્ચિમ સમાજોનીજ દ્વારા છે. જૈન સમાજની પણ ૨૦ વર્ષ પહેલાં જેવી સ્થિતિ હતી તે વિચારતા હું કહીશ કે તેઓ કરતાં આજ અનેક ધણી તેની સારી સ્થિતિ છે આ ઉન્નતિનું કારણ શું છે ? આ પ્રશ્નનો ઉત્તર એજ છે કે સમાજ સમા કાંઈક મોટા મોટા મંડપ અને સારા સારા અલગાટ કરતા વસ્ત્રાણી નદો પણ બંધા લોકો કાંઈપણ કાર્યના માટે એકત્ર થાય તેજ સમા કહેવાય છે. જે સમા જનિ અને ધર્મની ઉન્નતિ માટે દોષ છે તે સમામાં અમેજ થવાનું તે જનિ અને તે ધર્મના અનુયાયીઓની રૂજ

છે. જે મનુષ્ય આવા કાર્યમાં સામેલ નથી થતા તે પોતાને જનિને અને ધર્મને ધોષા પહોંચાડે છે. ગુજરાત પ્રાન્તના જૈનીઓ પણ યોગ્ય સમયથી પોતાના કર્તવ્યને ભુલી ગયા છે. અને સમા દાન્દરંસ આદિમાં સામેલ થઈને જનિ અને ધર્મની ઉન્નતિના કાર્યમાં ભાગ લેવામાં પાછલ રહે છે. જે ગુજરાત પ્રાન્તનાં જૈનીઓ પોતાની રૂજ બળવવામાં પાંત, સાહસ અને તન મેન ધનથી ન લાગશે તો આ શિથિલતાનું પરિણામ ધણું નહાઈ આવવા સંભવ છે. એથી હું સાવુરોષ દિગંબર જૈન બાઈઓને કહું છું કે તમે પોતાની સ્થિતિનો વિચાર કરો, તમે જનિની દશાનો વિચાર કરો તમે પ્રાણથી પણ વડાલા પોતાના જૈનધર્મની અવનત દશાનો ખ્યાલ કરો, અને પોતાના દેશની પડતી દશાનો વિચાર કરીને અને પોતાના હૃદયપર હાથ ધરીને પૂછો કે તમારી શિથિલતા લાભદાયક છે કે નુકસાનકારક છે. જે તમને લાભદાયક માલમ પડે તો ખુશીથી તમે આદર એટીને ગાંઠ નિદ્રામાં પડી ઉદ્ધાજ કરો અને જે નુકસાનકારક માલમ પડે તો આજથીજ તમે પોતાની ભૂલનું પ્રાયશ્ચિત લઈને જનિ, ધર્મ અને દેશના કાર્યોમાં પૂર્ણ બલ અને પ્રયત્નથી ભાગ લેવા માંડો.



ચિત્તોરકી ચઢાઈયાં । લેલક-વાઘુ ગીરીશંકર લાલ અક્તર । પ્રકાશક-હિન્દી સાહિત્ય મંદાર લલનક । ૧૯૧૧ મૂલ્ય ૧૧=) પુસ્તક ઇતિહાસિક છે । હાલમાં ચિત્તોરકી ત્રીજી લઢાઈયાંકા વર્ણન છે । પહિલી લઢાઈમાં મંદારાણી પત્રિનીકા સંકલ્પ રાત્રપૂત રમણિયાંક સાથ ચિત્તોરકી મંદાર હોને તકલા વર્ણન છે ।



दूसरी लड़ाईमें महाराणी करुणावतीका अनेक राजपूत रमणियोंके साथ चिताप्रवेश और महाराजा उदयसिंहका वर्णन है। जिस समय पन्ना दासी अपने इकलौते पुत्रकी बलि देकर उदयसिंहको छिपाकर कमलमेरके किले पर ले गई थी और आशासा नामक किलेके अधिका-रीसे राणाके पालन पोषणकी प्रार्थना की थी। यह आशासा वैश्य और जेनी था। उस समय पहिले तो आशासाने बनबीरके भयसे उदयसिंहको अपने यहां आश्रय देनेसे इन्कार कर दिया परन्तु जब उसकी बूढ़ी माताने कहा कि "प्रजाका कर्तव्य है कि राजाके लिये प्रजा दुःखका सहन करे। यह तेरा राजा है तेरे जीवन और ऐश्वर्यका स्वामी है। तेरे लिये आजका दिन सुख और ऐश्वर्यकी वृद्धिका कारण होगा " तब आशासाने उदयसिंहको अपने यहां रख लिया और पाल पोषकर बड़ा किया। तीसरी लड़ाईमें, हल्दी घाटीका युद्ध, महाराणा प्रताप, शक्तिसिंहके १९ पुत्रोंकी वीरता, दिल्ली और मेवाड़के मिलापका वर्णन है। पुस्तककी भाषा छपाई आदि उत्तम है।

प्रेमोपहार—लेखक—कृष्णविहारी मिश्र
बी० ए० एल एल० बी० । प्रकाशक—हिन्दी साहित्य भंडार लखनऊ। मूल्य १) यह पुस्तक अंग्रेजी भाषाके प्रसिद्ध कवि 'टेनीसन' की 'प्लनक आर्डन' नामक कविताका गद्यात्मक स्वतंत्र अनुवाद है। लेखकने अध्यायके आदि अन्तमें हिन्दी कवियोंकी उक्तियां मनोरंजनके लिये दी हैं। यह पुस्तक प्रेम रमकी एक गल्प है। नायक नायिका आदिके नाम भी भारतीय कर दिये हैं। पुस्तक पढ़नेसे

पाश्चात्य दाम्पत्य प्रेमका एक अद्भुत दृश्य दृष्टिगोचर होता है।

तन मन और पारिस्थितियोंका नेता मनुष्य—सद्दिचार पुस्तकमालाकी ८ वीं पुस्तक। अनुवादक—बा० दयाचन्द्रजी गोयलीय बी. ए. और नाथुराम सिंघई। प्रकाशक हिन्दी साहित्य भंडार लखनऊ। मूल्य १) यह पुस्तक जेम्स एलनकी Man King of mind, Body and circumstances नामक पुस्तकका अनुवाद है। पुस्तक पढ़नेसे विचार शुद्ध होते हैं; आत्मिक बल बढ़ता है, साहस और स्वावलम्बनकी शिक्षा मिलती है।

प्रातःकाल और सायंकालके विचार—सद्दिचार पुस्तक मालाकी ९ वीं पुस्तक, अनुवादक—बाबू दयाचन्द्र गोयलीय बी ए०। प्रकाशक—हिन्दी साहित्य भंडार लखनऊ मूल्य १=) यह पुस्तक श्रीमती लिली एल द्वारा संकलित Morning and evening thoughts का अनुवाद है। इस पुस्तक पाश्चात्य विद्वान महात्मा जेम्स एलन मिश्र २ पुस्तकोंसे मासके ३१ दिनों प्रातःकाल और सायंकालके विचारों को बाँटें संग्रहीत की गई हैं। नैतिक पुस्तक है पढ़नेसे विचार विशुद्ध होते हैं।

ऊपरकी चारों पुस्तकें पाठकोंको एक न अवश्य पढ़ना चाहिए।

पद्मावती पुरचाल—द्वितीय वर्ष प्रथम अंक। संवादक—पं० गंगाधरदास व्यासतीर्थ और प्रकाशक—श्रीराजनी काठमांडू नारिक मूल्य २)। पश्चिमे यह नामिक



खुले पत्रोंमें निकलता था अब पुस्तकके आकारमें निकलता है । इसमें एक हास्यजनक और शिक्षाप्रद चित्र भी है । लेख और कविताएं उपयोगी हैं । पद्मावती परवार भाइयोंको ग्राहक बन कर अवश्य लाभ उठाना चाहिए । पत्र व्यवहारका पता—मैनेजर पद्मावती पुरवाल, महेन्द्र बोसलेन श्याम नं० ८ बाजार कलकत्ता ।

खंडेलवाल जैन—अंक ४—सम्पादक जवरचंद मेठी । खंडेलवाल जातिके लाभके इसमें कई उपयोगी लेख हैं । समय चक्रके स्तम्भमें अच्छे नोट रहने हैं । वार्षिक मूल्य १।) मंगानेका पता—मैनेजर खंडेलवाल जैन, कार्यालय गोतमपुरा (मालवा) ।

जैसवाल जैन—भाग दो अंक प्रथम । ओ० संपादक 'महेन्द्र' इस अंकमें वा. मोतीलालजी जैन एम. ए. और कृष्णगोपालजी माथुरके लेख उत्तम हैं किन्तु जैसवाल जातिके सम्बन्धके कोई लेख नहीं । जिसकी प्रत्येक अंकमें आवश्यकता है तब भी संपादकका उत्साह शून्य है । वार्षिक मूल्य १।) मंगानेका पता मैनेजर जैसवाल जैन, मानपाडा आगरा ।

जिनेश्वर पदसंग्रह—(प्रथम भाग) यह पुस्तक कुचामगनिवासी म्य० कविवर पं० जिनेश्वरदासजी पद्मावती पुरवालके ६१ पद्योंका संग्रह है । प्रकाशक—जैन मित्रमंडली ८ नं० महेन्द्र बोसलेन श्याम बाजार कलकत्ता । पंडितजीके भजन पुरानी शैलीके उत्तम हैं । मूल्य ॥) प्रकाशकसे प्राप्त ।



हो गया—श्री सद्दिद्याप्रकाशिनी जैन सभा लाइन और जैन युवक सम्मेलन सुजानगढ (मारवाड) का अधिवेशन हो गया ।

छात्रवृत्ति—मथुरा महाविद्यालयके लिये १६ छात्रोंको एक वर्षके लिये दस २ रुपयेकी सहायता उदार मज्जनों द्वारा प्राप्त हुई है । अन्य सज्जनोंको इसी प्रकार सहायता देना चाहिये ।

महावीर जयन्ति—इस वर्ष भी भिन्न २ स्थानोंपर महावीर जयन्ति मनाई गई । इन्दौरमें यह जयन्ती वैष्णव संप्रदायके आचार्य अकराचार्य करवीर मठके सभापतित्वमें मनाई गई । आपने अपने भाषणमें जैन धर्मके सम्बन्धमें बहुत अच्छे विचार प्रगट किये और जैनधर्मसे सहानुभूति दिखाई । एक अनेन धर्मचार्यद्वारा जैनियोंके प्लेटफार्म पर सभापतिके आसनसे ऐसे उद्गारोंका निकलना प्रथम ही बार है ।

हाईस्कूल—बडौत जिला मेरठका जैन मिडिल स्कूल जलाइसे हाईस्कूल हो जायगा ।

जैन कालिज—हालमें जैन सिद्धान्त भवन आराके वार्षिकोत्सवके सभापति सेठ हरप्रसादजीने आभामें एक जैन कालिजके लिये ९० हजारके नकद और एक २० हजारके मूल्यका म्यान देनेकी प्रतिज्ञा की है । आपने देज और जातिके हितार्थ ३ लाखकी लागतकी जमींदारी जिसकी १९ हजार वार्षिक आमदनी है निराल दी है ।



अधिवेशन-गत २७-२८ मईको बंबईमें सेठ हीराचंद नेमचंदके सभापतित्वमें जैन सैतवाल शिक्षण परिषदका प्रथम अधिवेशन हो गया । कई उपयोगी प्रस्ताव पास हुए ।

केवल ज्ञान जयंती-शोलापुरमें गत वैशाख सुदी १० को महावीर स्वामीकी केवल ज्ञान जयंती मनाई गई ।

तीर्थोंके मामले-सम्पेदशिखर पर्वत पर पुष्पदंतकी टोंक पर श्वेताम्बर ऐसे चरणोंकी स्थापना करना चाहते थे जिनके चारो कोनोंपर शंख, पीट्टी, कमंडल और फलकी आकृतियां अंकित थीं सो पुलिसके द्वारा स्थापना रुकवा दी गई । केस नं० २७५ पट्टा सम्बन्धी अपीलकी वृत्त पूर्ण हो गई । फैसला सुनाना बाकी है । शिखरजीकी टोंकों, धर्मशाला तथा पूजा सम्बन्धी अपीलकी सुनवाई भी शीघ्र प्रारंभ होगी । अतिशय क्षेत्र मकमी पादरंभाधके सम्बन्धमें श्वेतान्त्रियोंने दिगम्बर समाज पर दिवानी दावा किया है ।

वेदी प्रतिष्ठा-शिमलामें जैन मन्दिर की शीघ्र ही वेदी प्रतिष्ठा समारोहसे होनेवाली है वडे २ विद्वानोंको आनेके लिये निमंत्रण दिया गया है ।

जानिच्युति-नागपुरके यन्त्रवंतशाय यन्त्रवेत्तर नामक एक सैतवालने भार्दी माममें हनामन बनवा ली थीं उसपर सैतवाल पंचायतने उसको जातिमें बाहर कर दिया । इस छोटीसी बातके लिये पंचायतने ऐसा बंद देना कदापि उचित न था । नागपुरके भार्दोंका कर्तव्य है कि उसको जतिमें भित्र लें ।

तामिल पत्र-मद्रासके मि. आदिनेनार तामिल भाषामें 'धर्मशीलन' नामका उपयोगी मासिक पत्र निकालते हैं । उसमें कई तामिल जैन ग्रन्थोंका अनुवाद प्रगट हो चुका है । पत्रका वार्षिक मूल्य १) है ।

उत्तीर्ण-सागर निवासी पं० मुन्नालालमी बनारस संस्कृत कालेजकी साहित्याचार्यके प्रथम खंडकी परीक्षामें उत्तीर्ण हुए हैं ।

नागोरका भण्डार-इसमें जैन धर्मकी ८१ हजार पुस्तकें हैं । जिसमें भारतकी कई प्राचीन लिपियोंमें लिखी बहुतसी पुस्तकें हैं । परन्तु खेद है कि नौ वर्षोंसे पुस्तकोंके बेटन तक नहीं खुले । भण्डारकी रक्षा करना जैन बालक तत्काल परम कर्तव्य है । जैन समाजकी ही नहीं किन्तु भारतकी सम्पत्ति प्राचीन साहित्य ही है ।

जैन पंडितोंसे निवेदन ।

अक्षरणा, पुरुषार्थ

और

कर्तव्य ।

(ले० श्रीयुक्त कन्देयालाल जैन)

महात्मा 'वीर' महात्मा 'बुद्धदेव' महात्मा 'महम्मद' और अन्य पुरातन ऋषि, महर्षि, महा-पुरुषोंमें और हममें क्या अन्तर है ? वे क्यों हमसे उच्च बन गये ? वे क्यों आदर्श, और पूज्य हो गये ? इनका कारण यदि सूक्ष्म दृष्टिसे विचार करेंगे तो वह केवल उनका शुद्धाचरण और पौरुष ही मादृश होगा । वे शुद्धाचारी और पुरुषार्थी थे, वे कहना ही नहीं अपितु करना भी जानते थे । हम दुराचारी और आलसी हैं, साहस-हीन हैं, उत्साह-रहित हैं । निजीव-सम होकर मोह-निद्रामें सोते हुए आकाश-पातालके स्वप्न देख रहे हैं । हम सोचते हैं, यदि सहस्र व्यक्तियोंमेंसे एक व्यक्ति सोया रहेगा तो क्या हानि होगी ? कुछ भी नहीं । किन्तु यह नहीं देखते कि एक एक बूँद करके समुद्र भरता है, एक एक बूँदसे वृष्टि मूसलाधार बन जाती है; एक एक चिनगारीसे भयंकर आग बन जाती है । ये बातें हम नहीं समझते; परन्तु वे समझते थे; इसीसे हममें और उन महात्माओंमें बहुत बड़ा अन्तर पड़ गया है । इसीसे वे उन्नतिके सर्वोच्च शिखर पर चढ़ गये थे और हम अवनतिके अगाध अंधकूपमें गिर गये । हममें और उनमें जो अन्तर पड़ा है

उसका कारण शुद्धाचार है; क्यों के जितने गुण हैं सब शुद्धाचारके अन्तर्गत हैं । अतएव उनकी उन्नतिका और हमारी अवनतिका कारण मैं तो यही कहूँगा कि उनका शुद्धाचरण और हमारा दुराचरण है । जितना शुद्धाचारमें और दुराचारमें अन्तर है उतना ही उनमें और हममें है । हम अपना शील-चारित्र्य उत्तम बनायें, पौरुष करना सीखें, कार्यार्थी बनें तो मैं कहूँगा कि हमारे लिए भी उम दशको पहुँचना कुछ कठिन नहीं है । हम भी शनैः शनैः उन्नतिके शिखरकी ओर बढ़ने लगेंगे; कोई कष्ट या विपत्ति उन्नति-पथमें आकर हमें न रोक सकेगी । अभी हम डरते हैं; और सोचते हैं—अमुक कार्य सम्पादन करनेमें हमें इतनी आपदाएँ सहनी होंगी; इतने व्यक्तियोंके कटु वाक्य सहने होंगे; इतने जनोंसे बुरा बनना पड़ेगा; इतने पुरानी लक्ष्मीके फकीरोंसे कलह (वादविवाद) करना होगा; इतने निरक्षर प्राचीन ग्रन्थानुगामियोंको समझाना होगा; इतने अपद किन्तु अभिमानियोंकी धुत्कार और फटकार सहनी होगी, इतने स्थानों पर अमुक अमुक बल्लेदा उठाने होंगे । परन्तु ये भाव हमारे हृदयमें उसी समय तक हैं और हमें डराते हैं जब तक कि हम सच्चारित्र्यी बनकर अपने कर्तव्यमें नहीं लगते हैं । सच्चारित्र्यी बनकर हम किसी कार्यका या किसी सुधारका भार अपने ऊपर लेंगे तब फिर कैसा ही कष्ट और कैसी ही दुःखकी बाढ़ हमारे सामने आवे; हमारी कार्य-गतिमें बाधा टाले-हम किसीकी भी परवाह न करेंगे, हमारी कार्य-गति चाहे वह धर्मोद्धारके पथपर हो

देखकर बड़ा ही विस्मय होता है कि आज कल लोग प्रायः मकानके अंधेरे भागमें ही रहना ज्यादा पसंद करते हैं। इसका पहला कारण या तो यह है कि उनके बाप दादे ऐसा करते चले आए हैं इस लिए वे अपने बाप दादाओंकी प्रथाको त्यागना नहीं चाहते या वे स्वास्थ्य-लामके फायदे जानते ही नहीं। अतः वे ऐसी भूल करते हैं अन्यथा कोई कारण नहीं कि लोग जिस बातको बुरा समझें और फिर उसीको करें। हर्षकी बात है कि अब बहुतसे लोग स्वास्थ्य लामके नियम जानने लगे हैं और उन्हींके अनुसार चलनेका भी प्रयत्न करते हैं। प्रकाश और वायु स्वास्थ्य वृद्धिके मुख्य कारण हैं इसलिये मनुष्योंको इनका पूर्ण ध्यान रखना चाहिए।

जिस मकानमें ठंड या सील अधिक रहती है वहाँके मनुष्य अक्सर सर्दी जुखामसे पीड़ित रहते हैं। अतः ऐसे मकानमें रहना निषेध है। मकान हमेशा हवादार होना चाहिये। जिस मकानमें वायुका अच्छी तरह प्रवेश न हो, उस

तक जीवित रहा इसका कारण यही है कि मैंने अपने सारे जीवनभर अच्छा खाया पिया।

मुझे क्या खाना और पीना चाहिए ?

कब मुझे खाना और पीना चाहिए ?

ये दोनों प्रश्न बड़े ही मार्फके हैं। जो लोग वृद्धावस्थामें भी स्वस्थ सुखी और चुस्त रहना चाहते हैं उन्हें इन प्रश्नोंका उत्तर स्वयं देना चाहिए।

पहली बात जो हमें मालूम करना चाहिए, यह है कि हम क्या खाएँ और क्या न खाएँ। साधारण तौरसे बहुत ही थोड़ी चीजें हमारे खानेके लिए हैं, परन्तु स्वास्थ्य लामकी दृष्टिसे उनको भी छोड़ देना चाहिए। जो पदार्थ तालुको अच्छे लगें उन्हें कदापि न खाना चाहिए; किन्तु जो पदार्थ सात्विक हों उन्हें खाना चाहिए। लजीज और उमदा भोजन बहुत देरमें पचता है; किन्तु सामान्य भोजन बहुत जल्दी पच जाता है। इस लिए लजीज भोजनके बजाय सामान्य भोजन खाना ही अच्छा है। दूसरी बात यह है

खानेसे थोड़ा थोड़ा खाना अच्छा है । पानी भी अधिक पीनेसे नुकसान होता है । अधिक पानी पीनेसे जठराग्नि बिगड़ जाती है और अजीर्ण भी हो जाता है । इसलिए भोजन ऐसा करना चाहिए कि जिसमें अधिक व्यास न लगे ।

पोशाक—यह प्रश्न भी बड़ा ही महत्वका है । कपड़े स्वास्थ्यको अच्छा बनानेमें बड़ी मदद देते हैं । गर्मी, बरसात, जाड़ा की बाधाको दूर करते हैं और शरीरको सुख देते हैं । इसलिए कपड़ोंकी ओर पूरा २ ध्यान देना चाहिए । कपड़े समयानुकूल पहिनना चाहिए । इससे स्वास्थ्य पर बड़ा भारी प्रभाव पड़ता है । वैद्यक ग्रन्थोंमें भी ऋतुचर्या वर्णनमें कपड़ोंका वर्णन दिया है कि किस मौसिममें कैसा कपड़ा पहिनना चाहिए । जिन लोगोंको स्वास्थ्य-अच्छा रखनेकी इच्छा है उन्हें चाहिए कि वे वैद्यकके अष्टांग हृदय जैसी पुस्तकोंका अवलोकन करें । आज कल लोग फैशनके इतने गुलाम हैं कि उन्हें स्वास्थ्यकी कुछ भी परवा नहीं । उनके जान चाहे स्वास्थ्य रहे या जाए परन्तु वे फैशनको नहीं छोड़ेंगे । इसी फैशनके कारण सैकड़ों मनुष्योंने स्वास्थ्यसे हाथ धो डाला है । अतः जिन्हें स्वास्थ्यसे प्रेम है उन्हें चाहिए कि वे फैशनपर न मर कर स्वास्थ्यकी ओर ध्यान दें । कुछ बिगड़ा हुआ स्वास्थ्य तो ठीक हो सकता है परन्तु बिल्कुल बिगड़ा हुआ स्वास्थ्य फिर ठीक नहीं होनेका । कपड़ेके प्रयोगमें एक बातका और ध्यान रखना चाहिए और वह यह कि न कपड़ा अधिक ढीला हो और न अधिक गाढ़ा ; किंतु शरीरसे मिला हुआ हो । ऐसा कपड़ा पहिननेसे स्वास्थ्यको बड़ा लाभ पहुंचता है ।

तुम्हीं पर मूंड मूंडाई है ।

(लेखक—मास्टर दीपचंद परवार)

किसी दिन एक चौबेजी प्रातःकाल शारीरिक नित्य क्रियासे निश्चिन्त हो तोंद पर हाथ धरे उदर देवकी अर्चा सामग्री प्राप्त करनेकी चिन्तामें जा रहे थे, कि भाग्यवशात् किसी गृहस्थने उन्हें प्रणाम किया, वस उस गृहस्थका प्रणाम करना था, कि चौबेजी आशीर्वाद देते हुए “ चिरंजीव यजमान”, उसीके घर पर जा अड़े और लगे ईश्वरको घन्यवाद देने “ जय हो गोपाल लाल श्रीकृष्ण कहैयाकी”, कि जिसने चिन्ता करते ही दाता भेज दिया । यजमान प्रसन्न रहो, आज हमारा भोजन तुम्हारे ही यहां होगा । श्री ठाकुरजीका भोग आज भाग्यसे तुम्हारे ही हिस्सेमें आया । अच्छा भाग्यवान, आज तो भोगके लिये मोहन खीर और हलुवा आदि मिष्ठान्न बना लेना । मेरा तो सरल स्वभाव है, ढेरने बुलानेकी अधिक अड़चन न करना । मैं आप ही समय पर आ जाऊंगा । इत्यादि ।

वह सदगृहस्थ चौबेजीकी बातें सुनकर बड़ा चक्करमें पड़ा कि यह क्या आफत आ पड़ी ? क्या प्रणाम करना ही पाप है ? या प्रणाम करनेका यह प्रायश्चित्त (दण्ड) भोगना पड़ता है ? इससे अच्छा था, कि मैं प्रणाम ही न करता । अस्तु जो हुआ तो ठीक है अब यह बला कैसे छले ? बहुतसे सोचनेके अनन्तर बोला, महाराज यह क्या प्रणामका फल है ? मैंने तो आपको निमंत्रण ही नहीं दिया, तब कहाँका भोजन और कहाँका ढेरना बुलाना ।

देखकर बड़ा ही विस्मय होता है कि आज कल लोग प्रायः मकानके अंदरे भागमें ही रहना ज्यादा पसंद करते हैं। इसका पहला कारण या तो यह है कि उनके बाप दादे ऐसा करते चले आए हैं इस लिए वे अपने बाप दादाओंकी प्रथाको त्यागना नहीं चाहते या वे स्वास्थ्य-लाभके फायदे जानते ही नहीं। अतः वे ऐसी मूल करते हैं अन्यथा कोई कारण नहीं कि लोग जिस बातको बुरा समझें और फिर उसीको करें। हर्षकी बात है कि अब बहुतसे लोग स्वास्थ्य लाभके नियम जानने लगे हैं और उन्हींके अनुसार चलनेका भी प्रयत्न करते हैं। प्रकाश और वायु स्वास्थ्य वृद्धिके मुख्य कारण हैं इसलिये मनुष्योंको इनका पूर्ण ध्यान रखना चाहिए।

जिस मकानमें ठंड या सील अधिक रहती है वहांके मनुष्य अक्सर सर्दी जुकामसे पीड़ित रहते हैं। अतः ऐसे मकानमें रहना निषेध है। मकान हमेशा हवादार होना चाहिये। जिस मकानमें वायुका अच्छी तरह प्रवेश न हो, उस मकानमें कभी पर भी न रहना चाहिए। वायुकी कमीके कारण अनेक रोग होते हैं। इसलिये मकानमें वायु और रोशनीका पूर्ण प्रवेश रखना चाहिए। सोते समय कभी सिड़कियां बन्द करके सोना चाहिए कारण कि इससे तानी हवाकी गति रुक जाती है।

भोजन और पानी—यदि हम इन दोनों चीजोंको नियमभार करें तो कुछ भी आरुक्ति नहीं। एक बार एक जगह पर ठाकुरने कहा कि मैं जो ७० वर्षों से जी रहा हूँ, उसका

तक जीवित रहा इसका कारण यही है कि मैंने अपने सारे जीवनभर अच्छा खाया पिया।

मुझे क्या खाना और पीना चाहिए ?

कब मुझे खाना और पीना चाहिए ?

ये दोनों प्रश्न बड़े ही मार्के हैं। जो लोग वृद्धावस्थामें भी स्वस्थ सुखी और सुस्त रहना चाहते हैं उन्हें इन प्रश्नोंका उत्तर स्वयं देना चाहिए।

पहली बात जो हमें मालूम करना चाहिए, यह है कि हम क्या खाएँ और क्या न खाएँ ? साधारण तौरसे बहुत ही थोड़ी चीजें हमारे खानेके लिए हैं, परन्तु स्वास्थ्य लाभकी दृष्टिसे उनको भी छोड़ देना चाहिए। जो पदार्थ तालुको अच्छे लगे उन्हें कदापि न खाना चाहिए; किन्तु जो पदार्थ सार्विक हों उन्हें खाना चाहिए। लजीज और उमदा भोजन बहुत देरमें पचता है; किन्तु सामान्य भोजन बहुत जल्दी पच जाता है। इस लिए लजीज भोजनके बजाय सामान्य भोजन खाना ही अच्छा है। दूसरी बात यह है कि भोजनका समय नियत होना चाहिए और उस नियत समय पर ही खाना चाहिए। ऐसा करनेसे भोजनको पचनेका समय मिल जाता है। परन्तु इसका खयाल न करके बार बार खा लेना ठीक नहीं। बहुतसे ऐसा करते हैं कि थोड़ा थोड़ा खानेकी बजाय एकबारमें कई बारका भोजन खा जाते हैं। इससे बड़ी भारी हानि होती है। वह यह कि खाना जल्दी दहन नहीं होता और घुमरे में धारि और अनियमित हो जाता है। अतः एकबार एक



प्रकार यहीं होगी। ऐसी हसी तो तुम लोग हसा ही करते हो, अस्तु इसी खुशीसे रहना ही अच्छा है, उदासीन रहना गृहस्थोंको उचित ही नहीं है, जो उदास रहते हैं वे तो रामे चलते फिरते चैतन्य तानिया है । मैं समझ गया तुम्हारी इच्छा है कि धूप हो गई है इस लिये भोजन करके ही जाना सो ठीक है । तुम दयावान हो, दूसरोंके सुख दुःखको समझ सकते हो । बहुत ठीक—मैं अब भोजन करके जाऊंगा, लडके बच्चोंको सदेश लगाये देता हूँ । ओर भैया शोधधन, घर पर जाओ तो लडकनसे कह देना जल्दी आवें, यहा सब तैयारी है ।

सदगृहस्थ—नहीं महाराज, घर जाइये हमारी इमामर्ये नहीं है ।

चौबे—ठीक है, तुम बड़े विनयवान हो कहा है—

बड़े बड़ाई न करें, बड़ न बालें बाल ।

रहा मुझसे न कह, बड़ा हमारा माल ॥

अहा ! तुम ऐसीको यही कहना उचित है परन्तु हम जानते हैं । भैया तुम सामर्थवान हो, तुम्हीं जैसे लोगों पर तो हमने भूड मुडाई है ।

सदगृहस्थ—यह क्या कहते हो महाराज, भूड मुडाओ अपने माता पिता बड़े बूढ़ोंपर, मुझ

पर क्यों ?

चौबे—वारा जो खानेको देवे वही माई बाप, सो हमारे तो माई बाप तुम्हीं हो, तुम्हीं अब दाता हो । अच्छा पिताजी, अब तो भूल लगी है, तुम दो तो दो नहीं तो हम घरमें धुस कर माईजीसे लेकर खायोग, चाहे अच्छी तरह खिलाओ चाहे बुरी तरह परन्तु खिलाता ही रहेगा—सुीधे दो नहीं तो टेढ़े लेंगे, हमारा तो

रक है । तुम्हारे जैवा साहू छोडकर और कहा जाय ?

सदगृहस्थ—महाराज, घर जाओ और कहाँ जाओगे ।

चौबे—यजमान, मो तो हम घर ही में बैठे हैं कीन जगलमें बैठे हैं । महा खाई हो, वहीं रहें सो ।

सदगृहस्थ—महाराज, वह घर जहा चौबाहनजी रहती है ।

चौबे—सो तो चिंता ही क्या ? वे भी यहीं आ नावेंगी, बच्चे भी आ जावेंगे, धन्य हो यजमान बड़े सज्जन हो । दयालु हो तो ऐसा हो, क्योंकि तुमने सोचा कि अकेली चौबाहन और पतोह क्यों रह जाय ? वे भी यहीं बना बनाया जीम लेंगी । सो ऐसा ही होगा, उन्हें भी बुलये लेता हूँ । जा रे बडू, अपनी माको बुला ला, जा बेटा जल्दी आना, भन्ना ।

सदगृहस्थ—महाराजजी, इस प्रकार किसी के घर बलात्कार घना धरकर आप जैसे हट पुष्ट पुरुषोंको कदापि उचित नहीं है किन्तु आपको चाहिये कि परिश्रम करकेही भोजन किया करें ।

चौबे सत्य है यजमान, मैं नित्यही परिश्रम करके भोजन करता हूँ, प्रातः काल उठकर घुनै रमणियोंके नायक गोपालजीका नाम लेकर भोजनकी चिंता करता हूँ, शीघ्र जाता हूँ, दन्त-धावन करता हूँ, नहाता हूँ, दंड पेलता हूँ, इधर उधर फिरकर यजमान को दृढ़ लेता हूँ फिर उसके द्वारा प्रातः हुआ भोजन पेट पर हाथ फेर फेर कर आनन्दसे धीरे १ खाता हूँ जग



चौबेजी—यजमान धरारो नहीं, मेरा कुछ बहुत खर्चे नहीं है, मेरा एक शिष्य और दो बालक हैं केवल वे ही साथ आवेंगे; रही चौबाइनजी सो न हो सके तो उनके लिये सासु बहु दोनेंके मितना सीधा सामान भेज देना, परन्तु जल्दी करना, क्योंकि धूप पड़नेसे गर्मी चढ़ जाया करती है ।

सदगृहस्थ—महाराम, मैंने तो किसी का भी न्योता नहीं किया न सीधा ही देनेको कहा है ।

चौबे—यजमान, चिता नहीं; यह सब घरकी बात है । गैरों को न्योता देने व मनानेकी आवश्यकता होती है । तुमतो बना लेना और तुमसे न घने तो हलवाईके यहांकी ही सही उसीमें संतोष करेंगे । हम लोग जैसा समय देवते हैं वैसे ही कर लेते हैं । रही नक्द दक्षिणाकी बात सो औरोंकी और बात है, तुमसे थोड़ीही में (कमसे कम पांच रु. में ही) समझ जायेंगे ।

सदगृहस्थ—महाराम, यह क्या कह रहे हैं ? किसमें कह रहे हैं ? मेरी शक्ति नहीं है कि आपको न्योता दूं ।

चौबेजी—यजमान, ऐसा नहीं विचारना चाहिए । तुम बड़े सज्जन धर्मात्मा हो, आगेका विचार आन क्यों करना ! आनेके न्योनेकी बिना करो, देना होती है, मैं नरा विनिया ले आऊँ ।

सदगृहस्थ—अभी गले क्यों पड़ने दो, मैंने न्योता नहीं किया ।

चौबे—यजमान नूनो, हम चिपचपी सब वगैरोंमें भ्रष्ट हैं सो गये क्यों पड़ने लगे ? हम तो प्रति जन्ते हैं और उत्तमसे उत्तम भोगन करने

हैं । गले पड़े, क्षत्री, पीठ पड़े वैश्य और पंर पड़े शूद्र, हम तो सिर चढ़ेंगे ।

सदगृहस्थ—महाराम, क्या बलात्कार सिर चढ़ेंगे, जब कोई चढ़ावे ही नहीं तब ?

चौबे—यजमान यह कलयुग है, इसमें यही नीति है कि “भान न मान मैं तेरा महमान” । सो क्या हम इस नीतिको छोड़कर पापी बनें, राम राम—छिः छिः यह तो न होगा । भला जब हम ही नीतिको छोड़ दें तो तुम लोग तो छोड़ोगे ही । सो भाई आजकल चाहे कोई सिर न भी चढ़ावे, तो भी अपन तो चढ़ बैठें; नहीं तो भला यह गृहस्थीका खर्चा कहाँसे पूरा पड़े । इस कलिकालमें कौन ऐसा मुखे है ? जो ठाड़े बैठे बोझा उठा ले । यहां तो यह नित्यका धंधा है । अच्छा अब जाओ तैयारी करौ पित तीक्ष्ण है ।

सदगृहस्थ—महाराम यह न होगा, आप कहीं और देखिये, नहीं तो जन्मानमें मुंह धो आये ।

चौबे—अरे मुखे, चौबाइनसे मैंने नल पानको मांगा था सो वे बोलीं—कहीं अंत देव्यो, सो मैं आज्ञा शिरोधार्य करके तो नेरे यहां आया, अब क्या जाऊँ ? नृ नाहक दंका करता है कि मैंने दाध मुंह नहीं धोया । मैं तो प्रातःकालही चौबादि किया कर आया हूं, नेरे पर नहीं करूंगा और मुंदकी कौन कहे सब अंग धो आया (नहा आया) हूं । अब तो भोग ही लगाना है । सो नरुं तेरे यहां तैयार हुआ कि बस ।

सदगृहस्थ—महाराम क्या कर आप नाश्ये । यहां आपकी इच्छाकी पूर्ति नहीं होनेकी

चौबेजी—क्या क्या ? इच्छाकी पूर्ति कहे



જૈન સામાજિક સુધારણા.

લેખક: મોતીલાલ ત્રીકમદાસ આલચી ઝાડરોલ

(અંક ૭ થી ચાલુ)

તેવીજ રીતે ભારતવર્ષની અન્ય કોમોમાં વિધવાઓનું પ્રમાણ મટનું નામ છે. ત્યારે અમારા જૈન સમાજમાં તેનું પ્રમાણ દિન પ્રતિદિન વધતું જાય છે. સને ૧૯૧૧ ની હેક્લી વરતી ગણતરી પ્રમાણે જાણીતી કુલ વરતી ૧૨૪૮૧૪૮ મનુષ્યની ગણવામાં આવી હતી, તે પૈકી ૬૦૪૬૨૯ સ્ત્રીઓમાં ૧૫૩૨૯૭ અર્થાત્ પ્રતિ સેંકડે ૫૬૬ સ્ત્રીઓ જૈન સમાજમાં વિધવા હતી. હાલમાં સન ૧૯૯૨ માં ૧૧૬૬ સન ૧૯૦૧ માં ૧ સન ૧૯૧૧ માં ૧૦૬૬ પ્રતિ સેંકડે વિધવા સ્ત્રીઓ હતી. હસાધોમાં સન ૧૯૯૧ માં ૨૬૬ સન ૧૯૦૧ માં ૧૨૬૬ તથા સન ૧૯૧૧ માં ૧૧૬૬ પ્રતિ સેંકડે વિધવા સ્ત્રીઓ હતી. પાસિઓમાં સન ૧૯૯૧ માં ૧૩૬૬ સન ૧૯૦૧ માં ૧૪૬૬ સન ૧૯૧૧ માં ૧૩૬૬ પ્રતિ સેંકડે વિધવા સ્ત્રીઓ હતી. મુસલમાનોમાં સન ૧૯૯૧ માં ૧૫ સન ૧૯૦૧ માં ૧૫૬૬ તથા સન ૧૯૧૧ માં ૧૪૬૬ પ્રતિ સેંકડે વિધવા સ્ત્રીઓ હતી. શિખોમાં સન ૧૯૯૧ માં ૧૫ સન ૧૯૦૧ માં ૧૩૬૬ તથા સન ૧૯૧૧ માં પ્રતિ સેંકડે ૧૫ સ્ત્રીઓ વિધવા હતી, હિંદુઓમાં સન ૧૯૯૧ માં ૧૭ સન ૧૯૦૧ માં ૧૯૬૬ અને સને ૧૯૧૧ માં ૧૯૬૬ પ્રતિ સેંકડે વિધવા સ્ત્રીઓ હતી. ઉપર પ્રમાણે લાખો અને કરોડોની સંખ્યા ધરાવતી અન્ય કોમોમાં જ્યારે વિધવાઓનું પ્રમાણ હવું ત્યારે અમારા જૈન સમાજની બાર અને તેર લાખની અંદાજ સંખ્યા ધરાવતી જૈનકોમમાં તેની સંખ્યા સન ૧૯૯૧માં ૧૩૬૬ સન ૧૯૦૧માં ૨૩૬૬ તથા સન ૧૯૧૧માં ૨૫૬૬ પ્રતિ સેંકડે વિધવા સ્ત્રીઓની સંખ્યા હતી. સન ૧૯૧૧ની સાલમાં જે વિધવાઓની સંખ્યાનું પ્રમાણ મટનું તેમાં કેવળ ૨૦ થી ૪૦

વર્ષ સુધીની ઉંમરની વિધવા સ્ત્રીઓની સંખ્યા ગણવામાં આવે તો જણાઈ આવે છે કે ૨૦ થી ૪૦ વર્ષ સુધીની ૨૦૪૭૦૫ સ્ત્રીઓમાંથી ૪૮૪૬૬ અર્થાત્ ૨૩૬૬ પ્રતિ સેંકડે વિધવા સ્ત્રીઓ હતી, પાંચને દશ વર્ષની વિધવાનો પણ તેમાં સમાવેશ થાય છે.

મહાશયો ! ઉપર જણાવેલા બાળકો, કન્યાઓ, કન્યાવિદ્ય, શુદ્ધ વિવાહ આદિ અનિષ્કારક રિવાજ અમારા જૈનસમાજના જીવનનું રક્તપી અમારા સ્વાસ્થ્યનો નાશ કરી બાળક અને બાળકીઓના વિવાહ (લગ્ન-દંપત્તિપ્રેમ) અને ચારિત્ર્યપર માઠી અસર કરી દિન પ્રતિદિન અધોગતિને પ્રાપ્ત કરી રહ્યા છે. તેનું મુળ કારણ અમારી જાતીની સંકુચિત મર્યાદા (દરેક જાતીની અંદર અંદર એકજ કોમમાં સમુદ અને પેટા સમુદ અને તેને નિભાવી રાખનાર મિથ્યાભિમાની જાતિના સ્વાર્થ દૃષ્ટિના અગ્રેસર શેડીયાઓ) છે. કેમકે જમાનાને અનુસરી સામાજિક-સુધારો કરવામાં તે આડખીલારૂપ છે. કે જે તડ વા પેટાતડ અને સમુદને લીધે તેમજ રથજાતરને લીધે વીસા વીસા સાથે ને દશા દશા સાથે એકજ કોમના હોવા છતાં તડ વા સામાતાડને લીધે એક ખીજાને કન્યા પણ આપી શકતા નથી, તેમ સાથે એસી જમતા પણ નથી, એ ખરેખર રોચનિય છે ! જેમ કન્યા વ્યવહારની મર્યાદા હુડી કરીયે તેમ કન્યાની બાઈ પડે છે. જેથી થોડા કન્યાકે વર મેળવવામાં આડચણ પડે છે, જેથી પરિણામે કન્યાઓ થાય છે, પૈસા આપીને (કન્યા વિક્રયની) કન્યા ખરીદવી પડે છે, જેથી ગણિના સાધારણ તેમજ ગરીબ સ્થિતિવાળાને કન્યા ખીસકુંડ અળી શકતી નથી. જેથી છેવટે ધરો ધરના ટંટા શીસાદ વડે સમુદના સમુદ અને તડગાતડ અને પેટાતડ પડે છે. તે એક સુધી કે તે એક ખીજાની કન્યા વ્યવહાર ને ખાવાપીવા નો વ્યવહાર પણ તેડી નાંખે છે. માં દિકરી અને કન્યા બાઈઓ પણ હુડે



નહિ તો ખીચું શું ? આપણે કોમ સમાજ યા
દેશમાં સંપ અને એકતા કરવાની વાતો કરીયે
છીએ, પણ લોકો તો તેથી હલકું વલણ પકડે
છે કેટલાક પોતપોતાનાં તંડે યા સમુદ સંધારવા
મથા કરે છે તે એવા વિચારથી કે અમુક તંડ
યા સમુદ સંધારશે તો આખી જાતિ સમાજ યા
દેશ સંધારશે, પણ આ સંકલિત મર્પદાનું કાર્ય
ધારેલી નેમ પાર પાડી શકશે નહિ, એથી સર્વત્ર
પણે ભ્રાતૃભાવ પ્રગટ થવાને જાહેર પોતાના તંડ
યા સમુદને મદદ કરવાનું યા પોપવાનું વલણ
પકડશે; એથી ભારતવર્ષ એ મારો દેશ છે સમગ્ર
હિંદી પ્રજા એ એક છે, તેના વાત્તાની જૈન
કોમ એ એક વ્યક્તિ છે, તેના મુખ દુઃખમાં
ભાગ લેવા હું બંધાયેલો છું, તેની ઉન્નતિ કરવી
એ મારું કર્તવ્ય છે, આના વિચાર ભાગ્યેજ
દુઃખની શકશે.

ઉપર બંધાવી ગયા પ્રભાણે મિથ્યા કૃતાભિમાને

આ જાતમાં કોઈ વ્યવહાર પગલા બરો કે
માત્ર બપોળાં આનીને ટગર ટગર જોયા કરશે !
અમારા આચાર્યો, ધર્મગુરુ બદારકોને આ જાત
તની કંઈ પડી નથી, ત્યારે આ માણી અને
બધંકર સ્થિતી શું આપોઆપ સંધારી જશે !
કે પછી દિવસે દિવસે તેથી પણ વધુને વધુ
ખરામ તેમજ અધમ સ્થિતીમાં આવી પડીશું ?
આ એક ગંભીર સવાલ છે. માટે જ્યાં સુધી
દરેક કોમ યા સમાજમાં સ્વાર્થત્યાગી અને
આત્મભોગી વીરનરો પેદા થશે નહિ ત્યાં યુધી
આપણી આ અવનતિ કાયમ રહેવાની, અને
દિન પ્રતિદિન તેથી પણ વધારે ને વધારે ને વધારે
અધોગતિએ પહોંચવાના એ નક્કી સમજવું.

પ્રિય બંધુઓ ! મારે ફરી ફરીને આપને
યાદ દેવડાવવું પડે છે કે ઉપર જણાવેલાં કરણો
પેટી તડ પેટાવડ અને સમુદ અને પેટા સમુદ
કરી આપણી દરેક જૈન જાતિઓની સ્થિતિ ઊભી



તેને જીંદગી પર્યંત માતિ બહિષ્કારની શિક્ષા થાય છે. હાલમાં માતિયો જેવી રીતે જીવંત છે તેવી પ્રાચીન કાળમાં હતી તેવું કોઇ પુરાણક સાહિત્ય કહી શકે તેમ નથી સાંપ્રતકાળમાં ભારત વર્ષની બીજી કોમો દિન પ્રતિદિન આગળ વધતી જાય છે ત્યારે અમારી જૈન કોમ દીન પ્રતિદીન પછાત પડતી જાય છે. અધુનિક જૈન કોમ અને સમાજ પોતાનું જીવન કેવી રીતે હટાવી રહેલ છે તે નીચેની હકીકત પરથી સમજી શકીએ.

ઉપર જણાવ્યા પ્રમાણે તક પેટાતક અને સમુદ્ધ અને પેટા સમુદાયો છોડી છોડી જોઈને પરજીવવાની (લગ્નની) હદ તદન ટુંકી થઈ ગઈ છે. જેથી કેળવણી, વર્ગ, લાયકાત, સ્થાવિ વગેરે કોઈ પણ જોવામાં આવતું નથી, મન વગરનાં અને ના પસંદગીનાં ફરજિયાત લગ્નો થાય છે; જેથી લાયક કન્યાને યોગ્ય વર મળતો નથી તેમ લાયક વરને યોગ્ય કન્યા મળતી નથી, જેથી પરિણામે અંધારિ પ્રેમ અને અભિવ્યક્ત નાશ થતાની સાથે કેટલોક દેહવાયેલા વર્ગ ટુંકારી જીંદગી ગાળી નિર્વંશ થતા જોવામાં આવે છે, બીજી તરફથી કન્યાવિક્રમને વૃદ્ધલગ્નના હિમાયતીયો બાળલગ્નના રિવાજને સુરતપણે વળગી રહી બાળવિધવાના પ્રમાણમાં વધારો કરી રહ્યા છે, વગેરે અનેક કારણો માણસાદની સ્વતંત્રતા પર તરોપ મારે છે. પરદેશમગ્ન કરવાનો સખત બદોબસત હોવાથી વિદ્યા, કલાને હુમલો મેળવવાનાં કારણો અંધ થાય છે, માતિના આગેવાન યુદ્ધિથી પણ સમજ ન થાય તેવા કાયદા બાંધે છે, વળી આ કાયદામાં ફેરફાર કરવાનો હક કાયદા પાળનારને પણ નથી વગેરે અનેક ગેરકાયદા છે તે આ રમણે રમણસંકાયથી આપી શકે નથી.

બાળ્યમાં જીવંત માતિ બંધન તોડી માતિજોની રહ બીજાકુલ આગેવાનો જવા માગતો નથી તેમ માતિજોના ઝગડાઓમાં જીવંત મારવાને ચાલતો રહેલો તો રમણ છે કે માતિજોની

અંદર અસુક ઝગડાનાં કારણ નહીં હોય છે છતાં તે કેટલીક વખતે માતિની અસુક વ્યક્તિના ફરાયદને લીધે માતિમાં ચાલતા આવેલા શોધક હક વરીકે આગેવાનોના જુદાકો દોર કેળવણીથી બે તસીખ રહેલી માતિની અસુક વ્યક્તિ આગળ અસ-લની માફક પુરસ્કેલથી ચાલતો જોવામાં આવે છે. છતાં આધુનિક કેળવાયેલા વર્ગ ચાલતા આવેલા રિવાજોમાં માતિ હિતને સમાજ હિતને ખાતર જમાનાં અનુસરતો ફેરફાર કરવાને મુદ્દન કરે અને ધણી વખતથી ચાલતા આવેલા શોધક હક અને આગેવાનોના જુદાકો દોર આગળ પોતાનું દોર નમાવવા ના પાડે તો ઉપર જણાવેલા જુદા વિચારના જુદાકો દોર અલગનારે વર્ગ અંબરીર રૂપ પકડી તે કેળવાયેલા વર્ગને માતિ બહિષ્કાર વગેરેની શિક્ષા કરવાને પણ સુખતા નથી. પણ હવે દરેક માતિના શેઠીઆઓ અને આગેવાનોએ સમજવાનું છે કે હવે આ વાતમાં સદામાં જમાનો બદલાયેલો છે, સ્વતંત્રતા સૌ કોઈને, વડાલી છે, તેમ કોઈકો પોતાનો હક શું છે તે સમજતા થયા છે, અને રાજદારી વિષયોની માફક સામાજિક બોમ્બોમાં પણ તે પોતાના હક લોગવવાને લાયક થયા છે તો અમે આજ રાખીયે છીએ કે દરેક માતિના કેળવાયેલા તેમજ પ્રમાણિક અને કાર્ય-દક્ષ પુરોહીની કમીટી નીમી માતિમાં થતો પક્ષપાત અને અન્યાય તેમજ કોલાહલ દૂર કરી સાર્વજનિક હિત તરફ દૃષ્ટિ કરી પોતાની પ્રતિષ્ઠા જાળવશે તેમ નહિ કરતાં ફરાયદ અને હક પકડી પોતાની સત્તાના તોરમાં નમ્યું નહિ આપે તો કહેવાની જરૂર નથી કે હાલના કેળવાયેલા વર્ગ અન્યાય અને અપ જુદી સત્તાનો દોર તોડવાને યોગ્ય સંસ્થાનો ઉપયોગ કર્યા સિવાય રહેશે નહિ.

પ્રિય મહાશય ! હવે આ વિષય પર વધુ વિવેચન કરવાની જરૂર નથી, તો ઉપર જણાવેલાં કારણથી આપણી કોમ આપણી સમાજ આપણે ધર્મ અને દેશ અધોગતિએ પહોંચતો જાય છે એમાં તો સંશય નહિ. ભૂતકાલની મહત્તામાં અભિમાન આપી રહ્યા છીએ.



દેશની ઉન્નતિ, બેઠાં હાથ આપણે આમજ બેસી રહીશું ? શું આપણા હાથમાં કોઇ ઉપાયજ રહેશે નથી ? શું આપણી બુદ્ધિનો વિનાશ થશે ? આવી ચિંતા કરી બધા કરીશું ? ના નાતમ રી સ્થિતિનો અભ્યાસ કરો ! એને અન્ય દેશની જાહેજલાલી અને ઉન્નતિનાં કારણો તપાસી તમારી ગતિ અને સમાજહિતને ખાતર નીચેતું પદ ધ્યાનમાં રાખી સ્વાર્થનો ત્યાગ કરી ઉત્તમ કાર્યમાં કર્તવ્ય પરાયણ થવાને સોગન લેો.

સાંભળિ બુદ્ધિરિનાં કહેલાં નીચે મુજબ ન નિ-
મ્ન તથા શીયુત આદ્યો કુવચ્છ વિકૃત્તભાવ
મહેતમુ નીતિ પદ હૃદયમાં ફેરતરી રાખી ગતિ
અને સમાજ હિતને ખાતર દરેક ગતિની અંદર
સ્વાર્થમાં અંત બનેલા નરાધમોની તરફથી નિંદા,
અપમાન, અપયસ તેમજ એકેકે અતરાયો આવે
તો તેની પણ દરકાર રાખ્યા સિવાય પોતાનું કર્ત-
વ્ય સમજીને કર્તવ્યપરાયણ થાઓ, સોગન લેઓ
અને સાંભળિ બુદ્ધિરિના કહેવા મુજબ—

પ્રારમ્ભે ન જહુ વિદ્ય મયેન નીચે:

પ્રારમ્ભ વિદ્યવિહિતા વિરમંતિ મઘવા: ।

વિદ્યે પુન: પુનરપિ પ્રતિહન્યમાના:

પ્રારમ્ભમુત્તમ: જના ન પરિચ્યંતિ ॥ ૧ ॥

આવાર્થ—જિના બધા અધમ પુરો કર્મનો
આરંભજ કરતા નથી, અને અધમ પુર કર્મનો
પ્રારંભ તો કરે છેજ પણ અતિ વિન આપતાં
તે કર્મ પછું મુકી દે. પણ ઉત્તમ પુરો તો
વિધોયા પાદવાર હણવા છતાં પણ નાચીપાત
ન થતાં—

નિન્દન્તુ નીતિ નિરુણ યદિવા દુરુન્દન્તુ

છર્મી સમાવિદાનુ મંદજ્ઞ વા વયંમુન્ ।

અયેવ વા મરગમન્તુ પુગન્તેર વા

ન્યામાનુ વપ: પ્રવિજ્ઞંતિ પદં ન પીરા: ॥૨॥

આવાર્થ—નીતિ નિરુણ પુર નિંદા કરો

પણ આલો નાંચો, સુધુ આજે થાઓ કે એક
પુગ પછીથી થાઓ, તો પણ ધીર પુરો ન્યાપને
માગેથી એક પગલું પણ પાછા હસતા નથી.

મુજબ—કંવાલી.

અમારી ગતિના માટે ધરી કદની અમે અમે
બધી છોડી દેવે મેળે ધરી કદની અમે અમે.
અમારી સુખ સંપત્તિ દીધી જહાનમ મહી ફેધી
દેવે લગની લગી ગતિ ધરી કદની અમે અમે
છવાયાં છાદ પડ કાળાં અમરાં અંતરે બેઠી
ખરો હૃદયે તે કરવા ધરી કદની અમે અમે.
સદાયે બેસવાં હતાં અમારી ગતિની મહી
અમકવા ચોદિશા માંડી ધરી કદની અમે અમે.
નથી નિંદાયાં કરવાના નથી કંઈ માનની પરવા
અમારે તો સદુ સરણું ધરી કદની અમે અમે.
રહી છે અંતરે આશા અમારી ગતિનાં શ્રેયે,
મહેન્દા પૂર્ણ એ કરવા ધરી કદની અમે અમે.

ઉપર મુજબ જૈન કોમ અને જૈનસમાજની
ઉન્નતિને માટે જૈનભક્તિ યા સમાજનો ગમે તે
મહુધ્ય ગમેતેવી દુ:ખી હાલતમાં હોય તો તેના
પ્રત્યે તમારી હદાર ટકિને જવાબદારીની દ્રષ્ટિ
સમજ સવલા એકજ વીર બગવાનના પુત્રો છીએ
એવી રીત અરા જિગર અને ખારની સામક્ષીથી
બેઠી તેમની ઉન્નતિને પધાવકાસ સદાય તેમજ
આત્મભોગ આપી સમાજ પ્રેમ અને પ્રજા
પ્રીતિ પ્રેરેતો નહીં તો પછી આપણી ઉન્નતિની
આશા “ન બુનો ન ભરિખ્યતિ” માની સેવાની સાથે
આપણેજ હાથે નીચે મુજબ બધામર્તિને
પ્રાપ્ત થઈશું.

દાવાલિન્દુ દહરો મર્ધા જૈન માતિ,

છેરો અંતકય વરનો તણું વેર સુર્ધા.

વેરો પ્રમાણો સૌ મેન પ્રમાનો વાહો,

રહેરો પર્ણી ભવમતા તર્ણી હાંકી હાંકી.

મે આ પુરાણ મેન સમાન બેન,

ધારો વિદ્યુત મારિત્ર પંદેથી સત્તે.

હાં જાનિ ! જાનિ ! ! જાનિ ! !



નોટઃ—સુદ વાંચક દેહ । આ લેખ બારત-
વર્ષની આપણી જૈનજાતિ, સમાજ, અને
દેશોજાતિને માટે મેં મારો અલ્પમતિ અનુસાર
નિષ્પક્ષપાત પછે લખી જૈનસમાજ પ્રત્યેની
મારી જે શ્રદ્ધ બજાવી છે, તેમાં કોઇ ખામી
મા દોષ માલુમ પડે તો તેને માટે હું સંપૂર્ણ
તે દોષો પ્રતિ અલગ કરી જૈનજાતિ અને જૈન
સમાજ ક્ષિપ્તે માટે સાર વસ્તુ અલગ કરશે તો
મારો આ લેખ લખવાનો શ્રમ સારથ્ય
થશે સમજાશે.

આપણી ઉત્પત્તિ ।

રાતનો સમય છે નવેક વાગ્યા છે. જે વખતે
અધા માણસો પોત પોતાનું કામ આટોપી
સેવાની તકવારી કરી રહ્યા છે તે વખતે શુભરાત
કેલેજની પોર્ટામાં એક રમમાં બે વિદ્યાર્થીઓ
કે જેઓ એકબીજાની સાથે વાતો નીચે પ્રમાણે
વાર્તાલાપ કરી રહ્યા છે.

“મામ્ મોદન,” ઉમરમાં નાના દેખાતા
વિદ્યાર્થીએ પોતાના સાથીને કહ્યું આજે આપ-
ણે વિવેચના સતોષકારક રીતે, વાંચ્યું છે તો
આપારે કંઈક વાર્તાલાપ કરીએ તો હૈક.”

“હા, મામ્ રમણ” મોટા દેખાતા વિદ્યાર્થીએ
કહ્યું મારો પશ્ચ એજ વિચાર હતો પરંતુ તમને
અધ્યાસમાં ખસત ન પડે એવું ઠંડીજેળ આ
વાત મેં હંમતી નહોતી. હારે મામ્ મોદન,
આપણે કંઈ આજત ઉગાડશું ?

વાહ મામ્ મોદન આજત બેજોવાની કેરી ?
તોને આપણા હિંદુ સંસાર ! આપણે તો કેળ
વણીમાં કેટલા પગલ છીએ આપણામાં મેટ્રિક
અગ્રેથી સીએ. તો ગણી ગઈજ છે. અને
કેન્ડુએટસ તો આંગળેને નેટ ગણાય તેટલીજ છે.

હા મામ્ મોદન, એ બધું તદન ખરું છે
પણ એ વાતનો આપણા હિંદુઓને માટે લગભગ
જોવાની છે. પરંતુ આપણા બાળકોને

પારસીઓનાં તથા યુરોપીય
હોશિયાર નહિ જોતાં આ નિયમો કાતે હોં ઓર
જોઈએ છીએ તેવું શું કાનિયમાલુકલ હોતા હોં
દેવચંદ્રભાઈકો પ્રે કિ

બાઈ રમણ, કારણ તેવન દે દિયાં હોં !
અધાં અભારે કહેવા બાઈ યો સેઠ પ્રથમના
મારી બાટ ખુટે નહિ. માન કે જુગાવજી ચવરે
કહીશ. પહેલું કારણ તો એ જુગાવજી ચવરે
કેળવાયલી નહિ એટલે બાઈ કી હૈ તથા આપ
જોઈએ શિક્ષણ મળી શક્યું હૈ ૧૫૦૦૦૦૦ કે
બીચારી સીએનો એમાં કંઈ તથા સ્ટેશનકે
એમનાં-મામાપ એમને કેળવવાની જવાબજી
બીચારી લેને. અરે મામાપોનો ઓર જિમ પર
કારણકે હાકરીએને બાર તેર મી વનગા દેનેવાલે
પરણાવી દે એટલે બીચારાં મા ફલ સંતોષજનક
અપાવવાનો વખત કેરી રીતે દે ગયે. યહાં

વાહ મામ્, બુદ્ધિ તો હીકે ! જે વ્યવહારિક
નજ મોટી બુદ્ધ છે જો તેઓ પંચ ધાર્મિક
સત્તર વરસની વયે પરણાવે તો ન કમી જાને હૈ
કેળવણી મળી શકે. જે વયે બીનો મરિયા
“લગા” એટલે શું તે ન સમજતાં કોશિશ બી
બીચારીએનાં લગન કરી દે હોત્ર ચલાત્રા
કેલે બંને સમજણી હોતાં નથીસમા લોગોને
થવાને અલે હદય લગન થાય જાસવનાલોકો
પરમી સેન.

હા મામ્ મોદન, જો મારી બુ. આમંત્રણ
તો ત્હારી એ ક્યાં વધારે મારી સેઠ રતતસા
પણ જો અધ્યાસો સોળ વર્ષની હો મમા હુરે
બારીસ વરસના જોઈએ તે ક્યાંધી પડે ત

તિ પરદે
વાહ મામ્ રમણ, બહુન ગુણે જિલકા
સરાસ. જેમ અધ્યાસોને મોટી પરણાવવા
હાકરીએને પણ મોટા પરણાવવા પાદ સેઠ
બધું જાંતતા આપણી પાસે છે પીકે મક્કમ
મામાપ કે જે યુના. યુરોપીય મવરજીવા
બેરેલાં તેમને તે વગી હદય, લેન, માનેક
અધી બાજતોની ક્યાંધી અમર હોત્ર
એમ સમજે દેવચંદ્રભાઈકો અલસ છુટા



धरनु विद्यार्थी भी कम आते हैं तथा धर्मशिक्षाकी पढ़ाई बिल्कुल ठीक नहीं पाई गई जिसका कारण जैन अध्यापकका न होना ही है। यह जानकर आनंद हुआ कि सेठ प्रद्युम्नसा चांगसाकी पहिन बजाबाई जो पढ़ी लिखी और बाल विधवा हैं वे अथकादाके समय अपने घर पर ८-१० कन्याओंको बुलाकर रोज पढ़ाती हैं। और भी पढ़ी लिखी बाइयोंको आपका अनुकरण करना चाहिये। यहांसे चलकर ता० ४ बजे—

मूर्तिजापुर आये और दूसरी दूनेके जानेमें विलंब होनेसे शहरमें गये। बशोग और सेतवालके १२ घर तथा एक मंदिर है। यहां मनोहर पापुजी महाजनसे मिले जो बत्रोंवा जातिमें प्रथम बर्बाद होनहार हैं। आपके विचार अच्छे हैं हम लोगोंको अच्छा स्वागत किया। यहांसे शामको चलकर रात्रिको एल्लिचपुर आये और यहांसे २ मील पर परतवाड़ा जाकर सेठ मोतीलाल चंपालालके यहां ठहरे भाग लोग गिरनारजीकी यात्राको गये थे इससे सभा न हो सकी और रात्रिको २ बजे गाढ़ीमें चलकर ता० ५ बजे सुबह ६ बजे—

जिसका दर्शन किया। नारायण बकाराम सेतवालका एक ही घर है। शामको ४ बजे हम लोग—
परतवाड़ा—आये। दो मंदिर हैं जिनके दर्शन किये। एक मंदिरका जोर्णोद्वार हो रहा है। सेठ दिशान मोतीके जीनमें मनोहर चंत्पालय है जिसका दर्शन किया। यहां ठहरनेका भी प्रबंध है तथा मंदिरमें पूजन, बैठने आदि सभी प्रकारका सुभीता है। सभी कौम्रके लिये तथा यहां पशुओंके पानी पीनेका प्रबंध है। यहांमें भातकुली होकर अमरवती जानेके लिये ५ में गाढ़ी कर ली। भातकुली अमरावती और कुसम स्टेशनसे भी जा सकते हैं। पंतु इस तरह जानेसे समय और श्रव्यका बचाव होनेके सिवाय बहुत सुभीता हुआ। ता० ७ की दुपहरको हम लोग—

भातकुली—पहुंचे। यहां श्री आदिनाथ स्वामीकी कुछ पायाणकी प्राचीन प्रतिमा दिना छेसरी है जिसका दर्शन पूजन किया। यहां मंदिरमें और धर्मशालामें अस्थच्छता पाई गई जिसके लिये नवीन मनीम रावजी सावको ताकीट दी गई।



होती है । संस्कृत धर्मशास्त्रक पं० शंतिराजराय शास्त्री हैं । आप वीर संवत्से गी समाप्त हुए । व्यायामशाळा है परन्तु अभी बंद थी । मासिक खर्च करीब ४००) है जो श्रेष्ठ वर्द्धमानरायानी देते रहते हैं । एक भी विद्यार्थी पैदा नहीं है । संतकी इगने विद्यार्थी हैं कि कुछ खर्चा आप ही चलाते हैं परन्तु अलग स्थायी फंड नहीं निरात्रा है जिसके होनेकी अतीव और शीघ्र आवश्यकता है । लायब्रेरी, वाचनालय भी है तथा साप्ताहिक सभा भी होती है । इस बोर्डिंगका कार्य देख कर हम दोनोंको अतीव आनंद हुआ । यहाँके विद्यार्थी बहुत मिष्ट भवासी हैं । गवर्नमेंट ओरिएण्टल लायब्रेरी देखी । इसमें ६००० ताटपत्रके ग्रन्थ हैं जिसमें करीब १००० जैनग्रन्थ हैं । जो कोई ग्रंथ देते हैं उनको लेकर सुरक्षित रहते हैं । ताटाओंके ग्रन्थ संस्कृत, प्राकृत, कन्नडो, तेलगु भाषाके तथा कन्नडो, देवनागरी, तामीळ आदि लिपिके हैं जिसमें ६० अक्षरालिखित हैं । यहाँ हस्तलिखित और मुद्रित कुछ ग्रन्थ करीब ३०००० हैं । अलग २ १०-१५ पंदिता बैठे हुए थे । कोई संयोग्य दरता था, कोई कापी करता था, कोई खंजता था, कोई प्रत देता था, तो कोई अनुवाद कर रहा था । संस्कृत मैत्रा काव्यकी कापी हो रही थी । भट्टारलेक कवित्तु वर्णिकारी शब्दानुशासन (भाषा भंडारी) व्याकरण मुद्रित देता । मेशराज प्रणीत व्याकरण देता । प्रयोगकी सूची भी मिलती है । पं० व्यासनाथ बाहलीवाल, पं० नाथूराम प्रेमी आदि पंडितगण यहाँ नाहर का दिन ठहरे और मणी रत्न गंगोश निरीक्षण करें तो कई मध्याह्न ग्रन्थोंका पता लगा

आसु (राजकीय) बोर्डिंग स्कूल देखा । २७ वर्षसे राज्यकी ओरसे चलती है । १५० सत्री लड़के रहते और पढ़ते हैं । मिडल अंग्रेजी तक शिक्षा होती है, और हाई स्कूलमें जाने वालेको स्कालार्शिप देते हैं । वार्षिक खर्च २०००) है, व्यायामशाळा भी है, टोचिंग एक्जामिनिंग यूनिवर्सिटी भी देखी, न्यू युनिवर्सिटी इंग्लिश लायब्रेरी भी देखी । इसमें ५००० पुस्तक हैं, संस्कृत कालेज भी है, जिसमें २०० विद्यार्थी पढ़ते हैं, और १०० को मोशन मिलता है, महारानी किंगड कालेज, ब्रियोंका बोर्डिंग हाउस आदि और भी बहुतसी संस्थाएँ हैं, जिनका निरीक्षण समयमायसे नहीं कर सके । सारांश कि यह शहर विद्याका उत्तम केंद्र और रमणीक स्थान है । हाएक यात्रीको म्हैसूरका निरीक्षण अवश्य करना चाहिये । यहाँसे ता० १७की दुपहरको चलाकर मंदगिरी स्टेशन शमको पहुँचे और वहाँ होनेसे वहाँ रातभर रहना पड़ा और सुबह यहाँसे १२ माईल बैठ गाड़ीमें चलाकर ता० १४-४-१२ दुपहरको १२ बजे श्री अयणमेलगोला (गोमटस्वामी) पहुँचे ।

(अपूर्ण)

दिगंबर जैन

THE DIGAMBAR JAIN.

नाना कलाभिर्विविधश्च तत्तैः सत्योपदेशैस्तुगवेषणाभिः ।

संबोधयत्यनामिदं प्रवर्त्तताम्, दैगम्बरं जैन समाज-मात्रम् ॥

पृष्ठ १२ वॉ.

वीर संवत् २४४५, माघपद, विद्वत् म० १९७६.

अंक ११.

दशलक्षण धर्मकी लाकरी ।

(ले०-५० गोराल जैन-वटगी)

है दशलक्षण धर्म परम सुखकारी ।
ताको निज शक्ति समान करो नर नारी ॥८॥
जे गाली देत अनान को वमें आके ।
तिन हृदय नहीं कुछ ज्ञान मुनो चित्त छोके ।
ये अशुभ कर्मके योग देत दुःख आके ।
उनसे मन कीजे श्रेष्ठ कर्म आके ॥
श्रेष्ठ-सुन प्यारे यह क्रोध महा दुखदानी ।
सुन प्यारे यह क्रोध करे बहु हानी ॥
सुन प्यारे पर क्षमा भाव सुख दानी ।
सुन प्यारे यह क्षमा धर्मकी ग्वानी ॥
कीजे समान रस धान यही हितकारी ।
ताको निज शक्ति समान करो नर नारी ॥

* * *

यह मान महा दुख खान, नरक पहुंचावे ।
तु तन धन दौड़का क्या जोर जनावे ॥
जैसा पूष मर जिया तु वैसा पावे ।
मत कर घमंट क्यों नाहक दुर्गति जावे ॥
श्रेष्ठ-सुन प्यारे रावणने मान गनया ।
सुन प्यारे वो मर कर नर सिधायी ॥
सुन प्यारे तन मान महा दुखार्थी ।
सुन प्यारे मन नार्द्ध गुण सुखार्थी ॥

कर कोमल सुधा सुपान सर्भ दातारी ।
ताको निज शक्ति समान करो नर नारी ॥

* * *

कोईके साथ मत बपट फन्द फैलाओ ।
जो मनमें होवे वचन उसे फरमाओ ॥
जो करना तुमको उसे साफ मतलाओ ।
छूट कर क्यों नाहक परके प्राण सताओ ॥
श्रेष्ठ-सुन प्यारे नहि दगा किसीसे कीजे ।
सुन प्यारे परिणम सरल निज कीजे ॥
सुन प्यारे छलकर विष बंधन बीजे ।
सुन प्यारे जिन मारगमें चित्त दोजे ॥
छूट कपट त्याग मन आर्जव गुण सुखकारी ।
ताको निज शक्ति समान करो नर नारी ॥

* * *

मत बोले झूठे बैन मनुष तन पाके ।
नहि पावोगे दुख अधि नरकमें जाके ॥
सत वचनोंमें हो लीन कहूं समझके ।
नामे तेरा यश रहे जगनमें छाके ॥
श्रेष्ठ-सुन प्यारे सत वचनोंमें लव लाना ।
सुन प्यारे नहि झूठ वचन बनलाना ॥
सुन प्यारे बसु भूत झूठ वचन हाना ।
सुन प्यारे वो मरकर नरक सिधायी ॥
सत वचन बोल नारद गयो शर्ग मझारी ॥ ताको



तज लोभ पापका मूल महा दुखदाई ।
 संतोष मुदा करे पान महा सुखदाई ॥
 जो नप तत्र संयम शील ध्यान शुभ प्याता ।
 सो सदा शुद्ध पापदिक भैल बहाता ॥

श्लो-मुन प्यारे गंगा जलमें नित न्हाया ।

मुन प्यारे नहि पाप भैल धुलि पाया ॥

मुन प्यारे त धातुमय काया ।

मुन प्यारे मुनि यासे नेह हटया ॥

तज अशुचि भाव कर शोच सुगुणसे यारी ॥ ताको

* * *

मन जीवमात्र पर करुणा भाव विचारो ।

पाचों इन्द्रो वेश करो कषाय निवारो ॥

घर संयम मन वच विषय भोगको टारो ।

फिर पृथोपार्जित पाप क्षिणकमें जरो ॥

श्लो-मुन प्यारे ये विषय भोग दुखदाई ।

मुन प्यारे नहि इनसे करो मिताई ॥

मुन प्यारे घर संयम व्रत सुखदाई ।

मुन प्यारे यह भव भव करे महाई ॥

हे भृगुभक्त मनन अमोघ करो रघुवारी ॥ ताको ॥

* * *

ये ऋद्धकर्म कटराज स्तनने सबको ।

वशा इन्द्र चन्द्र अहिमेन्द्र रुद्रांन सबको ॥

अब आयो उत्तम दाव मन्हरो नपको ।

नासे नाशो वसु कर्म भिजे सुख तुफने ॥

श्लो-मुन प्यारे नृ दमो निमोद मरणा ।

मुन प्यारे किा भाव दम दन बारा ॥

मुन प्यारे अब दिग पदुप अवतारा ।

मुन प्यारे नप पाप लोभ निन्तारा ॥

हे ताता राक्ष भेद मोक्ष करदारी ॥ ताको ॥

यह पूर्व पुन्य संयोग लक्ष्मी पई ।

ताको निज शक्ति समान खरिये माई ॥

औपधि ध्रुव अभय आहार जिनागम गाई ।

ये दान चार चहु संघघो दीजे माई ॥

श्लो-मुन प्यारे धनको विश्वास न कीजे ।

मुन प्यारे परमार्थमें व्यय कीजे ॥

मुन प्यारे नित दान चार विध दीजे ।

मुन प्यारे यह त्याग धर्म गह लीजे ॥

यह त्याग धर्म अति पर्य सम दातारी ॥ ताको

* * *

बहुधा परग्रहको भार महा दुखदाता ।

नित चिन्ता पावक देह वहे नहि साता ॥

संतोष चार नहि तृष्णा प्यास बुझाता ।

फंस कर परिग्रहके फन्द धर्म विसरता ॥

श्लो-मुन प्यारे परिग्रहकी संख्या कीजे ।

मुन प्यारे नहि इससे अधिक गहीजे ॥

मुन प्यारे आकिञ्चन वन घा लीजे ।

मुन प्यारे मन वच तृष्णा तन दीजे ॥

कर परिग्रहको परिमाण मिटे सुख भारी ॥ ताको ॥

* * *

हे शक्ति शिरोमणि राज नगमें खासा ।

हर ताकी रक्षा मिले मुक्तिका कामा ॥

तन पाभामिनरा साथ महा दुखदाता ।

हट मन्हवर्ष वन पाट धर्मका नाता ॥

श्लो-मुन प्यारे एत भवत सेठ व्यापारी ।

मुन प्यारे नदी हती मंजूरा नारी ॥

मुन प्यारे तर परत घट्टि बिपारी ।

मुन प्यारे नित खाई मात अरारी ॥

किा पावक नपों त्या दान व्यापारी ॥ ताको ॥

यह पाऊन नर मव अनूर सरुल करानाजी ।
उत्तम लभादि दश धर्म हृदय धरानाजी ॥
मगदन्त श्री अरहंत-पाके करानाजी ।
वर निन आतमका ध्यान कर्म हरानाजी ॥
शेडा-सुन प्यारे अब मूखचंद सप्तमाते ।
सुन प्यारे कथ गोरेलाल छंद गाते ॥
सुन प्यारे हम विनय एक फरमाते ।
सुन प्यारे घुटियां हव माफ कराते ॥
यह रचा सत्जनपुर खयाल स्वपर हिनकारी ॥
ताको० ॥



पाठकोंको मालूम होगा कि ब्र० मगवानदी-
नजी पानीपतमें भाषण
ब्रह्मचारी देनेके सम्बन्धमें प्रुलिस
भगवानदीनजी द्वारा गिरफ्तार किये गये
थे । अब उनपर करनालके

मजिस्ट्रेटकी अदालतमें आपत्ति जनक बातें भाषणमें
कहनेके कारण मुकदमा चल रहा है । भगवान-
दीनजीकी तरफसे श्रीयुत बाबू अजितप्रसादजी
एम० ए० एल० एल० वी० वकील लखनऊ और
दयालराम सुखतार वरनाल पैरवी कर रहे हैं ।
मगवानदीनजीपर जिन बातोंके कहनेके कारण यह
राजनैतिक अभियोग लगाया गया है वह ऐसी
ही हैं, जैसे "रौलेटबिलसे प्रुलिसके कान्सटिबि-
लको गिरफ्तार करनेके सब अधिकार मिळ जाते
हैं, इस समयसे मुगल साम्राज्यके समय प्रजा
अधिक सुखी थी, मा'तवर्षका व्यापार अंगरेजोंने
रुद कर दिया आदि । "

ब्र० मगवानदी नजी देश हितैषी और धर्मात्मा
प्रुह्व हैं । आने जैन जातिकी सेवा करनेके लिये
नौकी छोड़ दी और अपने बालबच्चोंका मोह
त्याग दिया । जाति सेवा ही इनका एक व्रत है ।
सरकारके विरुद्ध हमने इनको कभी नहीं सुना
यह एक राजवक्त गृहत्यागी ब्रह्मचारी थे
और इनका जीवन धार्मिक जीवन है । उक्त
पं० अजुनलालजी सेठी बी. ए. को जेलमें सड़ने

मेवाडा (अठेवरा) ज.तिने मुखना.
गुजरातना मेवाडा अधुआने लज्जाववातुं के
आपल्या पुरेने मेवाडा देशना अठेवरा जानथी
कछ साक्षगां अने केवा सज्जेगाभां अर्थां आभ्या,
अर्थां आवतां अगाडि पन्ने पन्ने कथां कथां
आपल्या दोटोअने निवास कथां, अत्रे आधी कथा
हुया गाभाभां प्रथम रक्षा, त्वार पाद कथे कथे
रथले वरया, दशा अने वीसा अभ अने अने
राधी अने कथा आचार्यना वपुतभां पडया,
सोअत्रा अने अकक्षेत्रना मेवाडा अधुआने
संज्ध-दतो के नदी, मेवाडाना गोत्र कटला
अने कथां कथां गोत्रना मुग पुरप कालु दतो,
कथा आचार्य गोत्र रथाभां, आपल्या उत्पत्ति
दैत्यभांधी के पक्षी पक्षी कछ कोभभांधी यथ
पुगेरे दक्षिणतो संपूज्य देवाल प्रगट-धवानी
नरर छे, तो लज्जाववातुं के ले कछ विद्वान्
मेवाडा बाध या अन्य कछ उपरनी दक्षिण
पुजासावार लणी मोक्षतो तो तेने धनान् ३.
२५) हमारा वररधी आपल्याभां आवरो, तो
स्वार्थ साथे परभार्थतुं काम संगळ छविदासव
अधु भोजन करी अने लणी लज्जावरो तो उपहार
धरो.

भोदनसास अथुरादाम
काशीगा (अलान.)



हुए और इधर इनर इस प्रकारका मुकदमा होता देखकर जैन समानको बहुत आश्चर्य और दुःख हो रहा है। सरकारकी जैन समानके नेताओं उपदेशकोंकी ओर वकद्वट्टि देखकर बड़ी चिन्ता उत्पन्न होगई है। यदि सरकारने सेठीजीकी तरह ब्रह्मचारी भगवानदीनजीके साथ भी उचित न्याय—द्रुषका द्रुष पानीका पानो न किया तो जैन समानमें और असंतोष फैलेगा। जैन वकीलोंको चाहिये कि कानाल जाका अपने एक मातिहितैषीको संकटसे मुक्त करावें। संभव है यह मामला अधिक दिन तक चले और द्रुषकी अधिक आश्रयका पड़े। यद्यपि अभीतक भगवानदीनजीकी ओरसे समानसे किसी प्रकारकी सहायता नहीं मांगी गई है पर समानका कर्तव्य है कि इस मामलेकी पैरवीको लिये हर प्रकार तैयार रहे। दुर्भाग्यसे यदि भगवानदीनजीको मजिस्ट्रेटकी अदालतसे सजाका हुक्म हो गया तो अपील हाईकोर्ट तक ही नहीं किन्तु प्रिवी कांसिल तक करनी चाहिये। यह मामला केवल भगवानदीनजी तक ही सम्बन्धन ही रखता है किन्तु इसका सम्बन्ध कुछ जैनसमानसे है इसलिये सर्व प्रकारका भेदभाव मिटाकर भगवानदीनजीके मामलेकी अन्त तक पैरवी कछ न्याय प्राप्त करवाना चाहिये।

सो जैन समानमें अंग्रेजी भाषामें प्रकट होनेवाला मासिक पत्र 'जैन गजट'। किन्तु 'जैन गजट' ही था जा कि १५ वर्ष हुए प्रकट होता था परन्तु अंशके संपादक बाबू भोज-

तमसादजी वकील एम. ए. एल. एल. बी. लखनऊके बनारस चले जानेसे आपने ६ माहसे बंद कर दिया था परन्तु हमें लिखते अत्यंत हर्ष होता है कि जैन गजट विशेष समय बंद नहीं रहा और एक नहीं परन्तु तीन संपादकोंके संपादनसे फिर प्रकट होने लगा है जिसका प्रथम अंक जुलाई माहका हमें प्राप्त हुआ है। संपादकोंके नाम बेरिस्टर मि. जुगमंदिरलाल जैनी एम. ए., बाबू अजितप्रसादजी वकील (१६ दुर्गा कुंड बनारस) और सी. एस. मल्लीनाथ, २१ पैरोश बैकट चार, आयर स्ट्रूट, न्यूज टाउन, मद्रास हैं। श्रीयुत मल्लोनाथजीके ही विशेष परिश्रम और अर्थ व्ययका ही यह फल है कि जैन गजटका पुर्नजीवन हो सका है और बाबू अजितप्रसादजी तथा बेरिस्टर साहबने लेखादि भेजना स्वीकार किया है। यह अंक ३४ पृष्ठाका १२ लेखोंसे सुसज्जित है जिसमें The under currents of Jainism, Jains and the Tamil Literature, Pandit Ajitprasadji's letter, Ancient J. Indian culture आदि लेख पढ़ने योग्य हैं। संपादकीय नोट भी मार्फके हैं। खेद है ऐसे एक ही अंग्रेजी पत्रकी माहक संख्या बहुत ही कम है इस लिये अंग्रेजी पत्र लिखते जैन माह-योका फन है कि इस मासिकपत्रके माहक खरद्व हो जिससे कि संपादकोंका उत्साह बाध करनेमें न रहे। वार्षिक मूल्य किं २) है। मिड-नेरा तथा मद्रास Madras ही है।



जैन सिद्धांतोंद्वाराक समानसेवक बाल ब्रह्म-
चारी पं० पत्रालालजी
जैन सिद्धांत बाकलीवाल कड़े वपोंसे
प्रकाशक। कुछ हस्तेमें हैं और वहां
शुद्ध प्रेस भी खोला है
जिससे कई जैन ग्रन्थ सानुवाद प्रकट हुए हैं
और होने वाले हैं परन्तु इसके साथ-एक मह-
त्त्वका कार्य करनेका आपने साहस किया है वह
आदरणीय है। बंगाल प्रांत बहुत बड़ा है
इससे बंगाली भाषा और लिपि जाननेवाले भी
बहुत हैं तथा बंगाली साहित्य भी सब भाषाके
साहित्योंसे प्रथम पंक्ति पर है और बंगाल
प्रांतमें सत्य धर्मके खोजी भी बहुतसे विद्वान्
मौजूद हैं जिनको जैनधर्मका परिचय करानेकी
परमावश्यकता है इस लिये पंडितजीने बंगाली
भाषामें “ जैन सिद्धांत प्रकाशक ” नामक
मासिक पत्र निकालनेके लिये पत्रोंमें अपील की
है। जिसमें दर्शाया है कि इसके दो वर्षके घाटेके
लिये कमसे कम (१५००) की आवश्यकता है
जिसकी पूर्ति (१००) या (५०) दो वर्षके लिये
श्रीमानोंसे प्राप्त होनेसे हो सकती है। इसमें
अब तक (६०६) भरे गये हैं और विशेषकी
आवश्यकता है जिस पर हम श्रीमानोंका ध्यान
आकर्षित करते हैं। यदि अश्विन मास तक
सहायता पूरी न होगी तो पंडितजी हताश हो
कर आये हुए रु. वापिस करनेवाले हैं इस लिये
श्रीमानोंका फर्ज है कि इस कार्यके लिये पंडि-
तजीको (१००) या (५०) भेजनेका तुरंत ही
बादा करें। पता इस प्रकार है—जैन सिद्धांत
प्रकाशिनी संस्था, नं. ८ महेंद्र बोसछेत्र, बाब
बाजार, कलकत्ता।

हमारा सर्वोत्तम पुण्यपर्व श्री दशलाक्षपर्व
सानंद पूर्ण हुआ है और
उत्तमक्षमा। बहुतसे स्थानोंपर यह पर्व
विशेष रूपसे व्यतीत
हुआ है जिसमें मुनिश्री चन्द्रसागरजी कर्त्तव्यहो
तथा भाईयोंने एक माहके उपवास भी किये
थे। धर्मके दशलक्षणोंमें सर्वोत्कृष्ट धर्म श्री
“उत्तमक्षमा” है और हमारे सभी भाई हम
पर्वके बाद परस्पर उत्तम क्षमाकी याचना करके
वर्ष भरमें किये गये अपराधोंकी क्षमा मांगते हैं।
तथा स्नेही संबंधियोंसे भी पत्रद्वारा उत्तम
क्षमाकी याचना करते हैं। हमारे कार्यालयमें भी
बहुतसे स्नेहियोंके क्षमापत्र आये हैं उन
सबको पृथक् २ उत्तर लिखनेको हम लाचार हैं
इसलिये इस पत्र द्वारा ही ‘दिगम्बर जैन’ के
वाचक वर्गसे उत्तम क्षमाकी याचना करते हुए
निवेदन करते हैं कि एक पत्रकारका कार्य ऐसा
है कि सत्य हाल लिखनेसे या सत्य निवेदन
करनेसे कई माइनोंको बुरा लगता है परन्तु
पत्रकारका तो यह कर्ज है कि निहड होकर
पक्षपात रहित संपादन कार्य करना चाहिये और
ऐसा करनेसे हमारेसे जो कुछ भी कटु शब्द
वर्ष भरमें लिखे गये हो और जिससे किसीका
मन रुझित हुआ हो तो हम उसके लिये उन
माइनोंसे उत्तम क्षमाकी याचना करते हैं और
हम यही चाहते हैं कि अत्माका मूठ स्वभाव
उत्तम क्षमा रूप ही है इसलिये हमारे पाठकोंमें
भी उत्तम क्षमा धर्मका वास ही अहर्निश हो
जिससे कि संपारमे सुख और शान्तिकी स्थापना
हो। तथास्तु।

ઈંદરગઢના મંદિરનો

જીર્ણોદ્ધાર.

હરર થહેર ગુજરાતમાં આરાવલીની ઉપત્યાકમાં છે. હનિદાસથી આ નગર થણું જુલું હોય તેમ લાગે છે. પ્રથમ અદિથી દિગંબર જૈન ધર્મની પ્રમાવના સારી હતી અને જૈનીઓની સંખ્યા વધુની હતી. આ દેશથી જ દક્ષિણ, મેવાડ આદિ દેશોમાં કુમક બાધઓ ગયા છે તે પ્રસિદ્ધ છે. હરરના પર્વતના શિખર ઉપર એક બલ્ય દિગંબર જૈન મંદિર છે. આ મંદિર પ્રણુ જુલું અને અતિશય વાણું છે અને અત્યારે આ મંદિર અત્યંત ભગવાનશ્યામાં જીર્ણ શીર્ણ રૂપ રહેલું છે. વરસાદના દહાડાઓમાં પ્રતિભાજ ઉપર વાણી પડે છે અને તે નીવ (મળ) મથી સાંધા બધા ખરી ગયા હોય તેમ છે, આ મંદિરનો જીર્ણોદ્ધાર હાલ ન થાય તો અવશ્યકદર્શન નામ શેષ થઈ જવાનો સંભવ છે.

આ મંદિરનો જીર્ણોદ્ધાર પ્રથમ બે ત્રણવાર થયેલો છે. સંવત ૧૧૦૫ ના કાળજી વડે ૨ ના દિવસે જીર્ણોદ્ધાર કર્યો હોય તેમ આ મંદિરમાં સ્થિત કોષાલસર્ગ એક પ્રતિભાથી અંકિત થાય છે. બીજી વખતે બહારક વાદીરૂપણુએ ૧૧૫૧ માઠા યુદ્ધ પના દિવસે જીર્ણોદ્ધાર કરાવ્યો હતો. આ મંદિર પથરાયેલી મળપુત વાંધિયું હોવાથી અત્યાર મુઠી અસ્તિત્વે પરાયે છે, પણ હાલમાં એના અવશ્યક અતિશય જીર્ણ શીર્ણ છે અને એનો જીર્ણોદ્ધાર કરાવવાની ખાસ જરૂર છે. નવીન દેવેસાસર કરાવવા કરતાં જુના મંદિરનો જીર્ણોદ્ધાર કરાવવો તે શ્રેષ્ઠ છે. વળી જુના મંદિરનો જીર્ણોદ્ધારથી દિગંબર જૈનધર્મના પ્રાચીનતાના ચિન્હો અસ્તિત્વમાં રહેશે.

વર્તમાન સમયમાં જિનંબર જૈનધર્મનાં કંઈ પણ પ્રાચીન ચિન્હો છે તો સાબર, અગપ્રતિભા અને જિનાવપ છે, કાંત્રી કે કાંત્રીમાં રહેલું છે કે—

નિરાલવત્ત્વં ધર્મસ્ય સ્થિતિરેત્નાતતઃ સત્તાં ।

મુક્તિપ્રાપ્તાદ્યોગાન્, આત્મેવક્તો જિનાલયઃ ॥

અર્થ—જન મંદિરોથી ધર્મની સ્થિતિ સમાવેલીજ છે તેમ મોક્ષનો માર્ગ જિનાલયજ છે.

આ મંદિરના જીર્ણોદ્ધાર માટે જીનંબરની મહાદ લેટાં એમ બજાય છે કે તેમાં યોગીમાં યોગી ૩. ૫૦૦૦૦) થશે, માટે સર્વે દિગંબર જૈન બાધઓને નમ્ર પ્રાર્થના છે કે પોતાના કમાયેલા શુભ દ્રવ્યનો ઉપયોગ જે કોઈ બાળશાળી કરશે તે મહાન પુણ્ય અને વશના ભાગી થશે.

જે સદૃશ્યરથો અથવા બહેતો પોતાના નામ આવા શુભકાર્યથી અમર કરવા હચ્છતા હોય તેમને અમે નમ્ર વિનંતિ કરીએ છીએ કે જે રૂ. ૩૦૧) આપશે તેમના મુખ્યારક નામની તક્તીઓ સદૃશ્ય દેહેસાસરના દેવડી ઉપર ચોટાડામાં આરશે. અને જે રૂ. ૧૦૦૦) ની રકમ આપશે તેમના મુખ્યારક નામની તક્તીઓ દેહેસાસરના સહા મંડપમાં લગાવવામાં આવશે અને જે મૂળ મહારાઓનો આરસ મારયથી તથા વેદી પવાકણ વીગેરેનો જીર્ણોદ્ધાર કરાવશે તેમના મુખ્યારક નામની તક્તીઓ પવાસણો ઉપર લગાડવામાં આવશે.

જે બાધઓને આ કાર્યમાં હાન કરવું હોય તેમ પતબવંદાર કરવો હોય તે નાચેને સરનામે લખવો—

૧. લક્ષ્મણાણી લક્ષ્મીચંદ

સરાઈ ખમર, મુખ્યાંક.

૨. ટારી પદમશી જોડતાદાસ

હરર (મહીકાહ).

બાધઓના સેવક—

નન્દનસાલ જૈન દેવ.

ઉદેપુરકે મેલેકા નંદા બીચક વગુચ નહીં દુખા હે । વીર કાલ્યાણને પ્રતિતા વી દે ફિ ન હાંતક બંદા વમુદે ન હોવા મેં કિતર વાદી નાંતુતા ।

गुगुलु है, जमा बराबर नहीं है। कमेटीने राय-
देशके पंचों समस्त भट्टारकजीके हिसाबमें गरुलत
सुभाई और यह प्रस्ताव रक्खा कि महाराज एक
रायदेशका दि० जैन माईको मुनीम रखे परन्तु
मुनते हैं कि सावली टप्पाके माइयोने इक्का
भी विरोध किया था।

समान सेवी-ननलाल जैन, इंटर ।



मंडवा-के चार गुलाबसा कचरुसाने
(०००) की जायदाद वहाँकी जैन पाठशा-
लाको दी है।

अलौगढ़-में आसोन सुदी १५ सेवदी ४
तक रपोत्सव होगा।

चातुर्मास-ब्रह्मचारी सुत्तानंदजीने मसू-
दावादमें, ब्र० सुवानीलाहने बारा दिवसीमें
और ब्र० कुंशर दिगिभयमिहजीने मत्तना (रीयां)
में चातुर्मास किया है। कुंशर माइने मननामें
एक समा स्थपित कराई है जिसमें व्याख्यान
करना सिक्का है।

मुनिश्री-ब्रह्ममत्तजीने प्रागोदा (पो. गरी,
बांभराडा) में चातुर्मास किया है। आने एक
माहके उपराम मानंद एवं व्यानपूर्वक पूर्ण विदे
है। दर्शनपिट्ठपो उदयगढ़, दाशंद और
मंदपो स्टेशनको जा सकते हैं।

वागडमें विद्यालयकी स्थापना-
श्रीमान् ब्र० शीतलप्रसादजीने वागडमें बागीदो-
रामें चातुर्मास किया है और आपके प्रयत्नसे
बांसवाडामें विद्यालय और बोर्डिंग खोलनेका
निश्चय हुआ है। इसके लिये बना बनाया
अपना मकान और २७१९०/- नांदे-रा. सा.
सेठ विनयचंद चंभाडालने दिये हैं। विद्यालयका
नाम 'रायसाहब, सेठ विनयचंद दिगंबर जैन वागड'
प्रांतीय विद्यालय और बोर्डिंग' होगा। इसमें
मुख्यतासे संस्कृत और धर्मकी शिक्षा तथा गौण-
तासे लौकिक शिक्षा भी दी जावेगी। सभी
२० अनपठ और २० पठ विद्यार्थी लिये
जावेंगे। पेटसे सिर्फ ५) मासिक फीस लेवेंगे।
समापति सेठ विनयचंदजी, पंडी दोशी जीवराजजी
व गोदोश, उपमंत्री धनराजजी तलवाटा और
अविष्ठाता पं. शुद्धचंदजी लक्ष्मर निवासी नियत
हूए हैं। विद्यालय खोलनेका मुहूर्त आसोन
सुदी १५ गुरुवारको होगा निम मौके पर
वागड प्रान्तके सभी दि० जनोंको प्रवेश करने
योग्य लटकों सहित अवश्य पधारना चाहिये।

बांसवाडामें-ब्र० शीतलप्रसादजीके पचा-
ससे दो आम समाएँ हुई थी जिनमें बांसवाडी-
जीने पंचे सुगका उत्पन्न और जन्माविक्रय
निर्दिष्ट पर प्रभावजात्री व्याख्यान दिये थे।

स्वर्गस्थ हुए-फल्लतन निवासी बाट ब्र-
चारी बाबा तुनीचंदजी हुसई जो कई वर्षोंसे
मदपूरामें रहने में और जिनकी उम्र करीब सौ
वर्षकी थी, स्वर्गवासी हुए हैं। बाबने मदपूरामें
एक कर्मचारी घदन स्थापित किया था और
मनोरंजन भी दिये हैं।

ईडरगढ़ के दिगंबरी श्वेताम्बरी मंदिर ।

दिगंबरी की प्राचीनता ।

वादीभूषण कव दृष्ट ?

सुज्ञ विचारकवृंद ! अभी थोड़े दिन हुए ईडरगढ़ (इस्वदुर्ग) के ऊपर श्वेतांबर भाइयों ने बावन जिनालयका जीर्णोद्धार कराया है, यह जीर्णोद्धार भारतके समस्तसंघसे कोप (फंड) एकत्रित करके कराया है इसी लिये इसकी रिपोर्ट हालमें प्रकाशित हुई है। रिपोर्टके देखनेसे यह बात स्पष्ट प्रतीत होती है कि हमारे श्वेतांबर भाइयोंने यह-कार्य बड़ी योग्यता और विपुल-द्रव्य (१०६४९९॥॥४) स्वर्चकर महान प्रणय-का कार्य किया है, परन्तु इसके साथ रिपोर्टमें कई बातें नितान्त असत्य और हास्यास्पद लिख दी हैं। यद्यपि इन झूठी बातोंके प्रत्युत्तर लिखनेकी विशेष आवश्यकता नहीं थी क्योंकि इतिहाससे यह लिखना स्वयमेव ही विचारज्ञोंके हृदयमें असत्य और अप्रमाणित दीख रहा है तो भी हमारे श्वेताम्बर भाइयोंमें आज कल ऐसी धुन समाई है कि अन्यके तीर्थ और मन्दिरोंको अपनाने लगे हैं, पक्षपातसे सबेज कलहके बीज बो रहे हैं। अस्तु, ये बातें जिन लोगोंको ही-शोभा देती हैं, परन्तु जिन तीर्थ और मन्दिरोंकी बावत ये लोग प्रमाण देते हैं वे बिल्कुल बनावटी और नितान्त झूठे होते हैं। श्रीसम्मेद शिखरके मुकदमेमें जो बाद-शाही फरमान पेश किया था वह क्रोटसे झूठ साबित हो गया। हालमें तारंगा पर्वतको अप-

ना बताते हैं परन्तु वह भी अप्रमाणसा प्रतीत होता है। रासमालामें यह लिखा है कि तारंगाजी पर कुमारपाल महाराजने अनितनाथका मंदिर बनाया उसके प्रथम भी वहां पर मंदिर थे अर्थात् दिगंबर मंदिर उससे प्रथमका बना हुआ था। इसी प्रकार सब जगह यही गडबड मच रही है, समाजकी शक्ति क्षीण होती चली जाती है, साथमें वैमनस्य बढ़ता चला जा रहा है। अस्तु, हमारे भाइयोंको सुमति हो।

रिपोर्टकी मूनीकामें यह बावन जिनालय संप्रति राजाने विक्रम संवत्से प्रथम बनाया, और उसका जीर्णोद्धार सेठ बच्छराज १, कुमारपाल २, गोविंदराज ३ और चंपकशाह ४ ने अनुक्रमसे किया। अस्तु, जो कुछ भी हो, परन्तु 'महीकांडा मेन्युअल' यह लिखता है कि श्वेतांबर भाइयोंके मंदिरसे दिगंबर जैन मंदिर अतिशय प्राचीन है। इसी प्रकार रासमालामें यह मंदिर कुमारपाल महाराजने बनाया लिखा है परन्तु सोमसौभाग्य काव्यमें इस्वदुर्गके वर्णनमें ईडरगढ़के शान्तिनाथके मंदिरका उल्लेख नहीं है। क्या उस समय यह मंदिर अस्तित्वमें नहीं था ? जिस प्रकार श्री ऋषभदेवके मंदिरका वृत्तांत सोमसौभाग्य काव्य एवं अन्य प्राचीन पुस्तकोंमें मिलता है, इस प्रकार इन बावन जिनालयका उल्लेख नहीं दृष्टिपथ हुआ। देखनेसे यही प्रतीत होता है। रासमालाकर्ता लिखता है कि "दुर्ग में जेनाँके दो मंदिर हैं उनमेंसे एक दक्षिण दिशावाला मंदिर जो ठेकरी पर है अतिशय प्राचीन है, और दूसरा बड़ा मंदिर है", ।



प्रस्तु, दोनों मंदिरोंकी प्रतिमाओंके शिला-
लेख देखनेसे भी दिगंबर प्रतिमा ही अति-
शय प्राचीन ठहरती हैं ।

ईडर-गुजरातमें अतिशय प्रसिद्ध प्राचीन
शहर है । यहां पर दिगंबरजैन धर्मकी महिमा
राजाओंके ऊपर प्रभाव डालनेवाली प्रसिद्ध
थी । वर्तमानमें भी दिगंबर जैनोंकी वस्ती
अधिक है । यहां पर पद्मपाचक्रवर्ति-आध्या-
त्मकोविद-तार्किकसिंह श्रीसकलकीर्ति-शु-
भचंद्र-वादिभूषण-यशकीर्ति आदि बड़े २
प्रसिद्ध भट्टारक हो गये हैं जिनके बनाये हुए
हजारों ग्रन्थ ईडर भंडारमें जीर्ण शीर्ण अवस्थामें
अब भी मौजूद हैं । इन भट्टारकोंकी बृहत्
पट्टावली अभी हालमें निकली है । इन लोगोंने
क्या २ कार्य किये ? कितने वाद जीते ? कितने
ग्रन्थ बनाये ? इत्यादि बातोंका उल्लेख कुछ २
मिलता है । दुःखकी बात यह है कि आज
तक हमारा इतिहास छिपा हुआ भंडारोंमें गुप्त
रखा हुआ है । अतएव दिगंबर जैन धर्मकी
महत्त्वता और उनके उच्च प्रभावशाली एवं चमत्कृत
वर्षोंकी आभा विश्व पर नहीं पड़ी । इसलिये
कितने ही झूठे उप लेख हमें हमारे अन्य भाइ-
योंसे सुननेके प्रसंग आये । एवं इतिहास दृष्टिसे
भी दिगंबर जैन धर्मके नेताओंके प्रभावसे संसार
वर्द्धित रहा । ऐसा होनेसे जो देखनेमें आया
या जेमा गुना वह साधारण जनताकी दृष्टि-
पथमें सत्य प्रतीत होने लगता है, धीरे २ वह
बात रूढ़ हो जाती है और सत्य छिप जाता
है । भारतवर्षके इतिहासके विषयमें भी यही
विहासोद्यम मत्त है । अंगु. टंक रिपोर्टमें ईडरका

संक्षिप्त इतिहास भी लिखा है । यह इतिहास
कहां तक सत्य है यह पढ़नेसे विद्वानोंको
स्वयमेव निश्चय हो जायगा । यद्यपि यह संक्षिप्त
इतिहास एकपक्षीय दृष्टिसे लिखा गया है
और राजप्रकरण रासमाला आदि ग्रन्थोंसे
तुलना करते हुए यह सिद्ध करनेका दंग रचा
है कि यह जो कुछ लिखा है वह सत्य है
आत्म श्लाघा नहीं है । वाचकवृन्द इसका
निर्णय स्वयं करें ।

इस रिपोर्टमें एक स्थान पर " दिगंबर संप्र-
दायमां साधुओ तद्वदन नग्न रहे छे. आजना
जमानामां नग्नपणे विचरवुं महा कठिन होई
तेवा साधुओ कचित जोवामां आवे छे, नग्न
साधुओ-क्षपणको दिने दिने उग्र विहार अने
क्रियानी विकटताथी अविद्यमान थता गया, पण
तेने बदले शिथिलाचारी भट्टारको थया । तेने
वेशने लईने अगाउ रक्तांवरो कहवामां आवता" ।
उपरोक्त लेखमें लेखकने भट्टारक स्थापनके
लिये जो युक्ति प्रदान की है वह असत्य है
कारण भट्टारकोंका उत्पत्तिमें यह कार-
ण नहीं है किन्तु सन् १२९५ 'में आलम-
शाह-अलाउद्दीन बादशाहकी धर्ममें आस्था
नहीं थी । इसकी सामांमें रापो और चेतन दो
व्याख्यान भी थे जो कि नामितक मतके पक्ष-
पाती मंत्रवादी तथा विद्वान थे । ये बादशाह-
के मनको और भी धर्मशून्य करते रहते थे ।
एक दिन उन्होंने बादशाहको यहकथा कि
सर्व धर्मोंकी परीक्षा होनी चाहिये । जो सत्य
छंदरे उसके सिषाय सर्वको मुसलमान बना
लिया जावे । बादशाहने देहलीमें आज्ञा दी



किं सर्व अपने २ गुरुओंको लेकर आवें नहीं तो हमारा मुसलमानी धर्म स्वीकार करना पड़ेगा । उस समय मुनिवर महावसेन (महासेन) अपने तपोबलसे एक रात्रिमें ही संघ सहित गिरनार पर्वतसे आकाश मार्गसे देहली आये । और इमशानमें संप्रदशसे मूर्छित बालकको अपनी तपोमहिमासे सजीवन किया एवं उक्त दोनों मंत्रवादी ब्राह्मणोंने मंत्रोंसे अनेक कौतुक दिखलाये । एक समय उक्त द्विज पुत्रोंने मंत्रके प्रभावसे मुनिके कमण्डलुमें मछली कर दी और श्रीमुनिवर महासेनकी परीक्षा ली, तो मुनिवरकी तपोमहिमासे कमण्डलुमें पुष्प मालिकायें होगई । इसलिये बादशाह प्रभृति समस्त नगर कौतुकान्वित होगया फिर तो अपमान क्लेशित उक्त दोनों ब्राह्मण पुत्रोंने मुनिवरके साथ वाद किया और पराजित हुए, जिससे बादशाहने जैन दिगंबर मुनिवरकी मुक्तकंठसे प्रशंसा की और धर्मपर दृढ़ प्रतीति हुई, हिंसाकर्म राज्यमें बंद कराये और भी इन मुनिवरने चमत्कार बतलाये जो कि ईडर भंडार गुटका ने० ७ फे लेखसे स्पष्ट मालूम होता है । बादशाहकी बेगमको मुनिके दर्शनकी प्रबल इच्छा हुई तो बादशाहने मुनिवरसे प्रार्थना की तो विवश हो मुनिने वस्त्र धारण किये । तबसे ही भट्टारक स्थापित हुए ऐसा लेख और दंतकथाओंसे मालूम होता है । ये भट्टारक शिथिलाचारी और क्रियाहीन नहीं होते ये किन्तु विद्वान् और सदाचारी होते थे । यह उनकी अपरिमित ग्रन्थावलिके प्रत्येक सुज्ञ जान सके हैं ।

अस्तु, ये भट्टारक पद कोई मुनिपद नहीं है किन्तु ग्रहस्थाचार्यका पद है । ग्रहस्थ उपयोगी आवश्यक परिग्रहको रखते हुए धर्मरक्षा करते हैं । देखो जिनसंहितामें भट्टारक लक्षण—

सर्वशास्त्रकलाभिज्ञो नानागच्छाभिर्यत्नः ।

महामना प्रभाभावी भट्टारक इतीष्यते ॥

आगे चलकर लेखकने एक अद्भुत समस्या लिखी है । वह यह है—

ईडर पुराधिप महाशय श्रीनारायण सभा समक्ष वादिभूषण क्षपणक निराकरिष्णुनां वाग-उद्देशे घाटिल नगरे योथशूरपति रायमलदेव भ्रातव्य सहस्रमल राज्ञः पुरः पत्रावलंबन पुरसरं क्षपणक भट्टारक गुणचन्द्रनयिनां इत्थं प्रकारक प्रवचन प्रभावना समुत्सर्पण विधिवेषसां महोपाध्याय श्री ९ श्री शांतिचंद्रगणिनादानां चरणाम्बुजभृंगावयमाण गणि लालचन्द्रेण लेखि मुनि लामचंद्रं पठनार्थं साधने कुलवजरासका भी उल्लेख दिखाया है ।

इस लेखमालाके सत्यासत्यका निर्णय तो विद्वान् पाठक करेंगे तो भी सत्य घटनाकी सूचना करना मैं अपना कर्तव्य समझता हूं ।

प्रथम तो उक्त लेखकी सच्चीमें लेखकने रासमालाके ६५६-६५७ पृष्ठ दिये हैं । रासमालामें यह बात कहीं भी नहीं लिखी है । हां नारायणराय (द्वितीय) के राज्य कालका वर्णन है परन्तु रासमाला ६५६-६५७में यह वृत्त नहीं है । लेखकने किस ढंग और धोखेसे लेख मिलाया है । उसका नमूना देखने योग्य है ।

“शांतिचंद्र उपाध्याये ईडरगढना मझराय श्री नारायणजी सभामां त्यांना दिगम्बर भट्टारक वादीभूषणजी साथे वाद करी तेने पराजित कर्या होता, नारायणदासे जे बंडमां मदद करी होती ते बंड अक्रयरे जाते चढीने उत्तारी वेसाडी वीधुं ”

इन वाक्योंका संबंध भी तो नहीं मिलता । इस प्रकार एक प्रकरणमें दूसरा प्रकरण घेरांग बनावटी लिखना कितना हास्यास्पद है ? भला रासमालाके पष्ठ झूठ मूठ घोखा देनेको ही लिखे थे क्या ? यद्यपि ये बातें रासमालासे नहीं मिलतीं तो भी वादीभूषण कब हुए ? और उनका शांतिचंद्रके साथ विवाद हुआ या नहीं ? इस विषयके ऊहापोहमें इतना ही लिखना अधिक समझते हैं कि नारायणराव ईडरमें शाह अक्रयरेके अंत समयमें राज्यासन अलंकृत करते थे । देखो रासमाला पष्ठ ६४०—६९७ तक । अस्तु, इतिहासज्ञोंसे अक्रय वादशाहका समय ठिक्का नहीं है । सन् १९७२में (रासमाला पष्ठ ६९६) अक्रय वादशाहने बंड जीत कर दिया । नारायणराव सन् १९७३में हारे और छिप कर फोल्हा आश्रय लिया और वीरभदेवको राज्य दासन मिला । तत्काल पुत्र और पिता दोनों अश्वर वादशाहके दरबारमें गये और वीरभदेवने ममा राजा सिंहको पकड़ कर बंद किया, बादशाह प्रसन्न हुए, वीरभदेव स्वदेश आये कि पिता (नारायणराव द्वितीय) का स्वर्गवास हो गया । (देखो रासमाला पष्ठ ६९८) ।

रासमालाके आधारसे नारायणराव सन् १९७३

या १९७८में पंचल हो गये । अर्थात् नारायणका राज्य काल सन् १५४०—१९७३ तक रहा ।

अब वादीभूषण कब हुए, कौन थे, उनसे कौन कौन कार्य किये, कितने वाद जीते, कितने ग्रन्थ बनाये ? इन विषयोंका नीचे प्रमाणोंसे बहुत कुछ निर्णय हो जायगा ।

सद्वर नगरमें संवत् १६६४में वादीभूषणने सीताहरणरास लिखा है । ईडरगढ ऊपरके दिगम्बर जैन मंदिरमें कुछ प्रतिमाओंकी प्रतिष्ठा की है । उनका संवत् १६९१ माघ वदी ९ लिखा है । श्री केशरियाजी धुलेव रिपभदेवके मंदिरमें महान धूमधामसे संवत् १६६८में माघ सुदी ९को प्रतिष्ठा कराई थी । श्री वादीभूषणने श्री केशरियाजीके मंदिरका भी उद्धार उसी समय कराया था । पुनः पुनः लगातार कई बार केशरियाजीमें रह कर प्रतिष्ठा कराई । वादीभूषण महाराजने सं. १६९३में श्री तारंगानी पर प्रतिष्ठा कराई और पद्मभुकी प्रतिमा नानचंदगी....से हुई, यह प्रतिमा खंडित अभी तारंगामें मौजूद है । ईडर संभवनाथके प्रसिद्ध मंदिरमें सं. १६६१ ६४—६८में प्रतिष्ठा कराई और जीर्णोद्धार कराया । ईडरके पार्श्वनाथके मंदिरमें सं. १६६९में पद्मभुकी प्रतिष्ठा कराई । और इसी वर्ष स्वर्गरोहण हुए । वादीभूषणका मरम अनुमान सं. १६३५ में हुआ और ये जयपुरके रहनेवाले सिद्धवाक्य केन्द्रके शिरोमणि थे । संवत् १६९०के लगभग मठारामका पद मुनीभित किया । सं. १६९१में ईडरके गढ़के ऊपरके मंदिरमें प्रतिष्ठा प्रथम कराई । जिसका सेरा—



संवत् १६५१ वर्षे माघ वदी ५ सोमे श्री मूल-
संघे श्रीमद्भारकगुणकीर्ति तत्पद भट्टारक श्री वादी-
भूषण गुरुपदेशात् ईश्वर (इश्वर) वास्तव्य हुमड
दोशी आता भार्या लक्ष्मी सुता वाई जिलां श्री
नेमिनाथ प्रतिष्ठितं नित्य प्रणमति ।

उक्त प्रतिभाओंके लेखसे वादीभूषण १६५०
से १६६९ तक भट्टारक पदका सुशोभित
करते रहे । इन लेखमालाओंसे तो नारायण-
रावका वादीभूषणके समयमें अस्तित्व नहीं था
किंतु वीरमदेवका शासन था, पाठकगण स्वयमेव
ही विचार कर सके हैं । तो उक्त रिपो-
टमें शांतिचंद्र उपाध्यायने वादिभूषणको नारायण-
रावकी राज्यसभामें परास्त किया—यह लिखना
कितना असंगत प्रतीत होता है । और रास-
मालाका प्रमाण दिया वह भी रासमालामें नहीं
मिला । श्री विजयकीर्ति भट्टारक सं. १५६८
में विराजमान थे उनके पीछे शुभचंद्रजी हुए ।
यह भट्टारक न्याय शास्त्रके अद्भुत ज्ञाता थे ।
इन्होंने १६ वाद बनाये और पूजन
आदिके ग्रन्थ बनाये एवं न्यायके अनेक
ग्रन्थ बनाये हैं । इनका विशेष वर्णन पुनः
लिखा जायगा । शुभचंद्रके पट्टपर सुमतिकीर्ति,
सुमतिकीर्तिके पट्ट पर गुणकीर्ति और गुणकी-
र्तिके पट्टाधिकारी वादिभूषण थे ।

(देखो माणिकचंद जीवन्परित्र पृष्ठ ३१)

श्री वादिभूषणके पट्टाधिकारी- रामकीर्ति
(द्वितीय) सं. १६७०में विराजमान हुए और
उन्होंने वादीभूषणके विषयमें अनेक
प्रशस्ति लिखी हैं । पाठकोंके अबलोकनार्थ कुछ
यहां पर देना अनुचित नहीं होगा—

तद्वर्णकजयिकाशनपद्मबंधुः ।

जीयात्कुशदिमुयकैरवपद्मबंधुः ॥

कात्याकुहकतिमिरनाशनपद्मबंधुः ।

वादिभूषण गुर्जरित पद्मबंधुः ॥

यो नानागमशस्त्रैर्न निपुणो मार्गैर्गुरुः पूजितः ।

कर्णाटे कलिकालगौतमसमो भट्टारकाधीश्वरः ॥

वादेऽनेकजिज्ञा कुषादिगणितो रत्नप्रयालंकृतः ।

श्रीमान् शुभचन्द्रवद्विजयते श्रीवादिभूयो गुरुः ॥२॥

अर्थात् आचार्य वादिभूषण गुणकीर्तिके पट्ट-
पर असाधारण प्रतिभाशाली, न्यायशास्त्रमें
अतिशय निपुण, अनेक मान्य नृपतियोंसे पूजित,
अनेक आगमको जाननेवाले और कर्णाटक
प्रभृति देशोंमें अनेक विद्वानोंको पराजित करने-
वाले, गौतम समान तेजस्वी, यथार्थ नामवाले
अर्थात् वादियोंमें भूषण (शिरोमणी) वादिभूषण
गुरु विजय प्राप्त करो । गुटका नं. ८ पृष्ठ
२३८ में वादिभूषणके लिये यह लिखा है—

पार महोत्सव घर २ जय बोले, वादीचंद्र गुरु
गछ सोहाकर भावो । साद वीरा तन यात वीरध्वज
जन मन मोहन पुन पावो । वंश हुमड (यहां पर
हुमड वंश लिखा है) छ तिलक सोदित जिनमति
हुन गावो । कुभर (भासोज) सुदानणी (सुदी)
पचम (५) महायत दीक्ष धरावो । जीता अनेक
वादिगण जेने अद्भुत विल धरावो । तर्कवितर्क
विचार विचक्षण लक्षण वादीचंद्र मेहया ॥

इस गुटकेमें अनेक जगह वादिभूषणके वाद
जीतनेके गीत लिखे हैं । लेख बढ़ जानेके भयसे
नहीं लिख सके ।

दुर्वादिभदधर्तु वादे येन पराजिता

..... श्री वादिभूयो गुरुः

कुनयकोटि कुजपाटन पटुत्तनमदित दुर्भेतवादि

स्याद्वादनय तपित अनेक भविमन सेवाद ।

न्यायनिगम अपादनचंचू तर्कागम पोषित निनाद
(पीरम) देव नृपति पूजित श्रीवादिभूषण जीते वाद

इत्यादि अनेक प्रशस्ति मिलती हैं। वादिभूषणने कौन २ से ग्रन्थ निर्मापित किये यह विशेषतासे भंडार खुदने पर प्रसिद्ध किये जायेंगे।

उपरोक्त प्रशस्तिसे शांतिचंद्र उपाध्यायका वृत्त ठीक नहीं प्रतीत होता है। अस्तु जो हो, एक तो समयमें महान अंतर है, द्वितीय अपने आप दंत कथा रूप प्रशस्ति पर विश्वास प्रतीत नहीं है। उक्त लेखमें रक्तांबर क्षपणक शब्द आये हैं। रक्तांबर और क्षपणक शब्दोंका अर्थ बुढ़के यति होता है। भट्टारकोंको क्षपणक नहीं कहा जाता और न प्रसिद्ध है। शब्दचिंतामणि नामक कोशमें क्षपणकका अर्थ पृष्ठ २६९ में "बौद्धमतनो दिगम्बर साधु" ऐसा लिखा है और बौद्धगुरु प्रायः रक्त वस्त्र पहनते थे। शायद शांतिचंद्र उपाध्यायने कोई वादिभूषण बौद्ध साधुको पराजित किया हो। परन्तु उसका उल्लेख रासमालामें नहीं है। दूसरे उक्त लेख प्रमाण नहीं होनेका एक दूसरा भी कारण है यह है कि उक्त लेखमें (पृष्ठ ४८) ऊपर लिखा है ":-

वादिभूषण दिगम्बरिण्यूनं पागच्छेने पाट-
शिलनगरे बोधजुषति राममल देव भ्रजन्त्य सर-
रामस्य रामः पुत्र ७२४४४४ पुत्रः ४४४४ क्षपणक
भोग्य मुनयश्च अविना।

यह तो संस्कृतमें लेख है और माया मूल रामकी पुस्तकमें "वादिभूषण दिगंबर मीठी पाथो नय नयकार २"

मूल ग्रन्थमें केवल वादिभूषणको जीता किया है और उस ग्रन्थकी प्रशस्तिमें मुनकी-
दिको भी जीता लिखा है। मगसि ठीक है

या मूल ग्रन्थ यह तो पाठक निर्णय करें; परन्तु एक बड़े मजेकी बात तो यह है कि वादिभूषणके गुरु गुणकीर्ति थे। क्या गुणकीर्तिके पट्टाधिकारी होने पर भी वादिभूषण पट्ट पर विराजमान हुए? यह बिल्कुल सफेद झूठ है! इस प्रकार लेखकको उट्टाटांग लिखना अच्छा नहीं है।

रिपोर्टमें १७महली चोकीवाले दिगम्बर जैन मंदिरको अपनानेके लिये भी उल्लेख किया है परन्तु प्रमाण कुछ भी नहीं। केवल राज्यतंत्रसे संबंध मिला कर धृष्टताका हठ साहस किया है। उक्त मंदिरमें वर्तमानमें भी जैन दिगम्बर मूर्ति भग्नावस्थामें मौजूद है। साक्षात् हरण करना यह कैसी कुचाल? अस्तु यह मंदिर दिगम्बर जैनोका है और उसके अनेक कारण तो मंदिरके देखनेसे ही प्रतीत होते हैं। हम भाइयोंको सूचेत कर शांतिकी प्रार्थना करते हैं। हो सका तो इंदरका सच्चा इतिहास भाई-योंकी सेवामें पुनः उपस्थित करूंगा।

शोबक—

नन्दनलाल जैन वैद्य विशारद।

नवीन ग्रंथ—

मुखसागर भजनावली।

जैन धर्मग्रंथ ग्र० शांतलजप्रसादजीके बनाये दृष्टे हम नवीन मर्मभेदग्रंथमें कोई २५० उद्देशात्मक मर्मनोंका अर्ध संग्रह है।
ड० १९९ और मूल्य सिक्के ॥८॥

मैनजर-दि० जैन पुस्तकालय-गुरग।



महासभाके नाम

खुली चिट्ठी ।

श्रीयुक्त महामंत्री, दिग० जैन महासभा,
सादर गुहार । अपरंच समाचार यह है कि
महासभाकी सीमा कहाँ तक है ? इसमें क्या
सभी प्रकारके दिगम्बर जैन शामिल हो सके
हैं ? क्योंकि महासभा विधवाव्याहको बुरा
अवश्य ही समझती है और उसका कर्त्तव्य भी
है कि इसके अनुसार वह उसका खंडन करे
और जो लोग विधवाव्याह करने कराते होंवें
उनको महासभामें सम्मिलित न करे और यदि
सम्मिलित होंवें तो उन्हें पृथक् कर देवे क्योंकि
यदि वह निरंतर खंडन न करेगी और उन
लोगोंको शामिल रखेगी तो शास्त्री पंडितजनोंके
वचनानुसार वह विधवाव्याहकी पक्षपातनी हो
जावेगी । इस हिसाबसे यदि वह विधवाव्याह
करने करानेवालोंको पृथक् करेगी तो दक्षिण
प्रांतका एक बहुत बड़ा भाग (सेतवाल; पंचम,
जुवर्ध, कासार आदि जातियां जिनमें सैकड़ों
वर्षोंसे यह प्रथा प्रचलित है) महासभासे पृथक्
हो जावेगा और फिर यह महासभा केवल
उत्तर प्रांतीय रह जावेगी कारण कि वे लोग
अब तो इस प्रथाको बंद कर ही नहीं सकते हैं ।
यदि कोई कदाचित् अपना निजी सम्बन्ध ऐसा
न करे तो समाजसे पृथक् कर नहीं सका है,
अब ऐसी दशामें महासभा महासभा नहीं
कही जा सकती है और न वह समस्त दिग-

म्बर जैनियोंकी ओरसे उत्तरवायित्व रख
सकेगी । इसी प्रकार तीर्थक्षेत्र कमेटीकी कार्र-
वाई भी एक देशीय उद्देशगी और बड़ा भारी
झगड़ा खड़ा हो जावेगा क्योंकि तीर्थक्षेत्र क-
मेटी महासभाकी शाखा है । उसके भी वे ही
उद्देश्य हैं जो महासभाके हैं इत्यादि ।

यदि महासभामें दक्षिण प्रांतीय भाई शामिल
हो सके व हों और वह समस्त भारतवर्ष व
समस्त दिगम्बर जैनी मात्रकी है, तो वास्तवमें
महासभा है ।

अब प्रश्न यह होता है कि जब महासभामें
समस्त दिगम्बर जैनी जिनमें विधवाव्याह कर-
नेवाले भी हैं शामिल हैं और हो सके हैं तो
धीरसंघ पर क्यों ऐसी शंका की गई कि वह
विधवाव्याहका यदि खंडन नहीं करता तो
उसका पक्षपाती है । यदि यह कहा जाय कि
महासभा ऐसे झगड़ाखू विषयोंको हाथमें न लेकर
वह परस्पर अविरোধी बातोंको लेकर संगठित
हुई है तो ठीक है और इसी प्रकारसे कार्य
चल सकता है कारण कि यदि पृथक् २
विचारों वालोंके अनुसार महासभाके विभाग
होंगे तो वह फिर महासभा न रह जायगी ।
कारण कि कोई शुद्धजायी, कोई तेरापंथी,
बीसपंथी, छापा पंथी, हस्त लिखित पंथी,
विधवा विवाहके विरोधी और पक्षपाती इत्यादि
अनेक भेदवाले भी सामान्य धर्म अपेक्षा मिल-
वर कार्य कर सकते हैं और विशेष धर्मापेक्षा
पृथक् ही हैं ।

यदि इसी प्रकार धीर संघ भी सामान्य
प्रकार परस्पर विरोधी बातोंको स्थान न देता

હુઆ ઓર અપને નિયમોંકે અનુસાર (જિનમેં
કિ પાશ્વિક શ્રાવકકી યોગ્યતા બતાઈ ગઈ હૈ)
મર્તી કરતા તો કયા હાનિ થી ? હમારી સમ-
જમેં તો જિતને લોગ શામિલ હોને વે સવ સત્ત
વ્યસન ત્યાગી, નશા ત્યાગી, દેવ ધર્મ ગુરુકે
(દિગમ્બર જૈન સિદ્ધાન્તાનુસાર) અનુયાયી
તથા કિસી એક ભાષાકે જાનકાર કિયાદિ, વહ-
નેમેં લાંબ હી થા, ફિર ન જાને કયોં ઉદયપુરમેં
પંડિત શ્રુવચન્દની શાસ્ત્રી, પં૦ નન્દનલાલજી,
બાબા ભાગીરંજી વર્ણી, વ્ર૦ જ્ઞાનાનંદજી આદિને
શ્વક્રમ વીર સંઘ પર પ્રબલ આક્રમણ કિયા ? કયા
ઇન્હોને સંઘકા કોઈ કામે અનુચિત દેખા થા ?
જવકિ ઉસકી સમી કરિવાઈ મહાસભાસે પ્રતિ-
કૂલ નહીં થી તો ઇસ પ્રકારસે ઉસપર આક્રમણ
કરના, ઉસે ધર્મપાતક બતાના, સર્વપા અન્યાય
હૈ । કયા મહાસભા વ્યસન ત્યાગ, નશા ત્યાગ,
પદના, પદાના, દેવ ધર્મગુરુકે શ્રદ્ધાન આદિ નો કિ
વોર સંઘકે નિયમ વ ઉદ્દેશ્યોમેં હૈ ગુરા સમજતો હૈ ?
યા કોઈ બી નિયમ ઉસકા મહામંત્રીકે પ્રતિકૂલ
હૈ તો પ્રગટ કરના જાદિયે; કયોંકિ વીરસંઘ
કિસીકોં બી ધોત્તેમેં ઢાલના નહીં
જાહતા હૈ । હમ જાહતે હૈ કિ આપ રુપા
કરકે હમ રી હમ ચિટ્ટીકા ઉત્તા કિસી જૈન
જ્ઞાને પ્રગટ કર દેવેંગે કિ વે મંચદો કયા મમજતે
હૈ ઓર મહામંત્રીકે દશિતકે વે માર્દે બી શામિલ
હૈ વ હો સજ્જે હૈ યા નહીં જિનમેં વિષય
વ્યાહ પ્રવચ્ચિ હૈ ? હમ ચિટ્ટીકે નિયમે ઓર
ઉત્તા મોંગેકી જાણવજ્જતા યોં તુઝે કિ કિન્ને
અદેનસજ્જા માર રત્નનેકાને મોગ વચ્ચે
ચિટ્ટીયાં વીરસંઘકે કિન્ન્ટ મિચ્ચ કર મોગોંદો

મઝકાતે હૈ । હમ ઉંનકી ઇસ કારિવાઈકો
અનુચિત સમજતે હૈ । એસા કુલિયામેં ગુઢ
ફોડના અન્યાય ઓર હરપોકપન હૈ, જો કુછ
બી કહના હોવે સુલાસા પ્રગટ હી કહ કર
ઉત્તર લેના ઠીક હૈ । આશા હૈ કિ આપ
અવશ્ય હી મહાસભાકે મહામંત્રીકી હૈમિયતસે
ઉત્તર પ્રકટ કરેંગે । આપકા—

અપમંત્રી, વીરસંઘ ।

રક્ષા-કંઘન-રક્ષોદ.

(જૈન મિત્રની પહેલીને વિસ્તારથી જ્ઞાપ)

દોહરો.

વાસી શહેર ઈંદોરના, નામ છે મુન્નાલાલ,
પહેલી લખી નિમ ગાનથી, અર્થે લખું દુઃલાલ.
વસ્તુ તેની એજ છે, શ્રાવણ મુદી માં,
પુર્ણિમા જે દોષ છે, હાઈ મજોરો થાય.
અક્ષર તેના પાંચ છે, પ્રગટી વિષ્ણુ કુમાર,
સાવરો મુનિનો રહ્યો, ઉપસર્ગ તે વાર.
જોગ બીજા અર પ્રથમથી, અક્ષર થાયે રૂપ,
તીર્થ પવિત્ર તે જાણીયે, પૂજે મોટા જૂપ.
બીજા અને પહેલા ઘડી, દાર અને મુખ નામ,
વેધ જન ઉપવેગમાં, આવે હરનિષ કામ.
પાંચ દાર વધો વગ, શુચી લેના છે અપાર,
આપે તે આદોગતે, હજી હાં નિરપાર.
પહેલા બીજાથી બને, રક્ષા શબ્દ એક,
હરિવેળા મર્મ છે, જેમાં મીન ન મેખ.
તીજા મોધાથી બને, અન્ધ શબ્દ નિરપાર,
સપ્ત દવ્યમાં જાણીયે, મોરે જાણું નામ.
દર પાંચ જે આરથી, થાય પરિચ તમામ,
શુદ્ધ બને જન આત્મ, પ્યાન પારે આમન.
હર્મ મગ દો દરી, થાયે નિદ રાવન.
મોષા પંચમ હાંમથી, ઘાયે મનનું નામ.
સદમી કાષ્ટ દહે વગ, દો કાલકનું નામ,
મન લે પામે દોષ તે, દોષ મુરખ કરગર.
વેગ મોઝ અને વગ, રુવા દે નિરપાર,

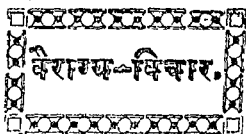


નિર્ધન જે વિદ્વાન છે, કરે ન ગણુતી કૈવ્ય.
નિજ કન્યા દેવે નહિ, એ ધનનો મુગ્ધાપ,
ધનના મિથ્યા ગર્વથી, પાપ કરે બહુ વીધ.
નૃણુવત સર્વને દેખીને, ગર્વ ધરે અધરીત,
નિર્ધન તે ધન કારણે, કરે વિકંચ ન્યાય.
આપે શુદ્ધ કે બાળને, ધન માટે કન્યાય,
પાત વિચારે તે નહિ, કે પુત્રીને દુઃખ.
સ્વ સુખ આપ વિચારીને દે પુત્રીને દુઃખ,
એવા જનને આપશે, નિજ પુત્રીઓ શ્રાપ.
મરણે સ્વાર્થો તે જતો, દુષ્ટ તેહ માઆપ.
અશુભ કૃત્ય તે આદરે, છોડી નિજનો ધર્મ.
જાણુ થયે તે આપશે, શુદ્ધ પતિને મર્થ,
આ જન્મે દુઃખ ભોગવી પુત્રી પિતા સંધાય
અતે નરકે તે જશે, દુઃખ ભોગે અસહ્ય.
અહો જૈની વિચારીને કૃત્ય એકથી આજ,
સુખ પુત્રીનું ધારીને, દેજો યોગ્ય વર સાથ.
ઉપરના શબ્દોથી બને, નામ જે એક પ્રકાર,
રક્ષા બધન નામ છે. ઉચ નીચ તહેવાર.
પુણ પર્વ જિન ધર્મનું, કહ્યું છે શાસ્ત્રોમાય,
અદ્ય બુદ્ધિ હું શું કહું, પાણો ભરી સુખ હેય.
પૂર્વ પહેલીની કંગો, જૈન મિત્રને કાજ,
કહે સુઆળક જૈન યદ, વહી શ્રીજિનાગજ. ✕
સાહિત્ય સેવક—દુઃખી હૃદય.

* વીર સંવત ૨૪૪૩મા જૈન મિત્રમાં રજાબ ધન
પેરે પહેલી અર્થાત્ સમસ્ત્યાં દશેર નિવાગી સુતા-
શ્ચ જૈન તરફથી પૂછેથી, તેનો ઉત્તર એ દિંદીમાં
ખેં ખાકેલા, તેનું ગુજરાતી ભાષાંતર ઉપગોગી
પાનવાથી સખી મોહ્યું છે

જલ્દી લિખો ! ધોડી કાપી હૈં !!!
દાનવીર સેઠ માણિકચન્દ્રજીકા
જીવનચરિત્ર ।

૧૯૦૦, સચિત્ર ઔર મૂલ્ય સિર્ફ ૧ !!
દિગ્ગમ્વર જૈન પુસ્તકાલય
ચન્દાવાહી—મુરત ।



(લેખક:—એક દુઃખી હૃદય)

મનાકથી ચાલુ.

સ્થળ—બનાર—ચોક.

પાત્રો—કોટવાવ, ધનદત્ત શેઠ, યશપાલ શેઠ,
સિપાઇઓ અને પાઠશાળી સચીવ સહિત નરપતિ
(રાજા)

(કોટવાલ ધનદત્ત તથા યશપાલને પકડી બળ-
રમા થઇ ન્યાય મંદિર તરફ લઈ જાય છે. રસ્તામાં
મધ્ય ચોકમાં આવતા કોટવાવ ધનદત્તને ઉદ્દેશી
કહેવા લાગ્યો)

કોટવાલ—કેમ શેઠ, આપ સમગ્ર થઇ પરાયા
માણસને જિભત્સ શબ્દોથી અપમાન આપો તે
સારું કહેવાય કે ?

ધનદત્ત—સાહેબ, આ માણસ (યશપાલ શેઠ)
પગલા નથી, પણ મારા વેવાઇ અને વળી ગાંતિના
છે, તેથીજ આટલાથી માંડી વાળવું પડ્યું છે,
નહિ તો ક્યારનોએ યમમનનો રસ્તો મપારી
દીધો હોત.

યશપાલ—(ધનદત્તના વજ્ર પ્રકારથી ક્રોધ
કરી) હવે બસ ૧ નેચો છે મોટો મારકણીયાનો
છોકરો છું તે મારાથી કંઈ અબલ્યું નથી. જો
હવેથી એક પણ શબ્દનો ઉચ્ચાર કરીશ, તો
જોયા જેવું થશે.

(યશપાલના આ જવાબથી ધનદત્ત ખીજવાઇ
ગયા અને યશપાલને મારવા દોડ્યા તેમજ કેટલીક
અધરિત ગાળો પણ દઇ વાળી.)

(કોટવાલ પોતાની હયાતિમાં તકરાવ થતી
અટકાવતાં ધનદત્ત શેઠને એક ફટકો લગાવી પોલી-
સને હવાયે ક્યો.)

(એટલામાજ તે નગરનો ગળ ત્યાં આવી
મથો.)



નૃપતિ—અરે રત્નસિંહ (કોટવાસનું નામ) ! આ ઉચ્ચ ગણ્યતા શ્રેયીગણેને કેમ બંધનયુક્ત સ્થિતિમાં ઉભા રાખ્યા છે ?

ધનદત્ત—હા, મહારાજ, કોટવાસ સાહેબ નાહકના હમારી ધન્યતા પર પાણી ફેરવવા પ્રયાસ કરે છે.

રત્નસિંહ—હવે ખેસ ધન્યતાના ખાં ! એક અક્ષર પણ બોલ્યો તો આ ફટકાનો બોમ યજું પડશે.

હજુર, આ સંદિમાંથી આ ધનદત્ત શેઠે પોતાની અઠા વર્ષની પુત્રી આ યજ્ઞપાલ શેઠના પચાસ વર્ષના પુત્ર સાથે પરણાવવા દરાવ કર્યો અને તે આ દુષ્ટ હૃદયના અને કૃષ્ણવાનનો ડોળ કરનાર યજ્ઞપાલ શેઠે મંજુર રાખ્યો અને લગ્ન દિવસ પણ સુકર કર્યો, પરંતુ કોણ જાણે કે શાધી તે લગ્ન માતિના પંચોને અધરિત લાગ્યું, જેથી તેઓએ બંને શેઠને બોલાવી એ સંબંધ તોડી નાંખવા સુચર્યું, પરંતુ આ દુષ્ટ હૃદયના સ્વાર્થોધ યજ્ઞપાલે તેમ સંબંધવાનનો ડોળ કરનાર ધનદત્તે માન્યું નહિ, જેથી માતિવાળાએ દિલગીરી થઇ ઉત્તમ (બંને) ને માતિમાંથી બદિષ્ઠકર કર્યાં.

માતિ પંચમાંથી પેર જતાં ઝવેરીચીકમાં ઉત્તમ સામસામી ગણેલો વર્ષાદ વર્ષાવતા દત્તા, ત્યાં દબરો મનુષ્યોની દ્વન્ધવી દત્તી અને રૂઢ વર્ણિતનું રૂઢ દમ્બ ગ્રાપિત સંભાળ સંભળતા દત્તા રોજ અરસામાં યજ્ઞપાલ શેઠને રૂઢાવરતા હોવા છતાં એકાએક ક્રોધ મરી આવ્યો અને તેમને લાકડી ઉપાડવાનો મનુની તુરંત ક્રિયા થયો અને ધનદત્ત શેઠને એક સપાટી વગાડી પણ દિધા, જેનાથી તેમની પાપવી જાળીતોરન થઇ મઠ અને તેપણ જાળીતોરન થતા જતા મવા. આ જનાર મારી લાગ-રૂંઆ જનનો દત્તો, જેથી મારી પેલિસતની રૂઢ આ દરવાના ઘરાણી મેં બંનેને શાંત પાડ્યા, પણ તેની દરે અક્ષર સ્પર્શ નહિ, જેથી નિરાપે મારે ડાંગરનો નિયમને માન આપી બંધન યુગ દરવા પડ્યા અને તેમને તેમ સ્થિતિમાં દુઃખ આપી દમ્બરો લાવેલો દત્તો દરવાન આપ અને પધાવ.

ધનદત્ત—મહારાજ, હું પરતાઈ છું, પણ હવે સુવા પછી રહાપણ શા કામનું ? બાપજી, હું ગરીબ માંથી જાઈ છું. મને આપ એવો રસ્તો બતાવો કે-મારી પુત્રીનું લગ્ન પણ થાય અને માતિવાળા મારા તરફ રહેતો રાખે.

યજ્ઞપાલ—મહારાજ, બધી વાત ખરી પણ મારા પુત્રના નિમિત્તની કન્યા બીજી આવી શકશે નહિ. એકને માટે નિર્માણ કરેલી કન્યા બીજાને આપવી એ મહા અધર્મ ગણાય.

બાપજી, મારે આટલે એકી વર્ષે વંશ જશે તેનો વિચાર કરી મારા પુત્રનું લગ્ન થાય તેમ બતાવો.

નૃપતિ—શેઠીવાઓ, મને ઘણી દિલગીરી થાય છે કે-ભારતવર્ષમાં હિંદુઓની ચાર વર્ગો પેરી ઉચ્ચ વૈશ્ય અર્થાત વાણીયા કે-જેઓ વંશ પરંપરાથી જ્ઞાન પામેલા અને વિચાર પૂર્વક કામ કરવાવાળા છે, જેઓ અગમ શુદ્ધિવાળા કહેવાય છે, વળી તેમાં પણ તમે તો વીર પ્રભુના સેવા એટલે કે શ્રાવક અર્થાત જૈન ધર્મનું અવલંબન કરવાવાળા છે, દિસાતા પરિવાગી છે, અહિંસા ધર્મના પ્રચારક છે, પ્રાણી માત્ર પર દયા કરનારા કહેવાયો છે, તો તમેજ ન્યારે આમ તમારાં પુત્ર પુત્રી પર દયા ખાતા નથી, પુત્ર પુત્રીના બલિવ્યનો વિચાર બાંધતા નથી, તેમ માતિના નિયમેને પણ પાળતા નથી, તો પછી તમે શ્રાવક યાના ? તમે અદિવા ધર્મો ધર્મો પાળવાવાળા શેના ? વળી ખતાવો કે-તમારા કર્મો ચાલતમાં આઠ વર્ષની પુત્રીને પચાસ વર્ષના રૂઢ અગર સાથે પરણાવવા ખાતા છે ? વળી ખતાવો કે-તમારા દયા શાસ્ત્રમાં આપો અવોળા જેમાં તોડાય નહિ, એમ લખ્યું છે.

શાસ્ત્રમાં તો એમ ખાત લખેલું છે કે-વિવાહ કર્યા પછી વર કેવંતર આવેલો જન ને જન વરે સુધી ખગર દવાય નહિ, તેમ નરુસક થઇ જન અંગેર થાય. શેઠી શા જનક, યા ક્રમવાનને પત્ની સંબંધ કરેલો હોય નહિ નિહાં તે, એ સંબંધથી વર કન્યા જનક બંને નારાજ થાય.

તો પંચને જાણી વિવાહ ભંગ કરવો અને બીજે યોગ્ય સ્થળે લાયક નોકરી સંપાદિ બાંધવો.

વળી જાતાં જો તમારા કયા શાસ્ત્રમાં સામસામી ગાળાગાળી ટરે કરવાનું જતાવું છે. કહું તમારા શાસ્ત્રમાં તો ફરિયાદના સર્વે છેવે ભાગ છે, જેથી એકબેકથી સલાહસંપત્તિ વર્તવું અને દોષની પણ લાગણી દુખાય એ સમજ-એ રાઈ કરવું નહિ, એમ જાતવેલું છે.

મને કહેતાં પણ શરમ આવે છે કે-તમારા જેવા શ્રીમંત અને ગાલવાળા વેશો જ્યારે આમ નેદરે અને ઘાતકીપણું જતારી પોતાનાં સંતાનોના મુખ પર રાધ્યા મુકશે, તો જિવારા ગરીબ અને હુદ્દની તો વાતજ થી કે જેને સારાસારનો વિચાર નથી, જે પોતાનાં સંતાનોને યોગ્ય નોકરી વિચાર પિત કરે છે. તમોને જરા પણ શરમ આવે છે કે-તમારું આવક કતવ્ય થું અને તમો કરો છું ?

છપો.

આવક તેડું નામ, જે જે સત્ય અનુસરતા, આવક તેડું નામ, દિલથી હિંસા ત્યજતા. આવક તેડું નામ, ચોરી નહિ મુદ્દલ કરતા, આવક તેડું નામ, ખરેલી ફરથી ત્યજતા. વળી આવક તેડું નામ છે, જે યુધ્ધી નવ રાખતા; નિજા ધર્મ કાર્યે દડ રહી, સત્ય પંથે મહાલતા.

(૨)

મોવક તેડું નામ, દાન કન્યાનું કરતા, આવક તેડું નામ, સંતતિ મુખને ધરતા. આવક તેડું નામ, પુત્રીનું ધન નવ લેતા, આવક તેડું નામ, નીતિને પંથે પગતા. વળી આવક તેડું નામ છે, જે ક્યેકા દિત રાખતા; રૂદ્ધ લગ્નને બાળલગ્ન, દર-ચી પરિભાગતા.

(શાદ્દલ વિકિડીતમ)

એવા આવક વંશમાં નિપજ્યા, તેથી પ્રજા મુખને. અલ્પી જીમ યુધ્ધર વપ વળી, લોકો પૂજે વરને. જળ મન્દી સમહેત ભાવ ધરતા, બધું થયા ધાર્મિકો. આચાર્યો જિનસેન કુંદ જનમ્મા, જેના થયા આવકો.

(પસંત તિલકાવૃત્તમ)

રહે સુવંશ પ્રગટી જગમાં નરો જે, અર્પી છવન નિજતણું જગમાંહી પ્રેમે; બેલી પ્રાપ્તી મુકારીત જગમાંહી જેણે, પાપે નશું લગી લગી દીવથી હું તેને. કમો તણો જય કરે જિન નામ કહારે, જેનો સુવંશ જગમાં જનને દીપારે; જેના સુપંથમાં જન શિવ ભણે, સ્વર્ગો તણાં સુખથકો વધુ મુખ જ્યાં છે. - ૨

એજ ખરા આવક છે અને એમના પ્રમાણે તમે વર્તન સુધારો અને બધિયમાં તમારી પ્રભુ-તમારી સંતતિનું શ્રેય છડો. બાળલગ્નથી તમને, તમારી સાતિને, તમારા સમાજને અને તમારા દેશને સુદૃઢ તુકશાન છે. વૃદ્ધલગ્ન અને કનૈઃકાંથી પણ તેમજ છે.

જળી તે દુષ્ટ પ્રથાઓના પ્રતાપે પતિ પતિને સામ-સામી અણમો ઉત્પન્ન થાય છે અને તેનાથી બનેને પ્રેમ જામી શકતો નથી. તેમજ તેમના પ્રેમનો આખરે અંત આવે છે અને તેમ કરવા જતાં વખતે એકદલ દંપતિના સૌભાગ્યને પણ હાનિ પહોંચે છે. શેઠિયાઓ! પ્રેમ ત્યાંજ મુખ અને પ્રેમ તેજ સંસાર સાગરમાંથી પાર કરવાવાળી વસ્તુ છે. જેમ છપર પ્રણે પ્રેમ કરવાથી, તેના ચિદ્રૂપ સ્વરૂપનું ધ્યાન કરવાથી અને આત્માનું શોધન કરવાથી આ છવ સંસારનાં તુચ્છ સુખોની ત્યાગ કરી પરમ દૈવિક અને અદ્વૈતિક સુખનો સ્વાદ કરવા આગળ વધે છે. અને અંતે તે સિદ્ધ બુદ્ધિને પ્રાપ્ત થાય છે, તેથીજ રીતે પતિ પતિને સામસામી પ્રેમ થવાથી સંપૂર્ણ મુખનો મોના થઈ અંતે મનુષ્ય દેહનું કરવાણું કરે છે.

તમારી સાતિ-તમારા ધર્મ સંપદે વધુ હું જાણતો નથી, પણ મને આશા છે કે આકલેથીજ તમારું મન તમારાં સંતાનોના ભલા તરફ ઉતર્યું હશે.

શેઠિયાઓ, માનો ને માંધે રતે દામ ચલાવો, નહિ તો આખરે નિરપાયે હમારે ન્યાયના બંધા-રજુમાં ઉતરી અમલતે રસ્તે દોરણું પડશે.



ધનદત્ત—મહારાજ, મ્હારે હવે મારી કન્યા
યશપાલના પુત્ર અરે ! જદ સમાન તે શેઠીયા
મોયે પરણાવવી નથી, પણ યશપાલ મારા સામે
અદાલતે દોડે તેનું શું કરું, જેથી ડરના મર્યા
હા, હા, હાં છું, બાકી વિવાદ થયો ત્યારે તેમના
પુત્રને જેવા સિવાય-પચીસ વર્ષનો જાણીનેજ
વિવાદ કરેલો, પણ પછી ચાલીશ વર્ષની વાત
જાણવામાં આવી, ત્યારથી માફ મન ઉદાસજ
રહેલું હતું, પરંતુ ગાંધિના બંધારણને લીધે
ઈલાજ હતો નહિ, જેથીજ લગ્ન દિવસ મુકરર
કરતા મુધીનો વખત આવી પહોંચ્યો. બાપજી,
તમે કહો તેમ કરું.

(આનંદપુર નગર સાત લાખ બાણસની વસ્તી-
વાળું આગાદ શહેર હતું. તેમ ત્યાં તે શેઠીયાઓની
નાતનાં ૨૦૦૦ થર હતાં જેથીજ સામસામી
પિછાન ઝાણી હતી.)

નૃપતિ—શેઠ, તમારે નિર્ગિત રહેવું. હું હજુ
એક વખત યશપાલને સમજાવી નેકડું, પછી તેનો
રસ્તો કરતાં મુક પડે. કેમ યશપાલ શેઠ, તમે
આ વિવાદ ફોફ દર્શાવો કરાર ધનદત્ત શેઠને લાખી
આપો છો કે નહિ ?

યશપાલ—સાહેબ, ગમે તો મારી તમામ
મિલકત નાશ પામે મા હું અને મારા પુત્રો
નાશ પાળીએ, પણ તે વાત મારાથી બનવાની
નથી. મહારાજ, બેઅદબી માર કરશો ?

નૃપતિ—શેઠ, માનો, હજુ માનો અને ધનદત્તની
નિર્મળ જાગ્રાને શિરથી વંધાવ્યતા ફરી બધા
પાઠી લાઇ ર્યા અને એમાંજ તમે સુખી થશો.
તમારા જેવા નીચ પુરોએજ જાગ્રાજ્ઞ અને
જદજ્ઞની થયા મુસાદી લીધી છે, પણ નેકડું પુ-
કે તમારો વિચાર કેટલે દુરી ખરે અરે છે.

યશપાલ—મહારાજ, મારી ગાંધિજીની તક-
કામમાં રાજ્યએ વચ્ચે પડ્યુંએ ન્યાય વિદ્યાર્જન
છે. કેટલાક વર્ષમાં-કેટલાક વ્યવહારમાં રાજ્યએ
હાય લાવેલો રહેલો નહિ.

રાજ્ય—પ્રજાને મુકર્ષે મારવડી એ રાજ્યનો
ધર્મ છે અને તેથીજ મેં રાજ્ય-વ્યવહાર નામનો
નો નિયમ પડી કાઢ્યો છે અને રાજ્ય વર્ધમા

પસાર પણ કરી દીધો છે તે તેમને બખર નહિ
હોય. બસે બખર ન હોય પણ અત્યારનાજ મારા
દુકમને માન આપી તમારે ધનદત્તને કરારનામું
લાખી આપવું પડશે.

યશપાલ—મારાથી મારી ઇજ્જતને ખસેલ કર-
નાર કોઈપણ કાર્ય થઈ શકશે નહિ, તેમ કરારનામું
પણ લાખી શકશે નહિ.

નૃપતિ—(શોધ કરી) અરે રત્નસિંહની બો-
હાળ વધુિક સમજાવ્યો સમજે તેમ નથી, તેને
એકદમ લોહન-ધર્મી બંધનચુકત કરી દરબારગઢમાં
હાજર કરો (એટલું કહી રાજ્ય નગરચર્ચાએ
ચાલી નિકળ્યો.)

(રાજના ગયા પછી કોટવાએ પોલીસને યશ-
પાલને દરબારગઢમાં સમ્પત પેહેરા સહિત લઈ
જવા દરબારનું અને ધનદત્તને તેમની પુત્રી મારે
થોડા વર શોધવા કહ્યું, અને પોતે ઓફિસે જવા
રવાના થઈ ગયો.)

(પોલીસ અને શેઠ યશપાલ બન્ને વચ્ચે
દરબારગઢ તરફ જવા લાગ્યા. રસ્તામાં રીખાત
લોકો શેઠને મરકરી કરી ચીડવવા લાગ્યા જે શેઠથી
મંડન નહિ થવાથી આખરે તેમણે શુભ રસ્તો
આરંભ્યું. દરબારગઢ જતાં મુધી રસ્તામાં પક્ષો
વખત પોલીસે શેઠને દંડ પ્રહાર પણ કર્યા હતા
પણ પુત્રવધુ મોહુથી જદ બચ્ચર તે બધું સહન
કરતો હતો.)

(એક બાણ યશપાલને બંધનમાં રાખે
રાજ્યએ ધનદત્તની હાકરીને તેમ નગરના દર
સાધારણ રિપતિના વધિકના પુત્ર સાથે પરબાર
સારી કે જેની ઉમર ૧૭ વર્ષની હતી. હજુ વખતે
પોતે પણ હાજર રતા.)

હજુ કાર્ય જદ રવા પછી રાજ્યએ યશપાલને
ન્યાયની કેઈમાં હાજર કર્યો ત્યાં તેમને બચારને
પુરાતો માળ્યા સિવાયજ ગાંધિ મુખારજા નિયમ
ક માયમ પ્રમણે ર. ૫૦૦ ના દંડની સા-
સાથે ચોરીત કયાક કેદ ર્યો, યશપાલે બચાર
પક્ષો લખાવેલ કરી, પણ તે લખાવી વર્ષ
અને પોતે દંડ અરેજા થયો, કેદ મોખાવી
હજીજન મળે પુત્રવધુ મંડ અને વંદ પણ

કેમકે ત્યાર પછી કોઈએ તેમના પુત્રને કન્યા આપી નહિ કારણ કે તેમની શાંતિઓએ તેવાઓને કન્યા આપવા બંધી કરી હતી.

હું ઉપસેા સંવાદ વાંચી ઘણેજ ગુણી થયો અને મને અહોભાગ્ય સમજવા લાગ્યો કે હજુ દીક છે કે મારા પિતાને શિર કંઈ ઉપાધિ નહી નથી નહિ તો ટકાના બની જાત, એમ વિચાર કરી સંસારની અનિત્યતા સમજી તે વખતે ધરમાંજ રહ્યા.

આ વાતને યોગદ દિવસ થયા પછી એક વખત મારા પિતાએ મારાં ગૃહિણીને કંઈક કાર્ય કરવાનું કહ્યું હશે, જે તેણે કહ્યું નહિ અને ત્યારે મારાં પિતાએ કામ ન થવાનું કારણ પૂછ્યું ત્યારે જવાબ આપ્યો કે-હું કંઈ તમારું કોડીપણ કરવાને આવી નથી, તમારે કાંઈ તો કરે, હું તે કાર્ય કરવાની નથી. તમે વધુ સંતાપશે નહિ. વહુને ઉદ્ધત જવાબ સાંભળી મારા પિતા દિલગીર થયા અને વિચાર કરી બોલ્યા કે વહુ, આમ ઉતાવળા શું ચાઓ છો ? જરા ધીમે રહી કામ કરો. આવું નાજુક કાર્ય તમે નહિ કરો તો કોણ કરશે ? વહુ બોલી ઉઠ્યાં કે-શું, મારેજ માટે સરખાયું છે ? હમેજ એવી ગુલામગીરી કરીશું ? તમારે શને તો કરો નહિ તો સુધ જાવ, મને આ ધરમાં આવી ખેસવા વખત મળ્યો નહિ અને તમારા કામને અંત પણ આપ્યો નહિ, હવેથી મને કંઈ પણ કહેવું નહિ, નહિ તો હું મારા પિયર માલી જાશો.

આ જનાવંશી મારા પિતા બહુજ દિલગીર થયા અને કમને દોષ દેતા મન સાથે કહેવા લાગ્યા કે-ચંદન કહેતો હતો કે-મારું લગ્ન મારી સંમતિ સિવાય તથા કન્યાના ગુણની તપાસ કર્યા સિવાય થાય છે એમાં મુખ્ય મળશેજ નહિ, એ વાત ખરી પડી તે મેં ગોઠામાં મોટી જુલું કરી કે-પૂરું તપાસ કર્યા સિવાય મારા પુત્રને લગ્નાદીસને ત્યાં પરણાવ્યો. અરેરે દેવ ! મેં મારે હાથેજ મારા પુત્રના અવિધ્ય પર પરા દીધો અને તે બિચારને દુઃખી કર્યો. છાની તપાસ કરતાં તેનું વલણ પણ તેને લીધે

વેરાગ્ય તરફ ખેંચાતું હોય એમ જણાય છે તેનું કારણ પણ હું જ છું. ખરેખર શાસ્ત્રમાં કહ્યું છે તે ખરું છે કે આપ તેવા બેટા ને વડ તેવા દેટા, એવી રીતે તે તેના બાપ પ્રમાણે લગ્નાદીજ છે, તે નહિ હોય તો હવે થશે, તે તેના શબ્દો લાગર શાક્ષી પુરે છે. શાસ્ત્રમાં કહ્યું છે કે કુળવાન જેડે વિવાદ કરવો, પુત્રવધુ કુળવાન, રૂપવાન લાવવી એ વાત ખરી છે.

આમ વિચાર કરતા હતા કે અચાનક મારાં ફાઇ ત્યાં આવી પહોંચ્યાં. તેમણે મારા પિતાને (તેમના બાપને) ઉદ્દિગ્ન બોધ પૂછ્યું, બાપ ઉદાસ કેમ દેખાઓ છો ? મારા પિતાએ ઉત્તર વાળ્યો-કાંઈ નહિ, મારાં ફાઇ આવ્યો કરતાં બોલ્યાં કે ના બાપ કહે, તને મારા સમ ! કેમ ઉદાસ છે અને વિચારમ્મત સ્થિતિમાં હોય તેમ જણાય છે. ચંદન કંઈ બોલ્યા તો નથી ? આ સાંભળી મારા પિતાએ સર્વે હકીકત તેમની પહેતને કહી સંભળાવી તે સાંભળી મારા ફાઈ દિલગીર થયાં અને આંખમાં આંસુ લાવી ગદગદ કંઈ બોલ્યાં-અરેરે પ્રભુ ! મારાં બાપને આટલે વર્ષે જંપવા વખત આવતું, પણ પુત્રવધુ તેના માખાપ જેવી દુષ્ટ મળી. શું મારા બાપને હાથેજ સર્વ કામ કરવાનું લખ્યું હશે ? ના, ના, ગમે તેમ કરી હું મારા ચંદનને ફરી પરણાવીશ અને મારા બાપને કામથી મુક્ત કરીશ નેકું છું કે એ અચાન છોકરી ક્યાં સુધી તેનું ધારું દરે છે.

આવો પ્રહાર કરી મારાં ફાઇએ મને બોલાવ્યો, અને પૂછ્યું—

બાપ ચંદન, હું સાચું ન બોલે તો મારા સમ ! તારે ને રૂપિણીને જાને છે કે નહિ ? હું સરમ નાખ્યા સિવાય ખરું કહી દે.

મેં કહ્યું-ફાઈ, મેં સંસારમાં આવી ફાઇ પણ સુખનો દાવો લીધો નથી. મારી મા મને નાનપણમાંજ મુકી મરણ પામી, ત્યારથી મારા સુખનો સ્વપ્ન અસ્ત થયેલો છે. વળી જ્યારથી મારું લગ્ન થયું ને આ કર્મચંડાળ મારે ઘેર આવી ત્યારથી મેં સુખે ભોજન સરખું પણ કર્યું નથી. ધરમાં

કાશરથી શત્રુ ઘર ઘાલી ખેડો છે, તે ઘરનાં સર્વ માણસોથી વાતે વાતે લડી ઉઠે છે. ને તે સર્વ માણસ મનેજ મેણાંનાં વાદુ-પ્રહાર કરે છે, જેને સીધેજ હું રાત્રિ દિવસ વિચારચરત રહું છું. મને ક્યાં જવું, શું કરવું, એ કંઈ સૂઝતું નથી. એ મહારાં વડાજાં ફોઈ! મને આ દુઃખ દરિયામાંથી બચાવો, નહિ તો હું ડુબી જશ. મારે આ દુનિયામાં આશરો ફક્ત મારાજ છે. મારા પિતાએ મને આ સાલ વળગાડ્યું છે, જેથી મારે કંપચા વારો નથી.

ફોઈ, શું હિંદુ સંસારમાં આમ લાકડે માકડું, વળગાડવાના વિવાહો થાય છે? ના, ના. હું ઘણાજ જણને જોઈ છું કે તેમને મારા જેવું દેજ નહિ. આ માણસ તો વિચિત્ર જણાય છે. તે મને જુએ છે તો બરો ચાહે છે. જો હું ન હોઈ તો આનંદ, તેમ અંત આવી તે દહિ પણ હસમુખી રહી નથી. પણ પીયરમાં ને જીવતં એકીને ઘેર આનંદથી રહે છે, ત્યાં ધરનાં દામ પોતાનાં જાણી કરે છે અને અર્ધા ચિંતા વગર પરાયું સમજી કરે છે, એટલે તેમાં બીજાને આરોગ નહિ.

ફોઈ, મારાં વડાજાં ફોઈ, મારાથી આ બૂધી કપટજન સદન થતી નથી. તેમાં તો મને તેના માતા પિતાની ધિમવણી હોય. તેમ બાસે છે. ફોઈ, આપ રહો, સમજ્યુ છો, મને રસ્તો ગતાવો કે જેથી હું સુખી થઈ.

બાઈ, તારાં દુઃખ સંબંધી મારી છાતી શરી નાચ છે, પણ શું દાં, વાન વંદી મન છે મારે તમદાર પર બરોસો રાખ. જે જનવા દામ દરો તે જનરો, નહિ તો નારો વિવાદ કરના વખતે મેં તારા પિતાને ના કહ્યું હતું, પણ તે વખતે તેમને મારું કાં માન્ય નહિ ને નારું સમજ્યું તારી નાની ઉમરમાંજ ફરી રહ્યું, તેના આ રજ આપવાં પડે છે.

તપાસ કરે ને તારી ધ્યાનમાં આવે તો, સંબંધ જોડીએ કે જેથી ફરી આવા બનાવો થવા વખત આવે નહિ.

મેં કહ્યું-ફોઈ, હું આ એકજ લુખ્યાથી ચોંકી ગયો છું ત્યાં તમે વળી ખીજતી વાત કરો છો, બે મારા ભાગ્યમાં સુખ હોય તો આજ અવકાશ હોય, પણ મારા ભાગ્યમાં નહિ-એટલે કેનો દોષ કદીએ? હું ફરીથી લગ્ન કરી ખીજતો જાણીશ નહિ. વળી જો ભાગ્યેયો સારો સ્વભાવની મળે તો હરકત નહિ, પણ વળતે છે તેવી મળે તો હાજવા ઉપર દામ તરિકે વળી દહાડમાં વૃદ્ધિ થાય, મારે મારો તો દહાડા છે કે હવેથી લગ્ન કરવું નહિ.

મારાં ફોઈએ કહ્યું-બાઈ, આપણે તપાસ કરી થોડા સાથેજ સંબંધ કરીશું, પણ લગ્ન તો કરવુંજ પડશે. મેં કહ્યું-પણ મારો જીવ કાઈ ખીજતો સ્વરૂપમાં પરિણમે છે એટલે મને હવે એ સંબંધમાં કહેવું નહિ.

મારાં ફોઈ નિરાશ થઈ મારા પિતા પાસે ગયાં ને કહેવા લાગ્યાં-બાઈ, ચંદનના વિચારો પલટાઈ ગયા છે. તે ફરી લગ્ન કરવાનો નથી તેમ તેના જવાબોથી મને તેનો બરોસો પણ પડતો નથી, મારે આપણે તેની પૂર્વ તપાસ રાખવી નહિ તો પરતાવું પડશે.

બાઈ, જો મને તો એક સલાહ બતાવું. મારા પિતાએ કહ્યું-બહેન, ખુશીથી કરો. હું મારે સારાંજ બોલીશ એમ મને ખાતરી છે. મારાં ફોઈએ કહ્યું-બાઈ, હવે તું લગ્ન કરે તો મારાં કેમકે ચંદન એકનો એક પુત્ર છે તેમ તેના ગુરુશાસ્ત્રથી પુત્રની આશા દખાવ્યું નહિ, કેમકે પૂર્વ ચંદનથી સદવાસ થાય ત્યારેજ સંતાનનો સામ થાય, મારે તું ફરી લગ્ન કરે તો આપણા વંદનો અંત આવતો અંતકે કેમકે કહ્યું છે કે-એક આપણની આપણ નહિ ને એક પુત્ર તે પુત્ર નહિ, મારે તું ફરી લગ્ન કરે તો આપણા વંદની ગદિ તાવ, મારે શિર કાપનો માર એકો દાવ અને મને પણ સામ થાય.

મારા પિતાએ કહ્યું-બહેન, આપણે જોઈ-પણ મોટી ઉમરનો કરો. પણ મેં ને-રહેવા લાગી જઈ



કુ લગ્ન કરે તે કેમ શોભે? વખતે આવનાર
ઓ દુર્ગળી નિકળી તો મારે કમળ દુર્યુધ.

મારા ફાઇએ ક્યુ-માધ, આપણે તપાસ કરી
પછીજ સંબંધ જોડીયું, પણ મારા પિતાએ ક્યુ-
દયે આ શરીરનો બેરોસો નહિ. વખતે હું પરચું ને
મરણ થાય તો તે બિચારીને કેટલું મોસવું પડે ?
વળી લેણ વાનો કરે તે જુડી.

મારા ફાઇ બોલ્યાં-પણ બાઈ, શત્રુમાં ક્યુ
છે કે-વંશની શદ્ધિ કરવાની ઉમેદવાળો પુરૂષ પચાસ
વર્ષની ઉંમર સુધી લગ્ન કરી શકે છે. વળી મેળ
ક્યુ થવું નથી, તે તો કુદરતી બનાવ છે. વખતે
સો વર્ષ પણ જીવાય ને વખતે પચીસે પણ જવાય,
માટે તું લગ્ન કર અને મારે ક્યું માન.

મારા પિતાએ પૂર્ણ વિચાર કરી, કસલ ઓછો
કરવાના, કામનો બોલો ઉતારવાના, વંશશદ્ધિ કર-
વાના, બહેનને પ્રસન્ન કરવાના, એક વિધવા બના-
વવાના વિગેરે વિગેરે શુભાશુભ ઉદ્દેશથી લગ્ન કરવા
હા પાડી અને મારા ફાઇ કન્યાની તપાસ કરવા
પૂર્વજ માત્રી નીકળ્યા.

બીજે દિવસે અગીયાર વાગે આગ્યા ને
મારા પિતાને કહેવા લાગ્યા કે-બાઈ સ્વદેશ્યદં
શેઠની કાન્તા નામની કન્યા ૧૩ વર્ષની છે. નિશાળમાં
છટ્ટી ચોપડી બાજે છે ને ધરકામમાં પણ હોશિ-
આર છે. રૂ. ૨૦૦૦) માં આપવાનું તેના પિતા
કહે છે ને વિચાર ફાંચ તો ચાલ મારી સાથે
ઝોટસે તપાસ કરી સંબંધ જોડીએ.

મારા પિતા બહેનના આગ્રહથી કહો કે દુર્ગ-
લો બાર ઉતારવાના ઉદ્દેશથી કહો કે મારી નવી
મા લાવવાના ઉમંગથી કહો પણ ને બહેનની સાથે
જવાને તરતજ તૈયાર થઈ ગયા ને સ્વદેશ્યદં
શેઠને ત્યાં ગયા. ત્યાં જઈ તપાસ કરવાની વ્યાત
આશુ પેર મૂકી રા. ૨૫૦૦) માં વિવાહ નક્કી કર્યો.

અરે વિધમ કાળ ! તને ધિક્કાર છે કે તારા પ્રતાપે
માણસ પોતાની ગાય જ્યેવી કન્યાને કસાઈવાડે
આપવા તૈયાર થાય છે, અર્થાત્ વેચાણ કરી
જકોને આપવા લાગ્યા છે.

વિવાહ કરી લગ્ન પણ કરી દીધું. પાંદર
પણું દક્ષિણ સંપાદિત. સ્થાન આપતાં
અચકાચ માટેજ દુકામાં પતાવું કું. (અપૂર્ણ)

પછીકાલ જાતિકા ઉદ્ધાર કैसे હોમા ?

વર્તમાનમાં પછીકાલ જાતિમાં જેવા અજ્ઞાનાંધકાર,
કુરીતિ પ્રચાર, અનૈક્યતા ઔર અસાવધાનતાકા
પ્રચલ સામ્રાજ્ય હૈ વૈસા કિસી ઔર જાતિમાં ન
હોગા । વિના લિખા પદા મનુષ્ય પશુકે સદશ
હી હોતા હૈ । ઉસકા મનુષ્ય હોના ન
હોના બરાબર હૈ । જિસ જાતિમાં કુરીતિયોંકા
ફૈલા રહના, વિધવાઓં ઔર કુંવારોંકી વૃદ્ધિ
હોના, કન્યાઓંકી ગાય મૈસકે સમાન વિક્રી
હોના, વ્યભિચાર, નિર્બલ સન્તાન હોના યા
उनमें रोग बना रहना आदि जारी रहता है
उस जातिका अधःपतन हो जाता है और
उस जातिमें रहना योग्य मनुष्योंके लिये
दुष्कर हो जाता है । अनेक्यताके होनेसे जातिमें
विद्याप्रचार, जातिसुधार, धर्मप्रचार, कुरीति-
बहिष्कार आदि कोई उत्तम कार्य जातिमें
सफलताको प्राप्त नहीं हो पाते । अनेक्यताके
होनेसे बड़े २ साम्राज्य, बड़े २ राज्य, जातियां,
समान, घर, मनुष्य नष्ट हो गये और हो
रहे हैं । भारत और जैन समाजकी इस अधो-
गतिका कारण एक फूट ही है । जहां इसने पैर
रखा वहीं चौपट कर दिया । असावधानता
यांनी प्रमाद भी सब शक्तियोंके होते हुए
मनुष्यको उन्नति नहीं करने देता है । जिस
जातिमें इसका राज्य है वह भी अधोगतिके
ग्राम हुए बिना नहीं रहती ।

પછીકાલ જાતિમાંજે અજ્ઞાન, કુરીતિયાં,
અનૈક્ય, પ્રમાદ આદિ-સબ બુરી વાતોંકા ઉન્મૂલન



करनेके लिये भारतवर्षीय पल्लीवाल जैन सभाका जन्म हुआ है। यह सभा जातिमें ज्ञानका प्रकाश करेगी, बालक बालिकाओंको शिक्षित बनायेगी, बूढ़ोंके साथ ९-१० वर्षकी कन्याका विवाह होना बंद करायेगी, गाय भैंस जैसे पशुके समान विक्रती हुई कन्याओंकी रक्षा करेगी, आठ२ नौ२ वर्षके लड़के लड़कीका विवाह होनेसे जातिको रोकेगी, जातिमें फैली हुई फूटका काला मुंह करके निकालेगी, कुंवाराँ और विधवाओंकी बढ़ती हुई संख्याको रोकनेका प्रयत्न करेगी, और ऐसा होनेपर ही पल्लीवाल जातिका उद्धार होगा। अतः जिन बूढ़ोंको अपनी संतानको अधोगतिकी ओर जाते देख दुःख होता है वे अपनी जातीय सभामें सम्मिलित होकर अपनी संतानकी रक्षा करें, जिन नवयुवकोंको अपनी दुर्दशाग्रस्त पिछड़ी हुई जाति पर दया आती है और वे उसके उद्धारके लिये कुछ करना चाहते हैं तो वे भी अपनी सभाके सभासद बन कर एक बार जातिमें मिहनाद बना दें और बता दें कि बुढ़ारे उद्धारके लिये सभा सब कुछ करनेको तैयार है। बिना सुसंगठित सभाके जातिका कल्याण नहीं हो सपना और बिना उत्साही नवयुवकोंके सभाका कल्याण नहीं। हमजिसे हम बार २ उत्साही नवयुवकोंसे जोर देकर कहते हैं कि अब आर्यको अपनी शक्तियोंके समारोह बनानेका समय आया है। उद्यो, अब न मोओ, बिना कुछ मोच बिनार धिये सभाके सभासद बन नाओ। सभासदी कामें नियम पढ़ पढ़े काटे जिसपर

मंगा लो। तुम स्वयं सभासद बनो और दूसरोंसे बननेके लिये प्रेरणा करो। जब सौसे अधिक सभाके सभासद हो जायेंगे तब इसका किसी स्थानपर प्रारंभिक अधिवेशन भी किया जायगा। उसी समय सभाकी प्रबन्धकारिणी कमेटी बनाई जायगी, नियमावली बनकर पास होगी और सभाको प्रथम जात्युन्नतिके लिये कौन२ से कार्य करने चाहिये आदि निर्णय होगा। अतएव हमारा पुनः निवेदन है कि पे पल्लीवाल भाइयो। यदि आप अपना, अपनी सन्तानका और अपनी जातिका कल्याण चाहते हो तो इस सभाके शीघ्र सभासद बनो। सभासदी फीस केवल १) तीन रुपये वार्षिक है। विज्ञेपु कि बहूना।

जातिसेवक—

जुगमंदिरलाल जेवरिया
मंत्री, भा. पल्लीवाल जैन सभा,
चंदावाड़ी, सूरत।

हमारे यहांके उत्तम ग्रंथ

आदि पुराण	१६)
उत्तर पुराण	१०)
दोनों एक साथ	२५)
पंचाध्यायी टीका	५॥)
धर्म-प्रदनात्तर	२)
जिनशतक	॥)
दिव्याली पूजन	२७)

मिनिश पना—

मालाराम जैन,

मन्थाली, इंदौर।

ईडरमें रायदेशके पंच ।

बडालीकी प्राचीनता ।

गत ज्येष्ठ, आषाढ़ मासमें यहां पर रायदेशके समस्त पंच एकत्रित हुए थे। जन संख्या १०० से अधिक थी। पुराने जमानेकी रीति और ढंगसे पंचायत तथा सभायें प्रति दिन होती थीं, अनेक विषयोंपर उद्घापोह पूर्वक विचार किया जाता था। दुःख केवल इतना है कि रायदेशमें पढ़े लिखे विचारशील कम हैं, इसलिये इतने दिनों तक पंच एकत्रित होने पर भी कुछ भी कार्य नहीं हुआ। अस्तु, क्षेत्रका उदय न होनेसे जनतामें भी सुबुद्धि नहीं होती है। रायदेश ज्ञानमें कितना पीछे है जिसके कहनेसे लाज आती है। एक तो रायदेशके भाई छोटे २ ग्रामोंमें रहते हैं जहां पर न तो सरकारी पाठशाला (मदरसा) ही है और न खानगी चटशाल ही है कि जिससे व्यवहारिक शिक्षा तो ले सकें, धर्मशिक्षाकी बात दूर रही। धर्मशिक्षाके बिना आचार विचारकी जो हालत है वह किसीसे छिपी नहीं है। ग्राम्य जीवन होनेसे संतान भी जड़रूप होती चली जा रही है, ऐसे विकट समयमें रायदेशके पंचोंका कर्त्तव्य था कि अपनी संतानको सुधारनेके लिये कुछ उपाय करते। दानवीर सेठ प्रेमचन्द मोतीचन्द सुंबई से यहां पर पधारे थे और इस देशकी जड़ता और अज्ञानको देखकर चकित हो गये थे, तब तत्काल ही अहमदाबादमें सेठ प्रेमचन्द मोतीचन्द दिगम्बर जैन बोर्डिंग खोल दिया,

परंतु दुःख है कि उस बोर्डिंगसे रायदेशके भाई लाभ न ले सके। आज तक रायदेशमेंसे एक भी विद्यार्थीने बोर्डिंगमें रहकर अपने जीवन सुधारनेका कार्य नहीं किया। हां, ईडरसे दो चार विद्यार्थियोंने कुछ लाभ लिया। रायदेशकी इतनी गिरी हुई हालत है कि शुद्ध णमोकार मंत्रका पाठ किसी महाशयको आता हो, तो फिर शास्त्र स्वाध्याय पूजन किसको आता है यह आप ही विचार करिये।

रायदेशके पंचोंके समक्ष, ईडरमें दिगम्बर जैन बोर्डिंग खोलनेका प्रस्ताव रक्खा गया था और सेठ लल्लूभाई लखमीचन्द चौकसी बम्बई प्रभृति अनेक महाशयोंने पूर्ण प्रयत्न भी किया, प्रति दिन इसका विचार भी पंचायतमें उपस्थित होता था। बोर्डिंगकी व्यवस्थाके लिये फिलहाल यह प्रबंध किया था कि प्रति घर वर्षमें २) ६० चंदा लिया जाय। रायदेशमें दिगम्बर जैनियोंके अनुमान ४०० घर हैं इसलिये अनुमान ८००) रुपये वार्षिक आमदनी बिना फंडके एकत्रित सुगमतासे हो सकती है और दो रुपये अनुमान एक वर्षमें किसी भाईको देना कठिन नहीं होगा। दो हजार रुपये बोर्डिंगके लिये पाठशालामें जमा भी हैं। सिवाय शोलापुरके कई धर्मात्मा दानवीर सज्जनोंने बोर्डिंग खुलने पर पूर्ण सहायता देनेकी पाठशालाकी विजिटबुकमें सम्मति-प्रदान की है, साथमें पाठशालाके फंडसे पूर्ण सहायता हो सकती थी। इतने सरल और उत्तम उपाय होने पर भी रायदेशके पंचोंने अपनी संतान सुधारनेका प्रयत्न नहीं किया। दो महीने तक एक-



त्रित होनेमें करीब दश हजार रु. खर्च हुये होंगे । यदि इतना रुपया बोर्डिंगमें लगाया होता तो आपकी संतान बिरकाल तक जीवनको सुधार कर उत्तम भोगन करती ।

रायदेशमें यह भी प्रथा है कि पंच और मंदिरका एक बहीवट है इसलिये जहां कहीं पंच एकत्रित होते हैं तो बस उसी खातामेंसे सभी खर्च होता है अर्थात् देवद्रव्यका उपयोग किया जाता है जब कि देवद्रव्य सुलभ कार्य करनेके लिये होता है । भाइयो, विचारो तो सही यह कितना अंधेर है ! रायदेशके पंचोंके सम्मानार्थ आठ दश पाखी (जीपन) हुई थीं और उसमें बड़े हजार रु० खर्च हुए थे ।

रायदेशके पंच क्यों एकत्रित हुए थे ? ईदरके पास बड़ाळी प्राचीन नगरी है, इसको पुराने जमानेमें बछपुर शहर कहते थे । यहां पर अमीछरा पार्श्वनाथ नामका अतिशय तीर्थ है । प्रथम बड़ाळीमें दिगंबर जैनियोंके बहुत घर थे । और इस मन्दिरमें अनेक अतिशय स्वाभाविक निरंतर होने रहते थे । प्रतिमाभी (जो कि दिगंबरी है) मे अमृतकी वर्षा हुआ करती थी । और देश विदेशसे अनेक दिगम्बर जनोंका संघ येना करनेके लिये आता था ।

इस तीर्थकी बंदनाके संबंधमें एक भजन इस प्रकार है:-

रायदेश मंदिर भगवत् पञ्जरी,

जिन भजन भक्त शीघ्रमें ।

दत्तानन्द जेरी प्रणयो कावरी,

सौंदर्य विरद शीघ्रमें ॥

अतिशय तेज मन्दिर मूर्ति,

गुप्तार बलि हर्षद्वये ।

संघ सह मली यात्रा आधि,

अमीद वरधि मेहनरे ॥

अंग अनोपम सुन्दर सौंद,

वासव तथा मन मोहनरे ।

नीलवर्ण काया जिन दीपि,

दिनकर कोटिन जीव्यरे ॥

विषय व्याधि वेलाज्वर व्याधि,

पाणि दुर्गति दुनरे ।

पावन चंदन घनपोल करी,

नित पूजो केशर कपूरनरे ॥

श्री शुभचंद्र विख्यात पटार,

मुनि वीरचंद्र पास पांय लागिर ।

जन्म जरा मरण रोग निवारो,

एतलु जिन पास मागीयेर ॥

ये शुभचंद्रके पट्टाधिकारी वीरचंदनी कारंजा गादीके अधिपति थे । इनका पट्टाभिषेक सं० १९९७के सालमें हुआ ऐसा अनुमान होता है और वीरचंद्रके पट्टाधिकारी श्री प्रभाचन्द्रजी हुए । श्रीमुनि वीरचन्द्र संघ सहित बड़ाळीकी यात्रा करनेको पधारें । सुनते हैं कि इनने अमीछरा पारसनाथका मीर्जादार कराया था । यह पद गुटका नं० २६में लिखा है और संम-वनाथके चैत्यालयमें मौजूद है । पाना १९०० बड़ाळी यावत इस गुटकेमें कई प्रमाण मिले हैं । वर्तमानमें दक्षिणके भाई अपनी मंतानका सौर संस्थार (मुंठन) बड़ाळीमें ही आकर काते हैं । संवत् १६०२में छत्र-साल नामक दूमट दिगम्बर भेजने इस मंदिरकी यात्रा की और वहां पर मीर्जादार कराया; देखो गुटका नं० ७ सं० १७०० भट्टारक यादिवन्द्र (प्रभाचन्द्र) निम्नोमें मन्त्रार्थ तीर्थ पर भट्टारक पर प्राप्त किया जिसका वर्णन गुटका नं० ७ में इस प्रकार है:-



“श्री प्रभाचंद्र गुरुराय; तसं उपदेशो श्रवणं सुनी, मन वसिपुं वैरागरे । छाउनी गाइये कर जोडी गुरु प्रति कहि; मझइं संजम सार, आदेश विना नवि दीमिये; घरिजई करो विचार । मायकनीं आदेश मागवोरे, चालयो अति उल्लास; मझ अनुमति देज्यो सही, लेसुं संजमभार । संसार दुख है अति घणां; नवि कोई शरने होय, गजपंथे यात्रा करी; लीधी दीक्षा चंग, हांसीबाई उच्छव करी, संघनी वीरा रंगरे । कनक भाई श्रावक दई; कंकोत्री एक लक्षरे, आव्या संव सहु साथरे ।”

अर्थात् प्रभाचंद्रजीने गजपंथ शिखर पर दीक्षा ली और एक लाख कुंकुमपत्रिका सर्वत्र भेजी थी । जनसंख्या अनुमान उस समय लाखों की हुई थी । वे ही प्रभाचंद्र भट्टारक जिन-ने अनेक ग्रन्थ निर्मापित किये हैं, संघ सहित बडाली अमीशरा पाशेनाथ बंदना करनेको खास पधारे थे और वहां पर कई मास रहे । इन्हीं प्रभाचंद्रजीने रत्नकरण्ड श्रावकाचारकी संस्कृत टीका अमीशरामें बनाई थी ऐसा अनुमान होता है ।

संवत् १६८७ वर्ष फाल्गुन मासे वच्छपुर (बडाली) नगरे अमीशरा पाशेनाथचैत्यालय भट्टारक श्रीगुणवदे डिगिष्ठत परमहंस राजप्रथ पूणे भूयान ।

यह पुस्तक ईडर संभवनाथके मंदिरमें मौजूद है । और रामकीर्ति महाराजने भी बडाली अमीशरामें संघ सहित यात्रा की । यशकीर्ति महाराज सलुवरसे आते हुए अमीशरामें ठहरते थे । कनककीर्ति महाराजने संवत् १९३१में अमीशरामें प्रतिष्ठा कराई थी । अमी-

शरामें ११०९ सालकी खडगासन दि० मूर्तियां हैं । यहां पर अभी दिगंबर भाइयोंकी वस्ती न होनेसे श्वेतांबर भाइयोंने उक्त मंदिर पर ध्वजा-दण्ड चढ़ाया था और उसके करनेकी खास जरूरत थी । ध्वजा बहुत वर्षोंसे गिर पड़ी थी । हमारे भाई अतिशय प्रमादी हैं । यह कार्य कडियादराके पंचोंको करना उचित था परंतु रायदेशके भाई प्रमादी हो रहे हैं अस्तु हमें बडालीके श्वेतांबर संघका धन्यवाद मानना चाहिये कि वे इस मंदिरका [जहांपर दिगंबर जैनोंकी वस्ती नहीं होनेसे] प्रबंध करते हैं और रायदेशके पंचों समक्ष बडालीके संघने यह वचन दिया है कि आप अपने मंदिरकी संभालिये और कश्त (एंडु) चढ़ाइये व प्रतिमा विरानमान कराइये इत्यादि । हम बडालीके श्वेतांबर संघकी वात्सल्यताकी सराहना करते हैं और सब भाईयोंको हिल मिलकर चलनेकी प्रार्थना करते हैं और बडालीके पंचोंकी सुमतिकी प्रशंसा करते हैं ।

नन्दनलाल जैन चैद्य विशारद ।

दिवालीके लिये अवश्य मगाइये ।

दिगम्बालिका विधान

(दिवालीपूजन महावीरपूजन सहित)

मूल्य एक आना ।

महावीर चरित्र

निर्वाणकांड भाषा, गाथा औ महावीर पूजन सहित, मूल्य सिर्फ डेढ़ आना ।

मगानेका पता—

मैनैजर, दि० जैन पुस्तकालय-
खुरत ।



हमारी दक्षिण कन्नडा ।

(लेखक:—मूलचन्द किसनदास कापटिया)

(गतांकेसे आगे)

श्री गोमटस्वामी (श्रवणबेलगोला) —

सा. १८-४-१९ की दुपहर को पहुंचे और भट्टारक चारुकीर्तिजीकी धर्मशाला में ठहरे । यहां मधुताबाले टाला किरोडीलालजी और आगरावाले बाबू लक्ष्मी-चंदजी बन्दर्से आये हुए थे उनका मिलाप हुआ । पूरा हो जानेमें पहाड़ पर नहीं चढ़ सके परंतु स्नानादिसे-निवृत्त हो कर गांवमें सभी मंदिरोंके दर्शन किये तथा नित्य नियमादि पूजा भी की । गांवमें ७ मंदिर हैं जिसमें एक मंदिर बड़ा है । पास ही जिननापुरमें २ मंदिर तथा बस्तीहल्लोमें १ मंदिर है । सभी मंदिर करीब सं. १२०० के बने हुए हैं । जैन उपाध्यायके ३५, योगारके ५०, चतुर्थके २ और पंचमका १ घर हैं । उपाध्या-योकी आजीविता गोमटस्वामीसे ही चलती है । श्री गोमटस्वामीको भट्टारक राज्यकी ओरसे ४ गांव द्याके १५३२ से मिले हुए हैं जिसकी आमदनी वर्षिक १००० आती है और इस तीर्थका सब दिसा-बादि पं. भट्टारक चारुकीर्तिजीके पास ही रहता है ।

जमीन तथा खास पाषाण के चोर्ड पर पाये जाते हैं, जिनका तथा आसपासके प्राचीन मंदिर तथा पहाड़ोंका सचित्र वर्णन इन्सक्रिप्शन्स एंड श्रवण-बेलगोला (Inscriptions at Shravan- belgola) नामक बेप्रजी ग्रंथमें प्रकट हुआ है जो करीब १८ में आर्ययाज्ञिकल कारेक्टर बेगलोर तथा गवर्नमेंट बुक डिपो बेगलोरमें मिलता है । एक मंदिरमें निरी कर्षाटीके दो खंभे प्राचीन कारीगरीके हैं जिसकी परीक्षा सोनेका कामपूरा घिस कर की गई थी । यहां पंचामृत अभिषेककी प्रथा इतनी अधिकता पर पहुंचा ही गई है कि कई प्रकारकी दाल, चावल, खोपरेका चूरमा, खीर, केले, आदि भगवान पर चढ़ाते हैं तथा नित्य पके चावलका नैवेद्य धरने हैं, यहांतक कि बहुतसे शिवाज धर्माव-जैसे हो गये हैं जिसको उपाध्यायोंने ही अपने स्वार्थके लिये चढ़ा दिया मान्य होता है क्योंकि वे ही उठाकर उसका उपयोग करते हैं । भट्टारक चारुकीर्तिजी मंदिर-मठ कई प्रकारके परिग्रहोंसे पूर्ण है । उनके पास स्फटिक, पराशा, हीरा, आदिकी १२ प्रतिमा हैं जिनका पूजन होता है । सभी मंदिरोंमें मात्र मूलनायककी ही पूजा प्रचाल और अभिषेक बार २ होता है परंतु अन्य सभी प्रतिमाओंकी उेश मात्र प्रसाध कभी भी नहीं होती



दस्य अतीव मनोहर है। पहाड़ पर कुछ ७ मंदिर हैं जिसमें मुख्य मंदिर तो श्री गोम्मटस्वामी यानी श्री बाहुवलस्वामीका ही है जिसका वर्णन करना हमारी छेत्तीसे चाहर है। कई वर्षोंसे हमारी अभिलाषा श्री गोम्मटेश्वरके दर्शन की थी वह आज ही पूर्ण हुई। श्री गोम्मटस्वामीकी प्रतिमा करीब २५ फिट चौड़ी और ६० फिट ऊंची सुंदराकार ऐसी भव्य और अतिशय युक्त है कि कितने वर्ष बीते गये तो भी शीत धूप और वर्षाकी बाधा सहते हुए भी प्रतिमा इतनी निर्मल और शुक्ल वर्णकी है कि जैसे आज ही निर्माण की गई हो।

मात्र चरण ही नित्य पूजन अभिषेक करनेके कारणसे काले पड़ गये हैं। इस भव्य और सारे भस्मामें प्रसिद्ध प्राचीन प्रतिमाका निर्माण श्री चामुंडरायने करीब सं० ६०० में काया था और प्रतिष्ठा श्री नेमीचंद सिद्धांतचक्रवर्तिन की थी। प्रतिमाजीके अंगपर वृक्षवेल लिपटी हुई है तथा सर्पादि चरणके पासमें खेल रहे मालूम होते हैं। कमलके आसनपर प्रतिमा खड़ी की गई है और कमरसे ऊपरका भाग चारों ओरसे बिलकुल निराधार है। प्रतिमाजीकी छाया नहीं पड़ती है ऐसा सुननेमें आता था परंतु अभी हमको तो छाया पड़ती हुई दिखती थी। शायद पहले न भी पड़ती हो। प्रतिमाजीकी एक ओर 'कनड़ी लेख' है और दूसरी ओर लिखा है कि "चामुंडराजे करविखेले गंगाराने सुतालय करविखेले" प्रतिमाजीकी चारों ओर खड्गासन और श्याम २४ तीर्थंकरोंकी २४ प्राचीन प्रतिमाएं तथा अन्य प्रतिमाएं भी हैं। हमने श्री गोम्मटस्वामीका दूध, दही, जलादिसे अभिषेक किया और बड़े आनंदके साथ नित्य पूजा, निर्वाण दोत्र पूजा, श्री बाहुवल स्वामीकी पूजन जो कि पं. दीपचंदजीने ही बनाई है पढ़ी। आजकी पूजनका आनंद अपार था और श्री गोम्मटस्वामीकी प्रतिमाजीके पाससे हटनेका मन नहीं होता था। अंतमें पं. दीपचंदजीने एक नवीन पद बना कर पढ़ा जो हमें बहुत प्रसन्न आवा श्रवसे पीछेसे लिख लिया था जो इस प्रकार है—

धन्य धन्य बाहुवली स्वामी,
अविचल ध्यान लगाया है ॥ टेक ।
राज्य विषय जय चक्रवर्तिन,
आज्ञापत्र पठाया है ।

आन न मानी तब स्वामीने,
बहु संश्राम मन्वाया है ॥ धन्य० १ ॥

नेत्र मल्ल, जलधुध मांही,
चक्रेश्वर मान घटाया है ।

चक्र चलत लख ज्येष्ठ श्रातका,
उरु पैसाग समाया है ॥ धन्य० २ ॥

धिक धिक् अभिर विषय इंद्रिय मुख,
भ्रमप्रश जगत लुभाया है ।

जीरण तणवत् त्याग भ्रमज्जो,
निजानंद मन भाया है ॥ धन्य० ३ ॥

ध्यान लगायो अचल मेरुवत्,
मृगमण स्याज खुजाया है ।

च्युंटी आदि बर्माटि रोपे,
नागवेल लपटाया है ॥ धन्य० ४ ॥

लेश शल्य निःशेष होत ही,
केवल लह शिव पाया है ।

सो अनंत बलधारी प्रभुतो,
दीपचंद शिर नाथा है ॥ धन्य० ५ ॥

श्री विष्णुगिरिका दर्शन करके उत्तरे और फिर उत्तरे ही दूसरी ओर आये हुये चंद्रगिरि पहाड़ पर चढ़े। यह विष्णुगिरिसे छोटा है। इस पर कुल १४ प्राचीन मंदिर और बहुतसे शिलालेख हैं। इसके पास एक ग्राममें दो मंदिर और है उनके भी दर्शन किये। इस प्रकार दर्शन करके ग्राममें आये और ग्रामके मंदिरोंके दर्शन भी किये और २ बने धर्मशालामें पहुँचे। शामको वहाँ देपरा, देगुरपुर, थाणा आदिके ७ माई यात्राय आये, वे हम दोनोंको देखकर आनंदित हुए क्योंकि उनको भी सूडविंदीकी यात्राके लिये साथीकी आवश्यकता थी। ता. २० को गोम्मटस्वामीकी दूसरी वंदना अभिषेक तथा पूजन पूर्वक की और होमादिसमी किया करके हमने श्री गोम्मटस्वामीकी समस्त यज्ञोपवीत धारण किया। किया पं. दीपचंदजीने कराई भी।



इसकी खुर्चा में ११) शास्त्रदान और ११) विद्या-
दान किया। इस प्रकार ता. २१-२२ को भी
पंदना की। हिसाब तब भट्टारकजी ही रखते हैं
इसलिये प्रबंधक कमेटी की आवश्यकता है। मूर्तिरक्षक
फंड के करीब १५०००) हैं परन्तु इतनेमें मूर्तिपर
भंडक होनेका प्रबंध नहीं हो सकता और न आव-
श्यकता भी है इसलिये इसके व्याजसे प्रति १०-
१२ वर्षों के बाद महाभूमिक करना चाहिये। तीर्थक्षेत्र
कमेटीमें १०००) बोहिमिक जमा है परन्तु प्रबंध
कुछ भी नहीं होता। भट्टारकजी और शास्त्रीजीके
प्रबंध कानेपर ही बोडिंग तथा अन्य प्रबंध हो
सकेगा। शास्त्रीजीको 'दिगंबर जैन' की भोजना-
रणीकार किया। यहां ८ दिनपर बाजार भरता है
यह भी देखा। यहां केले और श्रीफल सस्ते मिलते
हैं तथा आम भी चत्र महीनेमें कच्चे पके
मिलते थे। 'जैनमित्रका' एक माहक हुआ। यहांसे
मूर्तिचित्री लेने भी जा सकते हैं परन्तु हमारा
बसगाछीसे ही जानेका निश्चय था क्योंकि इससे
बीचकी सभी यात्रा हो जाती है। ता० २२ की
रात्रिको हम दोनों, बम्बईवाले, टगरपुरवाले, कोल्हा-
पुरवाले इस तरह ३० आश्वी ७ गाढ़ीमें हासनके
जिये रहना हुए क्योंकि मूर्तिचित्री तककी गाढ़ी
यहां दो दिन विशेष ठहरनेपर भी न मिल सकी
थी (पट्टव करके तो मिल जाही है) ता० २३
की दुपहरको ३० माउल पर—

हासन—आम। यहां दो मंदिर हैं। मंदिरों
ही धर्मशांता चली हुई हैं उसमें ठहरें। यहां २
पर जैन प्राध्याप और २२ पर जैन वैश्यके हैं।
यहां मंदिरकी प्रतिमा भी प्राचीन है। मेर है
कि विद्याप मुद्रावधके किसीकी प्रशाल नहीं होती।
यहांसे मुद्राचित्री तककी पांच गाढ़ी पंतीस २
हाथमें की और ता. २४ की रात्रिको यहांसे चल
कर ता. २५ की सुपहरको १० बजे २० मील पर—
हालेबीडे—पहुंचे। यह छोटासा ग्राम होनेपर
भी अतीव प्राचीन और देखने योग्य स्थान है।
धर्मशांता न होनेसे मुद्रा जगहमें ही उठे। यहां
३ मंदिर प्राचीन हैं जिनमें एक बड़ेमें

पार्श्वनाथजीकी प्राचीन श्यामवर्ण कार्योत्सर्ग प्रतिमा
विना छेखकी है। इसमें कई शिलाछेख भी बड़े २
हैं। और कसौटीके बड़े २४ खंभे हैं इसकी भी
परीक्षा की थी। दूसरे शांतिनाथजीके मंदिरमें भी १२
कसौटीके खंभे और खुदाईका काम सुंदर है। मानस्तेम
भी है। तीसरा मंदिर मल्लिनाथका है। यह छोटा
है। यहां शिवके भी २ मंदिर प्राचीन हैं जिसमें
एक तो इतना विशाल और भव्य है कि जिसकी
चनाबद और खुदाईके काममें लाखों तो बया करोड़ों
रुपये लगे होंगे। यह देखनेके योग्य ही है। दंत
कथासे मालूम हुआ कि यहां पहले विष्णुवर्धन राजा
जैन थे जिन्होंने १४० जैन मंदिर बनवाये थे परंतु
उनके वैष्णव हो जानेसे उन्होंने ही सभी मंदिर तोड़-
वा डाले तब राजाकी माताके आग्रहसे ३ मंदिर
ऐसे ही रहने दिये थे। यहां जैन आश्रमका एक
ही घर है। मैसूर सरकारसे कुछ जमीन मिली
है जिसकी आय ८०) रु० आती है उसीसे जैसे तैसे
सर्च चलता है। गाड़ी भी विशेष नहीं आते।
यहां धर्मशांताकी शास आवश्यकता है। इस तीर्थका
विशेष हाल श्रवणवेलगोलाके भट्टारकके पास है।
हमारे साथवाले बाबू टीभीचंदाजी 'दिगंबर जैन'
और 'जैनमित्र' के माहक हुए। रात्रिको यहांसे
चलकर ता. २६ की सुपहरको २८ माउल—

गोनेबीड—पहुंचे। मंदिर नहीं है। चालाब
पर ठहरना पड़ता है। यहकि जंगलका दृश्य
मनोहर है। यहांसे रात्रिको चलकर १२ माहम
पर ता. २७ को बनकाड पहुंचे और नदी
पर मुकाम किया। यहां भी मंदिर आदि नहीं
हैं। यहांसे रात्रिको चलकर २० माहम पर ता.
२८ को चारमांडी आये। यहां भी मंदिर
नहीं है। पोस्ट आफिस है। एक धंगलेमें ठहरे।
यहांसे रात्रिको चलें और सुपहर दोपहर ४ बजे
निर्गल आये जिनमें मंदिर होनेसे ठहरकर
दर्शन किए। यहां जैन प्राध्यापक २ पर हैं
और पार्श्वनाथजीकी श्याम प्रतिमा चित्त देवाकी
वांछि प्राचीन है। यहांसे चलकर ता. २९ की
सुपहरको १०) रु०—



धर्मस्थल—पहुंचे। जैन उपाध्यायके ३ पर और मंदिर २ हैं—उसमें एक श्री चंद्रप्रभु का प्राचीन मंदिर १०० वर्षका पुराना है। सिवाय मूलनायकके सभी प्रतिमाओंकी प्रक्षाल नहीं होती। यहां मनजग्गा हेंगडे रहते हैं जो जैन हैं और सारे गांवके प्रबंधक हैं। इनके मकान पर दूसरा मंदिर है। यहां वैराग्य (शिव) मंदिर बड़ा है जिसकी मान्यता बहुत है और उसका प्रबंध हेंगडेके बंदाज ही करते आये हैं। यहां जो कोई आते हैं, उनको तीन दिन तक भोजन-दिस्ते सरकार करते हैं। मंदिर बादिराज मधवाचार्यने करीब ७००-८०० वर्ष पर बंधाया था ऐसा कहते हैं। जिसको आवश्यकता हो उसको यहांसे वध धन भी मिलता है। जैन अजैन सभीको कुछ भी बिना भेदभाव देते हैं। इस तरह प्रति वर्ष १ लाख रुपये दानमें खर्च होता है। यहां बिना फीसका प्राथमिक स्कूल है और संस्कृत, पाठशाला खुलनेवाली है। ५ जैन विचारधायोंको स्कालरशिप भी भेजी जाती है। हेंगडेजी संस्कृत अच्छी जानते हैं और जैन शास्त्रके भी जानकार हैं। आप जैनधर्मका बहुत कुछ उपकार कर सकते हैं। आप जैनधर्मके ग्राहक हुए। यहां मास्टर हुआ कि बेंगलोरसे 'जिनमत प्रकाशिका' नामक मासिक फनटी भाषामें प्रकट होता है। सं० पद्मराज पंडित और मूल्य १॥) बंधिक है। तथा 'धर्मसाधन' नामक तमिल भाषाका मासिक मद्रासमें प्रकट होने लगा है। सं. आदि नैस्यर है। चंद्रनाथजीके मंदिरमें सभी प्रतिमाओंकी प्रक्षाल करानेकी हेंगडेजीके निवेदन किया। दिन भर यहां आनंदसे बिता। रात्रिको जाते समय हेंगडेजीने हमको और ५. दोषचंदजीको एक २ पपरकटर चंदनकी लकड़ीकी दोनो और एकमी नकाशीके कामका

भेंटमें दिया। यहांसे चटकर करीब १५ माइल पर ता. ३० की दुपहरको—

वेणूर—आये। ८ घर जैन उपाध्याय और ७ घर जैनियोंके हैं। पास २ के ग्रामोंमें और भी ५० घर जैनियोंके हैं वे भी आते जाते हैं। ठहरनेके लिये धर्मशाला है। प्राचीन ८ मंदिर हैं। एकमें श्री गोम्पटस्वामीकी प्रतिमा विनाल-भैदानमें २१ फीट ऊंची है। प्रति फाल्गुन सुदी १५ को मेला भरता है तब १००० आदमी एकत्र होते हैं। एक मंदिरमें श्यामवर्णकी कायोत्तम २४ तीर्थंकरोंकी २४ प्रतिमाएं हैं। मंदिर ८०० वर्षका पुराना है। यहां भी सब प्रतिमाओंकी प्रक्षाल नहीं होती। यहांसे रात्रिको चलकर ता. १-५-१९ की सुबहको मुड़वित्री आये।

(अपूर्ण)

फौलशकारण भावना।

दोष-जो दुष्ट पोषा भावना, भावदु नित दुलसाय।
पाप कटे, पातक नही, तिथि'कार बंध लहाय॥

चौपाई।

पहिली भावना 'विशुद्धि' कहाई।

ताहि वेग अब धारो भाई ॥

तत्वादि श्रद्धा चित्त धराई।

सेउ तो अन्नत सुख लहाई ॥ १ ॥

दुसर 'विनयसम्पत्ता' आई।

सबकी चितय करो मन लाई ॥

दर्श, ज्ञान, चरित्र, तप उपचारी।

विनय पंच प्रकार बताई ॥ २ ॥

अहिंसादि व्रत पालन भाई।

'अनतिचार शील' व्रत गाई ॥

कुशीलादि जु मन भाव्य लुहाई।



ताहि भाउ निर्दोष धराई ॥३॥
 'आनन' को नाम 'ज्ञान' कहाई ।
 तामें चित्त लगावन भाई ॥
 'उपयोग' कहो सो मन ल्याई ।
 सदा तत्त्व अभ्यास कराई ॥ ४ ॥
 संसार 'विषय' भुजंग लखाई
 अनुरागो धरम, चित्त लाई ॥
 धर्मात्तामें नेह बड़ाई ।
 सेउ 'संवेग' तो सुख पाई ॥५॥
 शक्ति समदान प्रीति लगाई ।
 देउ सुपात्रे पुन्य लहाई ॥
 भोजन, औषध, ज्ञानादि जोई ।
 दान चार प्रकार नताई ॥ ६ ॥
 इच्छा निरोधे सम्यक् लाई ।
 सोई 'तप' दृढ जानो भाई ॥
 बाह्य अभ्यंतर भेद लाई ।
 सो दोय प्रकार चतलाई ॥ ७ ॥
 मरण काल समीपे नव आई ।
 तब शुद्ध भाव मनमें लाई ॥
 त्यागे प्राण निःशून्य होई ।
 सु 'साधु सगाधि' जानो भाई ॥ ८ ॥
 मेवा सम मंत्र और न कोई ।
 मन इच्छित फलशता सोई ॥
 रोमी, धर्मनेही जु होई ।
 तामु 'मेवा' करो मन लाई ॥ ९ ॥
 सत्र दर्शन, ज्ञान, चारित्र्य लाई ।
 जाने चारो घाति नशाई ॥
 ता आनन्दो मनमें धारी ।
 भक्ति कर सु 'अह' भक्ति' जाई ॥ १० ॥
 तो दिग्ग, दीप्ता, देखे शमी ।

अरु असते सत दृढ़ कराई ॥
 तिन संघ पतिको सेवो भाई ।
 'आचार्य भक्ति' सोई गाई ॥ ११ ॥
 पूजो, सेवो वे तत्त्वज्ञानी ।
 जिन द्वादशांग मन भाई ॥
 'बहु श्रुतिभक्ति' भावना सोई ।
 तामु भावो जु करम नशाई ॥ १२ ॥
 अब जिनवानी वेग मन लाई ।
 पूजो भज; भव दुख हराई ॥
 नशावन हारी चसु करम नई ।
 'प्रवचन भक्ति' भावना कई ॥ १३ ॥
 निज पद कर्तव्य हानि न लाई ।
 सामायिक, वन्दनादि कराई ॥
 भावना 'अवश्यका परिहाणी' ।
 पुन्य बड़ावन हारि कहाई ॥ १४ ॥
 मिथ्यागत फेलो चहुँ ओरी ।
 अब जिन भानु प्रभा नशाई ॥
 रत्नत्रय मुक्ति पथ प्रगटाई ।
 'मार्ग प्रभावन' कर भाई ॥ १५ ॥
 सदा कर जीवनकी मलाई ।
 'वात्सल्य अंगहि' मन लाई ॥
 सुश्रावक उत्तम नग मोही ।
 तामु सम अवर नाहि कोई ॥ १६ ॥

सोरठा ।

पूरन भई है मोय, सोलह कारण भावना ।
 मधु मो मति होय, माँय 'मेनी' भावना ॥
 पाँव 'मेनी' मोय, मोक्षसदन जु मुहावना ।
 अब मोय ही होय, 'भारत' गुरी प्रवीना ॥

कामनाप्रसाद जैन,

जमींगंज (पठा) ।

दिगंबर जैन.

THE DIGAMBAR JAIN.

नाना कलाभिविविधश्च तत्त्वैः सत्योपदेशैस्तुमवेष्टिताभिः ।

संबोधयत्प्रमिदं प्रवर्त्तताम्, दैगम्बरं जैन-समाज-माद्यम् ॥

वर्ष १२ बाँ.

वीर संवत् २४४५. आश्विन. विक्रम सं० १९७६.

अंक १२.



जन्मसे करीब २५०० वर्ष पहले श्री पावा-
पुरीमें हमारे अंतिम तीर्थंकर

वीरनिर्वाण श्रीमहावीरस्वामीने आश्विन व.

और १४ (गु.) की पिछली रात्रिको

वीर संवत् । निर्वाणपद प्राप्त किया था

तबसे मात्र जैनोंमें ही नहीं

परन्तु जैन अजैन सभी भाइयोंमें दीपावली पर्व

भूमधामसे मनाया जाता है और यह सार्वजनिक

पर्व हो गया है । जैनियोंमें इसी अमावास्याकी

प्रभातको महावीर निर्वाण पुत्रन किया जाता है

और निर्वाणलङ्घ चढ़ाया जाता है उस वक़्त

निर्वाणकांड भूपा और गाया तथा संक्षिप्त

महावीरचरित्र भी सब भाइयों-बहनोंको सुनानेकी

परम आवश्यकता है तथा इसी दिन सुबह या

रात्रिको एक जाहिर सभा करके महावीरके

गुणानुवाद और उत्तरसे हमें क्या-र शिक्षा लेनी

चाहिये इस पर जाहिर व्याख्यान होनेकी भी

आवश्यकता है । अब हरएक माई चिट्ठी पत्री,

दस्तावेज, हिसाब वही आदिमें सबसे प्रथम

संवत् लिखते हैं जिसमें आजकल ई. सन् लिख-

नेका तो सामान्य रिवाजसा पड़ गया है और

इसके साथ २ विक्रम संवत् और शालिवाहन

शक भी कई कई लिखते हैं परन्तु कई वर्षोंसे

आन्दोलन करनेपर भी अब भी हमारे बहुतसे

जैनी मई वीरनिर्वाण संवत् नहीं लिखते

यह शोचनीय है । वीर निर्वाण संवत् लिखनेसे

हमारे धर्मका गौरव बढ़ता है और महावीर

प्रभूको हुए कितने वर्ष हुए यह तुरंत मालूम

होता है इस लिये हम सब भाइयोंको एकवार

फिर याद दिलाते हैं कि अपनी बहियोंमें तथा

चिट्ठी पत्रीमें आगामी वर्षमें श्री वीरनिर्वाण

संवत् २४४६ लिखना न भूले । वहीमें इस

प्रकार लिखना चाहिये-वीरनिर्वाण सं. २४४६

विक्रम सं० १९७६ (मा. १९७७) कार्तिक

शुक्र १ वार शुक्र ता० २४-१०-१९ ।

दूसरी एक सूचना यह भी है कि नयी बह्नी-

में ॐ और स्वस्ति के साथ २ श्रीकृष्ण

निर्वाण संवत् भी वर्षमें एकवार अवश्य लिखना

चाहिये । कृष्ण निर्वाण संवत् इस प्रकार

लिखे-श्री कृष्ण संवत् ४१३४५२६४०२०

२०८२०२१७७७७५१२१९१९९९९९



शिकायत नहीं है आदि....गवर्नमेंटने उनको पूछा है "यदि तुम जयपुर दरबारकी बिना प्रथम आज्ञाके जयपुर राज्यमें प्रवेश न करो और ब्रिटिश हुकूमतमें रहनेसे तुम पर साधारण जांच रहेगी और सर्कारको संतोष हो जाने पर वह जांच भी हटा ली जायगी" ये शर्त स्वीकार करो तो छोड़ देंगे। सेठीजीने ये शर्त स्वीकार कर ली हैं और अब उनको कहां और किसके पास रहने देना इसका संतोषप्रद निर्णय नहीं हुआ है आदि। "अब यह देखनेका है कि सेठीजीकी नीमच खून केस यातो देहली षड्यंत्र केसमें जुबानी तक नहीं ली गई है और न उनमें इनकी निकार भी है। फिर सेठीजीका कोई अपराध भी नहीं बताया गया और न माफला चलाया गया है तथा सेठीजी सर्कारकी शर्त भी स्वीकार करते हैं तब न जाने क्यों अब सर्कार इनको छोड़नेमें विलंब कर रही है? शर्त स्वीकार करनेको ९ माह हो चुके तो भी कहां और किसके पास रखना इसका निर्णय भी सर्कार नहीं कर सकी यह बड़ा मारी आश्चर्य है। गवर्नमेंटको पूर्ण अधिकार है कि ये इनको नब कभी जो कुछ चाहे कर सकती है और जांच भी रख सकती है और तो एक लेश मात्र भी विलंब न करके उनको तुरंत छोड़ देने चाहिये और जैन समानमें फैली हुई अशांतिको दूर करनी चाहिये। यह तो अब खुलखुला माखम होता है कि जैपुर सर्कारका अब इसमें कुछ भी हस्तक्षेप नहीं है। हमारे मध्यकों भी फर्ज है कि हरएक नगरसे

एक २ तार नामदार वाइसरोय सिमलाको भेजें कि सेठीजीको शीघ्र मुक्त करें। इसी प्रकार चार पांच अग्रगण्य श्रीमानोंका एक डेप्यूटेशन भी ना० वायसरोयके पास जैनेकी परामर्शयुक्तता है। आशा है कि रा० ब० सुठनसिंहजी देहली, रा० सा० प्यारेलालजी, सेठ हुकमचंदजी अदि इसके लिये खास कोशिश करेंगे।

* * *

कई जातीय समाजोंके वार्षिक अधिवेशन घड़ाघड़ हो रहे हैं और प्रांतिक समाजका होनेवाले हैं परंतु हमारी अधिवेशन। बम्बई दि० जैन प्रांतिक समा और महासमाके अधिवेशनका निश्चय अभी तक नहीं हुआ है। महासमाका अधिवेशन तो रजिस्टर्ड स्थान मधुरामें अभी होते रह गया और आगे कहां और कब होगा उसका पता नहीं है यद्यपि नये महामंत्री इसके लिये बराबर कोशिश कर रहे हैं। बम्बई दि० जैन प्रांतिक समाका अधिवेशन गमपंथामें तीन बार हो चुका। अब वहाँ दूसरे स्थानपर ही होना चाहिये। कई वर्षोंसे गुजरातमें अधिवेशन नहीं हुआ है इसलिये अहमदाबाद, तारंगगाजी, प्रांतिम, इंडर, आनंद, आदि स्थानपर होनेकी आवश्यकता है अथवा दक्षिणमें भी अधिवेशन करनेकी आवश्यकता है। दक्षिणमें अधिवेशनके योग्य स्थान श्री कुंथलगिरीजी क्षेत्र है और वहाँ अधिवेशन होनेकी बहुत आवश्यकता है। यहां वार्षिक मंडा मगसर मासमें होता है उन्नी मोंकार ही



यहां अधिवेशन अच्छी सफलताके साथ हो सकेगा । अभी सोलापुरमें त्यागीजी ऐश्वर्य यदालाजनीका केशलोच उत्सव होनेवाला है तब परंडा, भूम, आदिके माई भी शामिल होंगे इसलिये आगामी अधिवेशन कुंवलगिरीमें करनेके लिये हमारे सोलापुरके माइयोंको कोशिश करनेके लिये हम प्रेरणा करते हैं । तारंगाजीमें भी उत्सव होनेवाला है तो वहां भी अधिवेशन हो सकता है इसके लिये ईडरके माई तथा खास वरके संत लल्लूमाई, लक्ष्मीचंद कोशिश करेंगे ऐसी पूर्ण उम्मेद है ।

* * *

दिगंबर जैनोमा धार्मिक तथा संस्कृत शिक्षणोंमें जो डाठ प्रांत पञ्जाब गुजरातमें विद्या-हाथ तो ते गुजरात प्रांतज लपनी जइर. छे, डेभके गुजरातमांथा आज सुधी एक पञ्च पंडित तेषार यथो नथी डेभके डाठ पोताना पुजेने भायी, भारेना, हस्तीनापुर पल्लयर्षात्रम वजरे विद्यालयमां भज्जा भोक्तदा नथी तेमज गुजरातमां तेनु डाठ विद्यालय पञ्च नथी नथी पञ्चागला भाटे दिदी पंडितोज शम्भुना पडे

इपे आपी शक्य. जे छडर रायदेव अपने डांढा-ना भाधजो ओधव भणा प्रयास करे तो जे भाटे ओक लाख इश्यानु इंड यतां वार सांजे नदि. डमखीज छेडियाभां ओराज प्रतितरना हरा हुमड भाधजोती सभा भरानार छे तो ते प्रसंगे छडर, राय देव अपने डांढाता भाधजोते पञ्च आपनंजु करी विद्यालय ओखवा संधी भयथ करवाने जेना भंत्री नेमथ'द उगरथ'द गांधीने जेमे सुयना हरीजे छिये. अक्षयारी शितलप्रसादजना उपदेश अपने प्रयत्नपी पागडमां वसवाभां तो गत आसो सुद १५ ते हिन रा. सा. विजय'दछ दारा भोटु' विद्यालय प्रुवी सुकथुं छे ते २६ विद्यार्थी पञ्च दाभल यध सुभा छे तो तेनु अनुकरथुं दमारा गुजरातना भाधयो नदी करे ।

उदारताका परीचय—सिवनीसे घर पर जाते सेठ गंभीरमलजी पांडेया वर्षा ठहरे थे । वहां आपका अपूर्व स्वागत हुआ और आपने १०१) वर्षा बोर्डिंगमें धार्मिक शिक्षाके पंडितके लिये दिये तथा रायपुरको आप पवार और वहां भी जैन बाळ बोधिनी पाठशालाको तीन वर्ष तक १) मासिक सहायता तथा १०) की पुस्तकें और मिठाई बांटी थीं ।

फेसरगंज—(अजमेर)में वेदी प्रतिष्ठा होनेवाली है और वहाँके माइयोंका इरादा वहाँ मन्वई दि० जैन प्रांतिक समाका वार्षिक उत्सव वरानिका माउप हुआ है ।

दिगंबर जैन हितयथेक प्रांतिक सभाजो ११ जे वारिक मेजाराडे छेडियाभां पाठना इरावाजा सा. देव'द जेदेसशासना प्रभुभरणा नाये शर्वक पर २ पर बनार छे, तेमां बोडरिपर सुनु देन तेमजे सा. सुनीलभ सादर'द वेदपुरने ताईदे करछ करी. १५ वरंथी होली जमनंजी काछ नदि श्रीमन्त्र.



જયજિનેંદ્ર (ચિત્ર)—પ્રકાશક, શ્રીધર વા-
મન નગરકર—નાસિક । इसमें जिनेंद्र इस
पवित्र शब्दमें महारक, त्यागी, मुनि, ब्रह्मचारी
आदिके २५ फोटो खूबीके साथ दिये हुए हैं ।
चित्र संग्रह करनेयोग्य और दर्शनीय है । मूल्य
बड़ी साईज १) और छोटी साईज आठ आने हैं ।

औपधालयकी रिपोर्ट—श्री ओसवाल
औपधालय अजमेरकी यह दो वर्षोंकी रिपोर्ट
देखनेसे ज्ञात होता है कि दो वर्षोंमें ९२६८
रिपोर्टोंने इसका लाभ लिया । ५०००) के
न्यायी फंड और मासिक चंद्देसे कार्य चलता
है । खर्च १९२४=) हुआ है ।

जिनपथ रत्नावली—प्रकाशक—रावजी
सखाराम दोशी, सोलापुर । इसमें दत्तात्रय मी-
माजी रणदिवे कृत २० मराठी अच्छे पदोंका
संग्रह है । प्रकाशकसे विना मूल्य मिलता है ।

लावनी संग्रह—प्रकाशक, मूलचंद गुप्त,
हिन्दी जैन ग्रंथ प्रकाशक कार्यालय, श्याम बाजार
कलकत्ता । मूल्य २) यह संगीत जैन ग्रंथमाला
का छठा ग्रंथ है । सातसे बार तकका सम्मिलित
ग्रंथ भी प्रकट हुआ है ।

जैनपथ प्रदर्शक—प्रकाशक, पद्मसिंह जैन
मानपाडा, आगरा । यह प्रथम वर्षका सचित्र
विशेषांक ८८ पृष्ठोंका है । जैन स्थापकनासी
माइयोंका पत्र होनेपर भी कई लेख समी

जैनियोंके पढ़ने योग्य है । मुखपृष्ठके चित्रमें
वज्रके नामका अच्छा भाव दर्शाया है । कुल
२० लेखोंमें जैन फिलोसफी, कर्मक्षेत्र, परहित
साधन, जैन समाजपर एक दृष्टि आदि लेख
पढ़ने योग्य है । कुल ८ चित्रोंमें लाला कनौ-
मलजी एम० ए० जड़नका भी चित्र है ।

दश धर्माभूत पान—प्रकाशक, महेंद्रप्र-
ताप जैन, मानपाडा आगरा । मूल्य १) । इसमें
पं० इन्द्रलाल शास्त्री कृत दश धर्मोंपर उपदेशा-
त्मक मन्त्र है तथा बाबू जुगलकिशोर
कृत 'मेरी भावना' भी प्रकट को गई है ।

वैराग्य शतक—प्रकाशक जैन पुस्तक
प्रकाशक कार्यालय—ब्यावर । मूल्य १)
इसमें आचार्य गुणविनयजी (श्वे.) विरचित
वैराग्य शतकका सिर्फ हिन्दी अनुवाद दिया
गया है जो आत्मचितवनके लिये अवश्य
योग्य पढ़ने है ।

વ્યાયામશાળાના રિપોર્ટો—સોલાપુરની
દોશી જોતમ નેમચંદ વ્યાયામશાળા તથા માર-
વાડી વ્યાયામશાળાના આ બુદા શુદ્ધ વાર્ષિક
રિપોર્ટો છે જે જેતાં જથ્થા છે એ જાનેમાં દૂક
ખર્ચમાં અતિ ઉત્તમ કાર્ય થાય છે. જાનેમાં
દોશી દોશચંદ મધુકચંદ કાકા જાનરરી તરીકે
શીખવે છે. નિયમિત દોશો વ્યાયામ પદ્ધતિથી
ઉત્તમ કસરતો શીખવાય છે તથા એવાં આસનો
અને કસરતો કરાવાય છે કે જેથી શરીરનાં અનેક
રોગો પશુ સારા થઇ શકે છે. એવા કેટલાક
રોગો સારા થયેલાના પશુ એમાં દાખલાઓ છે.
આપણી દરેક કસરતમાં આંતર વ્યાયામશાળાની
જરૂર છે. વ્યાયામશાળા સંબંધી ઉપયોગી સાહિ-
ત્ય, સાધન તથા સલાહ સર્વેને એ બાઇ પુરાં
પાડે છે. એમની આ નિસ્વાર્થ સેવા અતીન્

છે. સર્કસમાં થતી અનેક મોટી મોટી કસરતો પણ એજો કરી શકે છે તે શીખવે પણ છે.

ઔપધાસયનો રિપોર્ટ—સખારામ નેમચંદ જૈન ઔપધાસય સોલાપુરનો આ બે વર્ષનો રિપોર્ટ જોતાં જણાય છે કે એમાં વિલાયતી સૂફી અને પાકી દેશી દવા વપરાય છે. ૨૦૦૦૦) સખારામ શેઠે આપેલા છે જોથી કાર્ય ચલે છે. ખર્ચ ૧૧૯૩.૬૨૧ થયો હતો. અને ૨૫૭૩૬ રોમીએએ બે વર્ષમાં લાભ લીધો હતો. પ્રકારક મંત્રી છવરાજ ગોતમચંદ દોશી છે, વળી એમાં સખારામ શેઠનો ફોટો પણ અપાયેલો છે.

મુનિ તિલકચિત્રધરજી (સ્વ.) એ પનાર (નવસારી)ના જૈન બ્રાહ્મણોમાં લગ્ન, મરણ, પર્વોત્સવ, સ્તુતક વગેરે સંબંધી લેખિત સુધારાઓ કરાવ્યા છે તેવું એક પુસ્તક તથા એમણેજ ઉપદેશ આપીને ગાંધીયા વાસણના માછી મદાનમાં લેખિત સુધારાઓ કરાવ્યા છે તેવું એક પુસ્તક એમ બે પુસ્તકો મળ્યાં છે.

ચેરાગ—પુ. ૨૦ મુ. ૦ અ. ૯મો. વાર્ષિક મુદ્ર ૩) આ પારમોજીને લગતું જીવંત માસિક પત્ર છે અને નવમાસીથી પ્રકટ થાય છે.

જીજી છવરાજા કોન્ડેરચેનો રિપોર્ટ—મુંબઈમાં જે ‘છવરાજા જ્ઞાન પ્રસારક મંડળ’ છે તેની તરારથી મુંબઈમાંજ મત વર્ષમાં જીજી વાર્ષિક સભા મેળા પાયા ઉપર જિ. એન. નિચેટ તથા જિનરામરાસના પ્રમુખપદે થઇ હતી તેનો આ વિસ્તૃત રિપોર્ટ અંગ્રેજી ભાષામાં મેળી સપ્તાહમાં અનેક જાગરો તથા ૪ ગિરો સહિત છે જે પર મળેલા ખર્ચ કરવામાં આવેલો જણાય છે. જોથી મોઝા. ખર્ચમાં ૫૫૧ મારો રિપોર્ટ પ્રકટ થયે શકે ખરા. આ કરેલાનું છવરાજાને લગતું કાર્ય જીતીય પ્રકરેલીય છે તેમ જાણમાં જેણે અંગ્રેજી તથા મુંબઈની માસિક પણ પ્રકટ કરવા માંડ્યું છે.



ઉપદેશક—ફિરાતેકે લિયે હમરે શ્વે. જૈન માઈયોંમેં અમી એક લાલ રુ. કા પંડ હો ગયા । એસા હી પંડ દિગંધર જૈનીયોંમેં કવ હોગા ?

જિનવાણીની સેવા—દાનવીર સેઠ માણિકચંદનીની સ્મૃતિમેં સંસ્કૃત ગ્રંથમાલા પ્રકટ હોતી હૈં ફસ્કે લિયે ૧૦૦૦૦) કી આવશ્યકતા પ્રકટ કી ગઈ થી જિસમેંસે કરીવ ૪૦૦૦) મરે ગયે હૈં જૌર અમી હી ૧૦૧) વાંસવાડાવાલે સોડનિયા ચાવરચંદ પૂનમચંદ જૌર ૧૦૧) સિં. પન્નાલાલની અપરાધતીને દિયે હૈં । ૧૦૧) સે કમ નહીં લિયે જાતે । ધનિકોંકો જૌર સૌ ૨ ૬૦ મેનકર યહ રકમ પૂરી કર દેની પાહિયે । મેનનેકા પતા—નાથૂગામ પ્રેમી, મંત્રી, હીરાચામ—સ્મર્ત્ત ।

છઃ માસ કૈદ ઓર અપીલ-મેન—સવાનસેવક ગ્રં. મળવાનવીનજીનો વારનાલ મમી-ફટ્ટેને છઃ માસકી સાદી વેદકા વંટ કિયા હૈં જિત પર અરીલ હુઈ હૈં । અપીલમેં છૂટ માનેકી આશા હૈં । માયૂ અનિતપ્રસાદમી ફસ્કે લિયે જો માનેસે કોશિયા વર રહે હૈં । મેવારે મળવાનજી નિવરાણ મરે માતે હૈં ।

સ્વાસ્થ્યલાભમેં દાન—સિપદ્ વચ્ચેવચ માદગીને નિયોગતા લાખ હોને પર ૫૦૦૦) કા દાન દિયા હૈં જિતમેં ૧૧૦૦) પન્નાસી પાટ-સાગ્રો દિયે હૈં । પન્નસાદ !



जैन द्वितेय-मु'भाष्य श्री वाडीवाल
भोतीवाल शां ०७५५५५ छे ३ 'जैन द्वितेय'
प'ध पाठयुं नथी पध येना ४०० पानोना
भोटो अ'ध तेषार थवा आओओ छे ७ ८-१०
दिवसभां प्रकट थशे भाटे आदडेओ धीर०० शम्भरी.

भक्त भ'गात्री लो- 'ज्ञानदीप' ५. ५४
अने पर्युपाय पर्य अथवा पवित्र छरनेने
परिचय ५. ८० आ नाभनां मे पुरवडा भात्र
अ'ध आनानी दीक्षीट पीडी नीयेने ठेकायेथी
भक्त भ'गात्री शक्य छे-नअरअली अम मुपी,
शेजी टांछल वरुस गयदेवी (वडाहरा २७८)

श्वे० जैन कोन्फरंस-का आगामी अधि-
वेशन सादरी (जोधपुर)में होना निश्चित हुआ है ।

गौलापूर्व-जैन जातिकी भी समा स्थापित
हो गई । समापति सि० कुंदनमलजी और मंत्री
बालचंदजी अर्जीनवीस-सागर हैं ।

श्री खंडगिरी-उदयगिरी-की रक्षाके
लिये और उसकी मरम्मतमें सरकारको हस्तक्षेप
न करनेके लिये कलकत्ता कमेटीने बिहारके छोटे
लाटको अर्ज की है ।

अमरावती-में जैन नाइट स्कूड खुलना
निश्चित हुआ है और शिक्षककी आवश्यकता है ।
वर्धा-में बोर्डिंग, लायब्रेरी और मगनवाई
कन्या पाठशालाका उत्सव सानंद होगया । कुछ
१००)-३००) चंदा भी हुआ था ।

बोर्डिंग स्थापन-बारासिबनीमें पाठशा-
लाके साथ २ बोर्डिंग भी स्थापन हो गई ।
९०००) का स्पाई फंड होगया और नवीन
भवन भी बनेगा ।

परवार सभा-के लिये एक उपदेशककी
आवश्यकता है । वेतन ५०) मासिक तक ।
पत्ता-सि० कुवरसेन मंत्री-सिवनी ।

तिथिदर्पण मंगालो-वीरसं० २४४६
का तिथिदर्पण प्रगट हो चुका है । विनामूल्य
मंगालो । पता-मुनीम बदामीलाल, जंबरीनाग-
इन्दौर ।

खुरई-के श्री० सेत मोहनलालजीने स्या०
महाविद्यालयको ५००) प्रदान किये ।

हिंसा बंद-मैहरमें सारदा मंदिरमें दशहराके
दिन ४००० बकरोका बलिदान प्रतिवर्ष होता था
जिसको इस वर्ष हमेशके लिये महाराजा ब्रज-
नाथजू सरकारने बंद किया है और आज्ञा दी
है कि यदि कोई बकराका बध करेगा तो ५)
दंड और छः मास जेल होगी । यह उपदेशक
पं० मौजीलालजी, त्यागी गोकुलप्रसादजी
आदिके प्रयत्नका फल है ।

वीरनिर्वाण-भूमि-श्री पात्रापुरीजीमें
निर्वाणपूजन तथा रथयात्राका मेला कार्तिक कृ०
अमावास्याको होगा ।

चांसवाड़ामें विद्यालय और धर्मा-
मृत वर्षा-गत आसोज सुद १५को चांस-
वाड़ामें वहाँके दीवान मुंशी मिशनलालजीके-
हस्तसे "सेठ चंपालाल विनयचंद वाग्बर प्रांतीय
विद्यालय और छात्रालय" बड़े समारोहके साथ
खोला गया था । इस कार्यके उत्पादक व०
शीतलप्रसादजी खास उल्लिखित हुए थे । खुज्जे
ही बागीदौरा, आंमणा, अरयोणा, कालिनरा,
तलवाडा, नोगामा, डंडुका, परतावर, पारोदा,
जैतमाछ, और थोटोलेके २९ विद्यार्थी दागित
हुए हैं जिसमें ८ पेइड व १८ अनपेड हैं । पेइ-
टसे भी सिर्फ ४) मासिक सर्वे लिया जाता
है । पं० कुंवरलालजी न्यायतीर्थ धर्माचार्यक



नियत हुए हैं और अंगरेजी संस्कृतके जाननेवाले सुग्री० की आवश्यकता है। अगले दिन दीवान साहबके समापतित्वमें पब्लीक उपदेशक समा हुई थी जिसमें ब० शीतलप्रसादजीने आत्मोन्नति पर बहुत ही प्रभावशाली व्याख्यान दिया था और धर्मके नाम पर जीवहिंसा न करनेका खास उपदेश दिया था। इसमें दशहराके कारण आए हुए १५ राजपूत सरदार और ठाकोर उपस्थित थे। मास्टर दीपचंदजी उपदेशक भी खास पधारे थे और आपके भी दो जोशीले व्याख्यान हुए थे। अब वागड़प्रांतको इस विद्यालयका काम उठाना चाहिये। इसके लिए एक उपदेशकको वागड़के हर एक छोटे बड़े ग्राममें घूमना चाहिये।

परिवार सभा—का आगामी अधिवेशन सिवनीमें होना निश्चित हुआ है।

सिवनी—में श्री० सेठ पुरनसावजीके पिताका स्मारक—गोपालसावजी जैन औपघालय खुल गया। व्यय १००) मासिक होगा। वैद्यका काय पं० नंदनलालजी इंटरवाले करेंगे।

झोलापुर—में दशहरा पर गौतम नेमचंद व्यायामशालामें मर्दानी खेल हुए और वार्षिक पुरीक्षा छी गई थी तब त्यागी पन्नालालजीके हस्तसे सर्टिफिकेट और रौप्य पदक दिये गये थे। त्यागीजी विद्यापियोंकी कसमसे बहुत प्रमत्त हुए थे। यहां जैन गायन समाज है जिसके भक्त्यादि सुन कर त्यागीजीने अच्छा रिमांक लिखा है और मेरी सुझीमें गायन ममान-को प्राप्त, पूजानेका निश्चित हुआ है।

३५०००)का दान—सागाके मोदी धर्मचंदजीने २५०००) जैन सर्वहितैषी औपघालय और १००००) दीन मनुष्योंको सुझी बांटनेके लिये दिये हैं।

सिवनीमें उत्सव और दो सभाएँ—सिवनीमें गत ता० २७ से २ तक रथोत्सव और नागपुर प्रांतीय खंडेलवाल वि० जैन सभाका उत्सव सेठ गंभीरमलजी पांड्या कलकत्ताके समापतित्वमें और जैन शास्त्रीय परिषदका अधिवेशन न्यायालंकार पं० मयसनलालजीके समापतित्वमें सकलतापूर्वक हो गया। इसमें बहुतसे खंडेलवाल तथा २०—२२ पंडितगण उपस्थित हुए थे। कई महत्वके प्रस्ताव पास हुये हैं और “जैनदर्शन” नामक मासिक पत्र शास्त्रीय परिषदकी ओरसे पं० वंशीधरजीके सम्पादकत्वमें प्रगट होना निश्चित हुआ है जिसके एक वर्षके बादके लिये ५००) की तनवीज हुई है तथा समापति सेठ गंभीरमलजीने इसके लिये तीन वर्षके १२५) वार्षिक देनेके स्वीकार किये तथा २१००) समाको शिक्षाप्रचारके लिये और ५००) समा सर्वके लिये दिये और ८००)—२००) सभामें भी भरे गये थे। खंडेलवालकुलमृग पं० चन्नालालजीका हममें विगत प्रयास था और मंत्री चिनमूलजी लावड़ाने तो इतनी प्रशंसनीय सेवा की कि आपको १००) का मंडप समायी तरफसे देना निश्चित हुआ है। यहां दो दूध फोटो भी लिये गये थे।

हमारे दक्षिण खण्ड ।

(लेगक-मूलचन्द किसनदास कापरिया)

(गतांसे भागे)

मूलापट्टी-ता. १-५-१९ को पहुँचे । यह बड़ा भारी प्राचीन जैनस्थान है । सिद्धांत प्रत्य और अमूल्य प्रतिमाओंके लिये बहुत प्रसिद्ध है । यहाँकी दि० जैन पाठशाला देखी । १५ वर्षसे स्थापित है । संस्कृत कानूनी और इंग्लिशकी शिक्षा दी जाती है । ७० विद्यार्थी रहते हैं । अभ्यापक ६ हैं जिसमें धर्मशिक्षक ५० लोकनाय शास्त्री ठरसाही और पोषकारी है । प्रत्येक विद्यार्थीको परमशिक्षा जबरन देनेकी आवश्यकता है । छुटी होनेसे सिर्फ १६ विद्यार्थी आ पाये थे जिनकी परीक्षा ली । फल संतोषजनक रहा और ३)का इनाम बांटा गया । स्थायी फंड २८०००)का है और ३५०) वार्षिक सर्कसिसे प्राप्त मिलती है । प्रोमिस बुककी आवश्यकता है । यहाँ जैनियोंके ५० घर हैं जिनमें २२ जैन छात्रावासके हैं । यहाँ पंडिताचार्य भटारक त्वाङ्कीतिजीका निवास है । आप वृद्ध, अशुक्ल और संस्कृत तथा धर्मशास्त्रके जानकार हैं । आपके मठमें परिग्रह बहुत है । आपने पाठशालाको १५०००) देनेकी कहे थे वे अभीतक दिये नहीं सिर्फ १०००) ही दिये थे । पाठशालाका दूल्हा भी नहीं है । मेन्नी पञ्चनाम रोटीको इस पर खयाल करना चाहिये । यहाँ १८ छोटे बड़े प्राचीन मंदिर प्राचीन बनावटके हैं जिसमें चंद्रनाथ वस्ती (मंदिर) बहुत ही विराट है । छहछन्दमें जानेपर दर्शन होते हैं । श्री चंद्रप्रभुकी धातुकी खड्गघन विशाल और बहुत मूल्य प्रतिमा विराजमान है । तीसरे मञ्चपर वेदी है जिसमें स्फटिककी छोटी नदी ४० प्रतिमाएं हैं । इस मंदिरमें बहुत ऊँचा मानस्वतभ भी है । दूसरा बड़ा मंदिर गुणवस्ती मंदिर है जिसमें श्री पार्श्वनाथ स्वामीकी कावेत्सर्ग प्राचीन प्रतिमा बिना लेखकी है । यह भी विराट है और अभी इसका जीर्णोद्धार हो रहा है । इसमें ७ चौबीसी प्रतिमाएं (सदृशचन)

श्याम, चकंद, धातु तथा समान वर्णके पाषाणकी अतीव दर्शनीय हैं । इसमें तो राक नहीं कि यह स्थान बड़ा प्राचीन है पांतु खेद है कि जहाँ देखा वहाँ प्रक्षालके नामका मूल्य है ! सिर्फ मूलनाथकी प्रक्षाल और अभियेक भारती बार बार होती है पांतु शेष सैकड़ों (सभी) प्रतिमाओंपर कभी पानीकी बूंद तक नहीं पड़ती तथा ऊपरसे पूल तक नहीं साफ की जाती इसका पारावार खेद होता है । जैन उपाध्यायोंका गुजारा मंदिरकी भावसे होता है और उनकी कमी भी नहीं है तथा प्रबंधक भटारकजी मौजुद हैं तोभी प्रक्षालका प्रबंध क्यों नहीं करते ! भटारकजी पात्रियोंसे भटारकजी लिखानेमें तो सिद्धांत हैं तब उनका प्रथम फर्ज और कर्तव्य है कि हरएक मंदिरमें हरएक प्रतिमाजीकी नित्य प्रक्षाल होनेका प्रयत्न शीघ्र ही करें । मूलनाथकी प्रक्षाल अभियेक अपनेको नहीं करने देते यह रुढ़ि भी अयोग्य है । इसी मंदिरमें एक तीजोरीमें सिद्धांत शास्त्र और अमूल्य प्रतिमाएं हैं जिनके दर्शनके लिये बहुत कोशिश करनी पड़ी । कमसे कम ५१) देनेपर ही भटारकजी सिद्धांत शास्त्र तथा प्रतिमाओंके दर्शन चाँदीकी वेदीपर विराजमान करके कराते हैं । सामान्य रूपसे पाँच दश ६० में भी प्रतिमाएं निकाट कर एक २ दिखला देते हैं । हमको तो बगबर देखना था इसलिये दृष्टी-सौधके ३० और हैदराबादके ६० आदमी आये थे उन घबने मिलकर ५१) देने स्वीकार किये तब ता० २ को दर्शन हुए । कुछ पूजनसामग्री और १२ तोला कपूर ले जाना पड़ा था । दुपहरको मंदिरके कमाड़ बंद कर दिये गये और मंदफमें सबको बिठाकर दर्शन कराये थे । भटारकजी चौकी पर बैठे थे और कपूर जलते थे । भीतरके कमाड़ पर कुछ देर तक पददा लगाया था और पीछे खोला गया था । प्रथम ताड़पत्र पर लिखित सिद्धांत-शास्त्रका दर्शन कराया । कोई २ फीट लंबे पत्र हैं । इसकी नकल देवनागरी और कानूनी लिपिमें कागज पर दो चुट्टी

निधत हुए हैं और अंगरेजी संस्कृतके जाननेवाले सुप्री० की आवश्यकता है । अगले दिन दीवान साहबके समापतित्वमें पब्लीक उपदेशक सभा हुई थी जिसमें व० शीतलप्रसादजीने आत्मोन्नति पर बहुत ही प्रभावशाली व्याख्यान दिया था और धर्मके नाम पर जीवहिंसा न करनेका खास उपदेश दिया था । इसमें दशहराके कारण आए हुए १५ राजपूत सरदार और ठाकोर उपस्थित थे । मास्टर दीपचंदजी उपदेशक भी खास पधारे थे और आपके भी दो जोशीले व्याख्यान हुए थे । अब बागड़प्रान्तको इस विद्यालयका लाभ उठाना चाहिये । इसके लिए एक उपदेशकको बागड़के हर एक छोटे बड़े ग्राममें घूमना चाहिये ।

परधार सभा—का आगामी अधिवेशन सिवनीमें होना निश्चित हुआ है ।

सिवनी—मे श्री० सेठ पुरनसावजीके पिताका स्मारक—गोपाटसावजी जैन औषधालय खुल गया । व्यय (१००) मासिक होगा । वैद्यका

३५०००)का दान—सागरके मोदी धर्मचंदजीने २५०००) जैन सर्वहितैषी औषधालय और १००००) दीन मनुष्योंको मुद्धी बांटनेके लिये दिये हैं ।

सिवनीमें उत्सव और दो सभा—सिवनीमें गत ता० २७ से २ तक रविवार और नागपुर प्रांतीय खंडेलवाल दि० समाज उत्सव सेठ गंभीरमलजी पांड्या कृताके समापतित्वमें और जैन शास्त्रीय परिषद अधिवेशन न्यायालंकार प० मक्सुनखाने समापतित्वमें सफलतापूर्वक हो गया । बहुतसे खंडेलवाल तथा २०-२२ परिषद उपस्थित हुए थे । कई महत्वके प्रस्ताव पड़े हुये हैं और "जैनदर्शन" नामक मासिक शास्त्रीय परिषदकी ओरसे प० वंशीलाल सम्राट्कत्वमें प्रगट होना निश्चित है । जिसके एक वर्षके घाटेके लिये तबवीन हुई है तथा समस्त प्रतिभाओं की जेबें हमेशा दक प्राप्त होता है । महारकी पोपनीला और पंचमहावक्ता ही हैं । राजू दामोदरजी आपने पाठशाला के लिये १) मासिक, तथा काका रिटलजीने २) मासिक १ वर्षके लिये स्कोरी तथा सेठ गूरजमल अल्होगदालसे ३) स्कोरी देने गये । यहाँमें शामकी ता० ५ से १० बजे पर—

निर्माण सन् १४०२ में हुआ था ऐसा चरणपादु-
काके पास लिखा है । इसकी स्थापना भैरवेंद्रके
पुत्र वीर पाण्डने की भी ऐसा कहते हैं । यहा
भट्टारक ललितकीर्ति रहते हैं । उम्र ६० वर्षकी
है । जैन ब्राह्मण ८ और जैनके १० घर हैं ।
जैन पाठशाला बाबू देवेन्द्रकुमार आरा
द्वारा १२ वर्षसे स्थापित है । प्रबंधक नेमिराज
पक्षीवाल है । सर्व भट्टारसे चलता है । ताड़पत्रके
४० तथा अन्य मिलकर सरस्वति भट्टारमें ४००
ग्रन्थ हैं । २० विद्यार्थियोंमें ७ जैन हैं । स्थायी फंड
५०००० का है । एक मंदिरमें श्याम रत्नप्रयकी
चौमुखी प्रतिमा खड्गासन, मनोहर और प्राचीन है ।
मंदिरकी बनावट भी अच्छी है । पाठशालामें धार्मिक
विशेष तथा संस्कृत शिक्षाकी आवश्यकता है ।
पांडको चौट होने पर भी सभी मंदिरोंके दर्शन
आनंदसे किये तथा पहाड़ पर भी चढ़ आये जिससे
दर्द होना तो दूर रहा परंतु पांड सीधा हो पाया
और दर्द भी कम हो गया । लाला किरोडीलाल
दि० जैन और जैनमित्रके माहक हुए । यहासे चलकर
ता० ६ को १५ मील पर—

छारश—आये । दो प्राचीन मंदिरोंमें एक श्री
नेमिनाथस्वामीका है और दूसरा तालाबके मध्यमें
अति प्राचीन है जिसका जीर्णोद्धार हो रहा है । नावमें
बैठकर जाना पड़ता है । यहां नमी, नेमि, पार्श्व,
और महावीरकी चौमुख श्याम कायोत्सर्ग प्रतिमा बिना
लेखकी प्राचीन है । जैन उपाध्यायके ३ घर हैं ।
देवेन्द्रकीर्ति भट्टारकका साहाय्य है और सभी प्रति-
माओंकी प्रशाल नहीं होती । मंदिरके पास ठहरनेका
सामान्य प्रबंध है । यहासे शामको चलकर ता० ७
की सुबहको १८ मील पर—

आशुस्थी—आकर सुखम किया । १ मील तक
कादी बराबर है । अनेक प्रकारकी वनस्पतियोंसे जगज
हराभास होनेसे प्राकृतिक दृश्य अतीव मनोहर था ।
नालियरी, एलायची, फाजू, अनास, कपस, सुगरी
आदिके बहुतसे वृक्ष देखनेमें आते थे । हमारी गाड़ीका
बेल निबल होनेसे हम लोगोंको बहुत चक्का पड़ा
था । यहासे चलकर ता० ८ को १८ मील पर—

तीर्थह्नी—आकर मुकाम किया । बड़ा शहर है ।
सब चीज मिलती हैं । मंदिर नहीं है । यहासे
शामको चलकर फिर १८ मील पर ता० ९ की
सुबहको—

हूमच—आये । यहा पद्मावतीकी प्राचीन प्रतिमा-
की बड़ी मान्यता है । १५ लेते हैं तत्र पद्माव-
तीका अभिषेक पूजन कर दिखाते हैं । इस तीर्थका
नाम ही हूमच पद्मावती कहते हैं । कुल मंदिर ७
हैं और छोटी टेकरीपर एक पुराना प्राचीन मंदिर
है जिसमें श्री बाहूबली स्वामीकी श्याम प्रतिमा
विराजमान है । अस्वच्छता बहुत थी । टेकरीपर
चढ़नेको मार्ग भी साफ नहीं था । बहुतसे मछोड़े
व चींटी ही चींटी नजर आती थीं जिससे बहुत ही
सम्भाल पर चढ़ना पड़ा था । खेद है कि
भट्टारकजी मार्ग तक नहीं चलाये । दोको छोड़
कर पांच मंदिरोंमें कुछ करण्ड और गाय भैंसकी
विठा ही विठा नजर आई थी । प्रशाल तो
होती ही नहीं । दो तीन मंदिरमें मूलनाथकजी
पूजा प्रशाल होती है । यहा ६० वर्षके बड़े
भट्टारक देवेन्द्रकीर्ति मंथि ताजे हैं । एक हाथी,
घोड़े, टेयल, कुर्सी, छत्रीपलग, हठी, झूमर,
बागीचा आदि परिग्रह गृहस्थीसे भी बढ़कर है ।
नाटक जैसे एक दो दूर भी बना रखे हैं ।
भट्टारकके पट्टासिप्रेरके बाईं पार २ वर्षको ~~मंथि~~
होता है और उसको ३३ वर्ष पूर्ण हुए थे । १-र
तीसरा पद्माभिषेक वस्त्र जो कि ७ दिनोंमें हो
वाला था उसकी जोर शोरसे तैयारियां हो र
थी । मठके मंदिरमें चारो ओर रसमी और जरीकी
साटीए ऐसी छा दी गई थी कि जानो बड़ी भारी
दुफान ही लगी हो ! भट्टारकजी अपने पास
आटा, दाळ, चावल, ची, तर्कारी सब रखते हैं
और बाघियोंको आवश्यकतानुसार देते हैं जिसके
पैसे नहीं मंगते परंतु बाघक लोग विशेष मूल्य
ही चीजसे दे जाते हैं । बाघिक आग भी अच्छी
है । हाथी भी पलता है परंतु मंदिरोंमें तो जीर्णा-
वस्था और धूल मोहर ही स्थान २ पर नजर
आते हैं । हम और पं० दीपगदगीने भट्टारकजीसे



જેવો અંગેય છે, આયુષ્ય વધુએ એકાં કલાં
વાદળાના બળ જેવું ક્ષય બંધુર છે, પ્રાણીની
યોવન લક્ષણ અંગેય છે, એમ માનીને ધર્મ
અને સમધિથી સિદ્ધિ પ્રાપ્ત થાય એવા ગોમર્મ
બુદ્ધિ પ્રેર અર્થાત સંસાર ત્યાગ કરી ઉત્કૃષ્ટ
ધામમાં જવા બુદ્ધિવાન થા.

માટે જ મને તે રસ્તો ખતાવે કે જેથી હું
સંસારની ઉપાધિથી બચું.

(જે કે મેં દુઃખતા માર્યા વગર લેવા
માંડ્યો હતો છતાં થોડેક અંશે સુવાની નિહાર તો
હોતોજ.)

મહારાજ, મારા આવામહધી વિરમય પામ્યા ને
વિચાર કરી કહેવા લાગ્યા કે-હજી તુ વૈરાગ્ય
તરફ વળવાને પૂર્ણ લાભ થયો નથી, માટે પ્રથમ
તુ મારી પાસેથી શુદ્ધતાગી શ્રાવકનો ધર્મ સ્વીકાર
કર ને મારી સાથે ચાલ. તું જેમ જેમ ધર્મમાં
જાણકાર ને દેવતાવાદો થકય, તેમ તેમ હન્ય
પદ્ધતી મેળવતો જાય, એવું કહી તેમણે મને
આવકાચારમાંના શુદ્ધતાગી શ્રાવકનો ધર્મ સમ-
જાવ્યો ને મારી પાસે કેટલાક મનો પદ્ય લેવાવ્યા.

તેમના ખતોલેલા રસ્તાને મેં માન્ય કર્યો ને
તેમની સાથે શુદ્ધતાગી પદ્ધતિના વેશથી ફરવા
લાગ્યો. હું મહારાજ રાખે લેણા ગામ ફર્યો ને મે
માર પદ્ય પ્રાપ્ત કર્યું.

છ એક મામ થયા પછી હજારી રવોરી
કે સખી આવી પહોંચી ત્યાં મારું મન ચાડે. મે
અંધવા લાગ્યું ને મને મદન જવરે દુઃખ દેતા
લાગ્યો કેમકે-મને મહારાજની સાથે શ્રાવકને ઘેર
પ્રેર અને સાતિવક ખોરાક મળતો, તેજી જુરી જુરી
ખાતની સુવાન-દહ-ચાખા સ્ત્રીઓના સુખાવેદ
જીવન દરમકી રતું તેમાં પદ્ય વળી મહારાજનો નવો
પદ્ધતિ ને વળી સ્વામવાન ને અનુરૂપ છેડે તે પછો
પ્રેરવું છું ? એટલે તો પછી ખરી થતી ક્ષો જે
પ્રકાશગુણી હતી તેનો મને જોવાના બદલાથી
કલાકેના કલાકે સુખી મહારાજ પાસે ખેસવા
લાગી ને મહારાજથી મારી દુઃખકત પદ્ય પૂછા
લાગી પરંતુ મહારાજ બસને જવાબ વગતા.

પ્રિય પાકકગજ, બ્યારે આમ મને યોગાજ
દિવસના રહેવાથી, ફરવાથી, પૌષ્ટિક આહાર
લેવાથી મદનજવર સતાવા લાગ્યો, વિચારો સ્ત્રીમય
બની ગયા તેમાં પદ્ય હું તો વળી તે સ્ત્રી પાત્રથીજ
કટાંગી શુદ્ધતાગી થયો છું તેમ મેં વિષમનો રવાદ
પ્રીધો છે, પદ્ય જેઓ સંસારના તુરજ સુખને
આસ્વાદ લીધા મિયાય ૧૧ વર્ષ કે તેથી વધુ
ઉમરે શુદ્ધ ત્યાગી બ્રહ્મચારી બદારક કલ્યાણિ થાય
છે, તેમને તેમના હશેશના પૌષ્ટિક આહારથી
અત્યંત સ્ત્રી સમાજમાં રહેવાથી કેમ વિષય રતા-
વતો નહિં હોય ? શું તેઓ નયુંસક છે ? શું
તેઓએ પોતાની કદીનો નાશ કર્યો હતો ? શું
તેઓ મહા દવાથી શક્તિનો નાશ કરતા હશે ?
ના ના તેમ કદી નહિં. તેઓમાંથી સેકેડ પચા-
વન જાણને ને તેથી પદ્ય વધુને તે દુષ્ટ મદન
સતાવતો હશે પદ્ય તેમાંના યોગાજ જાણ મન
મારી ઘેરી રહેતા હશે, ખાદીના ત્યાગ પોતાની
કુષ્ટ વાસના પૂર્ણ કરતા હશેજ. એ તો નિરમદેહ
છે કે તેઓ તે કારી શુદ્ધતાગી કરતા હશે ને
નગ્નવાસનાનો મદન દેખ ખાંધતા હશે. અહા !
કળીકાળ તારી અજબ અસિદ્ધારી છે.

એ પછો બેસાર હું ચારિત્રી બાજુ થયો હતો
જને આખરે મારું મન વૈરાગ્ય તરફ દૃઢ થયું જેથી
દુર્લભ મે નૈતિક બ્રહ્મચારીનો વેષ પામ્યું થીધો
ને તે કિયાઓ પાળવા લાગ્યો. મને સુખ
તેજી સિધિમાં હું મુખે ધર્મસંપન્ન કરી શકું
હું. હાલમાં મને જે પદ્ય પ્રકારની ઉપાધિ
નથી. માત્ર મનના પ્રયાસે હું મમાજગેવા કરવા-
ને ના જોવા સુચનેને મારા જોવા સંકેતથી
બચાવવા મશીસ કંઈ હું. મને મારો આત્મો
પૂર્ણ રૂપથી સમગ્રજ ગણે છે, જેથી મને કવે
સંનગના દુષ્ટિ સુખની લાખમાં થતી નથી.
વધારામાં હું પૌષ્ટિક ખોરાકનું ચેવન કંઈ હું-
છતાં મારું મન કુદ છેદ્રિય સુખ તરફ તગિજ
નથી. એ મારી દેવતાની પ્રવશ નિશાની છે અને
તેથી કરી બનિષમાં હું સુખેથી ધર્મ માધન
કરી આ દેહનું દેવાયું કરી સંકીર્ણ, એમ મને